हूमड़ जैन समाज का सांस्कृतिक इतिहास

(भाग १)

प्रधान संपादक
डॉ. रामकुमार गुप्त
उप संपादिका
श्रीमती मंजु भटनागर '' महिमा ''

अध्यक्ष
श्री शांतिलाल दोशी
इन्दौर

संयोजक
श्री हीरालाल जैन (सालगिया)
अहमदाबाद

श्री अखिल भारतीय हूमड़ जैन इतिहास शोध समिति
१, सुदर्शन सोसायटी, नारणपुरा,
अमहादाबाद-३८० ०१३
दूरभाष : ४९६०७२

प्रकाशक एवं ©

श्री हूमड़ जैन इतिहास शोध समिति
१, सुदर्शन सोसायटी, नारणपुरा,
अमहदाबाद-३८० ०१३

प्रथम संस्करण : नवम्बर १९९४

प्रतियाँ : २५००

मूल्य : १५० / ०० रूपये

मुद्रक : गांधी कोम्प्यूटर्स
दूरभाष ३४०८२०
अहमदाबाद-३८० ००१.

सम्पादक मंडल

सम्पादक	:	डॉ. रामकुमार गुप्त, अहमदाबाद
अध्यक्ष	:	श्री शान्तिलाल दोशी इन्दौर
संयोजक	:	श्री हीरालाल जैन (सालगिया) अहमदाबाद
मार्गदर्शक	:	श्री गणेशलाल छापियाँ, उदयपुर
निर्देशक	:	श्री धनराजजी गुवाड़िया सागवाडा
		बाबूलाल सी. गांधी,ईडर
		श्री मैयालाल बंडी, प्रतापगढ़
		श्री आनंदीलाल जीवराज दोशी, फल्टन (महाराष्ट्र)
		श्री कान्तिलाल सी. जैन, कलिंजरा
		श्री हीरालाल सी. जैन , कलिंजरा
उप सम्पादिका	:	श्रीमती मंजु भटनागर महिमा
लेखक मंडल	:	श्री रतनलालजी जैन उदयपुर
		डॉ. संगीता महेता
		श्रीमती सुशीला सालगिया, इन्दौर
		श्री जयन्त शहा ,बम्बई
		श्री मणिभद्र जैन, डूंगरपुर
		श्री नाथूलालजी जैन, डूंगरपुर
		कु. मीरा .कु. वंदना कु. मनीषा कु. रूपल.

हम इतिहास शोध समिति को प्रकाशन तथा आर्थिक सहयोग और हूमड़ समाज के तीनो सम्मेलनों में सहयोग देने के लिये निम्न महानुभावो को धन्यावाद के साथ आभारी है:-

(१) केन्द्रिय तथा प्रांतिय नगर इतिहास समितियों

(२) विजयनगर, पावागढ़. इन्दौर, सम्मेलनो के सभी मुख्य अथिति, अथिति विशेष, स्वागत मंडल, स्वागत समिति के सदस्यो, सम्मेलनों के आयोजन, में सहयोग देने वाली सभी संस्थाओ और

(३) सम्पादक, सम्पादक मंडल के सभ्यों

(४) पावागढ़ में विशेष आर्थिक सहयोग के लिये

- (१) माननीय श्रेष्ठी श्री चिंरजीलालजी बक्षी, बम्बई
- (२) श्रीमती अरूणा निर्मल कुमार बंडी, बम्बई
- (३) श्री जीवराज खुशालचंद गांधी
- (४) डॉ. शशीबहन कैलाशचन्द बागडिया
- (५) श्रीमती प्रसन्ना सूरजमल शाह, बम्बई
- (६) श्रीमती नीलम के. ऐम. शाह बम्बई
- (७) श्री धनसुखलालजी पालविया, इन्दौर
- (८) हूमड जैन समाज ट्रस्ट, इन्दौर
- (९) श्री रोशनलाल पूनमचंद संघवी, अहमदाबाद
- (१०) श्री मोहनलाल किशनलाल पाडलिया

विशेष निवेदन

अनिवार्य संजोगो के कारण इतिहास के प्रथम भाग में पारिवारिक संस्थाओ और अनेक मन्दिरो आदि का विवरण और लेख आदि का समावेश नहीं किया जा सका है।

उपरोक्त अधिकाश विवरण कोम्प्यूटर पर बटर में तैयार होने पर भी अनेक पारिवारिक तथा मन्दिरो के [illegible] होने से और प्रकाशन को आर्थिक विलम्बित नहीं करने हेतु उपरोक्त विवरण प्रकट ४५ पर प्रकाशित विवरण के साथ इतिहास के दूसरे भाग में शीघ्र प्रकाशित किया जायेगा।

सम्पादकीय

संस्कृति का इतिहास वस्तुतः मानवता एवं मानव मूल्यों का इतिहास है। 'संस्कृत', 'संस्कार' और 'संक्रिया' शब्दों के समान 'संस्कृति' शब्द भी 'तम्' उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से व्युत्पन्न होता है। अंग्रेजी में 'संस्कृति' शब्द का पर्यायवाची शब्द 'कल्चर' है, जो लेटिन के 'कल्चरा' शब्द का विकृत रूप है। वैन्स्टर कोश के अनुसार लेटिन का 'कल्चर' शब्द 'लिअर' धातु से व्युत्पन्न होता है और लगभग उसी भाव के निकट पहुँचता ह, जिसे संस्कृति शब्द प्रतिपादित करता है। संस्कृति की शास्त्रीय परिभाषा सर्वपल्ली डॉ. राधा कृष्णन के अनुसार इस प्रकार है-

'संस्कृति विवेक बुद्धि का जीवन भली प्रकार मान लेने का नाम है।'

डॉ. रामधारी सिंह 'दिनकर' का कथन है कि 'संस्कृति' जिन्दगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है, जिसमें हम जन्म लेते हैं।'डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल के विचार हैं कि ''जीवन के नानाविध रूपों का समुदाय ही संस्कृति है।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि संस्कृति का अर्थ कितना व्यापक है। उसे सीमित परिभाषा में यद्यपि बाँधना कठिन है तथापि मोटे रूप में यह कहा जा सकता है कि संस्कृति किसी राष्ट्र अथवा जाति के परम्परागत संस्कारों की वह समष्टि है, जिससे उसके सामाजिक आचार-विचार, रहन, सहन, रीति-रिवाजों, नैतिकता, कला, धार्मिक एवं आध्यात्मिक विश्वासों की अभिव्यक्ति होती है।

मनुष्य को मनुष्य बनाए रखने में संस्कृति का विशेष योगदान है। यदि मनुष्य से उसकी संस्कृति छीन ली जाय तो वह श्री हीन हो जायेगा। मनुष्य पैदा होने के साथ ही सु-संस्कृत नहीं हो जाता। वह समाज में रहकर सामाजिक परिवेश के अनुरूप संस्कृति को सीखता है। सामाजिक गुणों को धीरे-धीरे विकास कर वह अपने को सुसंस्कृत बनाता है। समस्त सृष्टि में एकमात्र मनुष्य ही ऐसा तत्व है जो अपने आप संस्कृति से जुड़ा हुआ है और वही संस्कृति का निर्माण करता रहा है ।

प्राचीनकाल से लेकर अब तक न जाने कितनी संस्कृतियाँ संसार में आयीं और अपनी जीवन लीला समाप्त कर सदा के लिए समय के विशाल और विकराल गर्भ में विलीन हो गईं। इन प्राचीन संस्कृतियों में मिस्र संस्कृति, बेबीलोनियन संस्कृति, रोमन संस्कृति, ग्रीक संस्कृति, ईरानी संस्कृति, आदि संस्कृतियाँ सुप्रसिद्ध हैं। भारतीय संस्कृति इन सबके समकालीन या इनसे भी प्राचीन मालूम पड़ती है।

भारतीय संस्कृति अन्य संस्कृतियों से भिन्न अपने ढंग की अनोखी संस्कृति है। भारतीय संस्कृति के विविध आयाम रहे है । जो इस प्रकार है :

(१) हड़प्पाकालीन संस्कृति (२) वैदिक संस्कृति (३) जैन एवं बौद्ध संस्कृति (४) मौर्यकालीन संस्कृति (५) शुंग सातवाहन कालीन (६) गुप्तकालीन (७) सल्तनत कालीन (८) मुगलकालीन (९) अर्वाचीन संस्कृति

दूसरे ाब्दी से जैन धर्म व्यवस्था प्रिय होने लगा। व्यवस्थापन का यह युग भी करीब ६०० वर्ष चलता रहा। इस युग में श्री कुन्दकुन्दाचार्य एवं धरसेन आचार्य ने विशाल जैन शास्त्रों को सूत्रबद्ध करना आरम्भ किया। पाँचवीं सदी में अनुश्रुति से चली आई, पुराण कथाएँ विमलसूरी, संघदास, कवि परमेश्वर आदि द्वारा ग्रंथबद्ध हुई । तत्वज्ञान के क्षेत्र में भी समन्तभद और सिद्दसेन के मौलिक विवेचन को अकलंक और हरिभद्र द्वारा सुव्यवस्थित सम्प्रदाय का रूप प्राप्त हुआ।

नौवीं शताब्दी से जैन समाज का जनसाधारण से संपर्क बहुत कम होता गया। मुस्लिम शासकों के प्रभाव के कारण विकास और व्यवस्था की प्रवृत्तियाँ पीछे रह गई । इसी प्रवृत्ति के फलस्वरूप भट्टारक सम्प्रदाय उत्पन्न हुए और बढ़े। भट्टारकों के पूरे कार्य पर इसी मनोवृत्ति का प्रभाव मिलता है। इस युग में दिगम्बर और श्वेताम्बर इन दोनों संघों में एक एक ही आचार्य परम्परा का अस्तित्व सुनिश्चित हुआ।

दिगम्बर परम्परा में भगवान महावीर के पश्चात गौतम इन्द्रभूति, सुधर्मस्वामी लोहायचार्य, जम्बूस्वामी, विष्णुनंदी, नंदीमित्र, अपराजित, गोवर्धन, भदबाहु, विशाख, प्रौष्ठिल, क्षत्रिय, जय, नागसेन, सिद्धार्थ, धृतिषेण, विजय, बुद्धिल, गंगदेव, धर्मसेन, नक्षत्र, जयपाल, पाण्डु, धुवसेन, कंसाचार्य, सुभद्र, यशोभद्र, भद्रबाहु और लोहाचार्य इन आचार्यों को श्रुतधर कहा जाता है।

इस प्रकार युग के अन्त से ही दूसरे युग की विभिन्न परम्पराओं का प्रारम्भ होता है जो आगे चलकर भट्टारक सम्पदायों में रूपान्तरित हुई। इस परम्परा विस्तार का मुख्य कारण स्थानभेद था। बाद में यह परम्परा किस प्रकार आगे बढ़ी यह पट्टावलियों से ज्ञात होता है। जिसका विस्तृत वर्णन पट्टावलियों के साथ इस ग्रंथ में दिया गया है ।

साधुत्व के नाते भट्टारकों का आवागमन भारत के प्रायः सभी भागों में होता था। दक्षिण में मूलबिद्री, श्रवणबेलगोल, कारकल, हुबच. इन स्थानों पर देशीय गण आदि शाखओं के पीठ स्थापित हुए। पूर्व भारत में सम्मेदशिखर, चम्पापुर, पावापुर और प्रयाग की यात्रा के लिए विहार होता था। महाराष्ट्र में मलखेड़ का पीठ बलात्कारगण का केन्द्र था। इसीकी दो शाखाएँ कारंजा और लातूर में स्थापित हूई । बलात्कारगण के अतिरिक्त कारंजा में सेनगण और लाड़बागड़ गच्छ के भी पीठ थे। गुजरात में सूरत, समुद्रतटवर्ती इलाकों में नवसार, भड़ौंच, खंभात, जांबूसर, घोघा, आदि में भट्टारकों का अच्छा प्रभाव था। उत्तर गुजरात में ईड़र का पीठ महत्वपूर्ण था। सौराष्ट्र में गिरनार और शत्रुजय की यात्रा के लिए भट्टारकों का आगमन होता था। मालवा में धारा नगरी जैनधर्म की केन्द्र रही। उत्तरवर्ती काल में सागवाड़ा और अंटेर के पीठ भी स्थापित हुए। ईड़र की ही एक परम्परा आगे चलकर सागवाड़ा में स्थाई हुई। महुआ, डूंगरपुर, इन्दौर आदि स्थान इन्हीं पीठों के प्रभाव मे थे। इसीके उत्तर में ग्वालियर और सोनागिरि में तथा राजस्थान में नागौर, जयपुर, अजमेर, चित्तौड़, भानपुर, और जेरहट में बलात्कारगण के केन्द्र थे। इसकी विस्तृत जानकारी इस ग्रंथ में दी गई है ।

भट्टारक पीठ के साथ किसी एक ही विशिष्ट जाति का सबंध रहता था। बलात्कारगण की सूरत शाखा और ईडर शाखा से हूमड़ जाति, अटेर शाखा से लमेचू जाति जेरहट

भारतीय संस्कृति के निर्माण में भौगोलिक राजनैतिक, एवं सांस्कृतिक एकता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हमारे ऋषियों, मुनियों व आचार्यों ने उसी संस्कृति का व्यावहारिक रूप हमारे समक्ष प्रस्तुत किया। हमारी संस्कृति विभिन्न जातियों, सम्पदायों के आचार-विचार, विश्वास और आध्यात्मिक समन्वय से बनी है। इस देश के महापुरुषों, तीर्थस्थानों प्राचीन कलाकृतियों, धर्म दर्शन और सामाजिक संस्थाने भारतीय समाज एवं संस्कृति के सजग प्रहरी के रूप में फ़र्ज निभाया है । उन्होंने इस देश की संस्कृति को अजर-अमर बनाने में योग दिया है ।

भारत की प्राचीन संस्कृतियों में से दो मुख्य संस्कृतियों ने यहाँ के साहित्य, धर्म व कलावस्तु शिल्प में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । वे है वैदिक-संस्कृति और जैन संस्कृति। भारतीय संस्कृति के संवर्द्धन में जैन संस्कृति के वास्तुकला, मूर्तिकला, वाङ्मय ने जैन विचारों की गहरी छाप छोड़ी है। जैन दर्शन जगत को सत्य मानता है। कर्म सिद्धान्त, पुनर्जन्म, तप, योग, देवादि विग्रहों में विश्वास जैसी कई बातें हैं, जो थोड़े से उलटफेर के साथ भारतीय आस्तिक दर्शनों तथा बौद्ध और जैन दर्शनों की समानरूप से सम्पति है। इन सबका उद्गम एक ही है। जैन संस्कृति के जो उस प्रकार है : कई आयाम है ।

जैन धर्म, जैन साहित्य व जैन स्थापत्य कला, जिनमें तीर्थ स्थल आदि का समावेश होता है।

जैन धर्म दो शब्दों से मिलकर बना है-एक जैन व दूसरा है धर्म। जैसे विष्णु को मानने वाले वैष्णव,शिव,को देवता मानने वाले शैव कहलाते हैं वैसे ही 'जिन को देवता वाले' जैन कहलाते है। और उनके धर्म को 'जैन धर्म' कहते है । 'जिन' ईश्वरीय अवतार नहीं होते, वे तो स्वयं अपने पौरुष के बलपर अपने कामक्रोधादि विकारों को जीतकर 'जिन' बनते हैं। 'जिन' शब्द का अर्थ होता है 'जीतने वाला' जिसने अपने आत्मिक विकारों पर पूरी तरह सिद्धि प्राप्त करली वही 'जिन' हैं। इसी कारण इन्द्रियों का विजेता 'जिनेन्द्र' कहलाता है।

प्रत्येक धर्म के दो अंग होते हैं विचार और आचार। जैन धर्म के विचारों का मूल है 'स्याद्वाद' और आचार का मूल है'अहिंसा'। न किसी के विचारों के साथ खिलवाड़ हो। सब सबके विचारों को समझें और सबके जीवन की रक्षा करें। यही इन 'जिनों' के उपदेश का मूल है। इनका मूलमंत्र ही यह है 'ना हिंस्यात् सर्व भूतानि' किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो।

जैन दर्शनानुसार इस विश्व के मूलभूत तत्व दो भागों में विभाजित है ।

(१) जीवतत्व और दूसरा अजीव तत्व या जड़तत्व । अजीव तत्व भी ५ भागों में विभाजित है पुद्गल, धर्म, अधर्म आकाश और काल। इस प्रकार संसार छह तत्वों से बना हुआ है।

जैन धर्म को मौलिक सिद्धान्तों का विकास व प्रसार करने में जैन साधुओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । जनसाधारण से संपर्क कायम रहे, इस उद्देश्य से वे परिवज्या-निरन्तर भ्रमण का अवलम्ब नहीं थी। मठ, मंदिर या आसनों की उन्हें आवश्यकता नहीं थी। भगवान महावीर के निर्वाण के बाद करीब ६०० वर्ष तक जैन धर्म विकासशील रहा। ईस्वी सन् की

और सर्वोत्कृष्ट समाजवादिता समाई हुई है। इनका यह पक्ष इतना उज्जवल है कि इतर समाज भी इनके कार्यों का उल्लेख करते है।

आज भी न केवल भारत वर्ष में वरन् विदेशों में भी हूमड़ जाति के लोग वर्चस्व स्थापित किये हुए हैं । न्यूजर्सी, इटली, अमेरिका, इंगलैण्ड आदि देशों में अनेक हूमड़ शिक्षा व व्यवसाय से जुड़ कर कार्य कर रहे हैं। कई जगह तो इन्होंने अपने संगठन भी स्थापित कर लिए हैं जिनके माध्यम से ये अपनी व जैन संस्कृति का प्रचार व प्रसार कर रहे हैं।

हूमड़ों द्वारा कई तीर्थ स्थानों पर मंदिर निर्माण का कार्य भी उल्लेखनीय है। हूमड़ जाति का प्रमुख तीर्थ 'खेड़ब्रह्मा' है जहाँ से इनका उद्‌भव माना गया है इसके अतिरिक्ति ईड़र जहाँ भट्टारकों की गद्दी मानी गई है साथ ही गुजरात मे पावागढ़, गिरनार, तारंगा, घोघा, महुवा, आदि अनेक महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल है। राजस्थन में केशिरयाजी (ऋषभदेव), आंतरी, झालरापाटन, अन्देश्वर, कलिंजरा, चित्तौड़, का कीर्तिस्तंभ, आदि महाराष्ट्र में नातेपूते, फल्टन आदि ऐसे ही महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल हैं ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हूमड़ समाज एक समृद्ध समाज है,न केवल भौतिक ऐश्वर्य के लिए वरन् आध्यत्मिक ऐश्वर्य के लिए भी । इनके जिनालय कलासमृद्धि से युक्त हैं । चित्तौड़ का कीर्तिस्तंभ , भिलौड़ा के बावन जिनालय का कीर्तिस्तंभ, तथा दक्षिण के कई कीर्तिस्तंभ अपनी अनूठी कला के लिए विश्वप्रसिद्ध है। जिनालयों की प्राचीन मूर्तियाँ, शिलालेख, कीर्तिस्तंभ, स्मारक, संग्रहालय, स्थापत्य की कलाकृतियाँ और पुरातन लिपियाँ हमारी भारतीय संस्कृति धरोहर हैं ।

अखिल भारतीय हूमड़ समाज जैनधर्म के मानवीय मूल्यों-अहिंसा,सत्य, सदाचार, संयम, समता, अपरिग्रह आदि को लेकर आगे बढ़ रहा है । जिनके द्वारा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना दृढ़ होगी, विश्वशांति स्थापित होगी और विश्वकल्याण होगा। विविधता में एकता भावना के दर्शन हमें इस संस्कृति में होते हैं।

पर्यावरण की दृष्टि से भी इस संस्कृति का विशेष योगदान रहा है । वृक्षों का उच्छेदन, पशुओं की निर्मम हत्या आदि का विरोध मूल सिद्धान्तों में समाविष्ट है। आज हमारा पर्यावरण इन सिद्धान्तों की अवहेलना के कारण ही प्रदूषित हो रहा है यदि इनका खुल कर विरोध नहीं किया गया तो प्रकृति हमें न जाने कौनसा दण्ड देगी? ऐसी स्थिति में मानव मूल्यों को बनाए रखने के लिए जो आधार हैं वे जैन संस्कृति में ही दिखाई देते हैं । आधुनिक शिक्षा व सभ्यता के संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता का प्रश्न खड़ा किया जाता रहा है परन्तु भारतीयों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह ऐसी संस्कृति है जिसमें सब कुछ पुराना छोड़ देने के काबिल भी नही है और सारा का सारा नया अपनाने के काबिल भी नहीं है अतः पुराने व नये का सामंजस्य ही भारतीय संस्कृति का पर्याय है।

इतिहास चाहे कुटुम्ब हो, चाहे गांव अथवा शहर का हो, चाहे देश-विदेश का हो, वह एक दर्पण है। जिसके द्वारा भूतकालीन, उद्‌भव, विकास, का बोध होता है, उसे नवीन परिस्थितियों में किस प्रकार मोड़ देकर बनाए रखना है,उसके संदर्भ में विचार आगे आने वाली पीढ़ी को करना होता है।

शाखा से परवार जाति तथा दिल्ली, जयपुर, शाखा से खंडेलवाल जाति का विशेष संबध पाया जाता है। प्रत्येक जाति में नियत संख्या के कुछ गोत्र थे। बघेरवाल जाति के २३ गोत्र काष्ठासंघ के और २७ गोत्र मूलसंघ के अनुयायी थे। लमेचू परवार हूमड़ और अन्य जातियों में भी गोत्रो के उल्लेख मिलते है। हूमड़ जाति में लघुशाखा और बृद्धशाखा ऐसे दो उपभेद थे। इन्हें ही 'दस्सा' और 'बीसा' हूमड़ कहते है । हूमडों के १८ गोत्र कहे जाते हैं परन्तु १८ के नाम प्रचलित हैं । धारणा प्रचलित है कि ईड़र के पास बह्मा की खेर (खेड़बह्मा) नामक स्थान पर एक बावड़ी है जिसमें १८ आलिये है और उनमें १८ मूर्तियाँ थीं जो हूमड़ गोत्रों का प्रतिनिधित्व करती है। गोत्र व कुलदेवियों के सम्बन्ध में सचित्र जानकारी इस ग्रंथ में प्राप्त तथ्यों के अनुसार दी गई है।

हूमड़ पूर्वकाल में क्षत्रिय थे, परन्तु वे जैनधर्म का पालन करते थे। कालान्तर में उन्होंने होम द्वारा आयुध त्याग कर दिये। इस कारण वे'होमायुध' के नये नाम से क्षत्रिय पहचाने जाने लगे। बाद में 'होमायुध' नाम से ही 'हूमड़' शब्द बन गया । देखिए होमायुध होवाडढ़, होवाउड्ड, होवाड्ढ, हूबडु, हूँबड, हूमड़ दूसरी व्युत्पत्ति क्रम इस प्रकार भी दर्शाया गया सुह्य स्थ हूमस्थ हूमड्ड हुमड्ड हूमड़।

एक मान्यता और है। खेडबह्मा में जैनधर्म मानने वाले क्षत्रियों की भी बड़ी बस्ती थी। उस समय एक दिगम्बर जैन तत्वज्ञानी थे जिनका नाम था 'हूम्माचार्य'। इनका बड़ा प्रभाव था व इनके प्रति क्षत्रियों की बड़ी आस्था एवं भक्ति थी। आपने खेडबह्मा ग्रामस्थ १८००० क्षत्रियों के संगठन को 'हूमड़'नाम से संबोधित किया, और वह समूह कालांतर में हूमड़ कहलाया। लाट प्रदेश में रहने के कारण ये लाट (लाड) क्षत्रिय कहलाते थे। सामाजिक, राजनैतिक, एवं आर्थिक विषय परिस्थितियों के कारण कई लाड क्षत्रिय वैश्य बन गए और उन्होंने अपना रोजगार लक्ष्य व्यापार को बनाया। यही कारण है कि हूमड़ जैनों का उद्‌भव स्थल खेड़बह्मा को माना गया है । इसकी पुष्टि के लिए अनेक प्रमाण प्राप्य हैं । इस ग्रंथ में विस्तार से उल्लेख किया गया है। हमें उपलब्ध हो सके उतने पौराणिक व ऐतिहासिक प्रमाण दिये हैं।

शनैः शनैः हूमड़ों की संख्या बढ़ती गई और व्यापार के लिए ये एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में विस्तार पाते गये ।

हूमड़ों का अतीत अत्यन्त गौरवशाली रहा है। राज्यों में हो गया वाणिज्य में अतीत में कई राज्यों का शासन संचालन, युद्ध एवं साहूकारी उसकी थाती रही है । वाग्वर-प्रान्त (बागड़) में हूमड़ों का समूह मेवाड़, गुजरात व दक्षिण और अन्य क्षेत्रों में वाणिज्य व्यवसाय हेतु कूच कर हा रहा था कि उनकी प्रशासकीय क्षमता से प्रभावित होकर अपने - अपने राज्यों में उच्च पदों पर आसीन करने की राजाओं में एक होड़सी लग गई। गुजरात के इतिहास में भी कुछ नाम ऐसे आते हैं , जिससे बोध होता है कि वहाँ हूमड़ों ने राज्यशासन में अपना वर्चस्व स्थापित किया था।

देश के जैनियों में हूमड़ समाज ही एक मात्र ऐसा अग्रणी समाज है, जिसने सामाजिकता के साथ धर्म को या आम्नाय को कमी नही छोड़ा। धार्मिक सहिष्णुता का यह अनुपम उदाहरण है, दूसरी ओर हूमड़ समाज में सामाजिक रीति-रिवाजों में भी प्रगतिशालता

विजयनगर इन्दौर अहमदाबाद अधिवेशन रिपोर्ट

पहला अधिवेशन

श्री ऋषभदेवाय नमः

अ.भा. हूमड़ इतिहास शोध समिति का प्रथम अधिवेशन दि. जैन मन्दिर विजयनगर

दिनांकः १८-८-९३ स्थल (गुजरात)
सानिध्य : प. पू. सुबाहु सागरजी महाराज
सम्मलेन अध्यक्षः श्री शान्तिलालजी दोशी, इन्दौर
सहयोग-आमंत्रितः श्री दिगम्बर जैन हूमड़ समाज, विजयनगर (गुजरात)
शोध लेखः-

(१) हूमड़ जाति की उत्पति स्थल और उसके पूर्वजों का विवरण- प्रस्तुत कर्ता श्री विमल कुमार गांधी, दिल्ली
(२) हूमड़ जाति का उत्पति का समय और स्थल- हीरालाल जैन, अहमदाबाद
(३) आचार्य की पट्टावली और हूमड़ समाज- डॉ. स्वराज्य हूमड़, इन्दौर
(४) आचार्य अर्हदबली के शिष्य माघनन्दि द्वारा नन्दिसंघ की स्थापना और उसका हूमड़ जाति से सीधा सम्बन्ध

निम्न प्रस्ताव सम्मेलन में सर्वानुमते पारित किये गये

प्रस्ताव- दिनांक १८-८-९३

(१) यह प्रस्तावित किया जाता है कि प्रचलित मान्यता यह पायी जाती है कि हूमड़ जाति की उत्पत्ति का स्थान खेडब्रह्मा एवं स्थापना वर्ष विक्रम संवत १०१ है। वास्तवमें यह अत्यंत विचारणीय विषय है, क्योंकि अन्य मान्यताएँ भी प्रचलित हुइ एवं यह सम्मेलन हूमड़ इतिहास मे रूचि रखनेवाले विद्वावानों से यह अपेक्षा करता है कि, इस विषय में इस मत के पक्ष- विपक्ष अथवा और भी मत जो प्रचलित है, उनके पक्ष-विपक्ष मे अपने विचार ऐतिहासिक तथ्यो के आधार पर सप्रमाण ३ माह मे प्रस्तुत करे।

प्रस्तावक- श्री विमलकुमार गांधी, दिल्ली
समर्थकः डॉ. स्वराज्य हुमड इन्दौर
श्री कान्तीलाल जैन, कलिंजरा
श्री हीरालाल जैन, कलिंजरा

हूमड़ समाज का सुव्यवस्थित इतिहास अभी तक उपलब्ध नहीं था, इसी अभाव की पूर्ति में यह विनम्र प्रयास है जिसका प्रथम खण्ड आपके कर-कमलों में प्रेषित है। प्रस्तुत इतिहास का यह प्रथम खण्ड अत्यन्त अल्पावधि में पूरा किया जा रहा है अतः स्वभाविक है कि बहुत सी बातें व तथ्य छूट गए हों, उन्हें हम दूसरे खण्ड में समायोजित करेंगे। अनेक विद्वानों के लेख, जो हमारे पास सुरक्षित हैं उनका समावेश भी दूसरे खण्ड में संभव हो सकेगा।

प्रस्तुत खण्ड में जो भी सामग्री दी जा रही है, वह हूमड़ समाज व जैनधर्म के उपलब्ध इतिहास ग्रंथों के आधार पर तो है ही, अन्य ग्रंथों से भी सहायता प्राप्त की गई है। साथ ही खेड़बह्मा, ईड़र, गिरनार, पावागढ़, सागवाड़ा, कलिंजरा, आदि स्थानों में उपलब्ध सुरक्षित स्थापत्य नमूनों के आधार पर भी कुछ तथ्य प्रस्तुत किये गए हैं। इनका विशद शोधपूर्ण उल्लेख दूसरे खण्ड में देने का प्रयास करेंगें। हमें प्रसन्नता होगी कि इन तथ्यों से सम्बन्धित प्रामाणिक सामग्री जिन महानुभावों के पास उपलब्ध हो, वे हमारा ज्ञानवर्धन करवाते हुए हमें भिजवायेंगे जिससे हम उनका उपयोग द्वितीय खण्ड में कर सकें।

हूमड समाज के उद्‌भव का समय, उद्‌भव, स्थान, जाति, वर्ण, एवं गोत्र आदि के मामले में विवाद संभव है। यहाँ वे विभिन्न अधिवेशनों के निष्कर्ष प्रस्तुत किये जा रहे है जिनके तहत प्रस्तुत ग्रंथ में इन तमाम तथ्यों का निर्धारण किया गया हैं। यह आवश्यक नहीं कि सभी लोग इन मतों से सहमत हों। यहाँ उपलब्ध तथ्यों और समाज के एक बड़े समुदाय द्वारा स्वीकृत मान्यताओं के आधार पर इन कूट समस्याओं को सुलझाने का प्रयास भर किया गया है।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर अ. भा. हू. जैन समाज का सांस्कृतिक इतिहास आपेक कर - कमलों में प्रेषित करते हुए अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है। इस अवसर पर उन सभी महानुभावों, लेखकों, अनुसंधाताओं, सम्बद्ध मंदिरों, जिनालयों, पवित्र तीर्थ - स्थानों एवं श्रेष्ठी वर्ग के प्रति आभार व्यक्त करते है। जिन्होंने इस ग्रंथ को उपयोगी बनाने व उपयुक्त सामग्री जुटानें में अपूर्व सहयोग दिया है।

विशेषत : अ. भा. हूमड़ जैन इतिहास शोध समिति के संयोजक श्री हीरालालजी जैन के हम आभारी हैं। जिनका रात दिन का अथक परिश्रम इस ग्रंथ के शब्द - शब्द के साथ जुड़ा है।

ग्रंथ के संपादक मंडल के प्रति भी हार्दिक कृतज्ञता स्थापित करते हैं। इस भगीरथ कार्यके साथ पिछले तीन महिनों से हमारे जिन छात्रों, मित्रों का सहयोग प्राप्त हो रहा हैं, उनेक प्रति भी प्रसन्नता का अनुभव करते हैं, श्रीमती मंजुं भट्टनागर, कुमारी वंदना - सेगंर, कुमारी मीरां रानी क्षत्रिय, कुमारी मनिषा, एवं रूपल सोनी, तथा मनिष के प्रति साधुवाद व्यक्त करते हुए आनंद का अनुभव हो रहा हैं.

डॉ. रामकुमार गुप्त

घोषणा

पाथल (परिवर्तन) में इतनी छोटी जाति होते हुए भी संस्कृति का मूल स्वरूप जीवित रख सकी है। जिसका हमें गौरव है ।

परन्तु आज के अति वेग से गतिशील समय में वह गौरव गाथा जो हमारे पूर्वजों के निर्माण किये गये अनेक जिनालयों, प्राचीन शास्त्र भंडारों, जैन/अजैन इतिहासकारों तथा समाज के विद्वानों के घरों में अववस्थित बिखरे पड़े है उन्हें यदि एकत्रित करके लिपिबद्ध नहीं किया गया तो लुप्त होने की पूरी आशंका है।

हम जिसमें आप भी सम्मलित हैं, मानते है कि समाज का छोटा से छोटा व्यक्ति, बालक, वृध्द चाहे वह देश विदेश के किसीभी कोने मे रहता हो इस इतिहास का अंग है। हमारी छोटी से छोटी संस्था चाहे किसी क्षेत्र में काम करती हो, वह हमारे इतिहास का स्तंभ है

(२) यह प्रस्तावित है कि हूमड़ समाज के इतिहास के संग्रह, संशोधन,प्रकाशन- हेतु एक समिति का गठन किया जावे, जिसका प्रस्तावित नाम '' श्री हूमड़ समाज इतिहास शोध समिति'' रखा जावे। इस समिति के प्रमुख संयोजक श्री हीरालाल जैन सालगिया अहमदाबाद के नियुक्त किया जावे तथा उन्हे इस समिति के सदस्यों का चयन करने एवं उसकी घोषणा करने के लिये अधिकृत किया जावे। इस समिति को केन्द्रीय कार्यालय व प्रान्तीय कार्यालयों के स्थान पदाधिकारियों की नियुक्ति करने का अधिकार रहेगा।

प्रस्तावक: श्री प्रकाश सालगिया, इन्दौर
समर्थकः श्री कैलाश चन्द्रजी बगेरिया, इन्दौर

(३) यह प्रस्तावित है कि उक्त समिति हूमड़ समाज के इतिहास के शोध व प्रकाशन के अतिरिक्त निम्नकार्य भी सम्पादित करेगी ।

(१) अखिल भारतीय हूमड़ समाज की जनगणना ।

(२) भारत में हूमड़ समाज की समस्त धार्मिक, शैक्षणिक, सामाजिक जानकारी एकत्रित करना।

(३) अन्य ऐसे कार्य जो अखिल भारतीय हूमड़ समाज के हित में हो।

प्रस्तावक : श्री बाबूलाल सी. गांधी , ईडर
समर्थक : श्री भैयालाल बंडी, प्रतापगढ

(४) यह प्रस्तावित किया जाता है कि उक्त उदेश्यों की पूर्ति के लिये विभिन स्त्रोत्रों से आर्थिक सहयोग जुटाने का अधिकार केन्द्रीय समिति को रहेगा। वर्तमान में प्राप्त आर्थिक सहयोग को भी इतिहास प्रकाशन की भावी आर्थिक योजना में समाहित कर उसका लाभ घोषणा कर्ता को दिया जावेगा ।

प्रस्तावक : श्री पवनकुमार बागडिया, इन्दौर
समर्थक : श्री मनुभाई शाह

(५) यह प्रस्तावित किया जाता है कि हम समस्त हूमड़ जाति सिर्फ हूमड़ समाज से सम्बधित हैं और भविष्य में हम अपने नाम के साथ सिर्फ हूमड़ शब्द का उपयोग करेगे और भारत जन गणना में सिर्फ जैन शब्द (हूमड़) का उपयोग करेंगे ।

प्रस्तावक : श्री विनोद ' हर्ष '
समर्थकः- श्री शांतिलाल जी दोशी

निम्न प्रस्ताव सर्वोनुमत से पारित किये गये ।

प्रस्ताव:

(१) इतिहास आलेखन का समय विमोचन
(२) इतिहास लेखन स्त्रोत
(३) इतिहास लेखन विषय
(४) इतिहास के विशेष विषयों का समावेश
(५) भौगोलिक विभाजन
(६) शोधलेख पद्धति नीति
(७) इतिहास शोध समिति विषय
(८) हूमड़ जाति का उदभव स्थल- खेड़बह्मा

प्रस्ताव नं.८

हूमड़ जाति का उद्‌भव स्थान -' खेड़ब्रह्मा'

यह सम्मेलन हूमड़ जाति के उद्‌भव स्थान के लिये निम्न प्रस्ताव प्रस्तुत करता है
:

१. यह प्रस्ताव विजयनगर (गुजरात) के प्रथम प्रस्ताव नं.१, इन्दौर अधिवेशन के कार्य सूची प्रकाशित पुस्तिका का घोषणा पत्र तथा माननीय अध्यक्ष के स्वागत भाषण के अनुसंधान मे है ।

२. यह प्रस्ताव प्रथम तथा इस सम्मेलन में प्रस्तुत शोध पत्रकों (i) श्री विमलकुमार गांधी (ii) श्री बाबूलाल सी. ईड़र (iii) श्री हीरालाल जैन, अहमदाबाद (iv) श्री सूरजमलजी बोबडा, इन्दौर व अन्य विवरण आदि सम्मेलन मे किये गये प्रतिनिधि के विवेचन के आधार से है ।

(३) यह प्रस्ताव अति प्राचीन ' हूमड़ पुराण' (दो स्थान में प्राप्त) तथा 'हूमड़ वशांवली' ग्रन्थ तथा अनेक हिन्दू पुराणों, भारत सरकार तथा गुजरात सरकार के प्राचीन स्मारक सर्वे की रिपोर्ट, ईड़र, भिलोडा, सागवाड़ा, डूंगरपुर आंतरी, कलिंजरा, आदि प्राचीन शास्त्र भंडारों से प्राप्त साहित्य सामग्री पर आधारित है।

(४) वर्तमान में खेड़बह्मा देवपुरी,(बर्तमान देरोल) के बावन जिनालय, गौत्र कुंड, १४० से भी अधिक, खेड़बह्मा से ले जाकर विराजमान मूर्तियो को वर्तमान मे ईड़र, ईड़रगढ, कलिंजरा, तारंगा, भिलोडा, आतरी आदि मे विराजमान है। उन पर आधारित है।

उपरोक्त तत्थो से प्रमाणित होता है कि हूमड़ जाति का उद्‌भव स्थान खेड़बह्मा है। इसलिये यह सम्मेलन इस मध्य प्रदेश की औद्योगिक राजधानी इन्द्रपुरी इन्दौर के निकट अर्वाचीन भारत का सर्व श्रेष्ठ तीर्थ गोम्मटगिरि, तीर्थ क्षेत्र पर भगवान

दूसरा अधिवेशन

श्री हूमड़ समाज इतिहास शोध समिति, द्वितीय सम्मेलन

मध्य भारत की औद्योगिक राजधानी मालवा प्रांत के हूमड़ तथा जैन समाज की इन्द्रपुरी के वर्तमान के आधुनिक रमणीय तीर्थ स्थल भगवान बाहुबली (गोमटेश्वर) के सानिध्य में अखिल भारतीय स्तर का ऐतिहासिक महत्वपूर्ण सम्मलेन जिसमें हूमड़ समाज का २००० वर्षो का गौरव पूर्ण इतिहास लिपि बद्ध (प्रकाशन) करने का निर्णय लिया गया।

सहयोग आमंत्रित

अ. भा. संस्कार परिसर, इन्दौर
श्री हूमड़ जैन समाज ट्रस्ट ,इन्दौर
श्री हूमड़ युवा मंच, इन्दौर
अध्यक्षः- श्री शांतिसागरजी दोशी
संयोजकः- हीरालाल जैन
उद्घाटकः श्री डॉ. भोगीलालजी बागड़िया
मुख्य अथितिः श्री यु. एन. भाचावत दिल्ली निवृतमान हाईकोर्ट जज, मध्यप्रदेश
अतिथि विशेष - श्री कन्हैयालालजी सालगिया, श्री ललित कोटिया

सम्मेलन में शोध लेखों का विवरण

(१) हूमड़ जाति के उद्‌भव की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि- श्री विमलकुमार गांधी, दिल्ली
(२) हूमड़ समाज के प्रारम्भ की विवेचनात्मक दृष्टि- श्री सूरजमलजी बोबडा, इन्दौर
(३) आचार्य पूज्यपाद- श्रीमती डॉ. संगीता महेता, इन्दौर
(४)नात्मक संशोधन
(५) उद्‌भव, समय, स्थल
(६)कृतिक केन्द्र ईडर,
(७) उदभव, स्थल खेड़ब्रह्मा
(८) हूमड़ जाति गोत्र विश्लेषण
श्री भैयालाल बंडी, प्रतापनगर
श्री हिरालालजी जैन, कलिंजरा
श्री कान्तीलाल जैन, कलिंजरा
(९) हूमड़ जातीय भट्टारक सर्जनकार विद्वान कवि
श्रीमती सुशीला सालगिया

गोमटेश्वर बाहुबली के चरणो के सानिध्य में 'हूमड़ पुराण' से प्राप्त मंगलाचरण को इस प्रस्ताव में सम्मलित कर उसे इतिहास का मंगलाचरण स्वीकार करता है ।

श्रीमद् हिरण्य गंगातट सुमनुधरा उत्तरा दिग्विभावेः
सोमा सागत्य जायात् वरमुख चतुर मिष्ट गोत्र शतते,
स्नातास्ते बह्मवाला जिनमति निरता सद्य दष्टादशरच,
ते सर्वे सौरख्य युक्ता धन स्वजन युता मंगल विस्तरन्तु।

'अति प्राचीन हूमड़ पुराण से

उपरोक्त प्राप्त प्रमाणों के आधार पर यह सम्मेलन भगवान बाहुबली के जय घोष के साथ हमारी पुनीत आद्य मातृभूमि खेड़बह्मा को शत वंदना के साथ घोषणा करता है कि 'हूमड़ जाति का यही उदभव स्थान है और उसे हूमड़ इतिहास में स्वर्ण अक्षरों से अंकित करनेका ऐतिहासिक प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार करता है ।

प्रस्ताव : दोशी कान्तीलाल टेकचंद ,(विजयनगर)
समर्थक : श्री धनराजजी रुपचंदजी गोवाड़िया (सागावाडा)
अनुमोदक : श्री चेतनलालजी हीरालालजी जैन (भिलुडा)
प्रस्ताव : सर्वानुमति से स्वीकार

प्रस्ताव नं. १०

हूमड़ जाति और उसके गोत्र प्रस्ताव नं.११ इतिहास प्रकाशन १२ प्रांतीय नगर समितियाँ १३ तथा आर्थिक व्यवस्था १४ ।

प्रस्ताव न. १४

हूमड़ समाज के दो मुख्य विभागों दशा हूमड़ और बीसा हूमड़ की एकता
यह प्रस्ताव विजयनगर सम्मेलन के प्रस्ताव नं.४ के अनुसंधान में विस्तृत किया गया है।

१. यह सम्मेलन हूमड़ समाज को कुछ जैनागाम के प्रमाणो को ध्यान में लेने की अपील करता है ।

गोत्र, कुलं, वंश, सन्तान

जैनाचार्य श्रीमद् वीरसेनस्वामी 'धवला टीका' से

देव कुल जाइ सुद्धा विसुद्धामण वयकांयसंजुता।
तुह्मं पायपयोरुहमहि मंगलमत्थु में णिच्चं ॥

(श्री कुन्दकुन्दकृत आचार्य भक्ति से)

संतति गौत्रम् जननम् कुलम् अभिजनः अन्वयः वंश, अन्चवाय संतानः

अमरकोषसे

(२) इतिहास शोध समिति शोध के अनुसार जैनमूर्ति लेखों (जिन मूर्तियों को हम तीर्थंकर मानकर पूजा अर्चना करते है) उनपर उत्कीर्ण लेखों से प्रमाणित होता है कि विक्रम की १७ वी शताब्दी के मध्य तक सिर्फ हूमड़ जाति का उल्लेख मिलता है १७ वी से १८ वी सदी के मध्य दीर्घ शाखा और लघु शाखा का उल्लेख है उसके बाद दसा बीसा हूमड़ का उल्लेखो मिलता है। इससे पहले किसी भी मूर्तिलेख में दसा बीसा का नाम नहीं मिलता है, सिर्फ हूमड़ ही मिलता है।

(३) अति प्राचीन ग्रन्थ 'हूमड़ पुराण' त्था 'हूमड़ वंशावली' ग्रन्थो तथा ईड़र, सागवाड़ा, डूंगरपुर, कलिंजरा के प्राचीन शास्त्र भंडारो उपलब्ध गोत्र पत्रक आदि मे भी कहीं दसा बीसा का उल्लेख नहीं मिलता है।

(४) खेड़ब्रह्मा मे भी स्थिति गोत्र कुंड से भी यह विभाजन प्रमाणित नहीं होता है।

(५) शोध समिति की अनेक अपीलो पर भी अभी तक यह विभाजन कब, कहाँ, क्यों, किन परिस्थितियो मे किसने किया कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है इससे प्रमाणित होता है यह एक ही जाति/समाज है। एक ही गोत्र, संस्कृति, रीति रिवाज,को मानते है। एक धर्म स्थल पर एकही प्रकारसे पूजा अर्चना करते है।

(अ) ऊपर के सभी तत्यों को देखकर यह सम्मेलन हूमड़ समाज से यह भेदभाव विभाजन मिटाकर सभी सामाजिक व्यवहार जिसमे विवाह याने बेटी व्यवहार भी सम्मलित है, एक दूसरे से सम्मलित होकर करने का अनुरोध करता है।

(ब) यह सम्मेलन समाज की सभी धार्मिक सामाजिक, शैक्षणिक संस्थाओ, ट्रस्टो तथा समाज के सभी नवयुवक तथा महिला संगठनो त्था समाजके सभी बुद्धिजीवियों, हितचिन्तको से अपील करता है कि वे अपनी संस्थओं तथा ब्यक्तिगत इस एकता का प्रस्ताव करके केन्द्रीय कार्यालय को प्रकाशन हेतु और बम्बई अधिवेशन मे प्रस्तुत हेतु और सामाजिक पत्र पत्रिका मे भी प्रकाशित कराने भेजने की कृपा करें तथा स्वयं पत्रिका द्वारा प्रचार करें।

(क) सभी पूज्य आचार्य, मुनि संघों से यह सम्मेलन विनयपूर्वक प्रार्थना करता है कि इस हूमड़ समाज की एकता को मान्यकर आगमानुकुल होने कीघोषणा करें।

(६) यह सम्मेलन केन्द्रीय संयोजकश्री को इस प्रस्ताव का विशेष प्रचार प्रसार की व्यवस्था कर और अन्य आवश्यक कार्यवाही करने के लिये अधिकृत करता है।

(७) यह सम्मेलन समाज के सभी वर्गों से वींनती करता है की उपरोक्त प्रस्ताव के विरोधी मत को उसके प्रमाणिक, ऐतिहासिक या आगम से जो भी तथ्य आपके पास उपलब्ध हो उन्हे केन्द्रीय समिति को शीघ भेजने के लिये आमंत्रित करता है, हम उनके विचारो का स्वागत् करेगे।

प्रस्ताव : सर्वानुमते स्वीकार
प्रस्ताव : माननीय अध्यक्ष शांतिलालजी दोशी (इन्दौर)
समर्थक : श्री बाबुलालजी. सी. गांधी (ईड़र)
अनुमोदक श्री हीरालाजी जैन (कलिंजरा)

(विशेष अधिवेशन)

इतिहास शोध समिति का विशेष अधिवेशन दिनाक.११ एवं १२ जून २ १९९४
स्थल : प्रे. मो. दि. जैन बोर्डिंग अहमदाबाद

प्रस्ताव (१)

दिनांक ११ एवं १२ जून १९९४ को अहमदाबाद में शोध समिति का विशेष अधिवेशन सम्पन्न हुआ जिसमे निम्न प्रमुख निर्णय लिए ।

(१) नवम्बर मास के आसपास हूमड़ इतिहास के प्रथम खण्ड का प्रकाशन कर विमोचन करवाया जाय।

(२) हूमड़ों के बृहद सम्मेलन का आयोजन कर विमोचन करवाया जाये।

(३) मुम्बई में बृहद सम्मेलन (अधिवेशन) का आयोजन करवाया जाय । यदि वहाँ सम्भव न होतो विकल्य के रूप में सिद्ध क्षेत्र पावागढ़ में आयोजना करनेका निर्णय लिया गया।

(४) हूमड़ों के मूल स्थान देरोल खेड़बह्मा में उत्पति के स्थान में ऐसा स्मारक निर्मित किया जाये तो आनेवाले समय में प्रकाश स्तम्भ का कार्य कर सके।

(५) मूलसंघ की पट्टावली मे जैनेन्द्र सिद्वातं कोष भाग १ में वर्णित पृष्ठ ३१४-३१३ पर दिगम्बर मूल संघमें दृष्टि नं. २ इन्द्र नन्दि कृत नन्दिसंघ बलात्कारगण पट्टावली को आधार मानकर हूमड़ इतिहास के काल क्रम को निर्धारित किया जाये।

(६) हूमड़ों के इतिहास के नवम्बर ९४ मे होने वाले विमोचन की पृष्ठ संख्या ४८० के आसपास रखी जाय। ग्रन्थ १९x२४ सेमी. के आकारकी हो एवं इसकी २४०० प्रतियाँ मुद्रित करवाई जायें ।

(७) शोध समिति के प्रचार प्रसार मुद्रण आदि रु.२,१०,००० की स्वीकृति प्रदान की गई। राशि जुटाने विज्ञापन दान- ग्रन्थ एडवान्स बुकिग आदि के माध्यम से प्रयत्न किया जाये।

(९) लेखन - समिति का निर्णय

सर्व श्री गणेशलालजी छापिया उदयपुर, श्री शान्तिलालजी दोशी इन्दौर, श्री धनराजजी गोवाडीया सागवाड़ा, श्री रतनलालजी गोराणिया उदयपुर, के मार्गदर्शन मे निम्नानुसार लेखन समिति का निमार्ण किया गया।

श्री हीरालाल सालगिया, संयोजक श्री कान्तीलालजी शाह, तलवाडा
श्री भैयालाल बंडी, प्रतापगढ़ सदस्य श्री रमणलालजी शाह, डडूका
श्री कान्तिलाल जैन, कलिंजरा.. श्री कान्तीलालजी कोठारी, कुशलगढ़
श्री हीरालालजी जैन श्री आन्ददीलालजी जीवराजी दोशी, फल्टन सदस्य
श्री सूरजमलजी बोबड़ा, इन्दौर श्री जयन्त शाह, बम्बई
श्री सागरमलजी मौला, इन्दौर श्री इन्दौर के युवामंच प्रतिनिधि
श्री विनोद हर्ष, डॉ. संगीता महेता, इन्दौर

श्री बाबूभाई सी. शाह, प्रो.डॉ. मयुरा शाह, सोलापुर
श्री नाथूलालजी, शाह पाणाद (डूंगरपुर)
श्री मणीभद्रजी पाणदा (डूंगरपुर)

आवश्यकतानुसार संयोजक अन्य सदस्यों को भी मनोनीत कर सकते है।

लेखन समिति द्वारा किये हुए लेखन एवं संपादको व्यवस्थित करने एवं प्रेसमे जाने से पूर्व मैटरको क्रमबद्ध करने हेतु एक या अधिक लेखक जो जैन सिद्धांतों का ज्ञाता हो तथा इस कार्य को क्रमबद्ध कर सके वैसा मानदेय के रुपमें रखने संयोजक को अधिकृत किया गया।

(१) श्री प्रकाशचन्द्रजी सालगिया इन्दौर की अध्यक्षतामें हूमड़ समाज की भावनात्मक एकता सामाजिक विकास एवम् समग्र विकास पर विस्तृत चर्चा की गई तथा इस हेतु निम्न निर्णय लिये गये।

(A) अखिल भारतीय हूमड़ समाज संगठन की स्थापना हेतु प्रस्ताव कमेटी का निमार्ण किया गया जिसमें निम्न सदस्यों के नाम रखे गये।

संयोजक श्री प्रकाश सालगिया, इन्दौर श्री मणीभद्र जैन, डूंगरपुर
संरक्षक श्री गणेशलालजी छापिया, उदयपुर श्री विनोद हर्ष, अहमदाबाद
श्री शान्तिलालजी दोशी, इन्दौर श्री भैयालालजी बंडी, प्रतापगढ़
सदस्य श्री रतनलालजी गोराणीया, उदयपुर श्रीमती डॉ.इलाबहन, अहमदाबाद
श्री कान्तिलालजी जैन, कलिंजरा श्री धनराजजी गोवडीया, सागवाड़ा
श्री बाबुभाई सी. गांधी, ईड़र श्री बाबुभाई शाह, अहमदाबाद
श्री सूरजमलजी बोबड़ा, इन्दौर श्री निर्मलकुमार बंडी, बम्बई
श्री के.एम. शाह ,बम्बई श्री ताराचंद मणीलाल शाह, बम्बई

उक्त समिति सम्पूर्ण भारत के हूमड़ बंधुओं का प्रतिनिधित्व कर सके ऐसी संस्थाका विस्तृत प्रारूप तथा प्रस्ताव बनाकर आगामी अधिवेशनमें रखनेका निर्णय लिया गया. ।

इतिहासकी पृष्ठ भूमि

इतिहास ही किसी जाति/समाज/देश के जीवन्त होने का प्रमाण हैं। उसमें उसकी जागृति, विभिन्न गतिविधियाँ, महापुरूषों की कथा, योगदान, राष्ट्र, की मूलसंस्कृति, रीतिरिवाज, सामाजिक, परिस्थितियों का विवरण आदि होता है। यदि यह इतिहास लिपिबद्ध है तो वह समाज/जाति जागृत कहलाती है। प्रत्येक संस्कृति, देश और जाति का अपना एक इतिहास होता है। इतिहास, तथ्यों का संकलन मात्र नहीं है वरन् परिस्थितियाँ के परिप्रेक्ष्य में उत्थान और पतन, विकास और अवनति, जय और पराजय की पृष्ठभूमि भी इतिहास के अंग है । इतिहास का एकमात्र प्रयोजन वर्तमान और भावी पीढ़ि को प्रेरणा देना होता है, जिससे वह भी उन आचरणों और आदर्शों को जीवन व्यवहार का अंग बनाकर अपने जीवन को महानतम बना सके।

हूमड़ समाज ने अपने इतिहास को कभी भी क्रमबद्ध नहीं किया, इसका कारण समाज के अधिकत्तर वर्ग द्वारा इतिहास के महत्व को नहीं समझपाना हैं। यदि कुछ प्रयास हुए भी तो वे नगर - प्रांत तक ही सीमित रहे, इसका अखिल भारतीय स्तर तक प्रयास नहीं किया जा सका है ।

हूमड़ जाति, जैन समाज की एक महत्वपूर्ण एवं प्राचीन जाति है जिसका क्रमबद्ध इतिहास अत्यन्त आवश्यक है। इतिहास की अनिवार्यता बतलाते हुए श्री कन्हैयलाल मिश्र प्रभाकर ने 'जैन जागरण के अग्रदूत' में लिखा है-

''हम लापरवाही और प्रमाद का मद पिए पड़े रहें और अपनी घड़ी को भी उसकी खुराक न दें, गतिहीन रखें परन्तु फिर भी समय की, गति को रोकना हमारे वश में नहीं है।

'हम चाहें या न चाहें, समय की हवा इन असुरक्षित धुँधले पथचिन्हों को धुन्ध की भाँति उड़ाने में चूकेगी नहीं और ये पथचिन्ह ही तो हैं जो भविष्य में नवजागरण के इतिहास निर्माण के संबल होगें........'

'हम 'संस्क्रातिु-काल' से गुज़र रहे हैं। जहाँ बहुत कुछ पुराना टूट रहा है और नया बन रहा है। प्रत्येक आदमी निर्माता नहीं होता और टूट फूट की अवस्था में घबराया सा रहता है। अव्यवस्था की इसी घबराहट में आज हम जी रहे हैं और इस स्थिति में नहीं हैं कि अपने जागरण का इतिहास लिखने के लिए पलौथी मार बैठें। उधर समय की हवा पुराने पदचिन्हों के खण्डहरों का मलवा साफ करने में तेजी से लगी हैं तो आज जो अनिवार्य है वह यही कि हम अपने हिस्से की स्मृतियों का चयन कर लें। इस चयन में तथ्य इतिहास से ठोस होगें तो काव्य से तरल भी। यह 'ठोस' भविष्य में इतिहास का ईंट और चूना होगा तो तरलता उसे जोड़ने की प्रेरणा, यह दोनो ही अत्यन्त उपयोगी है।'

हूमड़ समाज द्वारा उठाये गए कदम-

इतिहास के महत्व को समझते हुए हूमड़ समाज द्वारा अपना इतिहास लिखने के लिए कुछ कदम उठाए गए है जिसका विवरण इस प्रकार है-

विज" गर सम्मेलनः-

अगस्त १९९३ में विजयनगर में प्रथम हूमड़ समाज सम्मेलन किया गया जिसमें हूमड़ समाज के इतिहास हेतु तथ्य संग्रह और संशोघन का निर्णय लिया गया।

उस समय हमारे पास निम्नांकित इतिहास सामग्री इतनी ही उपलब्ध थी-

(१) श्री जवाहरलाल जी वैघ प्रतापगढ़ द्वारा तैय्यार किया अप्रकाशित इतिहास के आघार पर पूज्य शीतलप्रसादजी द्वारा हूमड़ जाति का उद्‌भव 'दानवीर माणकचन्द' ग्रंथ में पृष्ठ-६२,६३, ६४, पर अति संक्षेप में लिखा हुआ है जिसमें काष्ठसंघ से विक्रम संवत ७५० में उद्‌भव बताया गया है।

(२) इन्दौर हूमड़ समाज ट्रस्ट से प्रकाशित 'हूमड़ समाज प्रगति के पथ पर' जिसके संयोजक है श्री सूरजमलजी बोबरा

(३) हूमड़ समाज का 'ऐतिहासिक सिंहावलोकन' लघु पुस्तिका-श्री विमलकुमारजी गाँधी द्वारा लिखित-

(४) 'खेड़बह्मा की प्रचलित मान्यता' और उह पर कुछ लेख।

(५) डूंगरपुर से प्रकासित-'गोत्र पत्रक' आदि।

उपरोक्त सामग्री को ध्यान में रखते हुए इस पुस्तक में संयोजक श्री की और से प्रस्तुत ईडर-सूरत आदि शास्त्र भंडारों के आघार पर प्राप्त पट्टावलियाँ और गुजरात के प्राचीन इतिहास के कुछ भाग आदि।

उपरोक्त किसी भी उपलब्ध सामग्री में निश्चित रूप से हूमड़ जाति के उद्‌भव का समय नहीं बताया गया था। अतएव सम्मेलन में प्रस्ताव नं. में पारित किया गया जिसमें-

(१) 'खेड़बह्मा' के उद्‌भव स्थल के संबंघ में विक्रम प्रथम सदी की लोक मान्यता के मत पर पक्ष-विपक्ष अथवा अन्य जो भी मत प्रचलित हो उनके ऐतिहासिक प्रभाव ३ माह में प्रस्तुत करने की अपील

(२) ईड़र, सूरत और अन्य हूमड़ों के प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों से प्राप्त प्राचीन हस्तलिखित शास्त्र आदि जिसमें इतिहास से सम्बन्धित जानकारी हो। इसी प्रकार मूर्ति-लेख, शिलालेख, शोघ संस्थाओं से उपलब्ध सभी हूमड़ों के प्राचीन स्थलों पर भ्रमण द्वारा तथ्य-संग्रह आदि के महत्वपूर्ण निर्णय लिए गये।

इन्दौर-द्वितीय सम्मेलनः-

इस सम्मेलन के आमंत्रण में उद्‌भव स्थल और समय के प्रमाणों के लिए समाज से अपील कर सूचित किया गया कि यदि कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होते है तो इन्दौर सम्मेलन में इसकी घोषणा करें। इतिहास इस आघार पर तैय्यार करके प्रकाशित किया जावें।

इन्दौर अघिवेशन में दो दिनों की विस्तृत चर्चा के फलस्वरूप दूसरा कोई प्रमाण उपलब्ध न होने पर एक मात्र प्रमाण 'खेड़बह्मा' में हूमड़ जाति के उद्‌भव का समय विक्रम की दूसरी शताब्दी के प्रारम्भ का निश्चित किया गया (प्रस्ताव नं. ८ और ९) यदि इसमें संशोघन रखकर यदि कोई दूसरा ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध हो तो उसका भी मत प्रकाशित किया जावेगा।

ग्रंथ के प्रथम भाग के लेखन का निर्णय-

यह निर्णय लिया गया कि हूमड़ जाति का इतिहास क्रमबद्ध तरीके से लिखा जाय। हूमड़ जाति का इतिहास वस्तुतः जैन धर्म के इतिहास का एक अभिन्न अंग है। हमें वर्तमान में उपलब्ध सभी जैन पुरातत्व विभाग से उपलब्ध सामग्री के आधार पर हूमड़ जाति के इतिहास का निर्माण करना है।

हमारे समक्ष जैन जाति के इतिहास से सम्बन्धित उपलब्ध सामग्री इस प्रकार है-

(१) लेखक-डॉ कस्तूरचन्द कासीवाल द्वारा लिखित निम्नांकित पुस्तकें-

(अ) खण्डेवाल जैन समाज का इतिहास

(ब) जैन जातियों का बृहद इतिहास

(स) अन्य ग्रंथ जिनमें प्राचीन ग्रंथ, सूचि, शिलालेख आदि का ब्योरा मिलता है।

(२) पोरवाल समाज का इतिहास-लेखक डॉ. रघुवीर सिंह

(३) 'अग्रवाल समाज का इतिहास'-

(४) 'पोरवाल जाति का इतिहास' लेखक-मनोहरलाल पोरवाल, मार्गदर्शक-डॉ.रघुवीरसिंह-

(५) 'ओसवाल जाति का इतिहास' लेखक श्री मांगीलाल भूतोड़िया।

इन सब विद्वान लेखकों ने तथा डॉ. कासलीवाल ने अपने इतिहास नें 'चौरासी जातियों का उदभव व विकास' नामक लेख में बघेरवाल, जैसेवाल, पालीवाल, नरसीपुरा, लमेचू, गोलापूर्व, गोलासग्रे, चितौड़ा, नागदा, बरेच्या, आदि जाति के उल्लेख में अधिकतर जातियों का संबंध मूलसंघ विभाजन तथा विक्रम की दूसरी तीसरी शताब्दी से जोड़ा है। राजमार्ग सभी विद्वान लेखकों ने अपनाया है, हमने भी उसी मार्ग पर के आधार पर संशोधन करने का निर्णय किया हैं।

हमने हूमड़ समाज के उदभव और समय के लिए निम्नांकित ग्रंथो व शास्त्र भंडारों से तथ्य ग्रहण किये है-

(१) ईडर और सूरत में हूमड़ों के भट्टारकों की गद्दी के शास्त्रों भंडारों से पट्टावली।

(२) केशरियाजी के 'भट्टारक यशकीर्ति सरस्वती भवन' से उपलब्ध पट्टावली आदि।

(३) नेमिचन्द ज्योतिचार्य द्वारा लिखित 'भगवान महावीर और उनकी आचार्य परम्परा' भाग (१ से ४)

(४) हूमड़ पुराण अति प्राचीन ग्रंथ की तीन भिन्न भिन्न स्थलों से प्राप्त प्रतियाँ

(५) 'हूमड़ वंशावली'- डूंगरपुर शास्त्र भंडार से

(६) भट्टारक सम्प्रदाय ग्रंथ- डॉ.वी.पी.जोशपुरकर

(७) 'जैन सिद्धान्त कोष'-जैनेन्द्र वर्णी-भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली द्वारा प्रकाशित (भाग १ से ४)

(८) 'तिलोक पण्णति भाग १ से २

(९) हरिवंश पुराण

(१०) ब्रह्म पुराण के.'ब्रह्म क्षेत्र महात्म'

(११) 'ब्रह्मोत्पत्ति मार्तण्ड' प्राचीन हिन्दू पुराण

(१२) र्तिलेख, शिलालेख, आदि। लगभग ८ ग्रंथ भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली से प्रकाशित तथा लगभग १० से अधिक ग्रंथो से

(१३) श्वेताम्बर समाज के गच्छों, गणों, के अनेक इतिहास। इस प्रकार कुल लगभग १०० ग्रंथ।

उपर्युक्त ग्रंथो का विस्तृत अध्ययन एवं मनन के पश्चात् यह निश्चित किया गया कि हमारी हूमड़ संस्कृति, धर्म, इतिहास के मूल स्त्रोत को ५ भागों में विभाजित किया जा सकता है

(१) हूमड़ों द्वारा निर्मित किये गए जिनालय।

(२) खेडब्रह्मा के भूगर्भ व नदी की रेती से प्राप्त अनेक अति प्राचीन मूर्तियाँ जो ईडर, तारंगा, सागवाड़ा, भीलौड़ा, के पास स्थापित की गई हैं। रायदेश में प्राप्त बड़ी संख्या में खण्डहर, जिनालय, डेरोल में मूल मंदिर व हूमड़ों के भट्टारकों की गद्दी।

(३) ईडर, सूरत आदि प्राचीन शास्त्र भंडारों से प्राप्त ग्रंथों में पट्टावलियाँ जो मूल प्राकृत में हैं।

(४) वर्तमान सभी इतिहासकारों ने हूमडों की भट्टारक गद्दी को मूलसंघ, नंदिसंघ, बलात्कारगण, सरस्वती गच्छ के नाम से जोड़ा है।

(५) सारे भारत में जहाँ भी हूमड़ गये वहाँ जितने भी जिनालय बनाए उनकी मूर्तियों पर नंदिसंघ, बलात्कारगण, सरस्वती गच्छ का उल्लेख है जो हजारों की संख्या में उपलब्ध है।

मूलसंघ विभाजन जिसे जैन व सभा अजैन इतिहासकारों ने स्वीकार किया है। उस समय के आचार्यों ने भिन्न भिन्न संघो, व गच्छों की रचना की जिसे भिन्न जातियों ने अपनाया। हूमड़ जातिने नंदिसंघ को अपनाया । यह लेख मूर्तियों पर खूदें हुए पाये जाते है । इस प्रकार के लेख जंन - जाति के अतिसित्त किसी अन्य जाति की मूर्तियाँ पर अंकित नहीं होते। इसका विस्तृत विवरण हमने 'मूलसंघ' विभाजन एवं 'हूमड़ जाति' की नंदिसंघ से सम्बन्ध लेख में किया है।

अब हम यहाँ दो सारणियों (टेबल) पर विचार करेगें। पहली 'भट्टारक सम्प्रदाय' नामक ग्रंथ से है जो भट्टारकों के विषय में प्रामाणिक ग्रंथ है। इसका उल्लेख हमने हमारे भट्टारक उद्‌भव में किया है। इसके प्रस्तावना में पृष्ठ-३ पर दी गई पट्टावली इस प्रकार है:

भद्रबाहु

अर्हदबलि — लोहाचार्य

विनयन्धर

माघनन्दि (मूलसंघ)	धरसेन (सेनसंघ)	विनयन्धर (पुन्नाट गण) (लाडवागढ गच्छ)

नन्दिसंघ

पूज्यपाद देवनन्दि — वीरसेन

वज्रनन्दि	गुणनन्दि	जिनसेन	विनयसेन
(द्राविड संघ)	मूलसंघ	गुणभद्र	कुमारसेन
देशीय गण	बलात्कार गण	सेनगण।	रामसेन
	सरस्वती गच्छ		माथुर गच्छ
			नेमिषेण
			नन्दीतट ग

पट्टावलियाँ तथा गुर्वावलियाँ

मूलसंघ विभाजन

मूल संघकी पट्टावली पहले दे दी गई (दे.शीर्षक ४/२) जिसमें वीर-निर्वाणके ६८३ वर्ष पश्चात तक की श्रुतधर परम्परा उल्लेख किया गया और यह भी बताया गया रि आ.अ.अर्हदघालि के द्वारा यह मूलसंघ अनेक अवान्तर संघोमें विभाजित हो गया था। आगे चलने पर ये अवान्तर संघ भी शाखाओं तथा उपाशाखओंसे विभक्त होते हुए विस्तारको प्राप्त ही गए। इसका यह विभक्तिकरण किस क्रम से हुआ, यह बात नीचे चित्रित करने का प्रयास किया गया हैं।

अंगाशधारियोंकि परम्परामें

लोहाचार्य २ (वी. नि. ५१५-५६५)

अर्हदबलि (वी. नि. ५६५-५७३)			गुणघर
घरसेन	माघनन्दि		
(५६५-६३३)	(५८३-६१४)		
पुष्पदन्त	नन्दिसंघ बलात्कार गण		आर्यमंक्ष
(५९३-६३३)	(दे. आगे पृथक् पट्टावली)		(६००-६५०)
भूतबलि	जिनचन्द		नागहस्ति
(५८३-६८३)	(६४५-६५४)		(६२०-६८७)
	कुन्दकुन्द		यतिवृषभ
	(६५४-७०६)		(६५०-७००)
शाखा-१		शाख-२	
गृद्धपिच्छ उमास्वामी		वादिराज समन्तभद्र	
(वी. नि. ७०६-७७०)		(वि. श.२-३)	
(ई.१७८-२४३)		(ई.१२०-१८५)	
लबाक पिच्छ	लोहाचार्य	सिहनन्दि.१ इ. श. २	
ई. २२०-२३१		पात्र केशरी ई. श. ६-७	
नन्दिसंघ	नदिसंघ	वक्रग्रीव	
देशीयगण	बलात्कार गण	वज्रनन्दि नं. रवि. श. ६	
(दे. शीर्षक	(दे. शीर्षक	सुमतिदेव ई. श. ७-८	
७/१)	७/२)		
	सरस्वती गच्छ	कुमारसेन	
		(काष्ठासंघी) वि. ७५३	
		चिन्तामणि	
		बुद्धदेव	
		(चुडामणि)	
		महेश्वर मुनि	
		अकलंकभट्ट	पुष्पसेन
		पं. कैलाशचन्द्र-	
		ई. ६२० - ६८०	
		पं. महेन्द्रकुमार	
		ई. ७२०-७८०	बादीमसिंह
		महीदेव	(ओडयदेव)
		ई. ६६५-७०५	ई. ७७०-८६०

दूसरी सारणी ''जैन सिद्धांत कोष'' जिनेन्द्र वर्णी भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन से ली गई है। जिसका विस्तृत विवेचन हमारे 'मूलसंघ विभाजन' लेख में किया गया है। इससे हूमड़ समाज का सीधा संबंध नन्दिसंघ बलात्कारगण से प्रमाणित होता है।

अब एक ओर प्रश्न उठता है गोत्र एवं गोत्रकुण्ड नाम मूल, कुल देवियाँ आदि के सम्बन्ध में जिसका समाधान मेरे विचार से के सम्बन्ध में जिसका समाधान मेरे विचार इस प्रकार हो सकता है-

वर्ण व्यवस्था प्रारम्भ से आदिनाथ भगवान के समय से चलती आई है। क्षत्रियों के सभी धार्मिक और व्यवहारिक कार्य, जन्म, मरण, पूजा-पाठ आदि बाह्मण पुरोहित करते आये थे। उस समय सभी बाह्मण अधिकतर वैदिक हिन्दूधर्म से सम्बन्ध रखते थे। उपलब्ध प्रमाणों से उनकी आजीविका क्षत्रियों के दान से ही थी। वे आजीविका के लिए उनकी मान्य देवियों आदि की पूजा करवाते थे जिसका उल्लेख वेणीवत्स की कथा से मिलता है तथा प्रमाण 'हिन्दूपुराण' बाह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड' से मिलता है।

आजीविका हेतु क्षत्रिय धर्म त्याग कर हूमड़ों ने वणिक धर्म स्वीकार किया उस समय पुरोहितों की आजीविका का प्रश्न उपस्थित हुआ क्योंकि वे इन क्षत्रियों के द्वारा दी गई दक्षिणा पर ही निर्भर करते थे, उस समय यह निश्चित किया गया कि यदि वे पुरोहित जैन धर्म के अनुसार जन्म-मरण विवाह आदि किया करवायेंगे तो उनकी आजीविका का निर्वाह हूमड़ समाज करेगा। (वेणीवत्स प्रकरण देखिये)

राजनैतिक परिस्थितियों इस प्रकार चल रही थी कि हूमड़ों को स्थानान्तरण करना पड़ा, उन्हें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जैनधर्म की मान्यता के अनुसार प्रत्येक तीर्थकर के यक्ष यक्षिणी होते है। वे सधर्मी भाई-बहिनों की आपातकाल में रक्षा करते है। अतएव इसी मान्यता के आधार पर विक्रम की २-३ शताब्दी में देवी पदमावती, जो भगवान पार्श्वनाथ की शासन देवी हैं और देवी चक्रेश्वरी जो भगवान आदिनाथ की शासन देवी हैं, उनकी आराधना करना ,उनकी मूर्तियों की स्थापना करना तथा स्थानान्तरण के समय उनकी मूर्तियों को साथ में ले जाना आदि खूब प्रचलित हुआ।

यही प्रथा मुगलों के आक्रमण के समय भट्टारकों ने इन शासन देवियों की आराधना उपासना द्वारा मंत्र तंत्र सिद्ध करके , जिनालयो, जैन श्रावकों की रक्षा की जिसके अनेक प्रमाण उपलब्ध है। इसके फलस्वरूप सभी हूमड़ों के प्राचीन जिनालयों में देरी पदमावती की मूर्ति के मस्तक पर भगवान पार्श्वनाथ की मूर्ति विराजमान हैं।

इस प्रकार गोत्रों का सम्बन्ध कुल देवियों से होने में मतभेद हो सकता है परन्तु गोत्र प्रारम्भ से है, अटक समयानुसार बदलती रही हैं, इस पर अधिक शोध की आवश्यकता है जिस पर हम दूसरे भाग में विस्तार से विचार करेगें।

इसी प्रकार पावागढ़ से भी लाडवंश के राजकुमार मोक्ष गये, यह जैनागम स प्रमाणित है।

लाडवंश पज्जुण्णो सम्भूकुमारो तहेव आणि रच्हो
बहत्तर कोडिओ उज्जयन्तो सत्तिया सिद्धा विवरण कांड,

गिरनार से बहत्तर करोड़ और सात सौ मुनि मोक्ष पधारें हैं। इस पवित्र भूमि से मोक्ष-प्रयाण करनेवालों में हैं भगवान नेमिनाथ एवं प्रद्युम्नकुमार. सम्भूकुमार, अनिरूद्ध आदि यादव कुमारों के साथ लाडवंश के बहुत से राजागण

रामचंद्र के सुत दोय वीर
लाडनरिंद्र आदि गुण धीर
पांच कोड़ि मुनि मुक्ति मंझार
पावागिरि वन्दो निरधार

निर्वाण कांड से

(४) विक्रम के प्रारम्भ से रायदेश में लाडवंश की उपस्थिति के प्रमाण भी इतिहास में दिये गये हैं।

इसी समय आचार्य धरसेन भी गिरनार में उपस्थिति, भूतबलि, पुष्पदंत, की गुजरात में उपस्थिति अंकलेश्वर के पास सजोद में जो हूमड़ों का तीर्थ है। धवला जय धवला के ग्रंथों की रचना, नहपान,राजा की जैन मुनि के रूप में दीक्षा और सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण यह है कि आज भी रायदेश में आदि खेड़ब्रह्मा को बिन्दु मानकर १०० कि. मीटर की परिधि बनायी जो तो उसमें हूमड़ों का सिवाय दूसरे किसी जैन की बस्ती नहीं है। हमने हमारे ''मूलसंघ विभाजन'' और '' हूमड़ों का नन्दिसंघ बलात्कारगण सरस्वती गच्छ से सीधा सम्बध'' नामक लेख में इस पर विस्तार से विचार किया है।

अखिल भारतीय हूमड़ जैन समाज एवं शोध समिति के उद्देश्य

(अ) वीतराग देवशास्त्र-गुरू मे आस्था तथा अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, संयम, समता और अनेकान्त सिद्धान्तों का प्रचार प्रसार ।

(आ) हूमड़ संस्कृति, कला, इतिहास और पुरातत्व से संबंधित दुर्लभ साहित्य के संरक्षण, संशोधन, प्रकाशन को मूर्तरूप देना।

अखिल भारतीय हूमड़ इतिहास शोध समिति द्वारा हूमड़ जैन इतिहास प्रकाशित करवाना तदनुसार आगे भी हूमड़ समाजोत्कर्ष वाली ऐतिहासिक शोधपूर्ण योजनाएँ तैयार करना, कार्यान्वियन और उनके प्रकाशन को व्यवस्था करना

(इ) हूमड़ समाज के संगठित परिचय, वैचारिक आदान-प्रदान, वैवाहिक संबंध एवं पत्राचार आदि को सुलभता-हेतु अखिल भारतीय स्तर पर समग्र हूमड़ समाज को जनगणना (विवरण)तैयार करके उसे ब्यौरेवार विभिन्न खण्डो मे प्रकाशित करना।

(ई) हूमड़ समाज के प्राचीन- अति प्राचीन व वर्तमान समय के धार्मिक एवं सामाजिक रीति-रिवाज़ों एवं जैन संस्कृति के समन्चय हेतु विविध सांस्कृतिक सम्मेलनों एवं कार्यक्रमों का आयोजन करना।

(उ) प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षा पद्धति के समन्वय पर आधारित पाठसालाओं, विद्यालयों, महाविद्यालयो, गुरूकुलों जैसी शिक्षण संस्थाओं के निर्माण विस्तार और विकास में सहयोग देना।

(ऊ) भारतीय संस्कृति की अपूर्व धरोहर हूमड़ो के जिनालयो की दैन मूर्तियों, स्तम्भों, शिलालेखो, कीर्ति-स्तम्भो, स्मारकों, संग्रहालयो, स्थापत्य की कलाकृतियों और पुरा लिपियो का सर्वेक्षण, खोज, संरक्षण, प्रकाशन आदि करना और कराना तथा इन कार्यों से जुड़ी संस्थाओ और व्यक्तियों को हर प्रकार का सहयोग देना।

(क) अखिल भारतीय युवा- प्रवृत्तियों, महिला संगठन, धार्मिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रमों का आयोजन करना ताकि हूमड़ समाज के युवको और महिलाओं को आगे आने का सुअवसर प्राप्त हो सके।
महिलाओं के सामाजिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक उत्थान के लिए-गृह-उद्योगों, कार्यशाला, अधिवेशनो और ट्रेनिंग-व्यवस्था, सहकारी क्षेत्रो क्रेडिट सोसायटी, मल्टी परपज़ को. ऑपरेटिव सोसायटी, कन्स्यूमर्स सोसायटी स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त करते हुए सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्र के नये आयाम उद्घाटित करना।

(ख) असहाय, असमर्थ, बेरोज़गार, निराश्रित, अपाहिज, वृद्ध, अपंग और गरीब व्यक्तियों एवं विधवाओं को जीविकोपार्जन के लिये आर्थिक सहायता जुटाना तथा उन्हें सहायता देने वाली संस्थाओं को सहयोग प्रदान करना।

(ग) जनकल्याण की दृष्टि से औषधालयों, चिकित्सालओ, प्रसूतिग्रहों, पाठशालाओं, पुस्तकालयो, वाचनालयों, स्वाध्याय-मण्डलो छात्रा वासो आदि की स्थापना, विस्तार और विकास करना तथा ऐसे प्रचार एवं प्रयत्नो में पूर्ण सहयोग देना।

(घ) वे सभी कार्य करना जो संस्था के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रत्यक्ष रूप से सहायक हो, जिसमें सम्मिलित हैं-
भूमि, भवन, चल एवं अचल सम्पत्ति का क्रय तथा विक्रय, आयकर अधिनियम के अन्तर्गत संभव प्रतिभूतियो, बौंड (Bond) आदि में निवेश, ऋण लेना इत्यादि

(च). अखिल भारतीय संस्थाओं के सम्मेलन आमंत्रित करना, अखिल भारतीय स्तर पर समन्वय और संगठन विषयक कार्यक्रमों का आयोजन करना। कुल मिलाकर समग्र हूमड समाज को संगठित करके, एक रचनात्मक मंच तैयार करना ही प्रस्तुत सेवा -समाज का मुख्य प्रयोजन रहेगा। जैन साहित्य, संस्कृति, दर्शन, इतिहास, एवं पुरातत्व संबंधी उच्च कोटि की परियोजनाओं को क्रियान्वित करना, अध्ययन-अध्यापन संबंधी सुलभताएँ प्रदान करना, विद्वानों का सम्मान करना, जन कल्याण संबंधी विविध कार्यक्रमों को करना, समाज के असहाय, असमर्थ, अपाहिज, अपंग, विधवा- वर्ग के लिए आर्थिक सहयोग जुटाना और आयकर अधिनियम के तहत चल-अचल संपत्तियों का सुचारुद्ध रूप से संचालन करना प्रस्तुत सेवा-समाज के विभिन्न अनुभाग होंगे।

अखिल भारतीय युवा- प्रवृत्तियों, महिला संगठन, धार्मिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रमों का आयोजन करना ताकि हूमड़ समाज के युवकों और महिलाओं को आगे आने का सुअवसर प्राप्त हो सके। महिलाओं के सामाजिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक उत्थान के लिए-गृह-उद्योगों, कार्यशाला, अधिवेशनों और ट्रेनिंग-व्यवस्था, सहकारी क्षेत्रो क्रेडिट सोसायटी, मल्टी परपज़

को. ऑपरेटिव सोसायटी, कन्स्यूमर्स सोसायटी स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त करते हुए सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्र के नये आयाम उद्घाटित करना।

हमारी आगामी योजनाएँ

जो लेख इस भाग मे प्रकाशित होने से रह गए थे, उन्हें हम द्वितीय भाग में सम्मलित कर रहे हैं। वे इस प्रकार है-

(१) प्रतापगढ़ का विस्तृत इतिहास-लेखक श्री भैयालाल बंडी

(२) उदयपुर का इतिहास व सामाजिक सर्वे-लेखक श्री गणेशलालजी छापियाँ एवं श्री रतनलालजी जैन

(३) हूमड़ बागड़ समाज का इतिहास तथा सामाजिक सर्वे लेखक- श्री कान्तिलाल सी. जैन व श्री हीरालाल सी. जैन

(४) फल्टण (महाराष्ट्र) का इतिहास तथा सामाजिक सर्वे लेखक-श्री आनंदलाल जीवराज दोशी

(५) जैन धर्म का प्रारम्भिक इतिहास - श्री सूरजलालजी बोबड़ा इन्दौर

प्रथम भाग में हमने वि.स.७५० तक का इतिहास लिखने का प्रयास किया है। शेष वर्तमान समय तक का इतिहास तथा हूमड़ समाज का सामाजिक सर्वे अगले भाग में समाहित करने की योजना है।

विशेष:-

केन्द्रिय कार्यालय पर विशेष कार्यभार होने के कारण, अधूरे पारिवारिक विवरण, विलम्ब से प्राप्त फोटू अथवा विवरण तथा अन्य कई कारणों से ५० से अधिक पारिवारिक विवरण हम इस भाग में प्रकाशति नहीं कर सके है, इसके लिए हम खेद सहित क्षमाप्राथी हैं। इन सभी का अगले भाग में समावेश किया जायेगा।

पावागढ़ में १९-२० नवम्बर १९९४ को सम्पन्न होने वाले अखिल भारतीय हूमड़ जैन सम्मेलन को सफल बनाने हेतु हमने निम्न समितियों का गठन किया है तथा उनके सम्मानीय सदस्यों का हम हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं। इन सब सदस्यों से हमे हर प्रकार का सहयोग प्राप्त हुआ है। यह समितियों व इनके सदस्य इस प्रकार हैं-

अखिल भारतीय हूमड़ जैन इतिहास शोध समिति
तृतीय सम्मेलन
पावागढ़ १९-२० नवम्बर का अतिथि मण्डल

श्रेष्ठी श्री घनकुमार ज़वेरी, बम्बई
श्री अरविंद भाई दोशी, बम्बई
श्रेष्ठी श्री चिरंजीलालजी बक्षी, बम्बई
श्री जीवराज खुशालचंद गांधी, बम्बई
श्री रोशनलालजी संघवी, अहमदाबाद
श्री प्रकाशजीवचन्द जवेरी, बम्बई
श्रीमती कंचनबाई मोतीलाल वागडिया, इन्दौर
श्रीमती प्रसन्न सूरजमल शाह बम्बई
श्रीमती मरुदेवी घनकुमार जवेरी, बम्बई
श्रीमती आशीत जवेरी, बम्बई

स्वागत - मंडल

श्री के. ऐम. शाह-	बम्बई
श्री श्री ज्ञानचंद शेठ	बम्बई
श्री चन्दुलाल सरदार	बम्बई
श्री ताराचंद मणीलाल शाह	बम्बई
श्री डॉ. मोतीलाल बगडीया	इन्दौर
डॉ. जे. सी. शाह	ईडर
श्री विजयकुमार बंसतीलाल रामावत	इन्दौर
श्री गणेशलालजी छापियाँ	उदयपुर
श्री महावीर प्रसादजी मिंडा	उदयपुर
श्री धनराजजी गुवाडिया	सांगवाड़ा
श्री कान्तीलालजी जैन	कलिंजरा
श्री केशरिमल दोशी	प्रतापगढ़
श्री पोपटलाल कालीदास कोठोरी	ईडर
भाउ साहेब गाँधी	सोलापुर
श्री हीरालाल बाबू गां घी	अकलुज
श्री आनंदलाल जीवराज दोशी	फलटन
जम्बूकुमार चंदुलाल सरार्फ	बारामती
अरविन्द्र माणेकचंद गाँधी	पूना
श्री रसीकलाल नेमचंद शाह	अहमदाबाद
श्री बाबूलाल चंपकलाल शाह	अहमदाबाद
श्री बाबूलाल शकरचन्द शाह	अहमदाबाद
श्री छगनलाल मोतीलाल शाह	बम्बई
श्री कान्तीलाल तलकचंद दोशी	विजयनगर

अध्यक्षः श्री शांतिलाल दोशी संयोजकः श्री हीरालाल जैन

स्वागत समिति सदस्य

१.	माननीय श्री शाह कान्तिलाल मगनलाल [श्री के.एम.शाह]	बम्बई
२.	माननीय श्री सेठ ज्ञानचंद	बम्बई
३.	माननीय श्री बंडी चांदमल हीरालालजी	बम्बई
४.	माननीय श्री सालगिया डॉ.धनपाल चांदमल	बम्बई
५.	माननीय श्री पाडलिया मोहनलाल किशनलाल	बम्बई
६.	माननीय श्री बंडी निर्मलकुमार झमकलालजी	बम्बई
७.	माननीय श्री ताराचंद मणीलाल शाह	बम्बई
८.	माननीय श्री शाह बाबूलाल सोमचंद शाह	बम्बई
९.	माननीय श्री श्रेष्ठी सुमनचंद चीमनलाल शाह	
१०.	माननीय श्री शान्तिलाल सज्जनलाल दोशी	इन्दौर
११.	माननीय श्री विजयकुमार बंसतीलाल रामवात (विमलकुमार बसंतीलाल रामावत)	
१२.	माननीय श्री हसमुखलाल गांधी	इन्दौर
१३.	माननीय श्री धनराजजी गुवाडिया	सागवाड़ा
१४.	माननीय श्री शरदकुमार गंगाराम दोशी	फल्टन
१५.	माननीय श्री हीरालाल माणकलाल गांधी	अकलून
१६.	माननीय श्री डॉ. हुकमचंद रुपचंद फड़े	पंडलपुर
१७.	माननीय श्री बाबूलाल चम्पकलाल शाह	अहमदाबाद
१८.	माननीय श्री बाबूलाल सागरमल तलाटी	दाहोद
१९.	श्री सनतकुमार आशाभाइ शाह	बडौदा
२०.	श्री बाबूभाइ नगीनदास शाह	अहमदाबाद
२१.	श्री सतीशभाई अमृतलाल महेता	अहमदाबाद
२२.	श्री मुकेशकुमार बाबूलाल कोठारी	बम्बई
२३.	श्री मनहरलाल अमृतलाल महेता	बम्बई

स्वागत समिति सहसदस्य

१. श्री महेन्द्र शाह	बम्बई
२. श्री धनपाल बंडी	बम्बई
३. श्री सुमतिलालजी गांधी	बम्बई
४. श्री निर्भयकुमार डावड़ा	बम्बई
५. श्री गेदमलजी पाडलिया	बम्बई
६. श्री दोशी सोभागचन्ड मोतीचन्ड	बम्बई
७. श्री चिरंजीलालजी बसंतलालजी शाह	बम्बई
८. श्री बक्षी डॉ. रमनालाल कनैयालाल	बम्बई
९. श्री बक्षी देवकुमार चाँदमलजी	बम्बई
१०. श्री पतंगिया कांतिलाल मगनलाल	बम्बई
११. श्री कोडिया नरेन्द्रकुमार नेमीचन्ड	बम्बई
१२. श्री सालगिया सूरजमल गेदमलजी	बम्बई
१३. श्री दोशी कुमुदप्रकाश कनैयालालजी	बम्बई
१४. श्री सुरेशकुमार चाँदमल वगेरिया	बम्बई
१५. श्री भूता कान्तिलालजी इन्दमलजी	बम्बई
१६. श्री तलाटी विजेन्द्रकुमार सनतकुमार	बम्बई
१७. श्री श्रवणकुमार छगनलालजी कपटी	बम्बई
१८. श्री राजेन्द्रकुमार मेगकरणजी गांधी	बम्बई
१९. श्री महेन्द्रकुमार सोभागमलजी गांधी	बम्बई
२०. श्री रवीन्द्रकुमार अजबलाल रामावत-थाना	बम्बई
२१. श्री धनपाल चाँदमलजी भृता-थाना	बम्बई
२२. श्री सूरजमलजी शाह	बम्बई
२३. श्री विमलकुमार जैन	अहमदाबाद
२४. श्री सुरेशकुमार जैन	अहमदाबाद
२५. श्री सूरजमलजी आंजनिया	इन्दौर
२६. श्री चाँदमलजी बोबरा	इन्दौर
२७. श्री कैलाश एस. जैन	जयपुर
२८.श्री डॉ. विट्ठलभाइ शराफ	बडौदा
२९. श्री मनुभाइ नगीनदास	पादरा
३०. श्री कुमुदभाई साकरलाल शाह	ईडर
३१. श्री कान्तिलाल आनंदीलाल गांधी	बम्बई

समेंलन व्यवस्थापक समिति :-

श्री बाबुलाल चंपकलाल शाह	अहमदाबाद
श्री निर्मलकुमार बंड़ी	बम्बई
श्री विनोद हर्ष	अहमदाबाद
श्री अशोक जैन	अहमदाबाद
श्री सुमतिलाल गांधी	बम्बई
श्री महेन्द्र शाह	बम्बई
श्री देवकुमार बंधी	बम्बई
श्री प्रकाशचंदजी सालगिया	इन्दौर
श्री पवनकुमार बागडिया	इन्दौर
श्री हसमुख गांधी	इन्दौर
श्री सनतकुमार तलाटी	इन्दौर
श्री महेन्द्रभाइ शाह	हालोल
श्रीमति मीरा गांधी	बम्बई
श्रीमति अरूणा बंडी	बम्बई
श्रीमति रमीला बंडी	प्रतापगढ
श्रीमति जया सालगिया	इन्दौर
श्रीमति निर्मला पंचोली	झाबुआ
श्रीमति निर्मला डेन्डू	डूंगरपुर
श्रीमति नयनबाल रोकडिया	प्रतापपुर
श्री जम्बूकुमार हूम्मड़	उदयपुर
श्री कान्तीलाल शाह	तलवाडा
श्री बदामीलाल बखारिया	डूंगरपुर

संस्थाओं

हूम्मड समाज प्रगति मंडळ	अहमादाबाद
प्रतापगढ़ जैन युवा मंच	बम्बई
प्रतापगढ़ जैन महिला मंडळ	बम्बई
बाहूबली सेना अकलूज	महाराष्ट्र
हूम्मड़ जैन युरा मंच	इन्दौर
यवा मंडळ	बागीदोरा

हमारे पास हूमड़ समाज के उदभव स्थल तथा उदभव समय के अनेक मत प्राप्त हुए हैं।

(१) माननीय श्री विमलचन्दजी गांधी का तीसरी चौथी शताब्दी के आस-पास

(२) तारंगा से चौथी शताब्दी से

(३) शंत्रुजय (पालिताणा) से पाँचवी शताब्दी से

(४) माननीय श्री जवाहरलालजी वैद्य प्रतापगढ़ द्वारा सात आठ शताब्दी

(५) माननीय श्री सूरजमलजी बोबड़ा द्वारा इन्दौर '' हूमड़-मित्र'' में उदभव के मत

(६) माननीय श्री कांतिलालजी नानालालजी कोठारी कुशलगढ़ द्वारा ग्यारह-बारह शताब्दी के आस-पास

इसके सिवाय खेड़ब्रह्मा से पहली शताब्दी के अनेक विद्वानों के मत प्राप्त हुए हैं। इतिहास शोध समिति इन सब विद्वानों का आभार मानता हैं।

प्रथम व द्वितीय अधिवेशन के आयोजन में श्री दिगम्बर जैन हूमड़ समाज विजयनगर, श्री अखिल भारतीय हूमड़ संस्कार, परिवार, इन्दौर, श्री हूमड़ जैन समाज ट्रस्ट इन्दौर, श्री हूमड़ युवा मंच इन्दौर आदि संस्थाओं के प्रति भी हम विशेषरूप से आभारी है जिन्होंने अधिवेशनो का सफलतापूर्वक आयोजन किया और शोधसमिति को इस ग्रंथ की परिपूर्णता में सहयोग प्रदान किया है।

हम आभार व्यक्त करते हैं इस इतिहास को ग्रंथ रूप में आकार देनेवाले साहित्य शिल्पी गुजरात विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के रीडर डॉ. श्री रामकुमार गुप्त व उनके सहयोगी छात्र- छात्राओं का, जिनके अथक परिश्रम से यह संभव हो पाया है, साथ ही श्री गणेशलालजी छापियाँ (उदयपुर) जिनका हमें समय समय पर मार्गदर्शन मिलता रहा तथा श्री घनराजजी गुवाड़िया (सागवाड़ा) श्री बाबूलालजी गांधी (ईडर) श्री भैयालालजी बण्डी (प्रतापगढ़) श्री आनंदीलालजी दोशी(फल्टन) श्री कांतिलालजी जैन (कलिंजरा) व हीरालाल जैन (कलिंजरा) के भी हम आभारी है जिनका लेखन व शोध कार्य में निर्देशन मिलता रहा।

हम आभार व्यक्त करते है इस ग्रंथ के विमोचन कर्ता श्रेष्ठि श्री चिरंजीलालजी बक्षी (बम्बई) का जिन्होंने अपना अमूल्य समय व आर्थिक सहयोग हमें प्रदान किया साथ ही श्रेष्ठि श्री घनकुमार जवेरी (बम्बई) व श्री अरविन्द भाई दोशी (बम्बई) भी हमारे आभार के अधिकारी हैं।

आर्थिक सहयोग के लिए हम सभी विज्ञापन दाताओं के आभारी हैं।

अन्त में उन्हीं सब महानुभावों का हृदय से आभार मानते है जिन्होंने प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से हमें सहयोग दिया और इस दुरुहकार्य को सरल बनाया है।

दिनांक -११-११-९४.

निवेदक
श्री हीरालाल जैन (सालगिया)
श्री शांतिलाल दोशी

हूमड़ जैन इतिहास शोध समिति स्थापना दिनांक १८-८-९३

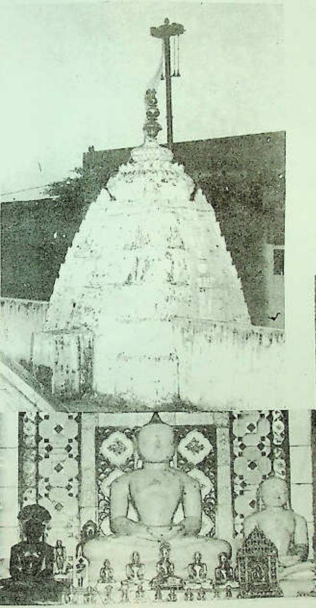

सानिध्य आशीर्वाद

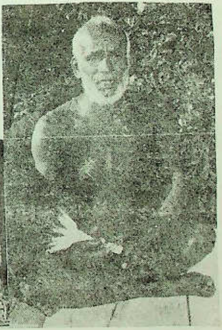

श्री ऋषभदेवजी दि. जैन मंदिर
विजयनगर (गुजरात)

प. पू. १०८ आचार्य
सुबाहुसागरजी महाराज

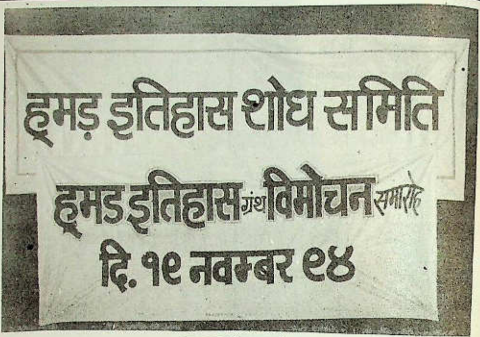

पावागढ़ (गुजरात)

माननीय श्री चिरंजीलालजी बक्षी (बम्बई), हूमड़ जैन समाज का सांस्कृतिक इतिहास (प्रथम भाग) का विमोचन करते हुए।

ध्वजवंदन करते हुए माननीय श्री
गणेशलालजी छापिया,
उदयपुर

ध्वजवंदन का एक दृश्य

इतिहास शोध समिति द्वारा प्रस्तुत प्रदर्शनी : उद्‌घाटन
उद्‌घाटन कर्ता : माननीय श्रेष्ठी श्री हीरालाल माण्कलाल गांधी, अकलूज (महाराष्ट्र)

उद्‌घाटन समारोह, तृतीय सम्मेलन (दायें से बायें) श्री गणेशीलालजी छापिया,
श्री शांतिलालजी दोशी, श्री धनकुमार ज़वेरी, श्री धनराजजी गोवाडिया
उद्‌घाटन करते हुए श्रेष्ठी श्री चिरंजीलालजी बक्षी, श्री के. एम. शाह, बम्बई

उद्घाटन समारोह का एक दृश्य : दीप प्रज्जवलन

अखिल भारतीय हूमड़ जैन संघ (फेडरेशन) के प्रमुख सदस्य मुख्य अतिथि के साथ अध्यक्ष श्री शांतिलालजी दोशी, श्रेष्ठी श्री धनकुमार ज़वेरी, संयोजक श्री हीरालाल जैन, श्रीमती मरुदेवी ज़वेरी, श्री निर्मलकुमार बंडी, श्री के. एम. शाह (स्वागताध्यक्ष)

माननीय श्रेष्ठी
श्री धनकुमार ठाकुरदास ज़वेरी
बम्बई संघ की स्थापाना
की घोषणा करते हुए

मुख्य अतिथि
श्रेष्ठी श्री चिंरजीलालजी बक्षी
भाषण देते हुए

ग्रंथ की प्रति का अधिग्रहण करते हुए श्रीमती अरूणा बण्डी एवं श्री निर्मलकुमार बण्डी
ग्रंथ प्रदान करते हुए श्री हीरालाल जैन (संयोजक)

अखिल भारतीय हूमड़ जैन महिला संगठन प्रथम संम्मेलनः पावागढ़
उद्‌घाटन करते हुए श्रीमती प्रसन्ता शाह, बम्बई

दीप प्रज्जवलन
सांस्कृतिक कार्यक्रम

अतिथि विशेष डॉ. (श्रीमती) शशिबेन बागड़िया का सम्मान करते हुए
श्रीमती तारा भाचावत

सरस्वती वंदना का भावपूर्ण चित्र
सांस्कृतिक कार्यक्रम की विविध छबियाँ

सांस्कृतिक कार्यक्रम का संचालन करते हुए
श्रीमती प्रेरणा बोहरा व श्रीमती भारती कियावत्

इन्दौर महिला मंडल की ओर से अंताक्षरी का एक दृश्य

श्री गणेशलालजी छापीयां

श्रीमती इन्दुबेन झवेरी बम्बई

श्री हीरालालजी जैन (सालगिया)

श्री के. एम. शाह

श्री निर्मलकुमार बडी

श्री के.एम. शाह श्री हिरालाल जैन और श्री शांतिलाल दोसी

श्री भैयालाल बंडी प्रतापगढ

श्री बाबुभाई सी. गांधी ईडर

श्री जीवराज खुशालचंद गांधी बम्बई

श्री नाथूलाल शाह डूंगरपुर

इतिहास के द्वितीय भाग में
समावेश किए जाने वाले विषयः

इतिहास के प्रथम भाग हमने हूमड़ों का उद्भव स्थल , समय, उनके पूर्वजों का विवरण प्राचीन शास्त्र भंडारों से उपलब्ध पट्टावलीयों और हूमड़ों का खेड़ब्रह्मा ईडर (रायदेश) से स्थानांतर करके वि.सं. ७५० के आसपास सागवाड़ा में स्थिर होने आदिका विस्तृत वर्णन किया है। अब हमें (इसके बाद उद्भव स्थल और समय के महत्वपूर्ण प्रमाण उपलब्ध हुए है। उनका दूसरे भागमें समावेश किया जाएगा.) द्वितीय भाग में (अ) (i) वि. सं. ७५० से १३०० तक के हूमड़ समाज की गतिविधियाँ (ii)वि.सं. १३०० से १८०० तक रायदेश के विभिन्न भागों में हूमड़ समाज का स्थानांतर (iii) १८०० से वर्तमान तक का विवरण।

(ब) जिनालयों का विवरण-

यह सबसे महत्वपूर्ण अंग है उससे जहाँ जिनालय का निर्माण हुआ, वहाँ हूमड़ों की उपस्थिति,उनकी राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक स्थित,समय तथा उस समय से आचार्य भट्टारक , विद्वान तथा श्रेष्ठी जनों, उनका कुल गोत्र आदिका विवरण हमारे परिपत्र नं ४ को अनुसार

(क) हूमड़ों की सभी संस्थाओं धार्मिक, सामाजिक महिला संगठन आदि परिपत्र नं. १७ के अनुसार

(ख) सामाजिक रीतिरिवाज , विवाह, जन्म मरण अतिप्राचीन , प्राचीन तथा वर्तमान का विवेचन

(ग) जनगणना का विश्लेषण

(ध) सारे समाज को चार भौगोलिक विभागों में विभाजित कर प्रादेशिक विवरण

(i) गुजरात (ii) राजस्थान (iii) महाराष्ट्र (iv) मध्यप्रदेश, बाकी के सब विभाग

(च) गत २०० वर्षो से वर्तमान तक हूमड़ों के मुख्य आचार्य मुनि, आर्जिका, श्रेष्ठी, सामाजिक, कार्यकर्त्ताओं आदिका विवरण।

उपरोक्त विषयों में सोशियल सर्वे का समावेश हो जाता है, समाज से सभी प्रकारके सहयोग की अपेक्षा है।

श्री कान्तिलाल सी. जैन
कलिजंरा

श्री बाबूभाई पाटौदी इन्दौर

श्री हीरालाल सी. जैन
कलिजंरा

श्री महेन्द्र शाह बम्बई

श्री प्रकाश सालगिया इन्दौर

श्री राजेन्द्रकुमार एवं श्रीमती निर्मला
पंचोली -एडव्होकेट झाबुआ

हूमड़ जैन समाज का सांस्कृतिक इतिहास
अनुक्रमणिका

	क्रम नं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
१	१	मंगला चरण- प्राचीन हूमड़ पुराण से १	
	२.	मंगला चरण का हिन्दी अनुवाद	१.
	३	चित्र- मूल हूमड़ों के उद्भव स्थल के प्रथम जिनालय में विराजमान प्राचीनतम मूर्ति	१.
२		**- हूमडों का उद्भव स्थल खेड़ब्रह्मा के ऐतिहासिक, भौगोलिक, पौराणिक पुरातन अवशेष के प्रमाण:-**	
	४.	चित्र- हूमड़ों के मूल प्रथम बावन जिनालय, जिसकी कृति के आधार पर गुजरात - राजस्थान (केशरियाजी) आदि अनेक स्थलों पर बावन जिनालय की रचना की गई	२
	५.	ईडर दुर्ग- वेणीवत्स राजा का ऐतिहासिक उल्लेख - ईडर के इतिहास से	२
	६.	खेड़ब्रह्मा का प्राचीन भौगोलिक उल्लेख	३.
	७.	नक्शा- ईस्वीसन के पूर्व कार्दमक क्षत्रपों समय का गुजरात	२९३
	८.	गुजरात का प्राचीन नक्शा	२९५
	९	(अ) हूमड़ पुराण का मूल पृष्ठ	२९४
		(ब) खेड़ब्रह्मा -रायदेश के प्रमुख नगरों के नाम	२९२
	१०	खेड़ब्रह्मा का पौराणिक उल्लेख	३
		(i) अर्थवेद ''ब्रह्मपुर '' के नाम से महाभारत पर्व	३
		(ii) ब्रह्मक्षेत्र महातम ग्रंथ से	३
		(iii) ''ब्राह्मणोत्पति मार्तंड'' से	३
३		**गोत्र कुण्ड:-**	
	११	ब्राह्मणोत्पति मार्तण्ड में गोत्र कुण्ड का उल्लेख	४
	१२	प्राचीन हूमड़ पुराण से गोत्र कुण्ड का मान चित्र	२९६

	१३.	(i)	हूमड़ों के अट्ठारह गोत्रों की अधिष्ठात्री देवियों के १८ देव कुलिकाएँ वर्तमान खेड़ब्रह्मा गोत्र कुण्ड में	२९७
		(ii)	मूल हूमडों का प्राचीन गोत्र कुण्ड का वर्तमान चित्र	२९८
	१४		मूल खेड़ब्रह्मा के जिनालय की प्राचीन मूर्ति	२९८
	१५		गोत्रकुण्ड का वर्तमान दृश्य	२९९
	१६		गोत्रकुण्ड विवरण हूमड़ पुराण से	१५४
४.			**गुजरात की भौगोलिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि:-**	
	१७		भौगोलिक लक्षण	५
	१८		भौगोलिक रचना	५
	१९		. गुजरात की सीमाएँ	५
	२०		मैत्रक -काल, पश्चिमी क्षत्रप	६-७
	२१	(i)	नहपान का समय	७-८
		(ii)	राजनैतिक परिस्थितयाँ	
		(अ)	मौर्यकाल	४८-४९
		(ब)	सातवाहन वंश	
५.			**खेड़ब्रह्मा -रायदेश से उपलब्ध अतिप्राचीन ऐतिहासिक पुरातन अवशेष:-**	
			"गुजरातनो राजकीय अने सांस्कृतिक इतिहास भाग-१ थी १०"से	
	२२		शिल्पकृतियाँ	-८
		(i)	ईडर शामलाजी से प्राप्त मूर्तियाँ	१०
		(ii)	वडनगर के उत्खनन से प्राप्त मूर्तियाँ	१०
		(iii)	ईडर के १००८ संभवनाथ जिनालय में शांतिनाथ की अतिप्राचीन खेड़ब्रह्मा से प्राप्त मूर्ति	१०
		(iv)	ईडर के पहाड़ों पर खेड़ब्रह्मा के भूगर्भ से प्राप्त१०० सें अधिक प्रतिमाएँ	१०
		(v)	तारंगा तीर्थ पर कोटिशिला और सिद्धशिला पर विराजमान खेड़ब्रह्मा से प्राप्त प्राचीन मूर्तियाँ	१०
	२३		चित्र -श्री १००८ पार्श्वनाथ मूर्ति देरोल (देवपुरी -खेड़ब्रह्मा)	९
	२४		देरोल- खनन से प्राप्त प्राचीन शिल्पकृतियाँ	११

	२५.		खेड़ब्रह्मा से लाई हुई तारंगा क्षेत्र के सिद्धक्षेत्र पर्वत पर तीर्थंकर मल्लीनाथ मूर्ति -	११
६.			**हूमड़ों के पूर्वज लाड क्षत्रियों के गुजरात में अस्तित्व के पौराणिक प्रमाण**	
	२६.		विक्रम के प्रारम्भ पूर्व पावागढ़ से लाडवंश के नरेन्द्र के अस्तित्व के प्रमाण " निर्वाणकांड भाषा" से -(जैन आगम)	१२
	२७		चित्र- पावागढ़ के मुख्य मंदिर का मानचित्र	१२
	२८.		लाड क्षत्रियों का उल्लेख- पुरातन ब्रह्म क्षेत्र का प्राचीन इतिहास से	१३
	२९		इल्वदुर्ग -ईडर के इतिहास में लांड क्षत्रियों का विवरण	१३
	३०		श्री दलपतराम भाई कविश्री की ऐतिहासिक टिप्पणी में लाड क्षत्रियों का उल्लेख	१४.
	३१	(i)	" हूमड़ों के आदि पूर्वजों का विवरण " भूवलय ग्रंथ"-निर्वाण गाथा से यादव कुमारों के साथ गिरनार से लाडवंश के राजाओं का निर्वाण का उल्लेख	१५
		(ii)	लाडवंश के राजाओंका निर्वाण चित्र	३००
	३२.		चित्र दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर	१५
	३३.		पुरातन ब्रह्म क्षेत्र नो प्राचीन अर्वाचीन इतिहास लेखक गणपति शंकर जयशंकर शास्त्री	
		(i)	राजमंत्री नुं भाषण	
		(ii)	पत्र ७० लाट देश कयो वारु	१६
		(iii)	वेणीवत्स राजा कया समयमां थयों? पत्र -९०	१७
		(iv)	गृहादीप्ति वगेरनो कयो समय हशे ?	१७-१८ पत्र ९६
७			**इतिहास के पृष्ठों में हूमड़ जाति (एक विहंगावलोकन)** श्री बाबूलाल चुनीलाल गाँधी, ईडर	१९
	३४	(i)	मंगलाचरण	
		(ii)	पीठबल इतिहास का, खेड़ब्रह्मा के बारे में	१९
		(iii)	हूमड़ कैसे बने?	१९
		(iv)	खेड़ब्रह्मा के बारे में संक्षिप्त परिचय	२०

		(v)	हूमड़ शब्द की व्युत्पति	२१
		(vi)	कथा वेणीवत्स की	२१-२२
८.			**आगम समयानुक्रमणिका:-**	
	३५.		प्रस्तावना	२३
	३६.		आगम काल की संस्कृति और साहित्य	२४
	३७.		अनुयोग व्यवस्था	२४
	३८.		मूलसंग पट्टावली - प्रस्तावना	२५
९.			आचार्य पट्टावलीयाँ	
	३९	(i)	**प्रस्तावना**	२६
		(ii)	आचार्य संध	२६
		(iii)	निर्ग्रन्थ शासन	
		(iv)	जैन शासन और भगवान महावीर	२७
		(v)	आचार्यों की गौरवमयी परंपरा का प्रारंभ	२७
		(vi)	उदार चेता	२७
		(vii)	दायित्व का निर्वाह	२७
		(viii)	जैनचार्यों की ज्ञानाराधना	२७
		(ix)	अध्यात्म प्रधान भारत	२८
		(x)	जैन परंपरा और तीर्थंकर	२८
		(xi)	वर्तमान जैन परंपरा और भगवान महावीर	२८
१०.			**नन्दिसंध -बलात्कारगण-सरस्वती गच्छ की प्राकृत पट्टावली -**	
	४०		इन्द्र नन्दि कृत श्रुतावतार प्राचीन ग्रंथ श्लोकं.नं. १ से १९ के आधार पर तथा अर्थ "तीर्थंकर महावीर" और उनकी पट्टावली आचार्य परंपरा के आधार पर.	२९-३१
११.			**कालगणना:-**	
	४१		.जैनागम के मुख्यत:चार संवत्सरों का प्रयोग पाया जाता हैं	।३२
	४२.		वीर निर्वाण के ४७० वर्ष पीछे विक्रम संवत का आरंभ- अतिप्राचीन ग्रंथ के आधार से	३२-३३
१२.			**सर्व संवत्सरों का परस्पर संबन्ध**	
	४३.		सारिणी -जिनेन्द्र वर्जीकृत सिद्धांत कोष से	३४
	४४		.वीर निर्वाण संवत	३४
१३			**मूलसंघ पट्टावली**	
	४५.			

			इन्द्रनन्दि कृत नन्दिसंघ	३५-३६
			बलात्कार गण पट्टावली के आधार से प्रमाणित	
१४.			**मूल संघ विभाजन** - (i) Table No. 2	
	४६	(i)	आचार्य इन्द्रनन्दि के श्रुतावतार ग्रंथ की प्राकृत भाषा के श्लोक से	३७
		(ii)	"गुण धर संघ" की स्थापना	
		(iii)	आचार्य अर्हतबली के पचवर्षीय यति संमेलन का विवरण- इन्द्र नन्दि श्रुतावतार से	३७
१५.			**नन्दिसंघ की स्थापना:-**	
	४७	(i)	वीर संवत ५५० नन्दिसंघ की स्थापना विधि वत् धोषणा वीरसंवत ५३५	३८-५०
		(ii)	लाड क्षत्रियों द्वारा क्षत्रिय धर्म युध्दादि को छोड़ नये संगठन हूमड़ जाति की स्थापना	४१
		(iii)	नन्दिसंघ स्थापना	५०
		(iv)	राजनीतिक परिस्थितियाँ	४८-४९
१६.			**मूल संघ विभाजन (ii)**	
	४८	(i)	मूल संघ का सात संघो में विभाजन	३८, ४०
		(ii)	मूलसंध विभाजन चार्ट	३२ (A)
	४९	(i)	कुल, गोत्र और जाति का महत्व	३९
		(ii)	जातियों का प्रादुर्भाव	३९
		(iii)	चौरासी जातियों का उद्भव एवं विकास	४०
		(iv)	अनेक संघों का जन्म	४०
		(v)	जातियों का अस्तित्व प्राचीन समय से	४०-४१
१७			**विशेष परिस्थितियों का विवरण:-**	
	५०		लाड़वंश के क्षत्रियों का विशेष परिस्थिति में क्षत्रिय धर्म त्यागकर वणिक् धर्म स्वीकार	४१
१८.			**हूमड़ समाज का नन्दि संघ, बलात्कार गण, सरस्वती गच्छ से सीधा सम्बन्ध:-**	
	५१.		प्रशस्तियों से प्रमाण	४२
	५२.		शिलालेख से प्रमाणित	
		(i)	चंदागिरि पर्वत पर के शिलालेख	४३
		(ii)	मूर्ति अजीतकीर्ति	४४
		(iii)	लेखांक २४४ निषीदिका लेख	४४
		(iv)	लेखांक ७५२ केशरियाजी मंदिर	४४

		(v)	लेखांक ७५३	४४
		(vi)	लेखांक २३५ (आराधना पंजिका)	४५
		(vii)	मूर्ति लेख	४५
		(viii)	श्री चंद्रप्रभु -मूलनायक सफेद संगमरमर की ३ फूट ऊँची चिह्न चंद्रमा	४५
		(viii)	श्री पार्श्वनाथ धातु की सर्फ चिह्न ७ फेण सहित ५ इंच ऊँची	४५
		(iix)	चंद्रप्रभु - धातु की ४११ इंच की लांछन चंद्र	४५
		(ix)	शांतिनाथ (हिरण का लांछन)	४६
		(x)	चौबीसी धातु की ऊँचाई १४ इंच है।	४६
		(xi)	पंच परमेष्ठी धातु के ९ इंच के	४६ - ४७
१९	५३		**मूलसंघ विभाजन के समय की पट्टावली और नन्दिसंघ स्थापना**	
		(i)	नंदिसंघ पट्टावली क्रम १ से ३ Table-३	५१
		(ii)	मूलसंघ विभाजन के समय अन्य मुख्य आचार्य Table-४ (A)	५२
		(iii)	Table No. ४ (B)	५३
		(iv)	मूलसंघ विभाजन समय Table -५ वि. स. ८० से वि. स. २८८ तक-	५८
		(v)	नन्दिसंघ बलात्कार गण सरस्वती गच्छ पट्टावली क्रमसे समय वि. स. २८८ से ११८९ Table- ६	५९
		(vi)	द्रविड संघ की स्थापना वज्रनन्दि से (४९८- ५२१) -	५९
		(vii)	आचार्य पट्टावली क्रम नं. १४ से २६	६०
		(viii)	क्रम नं. २७ से ३९ (वि. सं. ८१५ से १०२३)	६१
		(ix)	आचार्य पट्टावली क्रम नं. ४० से ५२ (वि. सं. १०२३-११६८)	६२
		(x)	आचार्य पट्टावली क्रम न. ५३ से ६५ (वि. सं. ११६८ से १२२७)	६३
२०	५४		. लब्धगौरव आचार्य गुणधर वि.स. ४५-८० ई १२-२३	५४.
	५५		. आलोक कुटीर आचार्य अर्हदबली वि. स. ५५- १२३, ई २-६६	५५

	५६		. दूरदर्शी आचार्य श्ररसेन (वि. स. ८०-१६३ ई ६६-१८६) -	५६
	५७.		प्रबुद्धचेता आचार्य पुष्पदन्त एवं भूतबलि वि. स. १२३ ई. ६६-१५६-	५७
२१	५८		कीर्ति निकुंज कुन्दकुन्दाचार्य	६४-६५
	५९		. श्री उमास्वामी (गृद्धापिच्छाचार्य, उमा स्वाति)	६६-६७
	६०	(i)	दिव्य विभूति श्री देवनन्दि पूज्यपाद	६८
		(ii)	आचार्य पूज्यपाद द्वारा सर्व प्रथम रचित संस्कृति में अभिषेक पाठ	६९-७४
		(iii)	हिन्दी अनुवाद पूज्य १०५ आर्यका ज्ञानमति माताजी हस्तिनापुर	६९-७४
	६१.	(i)	संस्कृति संरक्षक आचार्य गुणनन्दि वि. स. ४९३- ४९९ ई. ४२६-४४२ -	७५
		(ii)	अथ ऋषिमंडल स्रोत रचयिता आचार्य गुणनन्दि	७५-७६
	६२.		वाङ्मय वारिधि आचार्य विघानन्द वि. स. ८८५ से ९१७	७७-८०
	६३		. आचार्य शुभचन्द्र वि. स	८१- ८२
२२.			**भट्टारक प्रथा का प्रारम्भ**	
		(i)	भट्टारक उद्भवका चार्ट 80A	
		(ii)	Table No ७ क्रम नं. ६६ से ७३	८३
		(iii)	Table No. ८	९५
		(iv)	ईडर भट्टाराकों की गद्दी वि. स. १४६२ से विक्रम सं. १९५५ ई. १३२८ से १८९८	
२३.	६४		**. भट्टारक संप्रदाय का उद्भव एवं योगदान**	
		(i)	प्रस्तावना	८४
		(ii)	भट्टारकों और यतिओं का समान आचारण	८५
		(iii)	परम्परा भेद और विशिष्ट आचरण	८५
		(iv)	स्थल और काल	८६
		(v)	कार्य मूर्ति प्रतिष्ठा	८६-८७
		(vi)	कार्य ग्रन्थ लेखन और संरक्षण	८८
		(vii)	भट्टारक संप्रदाय का योगदान	८८
		(viii)	कार्य- शिल्प परंपरा	८९
		(ix)	कार्य- जाति संधटना	८९
		(x)	कार्य- तीर्थयात्रा और व्यवस्था	८९

	(xi)	चमत्कार	९०
	(xii)	कलाकौशल्य का संरक्षण	९०
	(xiii)	अन्य संप्रदायों के सम्बन्ध	९१
	(ixv)	परस्पर सम्बन्ध	९२
	(xv)	शासकों से सम्बन्ध	९२
	(xvi)	उपसंहार	९३
२४.		**नन्दिसंघ बलात्कारगण एवं सरस्वती गच्छ के हूमड़ों की मूल भट्टारक गद्दी, ईडर**	९४
६५		हूमड़ों के भट्टारकों की प्राचीन पट्टावली मूल संस्कृत भाषा में (प्रथम) ईडर के शास्त्र भंडार से प्राप्त प्रथम शुभचन्द्र गुर्वावली	९६ से १०३
६६.		हूमड़ों के भट्टारकों की प्राचीन पट्टावली मूल संस्कृत भाषामें द्वितीय शुभचन्द्र गुर्वावली	१०४ से १०६
६७.		पट्टावली का भाषानुवाद	१०७ से १०९
६८.		ईडर गद्दी के प्रथम भट्टारक सकलकीर्ति सकलकीर्ति आचार्य परिचय (वि. स. १४६२-१४९९ ई सन. १४०५- १४३४	११० से ११५
६९		. भुवन कीर्ति (१५०४-२७)	११६-११७
७०		भट्टारक ज्ञानभूषण	११८-११९
७१.		भट्टारक विजयकीर्ति (प्रथम)	१२० -१२१
७२.		भट्टारक विजयकीर्ति (द्वितीय)	१२२- १२३
७३.		भट्टारक शुभचंद्र (१६०८)	१२३
७४			
	(i)	नन्दिसंघ बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ की परम्परा में सूरत हूमड़ों के भट्टारको की गद्दीपटावली	१२४
	(ii)	हूमड़ों के भट्टारकों की प्राचीन पट्टावली मूल संस्कृत भाषामें केशरियाजी के शास्त्र भंडार से प्राप्त	१२५ से १३३
७५			
	(i)	नन्दिसंध की पट्टावली के आचार्यो की नामावली (इण्डियन एन्ही क्वेरी के आधार पर)	
	(ii)	दक्षिण देशस्य मट्टिलपु के पट्टाधीशाचार्य	१३४
	(iii)	उज्जैनी के पट्टाधीशाचार्य	१३४
	(iv)	कुण्डलपुर (दमोह) के पट्टाधीशाचाय	१३४

		(v)	वारा के पट्टाधीशाचार्य	१३४
		(vi)	नागौर के भट्टारकों की नामावली	१३५
	७६.		भट्टारक पद्मनंदि	१३६-१३७
	७७		भट्टारक विधानंदि (ई. स. १४४२- १४६१)	१३८ से १४०
	७८		श्रुतसागरसूरि	१४१ से १४४
	७९.		भट्टारक मल्लिभूषण (ई.स. १४६१- १४८७)	१४५
	८०		आचार्य वीरचंद	१४५ से १४८
	८१.		वादिचन्द्र (१)	१४९
२६.	८२.		**गोत्र**	
		(i)	प्रस्तावना	१५०-१५१
		(ii)	वर्ण व्यवस्था -आ. कल्प १०८ श्रुतसागरजी	१५२
		(iii)	वर्ण व्यवस्था आर्जिका ज्ञानमतीजी	१५२
			वर्ण व्यवस्था आर्जिका विजयामतिजी	१५३
		(iv)	जातीय वर्ण	१५३
		(v)	गोत्र हूमड़ पुराण से	१५३
		(vi)	गोत्र अटक हूमड़ जाति के परिप्रेक्ष में	१५५ से १५८
		(vii)	ऐतिहासिक दृष्टि से हूमड़ों के गोत्रों का उल्लेख	१५९
		(viii)	गोत्रों की देवियों के नाम हुबल वाणकस्य आसीसा आधार से)	१५९
		(ix)	विभिन्न गोत्र के हूमड़ पुराण चित्रावली में २४ चित्र	१६०
		(x)	हूमड़ समाज के १८ गोत्र	१६१
		(xi)	हूमड़ समाज के गोत्र जैन कोम्युनिटि - ए सोसियल सर्वे के अनुसार	१६२
		(xii)	अटक १६३	१६३
	८३		**हूमड़ पुराण से गोत्र कुण्ड निर्मित गोत्रों की अधिष्ठात्री देवियों के चित्र**	
		(i)	खेरजु गोत्र- बिलेश्वरी देवी	१६३ (A) १
		(ii)	उन्नेश्वर गोत्र- मूलेश्वरी देवी	१६३ A (१)
		(iii)	मात्रेश्वर गोत्र- ब्रह्मादेवी राखी देवी -जोगेश्वरी देवी- रासिदेवी	१६३ A (२)
		(iv)	मंत्रेश्वर गोत्र- तोतला देवी	१६३ A (२)
		(v)	वेत्पश्वरी देवी	१६३ A (३)
		(vi)	बद्धेश्वर गोत्र- सरस्वती देवी	१६३ A (३)

(vii) रजियाणु गोत्र- महारावा देवी १६३ A (४
(viii) भटकेश्वर गोत्र- मौनिका देवी १६३ A (
(ix) भीमेश्वर गोत्र- हीरा देवी १६३ A (५)
(x) कमलेश्वर गोत्र- पंका देवी, शान्तादेवी १६३ A (
(xi) दुग्धेश्वर गोत्र- श्यामा देवी १६३ A (
(xii) कामेश्वर गोत्र- कामा देवी १६३ A (६)
(xiii) कोसेश्वर गोत्र कछंपा देवी १६३ A (७
(xiv) गंगेश्वर गोत्र- अमरेश्वरी देवी १६३ A (
पुष्पेश्वर गोत्र- पुष्पेश्वरी देवी १६३ A (
(xv) फलेश्वर गोत्र- खेमानामा देवी १६३ A (८
विश्वेश्वर गोत्र- विल्वेश्वरी देवी १६३ A (८)
अत्रस्थ गोत्र -ब्रह्मा देवी १६३ A (८
(xvi) पंकेश्वर गोत्र- जोगेश्वरी देवी १६३ A (८

२७ ८४ **राजस्थान प्रदेश का हूमड़ समाज**
(i) प्रस्तावना २१२- २१३
(ii) राजस्थान में हूमड़ जाति का प्रवेश सागवाड़ा २१३-२१४
(iii) १०८ अट्ठारह हज़ार दशाहूमड़जी दि. जैन समाज के साडा मंदिर बन्दीजी २१४
(iv) **सागवाड़ा** अधिनिस्त चौखला संबंधी गाँव २१५-२१६
(v) चित्र- हूमड़ों की वर्तमान राजधानी- सागवाड़ा के अंतर्गत साडा बारह मंदिर बन्दीजी मानचित्र २१७
(vi) साडा बारह मंदिर बन्दीजी का नक्शा २१८
(vii) चित्र- नसियाजी श्री चन्द्रप्रभु भगवान २१९
(viii) चित्र- पार्श्वनाथ सहित देवी पद्मावती २१९
(ix) चित्र श्री मूलनायक १००८ श्री आदिनाथजी २२०
(x) देवी पद्मावती की प्रतिमा २२१
(xi) श्री १००८ सहस्त्र कूट चैत्यालय २२१
(xii) जूना मंदिर जी बाहर का दृश्य २२१
(xiv) नगर के मध्य में स्थित गणपति मंदिर के पास हूमड़ों के आगमन का प्राचीन लेखा २२२
(xv) श्री दि. जैन बड़ी नसियाजी २२३

२८ ८५ **उदयपुर (राजस्थान)**
(i) हूमड़ों के मुख्य नगर- उदयपुर (राज.) २६१
(ii) श्री १००८ ऋषभदेव दि. जैन मंदिर उदयपुर (राज)२६२

(iii) श्री जूना मंदिरजी दशा हूमड़ समाज उदयपुर (राज.) २६२
(iv) श्री १००८ चंद्रप्रभु दि. जैन मंदिर उदयपुर (राज.) २६३
(v) कोलियारी उदयपुर (राज.) २६३
(vi) श्री जूनामंदिर दशा हूमड़ समाज उदयपुर (राज.) २६४
(vii) श्री १००८ श्री ऋषभदेव दि. जैन मंदिर उदयपुर २६४
(viii) श्री १००८ श्री आदिनाथ दि. जैन तीर्थ सम्मेद शिखर २६५
(ix) प्रतिमूर्ति आदिनाथ दि. जैन तीर्थ उदयपुर
(x) श्री १००८ दि. जैन मंदिर में धातु प्रतिमा पर २६५
(xi) लिखा हुआ लेख
(xii) श्री १००८ श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर उदयपुर. २६६
(xiii) श्री १००८ पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर उदयपुर २६६
(xiv) श्री १००८ पार्श्वनाथ दि. जैन बीसा हूमड़ सेढ़ों के अजीतनाथ भगवान के बिम्ब २६७
(xv) पार्श्वनाथ दि. जैन बीसा हूमड़ सेढ़ों का मंदिर उदयपुर (राज.) २६७
(xvi) श्री १००८ श्री संभवनाथ दि. जैन मंदिर, बड़ा बाजार उदयपुर २६८
(xvii) श्री १००८ श्री शीतलनाथ जैन श्वेताम्बर बीसा हूमड़ मंदिर मूलनायक प्रतिमा २६९
(xviii) श्री १००८ दि. जैन मंदिर विचोवडा, उदयपुर २७०
(xix) श्री १००८ श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर, आंगणा २७१
(xx) श्री १००८ श्री ऋषभदेव दि. जैन मंदिर खारवड़ उदयपुर
(xxi) श्री १००८ श्री आदिनाथ दि. जैन सोनियों का मंदिर उदयपुर २७३
(xxii) श्री १००८ आदिनाथजी दि. जैन मंदिर, मुंगाणा २७४
(xxii) श्री १००८ आदिनाथ भगवान कोलियारी, उदयपुर २७५
(xxiii) श्री १००८ आदिनाथजी गाँव समींजा, कोटड़ा २७९
(xxiv) उदयपुर जिनालयों/ स्मारकों का विवरण २४३ -२४७
(xxv) उदयपुर जिनालयों/स्मारकों का विवरण २५२- २५३

२९. ८६ **प्रतापगढ़ -**
(i) देवलिया प्रतापगढ रियासन व हूमड़ समाज २२५
(ii) प्रतापगढ संस्था ३०४-३५१
८७. हूमड़ जातिके प्रसिध्ध परिवार २२६- २३०
८८. पावागढ़ में जैनाचार्यो एवं साधुसंतो के चतुर्मास व आवागमन २३१

	८९.		हूमड़ इतिहास में पावागढ़ की महत्वपूर्ण भूमिका	२३२
	९०		चित्र -	
		(i)	श्री १००८ सुमतिनाथ भगवान मूलनायक	
		(ii)	धीया मंदिर, प्रतापगढ़ (राज.)	२३२
		(iii)	श्री १००८ सीमधर स्वामी मूलनायक सीमधर जिनालय	२३३
		(iv)	श्री १००८ सहस्त्रफणी पार्श्वनाथ मोटा मंदिर देवगढ़	२३३
		(v)	अतिशय क्षेत्र शांतिनाथजी बामोतर प्रदेश द्वार जूनामंदिर	२३४
		(vi)	श्री १००८ महावीर भगवान मूलनायक जूनामंदिर	२३५
		(vii)	जूनामंदिर छत्री (धोड़ाजी तरफ से)	२३५
		(viii)	प्रवेश द्वारा -धीया मंदिर	२३६
		(ix)	श्री १००८ आदिनाथजी नया मंदिर	२३६
		(x)	गुमानजी मंदिर चंद्रप्रभी नेमिनाथ, आदिनाथ (मूलनायक)	२३७
		(xi)	प्रवेशद्वार गुमनाजी मंदिर	२३७
		(xii)	श्री सीमधर जिनालय लुहार गली	२४०
		(xiii)	प्रतापगढ़ के जिनालयों/ स्मारकों का विवरण	२५४ २६०
३०	९१		. खड़क देश	
	(१)		खड़क क्षेत्र की पृष्ठभूमि	१७९
	(२)		हूमड़ों का स्थानांतरण	१८०
	(३)		खड़क क्षेत्र का इतिहास	१८१
	(४)		वे गाँव जहाँ वर्तमान में दशाहूमड़ समाज की बस्ती	१८२-१८४
	(५)		मंदिर विवरण खड़क क्षेत्र (४)	२४१- २४२
	(६)		चित्र- श्री १००८ आदिनाथ दि. जैन मंदिर खुणादरी (बाबलवाड़ा)	२८२
	(७)		श्री चित्र- श्री महावीर जैन अतिशय क्षेत्र, चित्रोडा (छाणी) मूलनायक श्री महावीर भगवान)	२८२
९२	३१		डूंगरपुर -	
		(i)	श्री १००८ पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर, जेठाणा	२०८
		(ii)	श्री ऋषिमंडल यंत्र, आंतरी	२२३
		(iii)	श्री १००८ चंद्रप्रभुजी दि. जैन मंदिर, गलियाकोट	२८३
		(iv)	श्री दि. जैन मंदिर, गलियाकोट	२८९
		(v)	श्री दि. जैन मंदिर, गलियाकोट	२९०
		(vi)	आंतरी विवरण	१७०-१७१
		(vii)	देवी पद्मावतीका चित्र	३१२
		(vii)		

			डुंगरपुर जिनालय विवरण	२४८
९३.	३२		**बांसवाड़ा -**	
		(i)	श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर, आंजना	२११
		(ii)	श्री १००८ आदिनाथ दि. जैन मंदिर, नौगामा	२८०
		(iii)	श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर का चित्र, तेरापंथी डडूका	२८१
		(iv)	श्री १००८ चंद्रप्रभु दि. जैन मंदिर अरथूना	२७८
		(v)	श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर का चित्र-डडूका	२८७
		(vi)	श्री दि. जैन नसियाजी अरथूना	२८८
		(vii)	चित्र श्री दि. जैन मंदिर बंदीजी मानस्तंभ छतरीमें अरथूना	२९१
		(viii)	जिनालय विवरण -डडूका	२४९,४६०
		(ix)	श्री १००८ वासूपूज्य दि. जैन मंदिर, धाटोल	४५७
		(x)	श्री १००८ अजीतनाथ दि. जैन मंदिर, झाडोल	४५९
		(xi)	श्री १००८ नेमिनाथ भगवान, साबला	४६५
		(xii)	श्री १००८ चन्द्रप्रभु भगवान, साबला	४६६
		(xiii)	श्री १००८ चन्द्रप्रभु दि. मंदिर, आयड	४६७
३३.	९४		**राजस्थानः-**	
		(i)	श्री १००८ शांतिनाथ दि. जैन मंदिर, भीलूडा	१९६-२००
			चित्रः-	
		(ii)	श्री आदिनाथ दि. जैन बावन डेरी मंदिर, कलिंजरा	१९६
		(iii)	श्री १००८ पार्श्वनाथ भगवान अतिप्राचीन भव्य दि. जैन मंदिर, कलिंजरा	
		(v)	श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर, बड़ौदिया	२०४
		(vi)	चित्र- दि. जैन मंदिर , बड़ौदिया	१९७
	(vii)		चित्र- दि. जैन मंदिर बड़ौदिया	१९८
		(viii)	श्री दि. जैन दशा हूमड़ मंदिर, कोलियारी	१९९
		(ix)	श्री १००८ शांतिनाथ दि . हूमड़ समाजका मंदिर खमेरा (लेखचित्र)	२०६
		(x)	श्री आदिनाथ भगवान खमेरा	२४०
		(xi)	श्री १००८ आदिनाथ दि. जैन मंदिरा, नरवाली	२०७
		(xii)	श्री १००८ आदिनाथ दि. जैन मंदिर, गढ़ी	२०५
		(xiii)	श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर, बागीदोरा	२७६
३४	९५		**मध्यप्रदेशः-**	

		(i)	श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर, झाबुआ	२१०
		(ii)	चित्र- श्री दि. जैन बीसा पंथी मंदिर, कुशलगढ	२०३
		(iii)	मूलनायक श्री १००८ पार्श्वनाथ तीर्थंकर देव श्री बण्डीजी का बाग, मंदसौर	२८५
		(iv)	श्री पार्श्वनाथ दि. जैन जिनालय बण्डीजी का बाग, मंदसौर	२८६, २५०, २५१
		(v)	अंदेश्वर विवरण	१८५-१८६
		(vi)	चित्र अंदेश्वर मंदिरों का संपूर्ण चित्र	२०२
		(vii)	लेख अंदेश्वर पार्श्वनाथ विवरण	१६९-२४९
		(viii)	कुशलगढ विवरण	१८५-१८६
		(ix)	जिनालय विवरण (कुशलगढ)	२४९
३५	९६		**महाराष्ट्र (दक्षिण)**	
		(i)	श्री १००८ चंद्रप्रभु दि. जैन मंदिर नातेपुते	२०९
		(ii)	श्री दि. जैन महावीर स्वामी मंदिर, दहीगाम	२७७
		(iii)	श्री १००८ पार्श्वनाथ भगवान दि. जैन मंदिर, बम्बई	२८४
		(iv)	प. पू. श्री देवसागर महाराज, फल्टन	२८७
		(v)	फल्टन दक्षिण की काशी (विवरण)	१७२
		(vi)	श्री १००८ पार्श्वनाथ दि.जैन मंदिर पंढरपुर	४५८
		(vii)	जिनालय विवरण फल्टन	४६१
३६	९७		**तीर्थक्षेत्र का महत्व**	१६४-१६५
		(i)	प्रस्तावना	
		(ii)	आदिपुराण से	
		(iii)	निर्वाण कांड से	
३७	९८		**गुजरात के तीर्थ, जिसका सीधा संबंध हूमड़ समाज से**	
		(i)	गिरनार सिद्धक्षेत्र	
		(ii)	गिरनार लेख	१६६-१६८
		(iii)	दि. जैन बडा मंदिर गिरनार	१५
		(iv)	गिरनार प्रथम टोंक	३११
	९९	(i)	पालीताणा शत्रुंजय तीर्थक्षेत्र	१७३
		(ii)	चित्र शत्रुंजय क्षेत्र पर दि. जैन मंदिर का भव्य शिखर	३०२
	१००	(i)	पवित्र तीर्थ पावागढ	१७४-१७६
		(ii)	चित्र तलहटी के मुख्य मंदिर में धातु चैत्यालय १२	
		(iii)	चित्र मूलनायक १००८ महावीर स्वामी	३०१

	१०१	(i)	तारंगा -लेख	१७७
		(ii)	चित्र -तारंगा क्षेत्र का विहंगावलोकन	३०२
	१०२		महुवा -लेख	१७८
	१०३		**ईडर -**	
		(i)	चित्र श्री १००८ भगवान आदिनाथजी (मूलनायक) दि. जैन मंदिर	३०३
		(ii)	चित्र- श्री आदिनाथ मंदिर में स्थित आदिनाथ, भरत बाहुबली की मूर्ति	३०४
		(iii)	चित्र	३०९
	१०४	(i)	चित्र- बावन जिनालय, भिलोड़ा	३०४-३०५
		(ii)	चित्र- आचार्य घरसेन (अंकलेश्वर)	३०६
		(iii)	चित्र- रायदेश	३०७
		(iv)	गुजरात का प्राचीन मानचित्र	३१०
३८.	१०५		**राजस्थान के तीर्थ**	
		(i)	चाँदखेडी- लेख	१८७-१८८
		(ii)	चित्र- भगवान महावीर की मूर्ति	१०६
	१०६	(i)	झालरापाटन - लेख	१८९-१९०
		(ii)	चित्र- मंदिर का बाहरी दृश्य	२३८- २९१
	१०७	(i)	केशरियाजी दि. जैन अतिशय क्षेत्र ऋषभदेव	१९१-१९३
		(ii)	चित्र- ऋषभदेव मुख्य मंदिर के शिखरों का मनोरम दृश्य	
	१०८	(i)	श्री नागफणी पार्श्वनाथ दि. जैन अतिशय क्षेत्र, मोदर	१९४-१९५
		(ii)	चित्र- मोदर गाँव के निकट पहाड पर बने मंदिर में धरणेन्द्र मूर्ति	२०३
	१०९.		चित्र चितौड़ः जैन मंदिर और कीर्तिस्तंभ	२०१
३९	११०		बीसा मेवाड़ा जाति मूल हूमड़ जाति है श्री दिगम्बर जैन बीसा मेवाड़ा जाति की उत्पत्ति एवं उसका इतिहास	४६२- ४६३
	१११		चित्र- शासन देवी माताजी- सोजित्रा-	४६४

चार्ट नम्बर ३

हूमड़ों के गोत्र अटक

इन्दौर इतिहास अधिवेशन में नियुक्त गोत्र संशोधन समिति (श्री भैयालाल बण्डी प्रतापगढ़ , श्री कांतिलाल जैन- कलिंजरा, श्री हीरालाल जैन -कलिंजरा) द्वारा प्रस्तृत गोत्र अटक का संशोधन पत्रक प्रस्तुत है। समिति के मत अनुसार इसमें और अधिक संशोधन की आवश्यकता है। जहाँ तक पूरा सर्वमान्य संशोधन नहीं होता है, वहाँ तक वर्तमान प्रथा अनुसार अटकों के गोत्र चालु रखना इच्छनीय है।

क्रमांक	नाम गोत्र	नाम शाखा	नाम देवी (कुल देवी)	देवो के वाहन	अटक
१	खेरजा	सोतंकी राजपूत	चक्रेश्वरी विलेश्वरी देवी	वृषभ (बैल) ८ हाथ	कराडिया, कारवां, कोड़िया, भूता, बण्डी, गोवाडिया, डाडमा, बोरा, डोटिया, पटुवा, तलाटी, संघवी, मेहता, घीया, सकावत, मकजावत, साहा, मोलावत, गरावदिया, जवासिया, जवातिया, दोशी, शेठ, वेदावत, साबरिया, मादावत, चन्द्रावत, टाटिया, महिमावत, सरिया, पाडलिया, छाप्या, गाँधी, धनावत, कोठारी, पिछारमा, धोडा, शाह।
२	उत्तरेश्वर , अंतरेश्वर	राठौड, राजपूत	अमरेश्वरी देवी	४ हाथ उंदरोनु	मेहता, मोलावत, जुवां, वगेरिया, खापरा, गाँधी, पंचोली, कोडिया, वखारिया, भूता, मलासिया, गुगरी, दोशी, साबरिया, गुवाडिया, सोपावत, सिंगावत, फडिया, भेलावत, पुंचडी, पाड़लिया, कोटिया, शाह।
३	मात्रेश्वर मंत्रेश्वर	झाला राजपूत	ब्रह्मदेवी जोगेश्वरी	४ हाथ वृषभ	सालगिया, चंपावत, गांधी, गोठा, दोशी, सांचावत, भाणावत,वर्दीया, पंचोरी, टोलीया, भलावत, सोराणीया, जोगाभिया, माटी, पारिया, गोड़ा, जाड़ा, विलोदिया, तलाटी, वदावत, पारमिया, भगोरिया, शाह, मेहता, जावरिया।
४	बुद्धेश्वर, शामेश्वर; सिद्धेश्वर	पुँवार राजपूत, सोनगरा, हाडा, सांकला	सरस्वती लक्ष्मी	४ हाथ हंस	[illegible]ा, आंतरिया, [illegible]वत, सांडिया, गांधी, आरणीया, [illegible]था, डोडु(डेडुं), बोरा, मेहता, कोठारी, डावड़ा।

चार्ट नम्बर ३

५	रजियाणु रजियाणो	राठौड़, भाटिया, राजपूत	मारवी देवी (महारा)	१० हाथ खरगोश	[illegible]डिया, कोठारी, गोवाडिया, आंतरिया, दोशी, [illegible]डणा, बाब [illegible]गवत, पंचोली, पांडावत, सोसवत, साहा, पाडलिया, रामावत, भाटिया, दोशी, राज, फडिया, फाइयोग।
६	भदेश्वर, भटकेश्वर, भडकेश्वर, भीमेश्वर	डेवडोट व हाडा	कालिका (मनुका देवी होरा देवी)	२० हाथ कुकडा	कोडिया, चितरिया, दोशी, बगावत, पंतगिया।
७	कमलेश्वर	चौहाण सोनगरा	गौरी कामादेवी	४ हाथ हाथी	गडावत, गंगावत, गांधी, घाटलिया, कपटी, डागरिया, डेचिया, चाणावत्, टाली, पानोला, पंडावत, सरैया, सेठ, तलाटी, शाह।
८	अम्बेश्वर आम्बेश्वर	खेची सिसोदिया	ज्वालामालिनी अमरेश्वरी, कामेश्वरी	४ हाथ हरिण	कोड़िया, गोदावत, नापावत, पतंगिया, पाड़लिया, लखावत, हिडोलिया, शाह।
९	काकरेश्वर - काकलेश्वर	हाडा चूडावत	गंधारी होरा देवी कख्वादेवी	४ हाथ शार्दुलसिंह	कोठारी, गढिया, गलालिया, टोलिया, बासवाडिया, मेहता, सुरावत, ।
१०	कुसांछ	चौहाण वरासना बरवडा	सामा देवी	८ हाथ सूअर	कोडिया, चितरिया., नानावत, भरवोत, दोला।
११	दुग्धेश्वर दुदेश्वर	कचवाहा डोडिया	अनन्तमति लुम्बादेवी	४ हाथ सांभर (हिरण)	गोदावत, जाडोलिया, दामावत, भरडा, नपावत् ।
१२	काश्वेश्वर कामेश्वर	झाला परमार	मानसी खेमादेवी	६ हाथ अश्व	आडावत, छोडा, नापावत, पतंगिया, तलाटी, नपावत।

चार्ट नम्बर ३

१३	गंगेश्वर	राठोड देवडोत	नया अमरेश्वरी	४ हाथ सेला	कुडिया(कुणिया), अंकावत, गुनारी, खेजावत, चिबडिया, मलासिया, खेरिया, वणावत, शाह,
१४	कल्याणेश्वर कमलेश्वर	चन्देला दारवला	विसूचिका पंका देवी	४ हाथ गरूड़	गोदावत., गोराणिया, गांधी, तलाटी, तम्बोली, सेठ, सोभावत, पानोला।
१५	बुद्वेश्वर सिद्वेश्वर	साकला राजपूत हाड़ा	लक्ष्मीदेवी सरस्वती देवी	४ हाथ हंस	कोठारी, पडाया, डेडू, पारोदिया, चन्दावत, रोहिन्दा, मेहता, कोडिया, संदाती, भालावत, डावडा, बोरा, कियावत, चांपावत, पांचडोद, पाजविया, दोशी,
१६	वाग्वेश्वर वजियाणु विश्वेश्वर	सोखिया व भाटिया	चामुण्डा देवी विलेश्वरी देवी	८ हाथ सिंह	दोशी, पांचडोत, पालविया, कियावत, चांपावत, सेठ।
१७	अगसत	शिशोदिया जाडिसा	ब्रह्मादेवी	२ हाथ सरकला	कोडिया, गोदावत, पाँडलिया।
१८	पंकेश्वर शंखेश्वर	जाडिसा जवाद पुँवार	पद्मावती जोगेश्वरी	४ हाथ हंस	मेहता, तलाटी, सोनी, कोटड़िया, मींडा, साखलिया, पारसोलिया, बोबड़ा, सागोटिया, चन्दावत, भरडा, डामावत, रामावत, पाडलिया, बक्षी, सेठ,

॥ श्री आदिनाथाय नम : ॥

मंगलाचरण

श्रीमद् हिरण्य गंगा तट सुमनुधरा उत्तरा दिग्विभावे :
सोमा सागत्य जायात् वरमुख चतुर मिष्ट गौत्र शर्तते
स्नातास्ते ब्रह्मवाला जिनमति संघनिरता दष्टादशरच्,
ते सर्वे सौरव्ययुक्ता धन स्वजनयुता मंगलं विस्तरन्तु।

- प्राचीन हूमड़ पुराण से

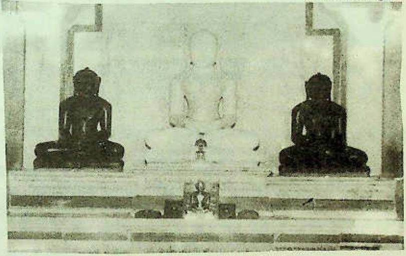

श्री १००८ आदिनाथ दिगम्बर जैन बावन जिनालय ,
देरोल (देवपुरी खेड़ब्रह्मा) में विराजमान प्राचीनतम मूर्ति

हूमड़ पुराण के उपर्युक्त मंगलाशीष के अनुसार हिरण्य गंगा नदी (हिरणावनदी) की उत्तरदिशा में, पुष्पों से आच्छादित भूभाग में हूमड़जाति निवास करती है । यह सोमा अथात् पृथ्वी हूमड़ जाति के श्रेष्ठ सुंदर मुखवाले, चतुर व मृदुभाषी गोत्र की जननी है । आदि पुरुष ब्रह्मा अथवा आदिनाथ पुरुदेव से उत्पन्न चतुर पुत्र (हूमड़) जो जिनेन्द्र भगवान् आदिश्वर द्वारा प्रदत्त जीवन आदर्शों एवं आत्म दर्शन की साधना पथ पर अग्रसित है, जो अट्ठारह गोत्रों में विभक्त हैं । ये सभी कुशल सम्पन्न होकर अपने बंधु - बांधवों के साथ मंगल विस्तार करें ।

हूमड़ समाज का उद्भव स्थल खेड़ब्रह्मा

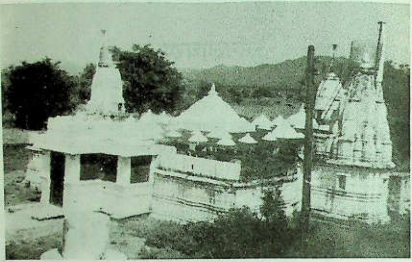

श्री १००८ आदिनाथ दिगम्बर जैन बावन जिनालय .
देरोल (देवपुरी खेड़ब्रह्मा)

एतिहासिक उल्लेख

प्राचीन समय में जैन पुराणों में इसे देवपुरी के नाम से जाना गया है.। वर्तमान में इसी का है एक भाग जो डेरोल (देवपुरी) कहलाता है। प्राचीन समय में इसी खेड़बह्मा का एक भाग (परा) था । वहाँ अनेक जैन, विष्णु, शिव मन्दिर थे जिन्हे विदेशियों व मुगलों ने बारम्बार आक्रमण करके नष्ट किया, मूर्तियों को तोड़ा और खेड़बह्मा को लूटा । यह स्थान प्राचीनकाल में राजस्थान में जाने के लिए राज्यमार्ग था । यही से राजस्थान जाने का पहाड़ीमार्ग प्रारम्भ होता है। मुगल बादशाहों को राजस्थान पर आक्रमण के लिए यहाँ पड़ाव डालना पड़ता था । यही पर सैन्य और सेना के खाद्य और युद्ध की सामग्री का संग्रह किया जाता था.।

आज से साढ़े तीन हजार वर्षों से अधिक अवधि पूर्व खेडबह्मा मे सूर्यवंशी राजा वेणीवत्स के राज्य करने का वृतांत प्राप्त होता है.। ईडर दुर्ग के इतिहास में वेणीवत्स राजा के विषय मे उल्लेख है-

'' श्री इल्व दुर्गाधिप वेणीवत्स
व भूत भूपाल मणि स एषः।
चकार राज्य मध वे ष भूमौ,
कलौगते द्रग भुज हयम्निरिन्दुः।।२४

उस समय राजा वेणीवत्स के प्रधानमंत्री एक लाड़ वणिक ही थे, जो जैन धर्म के धारक थे। वेणीवत्स का समकालीन हस्तिनापुर का शासक पूर्णमल्ल पांडव था।

खेड़ब्रह्मा का प्राचीन भौगोलिक उल्लेख

वर्तमान गुजरात राज्य के हिम्मतनगर मे खेड़बह्मा नामक पौराणिक नगर है , जो ईडर से ३५ कि. मी., अहमदाबाद से १५० कि. मी. तथा हिम्मतनगर से ६५ कि.मी. पर स्थित है। इस खेड़बह्मा के आसपास के ग्राम्य विस्तार के समूह को ''रायदेश'' के नाम से जाना जाता है। वर्तमान में भी इसे रायदेश कहते हैं। इसमें उत्तरपूर्व में विजयनगर दक्षिण में ईडर, उत्तर मे पोशिना, पूर्व मे खड्ग देश, पश्चिम मे सत्तर तालुका है। खेड़बह्मा हिरण्यगंगा नामक नदी के पश्चिम की तरफ है, जो वर्तमान में हरणाव कहलाती है। हरणाव नदी में आगे चलकर कोशाम्बी एवं भीमाशंकरी नदियाँ आकर मिल जाती हैं। इसी संगम के कारण यह क्षेत्र संगम तीर्थ प्रयाग के समान पवित्र माना जाता है.।

(इसका नक्शा पृष्ठ - पर देखिए)

खेड़ब्रह्मा का पौराणिक उल्लेख

खेड़बह्मा अत्यन्त प्राचीन पौराणिक नगर है, इसका उल्लेख अथर्वेद में ऋचा १०-२ मे ''बह्मपुर'' के नाम से महाभारत पर्व ६७, १०, १४ में एवं विष्णुपुराण एवँ वैष्णव हरिवंश पुराण मे मिलता है.।

बह्मपुराण मे ''बह्मक्षेत्र महातम'' मे बह्मखेटक एक योजन बताया है, उसमे पेटा तीर्थों के वर्णन, हिरण्या नदी, दक्षिण टेकरी पर क्षीरजा देवी तीर्थ और अंबिका तीर्थ का उल्लेख मिलता है.।

संस्कृत के अति प्राचीन ग्रंथ ''बाह्मणोत्पति मार्तण्ड'' मे खेड़बह्मा के विषय मे निम्नांकित श्लोक प्राप्त होता है-

'' गूर्जरे विषये रम्ये, बह्म खेटक संज्ञकं ।
पुरमास्ति मह्ददिव्यं, दक्षिणे चार्बुदा चलात ॥
कृते बह्मपुर नामां, त्रेता यां त्र्म्बकं ।
तदैव द्वावरै रव्यातं , कलौवे बह्म खेटकं ॥
अस्ति तत्र महीपुण्या , हिरण्याख्या नदी शुभा ।
तत्रैव संगम पुण्यौ, नदी द्वितीय संभवः ॥
ग्राम मध्ये निवसति, देवो वे पद्म संभव :
भार्या द्वयेत संयुक्तो , तत्प्रासादस्य पूर्वतः॥१८

अर्थात् रमणिक गूर्जर प्रदेश मे बह्मखेड़ नामक नगर है, जो महादिव्य होकर यह अर्बुदाचल (आबू पर्वत) के दक्षिण मे स्थित है। सतयुग मे इसे बह्मपुर, त्रेता व द्वापर में त्र्यबंक तथा कलियुग मे बह्मखेटक नाम से ख्याति - प्राप्त है.। इस पुण्य भूमि पर हिरण्यानदी बहती है, जिसमे दो अन्य नदियों का संगम हुआ है । नगर के मध्य में देवपद्म संभव

(ब्रह्मा) निवास करते हैं जिनके दोनों ओर उनकी दो पत्नियाँ विराजमान हैं.। नगर मे इनका भव्य मन्दिर बना हुआ है.।

अथर्ववेद १०-२ मे भी इस नगर का '' ब्रह्मपुरी '' नाम से उल्लेख प्राप्त होता है- '' पुरं यो ब्रह्मणोवेद यस्या पुरुष उच्यते ।'' यह वर्णन जिन सूक्तों से अवतरित हुए हैं, उनका उद्‌भव स्थान ऋग्वेद संहिता है.।

इस प्रकार हम देखते हैं कि खेड़ब्रह्मा नगर का अस्तित्व पौराणिक युग, ऋग्वेद काल से प्रवृत्तमान है.।

इसी मन्दिर के सम्मुख गोत्रकुण्ड बना हुआ है जिसमे हूमड़ पूर्वजों की १८ कुल गोत्रों की अधिष्ठात्री अठारह कुल देवियों की मातृ प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित है.। '' ब्राह्मणोत्पति मार्तण्ड '' में इस संदर्भ में जो श्लोक प्राप्त है, वह इस कथन की पुष्टि करता है-

'' वापिकास्ति महारम्या तन्मध्ये, कुल देवता
या सां पूजन माचेण चेप्सितं फल लम्यते ।''

(इस गोत्र कुंड का विस्तृत विवरण देखिए आगामी पृष्ठ पर)

गुजरात की भौगोलिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

भौगोलिक लक्षण

भारत का जो भूमि - प्रदेश गुरात कहलाता है वह पश्चिम भारत के अन्तर्गत है।

संचालन की दृष्टि से गुजरात - राज्य जो कि भारत का संघीय राज्य है, की सीमा उत्तर में २१.१ और २४.७ उत्तर अक्षांश तथा ६८.४ पूर्व और ७४.४ पूर्व रेखांश के बीच स्थित है।

इस राज्य के उत्तर मे मारवाड़ (राज.) उत्तर पूर्व मे मेवाड़ (राज.) पूर्व में मालवा (मध्य प्रदेश) और खानदेश (महाराष्ट्र), दक्षिण पूर्व मे महाराष्ट्र का नासिक जिला, दक्षिण में कोकण (महाराष्ट्र) और पश्चिम में अरब सागर आते हैं । और उत्तर पश्चिम में सिंध (पश्चिम पाकिस्तान) आता है।

१९६१ की जनगणना के समय गुजरात -राज्य का विस्तार, सर्वेक्षण के अनुसार १,८७,११५ वर्ग किलोमीटर (७२,२४५ वर्ग मील) था।

भौगोलिक रचनाः- मुख्य विभाग

१. कच्छ सौराष्ट्र २. तल गुजरात ३. राय देश

आबू के आगे आरासुर से होकर गुजरात मे फैला हुआ अरावली का एक भाग बनासकांठा से महेसाणा और साबरकांठा ज़िले की ओर मुड़ता है। महेसाणा जिले के उत्तर पूर्व भाग में तारंगा नामक एक छोटा पर्वत स्थित है। और उसके आसपास छोटी-छोटी पहाड़ियाँ हैं।

साबरकांठा ज़िले के खेड़ब्रह्मा, ईडर, विजयनगर और भिलोड़ा की ओर अरावली का जो भाग है, वही विभाग रायदेश के नाम से प्रसिद्ध है।

(देखें नक्शा)

गुजरात की सीमाएँ

(१) विस्तार

समय के साथ - साथ किसी भी राज्य या देश की सीमाएँ बदलती रही हैं। सन १९६० में बम्बई राज्य के द्विभागीकरण से गुजरात राज्य अस्तित्व मे आया।

१९४७ में रजवाड़ों का विलीनीकरण हुआ। इससे पहले तल गुजरात, मराठाशासन की सम्पूर्ण सत्ता के अंतर्गत और सौराष्ट्र तथा कच्छ रजवाड़ों के अंतर्गत था । परन्तु वे पेशवा, गायकवाड को खंडवी दिया करते थे।

मुगल शासन काल मे गुजरात १० भागो मे विभाजित था। इसके अलावा डुंगरपूर, बांसवाड़, सिरोही भी उसीमें समाविष्ट थे ।

गुजरातकी सल्तनत के समय वर्तमान चौदह विभागों के अलावा जोधपुर, नागौर, नंदरबार, बागलाण, दंडराज (जंजीरा), मुंबई और वसई आदि का भी समावेश सल्तनत में ही था।

मैत्रक काल

इस काल के दरम्यान सौराष्ट्र, उत्तर गुजरात और मध्य गुजरात पर तथा पश्चिम मालवा तक मैत्रकों की सत्ता का फैलाव था।

पश्चिमी क्षत्रप

इनकी सत्ता की शुरूआत में पुष्कर से नासिक तक तथा सुराष्ट्र से मंदसोर (मालवा) तक का फैलाव था । यह विस्तार आगे चलकर दक्षिण में नर्मदा तक सीमित रह गया। परन्तु उत्तर मे विदिशा (भिलसा-पूर्व मालवा) तक इसका विस्तार रहा । इसमें रायदेश का समावेश था ।

इस प्रदेश का वर्तमान नाम ''गुजरात'' पिछले सात सौ-साढ़े सात सौ वर्षों से ही प्रचलित है। सबसे पहले इसका उल्लेख '' आबूरास'' (ई. स. १२३३) में आया है। ''गुजरात'' के मूल में ''गुर्जर'' या ''गुज'' शब्द है।

पुराणो के अनुसार आद्य- ऐतिहासिक काल में इसका नाम ''आनर्त'' था और राजधानी कुशस्थली थी जो यादवों के समय ''द्वारावती'' कहलाई ।

क्षत्रप काल मे आनन्दपुर (वडनगर) '' आनर्तपुर'' कहलाता था । यह आनर्त देश की राजधानी थी । राजा नहपान के समय राजधानी भरूच (भरूकच्छ) थी और गुजरात का सारा प्रदेश अन्य प्रदेशों के साथ उसके अन्तर्गत आता था।

मैत्रक काल के दौरान कच्छ, सुराष्ट्र, आनंदपुर, वडाली (ईडर के पास) खेटक (खेड़ा), सूर्यापुर (गोधरा के पास), शिवभागपुर(शिवराजपुर), संगमखेटक (संखेड़ा),भरूकच्छ (भरूच), नांदीपुर (नांदोद), अक्रूरेश्वर (अंकलेश्वर), कंतारग्राम (कतारगाम- सूरतके पास), नवसारिका (नवसारी) वगैरह विभाग प्रचलित थे। पश्चिम मालवा के लिए '' मालवक'' नाम था, किन्तु उस समय ''आनर्त'' नाम प्रचलित नहीं था। युआन सांग मालवक को '' दक्षिण लाट'' और वल्लमी देश को ''उत्तर लाट'' के नाम से उल्लेखित करता है।'' आर्यमंजुश्रीमूलकल्प'' (आठवी सदी) में भी इस प्रदेश के लिए ''लाट- जनपद'' ही प्रयुक्त होता था। इसी पर से यह समग्र प्रदेश ''लाट'' नाम से पहचाना जाता है।

दसवीं सदी में उत्तर गुजरात मे उत्तर सोलंकियो (चालुक्यों) की सत्ता स्थापित हुई । उस समय, दक्षिण राजस्थान के भिल्लमाल प्रदेश का '' गुर्जर'' नाम ही गुजरात के नये राज्य प्रदेशो के लिए प्रयुक्त हुआ । '' लाट'' नाम दक्षिण (तथा मध्य) गुजरात के लिए रहा। आगे चलने पर ''लाट'' नाम दक्षिण गुजरात के लिए सीमित रह गया। सोलंकी साम्राज्य के विस्तार के साथ ही '' गुर्जर '' नाम के प्रयोग में भी विस्तार हुआ । अन्त में तल-गुजरात के लिए यह नाम प्रचलित हुआ। आगे जाने पर ''गुर्जर प्रदेश'' या '' गुर्जर भूमि'' के बदले '' गुजरात'' ही अधिक प्रचलित रहा। सबसे पहले वाघेला शासन काल में तेरहवीं सदी में इसका उल्लेख मिलता है।

सारस्वत, सत्यपुर (साचोर), कच्छ, सौराष्ट्र, खेटक, लाट, दधिपद्र (दाहोद), अवंती भाइल्लस्वामी (भिलसा), मेदपाट (मेवाड़) और अष्टादृशशत (चंद्रावती) आदि मंडल थे।

साहित्यिक और पुरावस्तुकीय जैसे उभय साधनो से शहरात वंश के दूसरे और प्रायः अन्तिम राजा नहपान के राजनैतिक जीवन और समकालीन संस्कृति के बारे में कुछ विशेष सामग्री मिलती है।

साहित्यिक साधनों मे आवश्यक सूत्र- निर्युक्ति, तिलोय-पण्णत्ति, जिनसेन का हरिवंश पुराण, मेरूतुंग की विचार श्रेणी, वायुपुराण '' पेरिप्लस'' और आइने-अकबरी का समावेश होता है। आवश्यक सूत्र की निर्युक्ति मे निर्दिष्ट कथानुसार णहवाहण (नहवान), सालवाहन (सातवाहन), राजा गौतमीपुत्र शातकर्णि को कई इतिहासकार स्वीकार करते हैं। इस कथा मे यदि अन्य जानकारियों को छोड़ दिया जाए तब भी नहपान और सातवाहन राजा समकालीन थे और सातवाहन राजा ने नंहपान को हराया । यह दोनो जानकारियाँ ऐतिहासिक प्रतीत होती हैं।

एक दूसरे जैन ग्रंथ '' तिलोय-पण्णत्ति'' मे महावीर के निर्वाण के समय पालक का अभिषेक हुआ । उसने ६० वर्ष राज्य किया। इसके पश्चात् विजय वंशी राजाओं ने ३५५ वर्ष, गुरूंडवंशियों ने ४० वर्ष, पुष्यमित्र ने ३० वर्ष, वसुमित्र अग्निमित्र ने ६० वर्ष, गंधर्व राजाओं ने १०० वर्षों तक तथा नरवाहन ने ४० वर्षों तक राज्य किया, ऐसा उल्लेख मिलता है। इस प्रकार इस ग्रंथ मे भीणरणाहण (नरवाहन-नहपान) का उल्लेख है।

'' पेरिप्लस'' में नम्बुनुस राजा का उल्लेख है। बहुत से विद्वान नम्बुनुस को नहपान मानते हैं। १

पुरावस्तुकीय साधनो मे नहपान के द्वारा चलाये गये सिक्कों और उसके समय के आठ गुफा लेखों का समावेश होता है। सिक्कों से नहपान के विषय में, उसके राज्य विस्तार के विषय मे तथा समकालीन सातवाहन राजा के विषय मे कुछ जानकारी मिलती है। उसके काल निर्णय के लिए गुफा-लेख उपकारक जानकारी देते है। तदुपरांत उसमे कुछ तत्कालीन सांस्कृतिक जानकारियाँ और उसकी जाति,गुफालेख,और उसके वंश की जानकारी भी उपलब्ध होती है। नहपान के चाँदी के सिक्के ग्रीक, ब्राह्मी और खरोष्टी भाषा में मिलते हैं।

नहपान का समय

जिनसेन की हरिवंश पुराण और '' पेरिप्लस'' के उल्लेख तथा नहपान के समय के आठ गुफा लेखों मे निर्दिष्ट वर्ष ४१,४२,४५,४६ किये गये है।

जैन अनुश्रुतियों मे नहपान का राज्यकाल ४० वर्ष बताया गया है।

इन सबसे नहपान राजा (दीक्षा तथा मुनि अवस्था) का समय ई.६६ से १५६ अथवा विक्रम संवत् १२३ से २१३ माना जाता है।

१ (H.d. Sankalia, Studies in the Historical and Cultural Geography and Ehtnograhly of Gujarat, pp. 30ff. A.K. Majumdar, Chaulukyas of Gujarat, pp. 208ff; ह.गं शास्त्री, '' गुजरात का प्राचीन इतिहास, '' पृ.२४०-४४१)

नहपान की राजधानी

'' आवश्यक सूत्र-निर्युक्ति '' के आधार पर डॉ. जायसवाल के अनुसार नहपान की राजधानी भरूच थी।

नहपान के राज्य का विस्तार उत्तर में अजमेर, पश्चिम में सुराष्ट्र (सौराष्ट्र), पूर्व मे मालवा, दक्षिण मे दक्षिण गुजरात और उत्तर कोंकण, अहमदनगर, नासिक और पूना तक था । नहपान को गौतमी पुत्र शातकर्णी ने हराया।

गौतमी पुत्र शातकर्णी ने नहपान के सिक्कों पर अपनी छाप लगवाई। जो जोगलथंबी से प्राप्त सिक्को से मालूम पड़ता है। वासिष्ठी पुत्र पुडुमावि के एक लेख मे गौतमीपुत्र शातकर्णि द्वारा त्रजुरोयों हो को निर्मूल किए जाने का उल्लेख मिलता है। ये दोनों पुरावशेषीय इनकी साहित्यिकता का समर्थन करते हैं ।

जक्काले वीरजिणो णिस्सेयससंपयं समावण्णो।
तक्कालेअभिसित्तो पालयणामो अवंतिसुदो ॥१५०५॥
पालकरज्जं सट्ठि इगिसयपणवण्ण विजयवंसमवा।
चालं मुरूदयवंसा तीसं वस्सा सुपुस्समित्तम्मि ॥१५०६॥
वसुमित्तअग्गिमित्ता सट्ठि गंधव्वया वि सयमेक्कं।
णरवाहणा य चालं तत्तो भत्थट्ठणा जादा ॥१५०७॥

(संपा. उपाध्याय और जैन, पृ. ३)

शिल्पकृतियाँ

प्राचीन साहित्य में गुजरात के अलग - अलग विभागों के लिए आनर्त, अपरांत, लाट, सुराष्ट्र आदि नाम प्रयोग मे लाए जाते थे। इसी कारण हम जब गुजरात की प्राचीन शिल्पकला या स्थापत्यकला या इतर कलाओं की चर्चा करते हैं तब हमे यह याद रखना होगा कि मौर्यकाल के गुजरात के शिल्प, क्षत्रपकालीन गुजरात के शिल्प आदि प्रयोगों का तात्पर्य मौर्यकाल के अभी के गुजरात मे सम्मिलित प्रदेशो के शिल्प, अथवा क्षत्रपकाल के अभी के गुजरात में जुड़े अलग - अलग ज़िलो के शिल्प आदि के है।

दूसरी याद रखने योग्य बात यह है कि प्राचीन काल से लेकर सोलंकी काल के अंत तक गुजरात प्रदेश और मरुभूमि की, खास करके पश्चिम और दक्षिण राजस्थान की सांस्कृतिक एकता बढ़ती गई थी । क्षत्रपकाल में कार्दमको अथवा पश्चिम क्षत्रपो के नाम से जाने गए राजवंशी का साम्राज्य राजस्थान और गुजरात साथ ही महाराष्ट्र के कई भागों और पूर्व मे उज्जैन तक फैल चुका था । इसी कारण एक प्रकार की राजकीय एकता के साथ सांस्कृतिक एकता भी स्थापित हो चुकी थी। अनुगुप्तकाल में एक ओर राजस्थान में -जालोर-मांडोर की तरफ गुर्जर-प्रतिहारों तथा दूसरी ओर मध्य गुजरात में नादीपुर के गुर्जरों का शासन होने के कारण राजस्थान और गुजरात के राजनीतिक व सांस्कृतिक संबंध मज़बूत हुए।

इन्हीं मुद्दों को ध्यान मे रखते हुए हम विभिन्न काल की गुजरात की शिल्पकलाओं पर विचार करेंगे ।

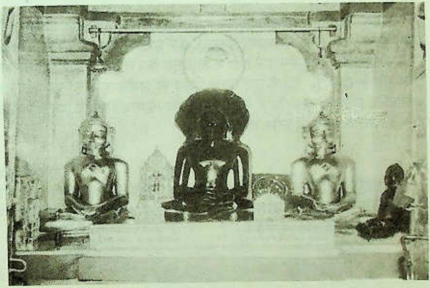

श्री १००८ पार्श्वनाथ प्राचीन
देरोल (देवपुरी खेड़ब्रह्मा)

सोलंकी काल मे कई नए अवशेष गुजरात तथा राजस्थान में पाए गए। इस तरह पश्चिम भारत की शिल्प, स्थापत्य, कला के इतिहास की खोई हुई कड़ियाँ धीरे-धीरे मिलने लगीं।

(१) ईडर शामलाजी के आसपास के प्रदेशों से अनेक मूर्तियाँ उपलब्ध हुई हैं, उनमें विशेष रूप से यक्ष-यक्षिणियो की मूर्तियाँ है। बड़ौदा म्यूज़ियम मे रखी गई छोटे कद के गणों, देवो, यक्षों की मूर्तियो मे यक्षों की मूर्तियाँ सविशेष उल्लेखनीय है। इनमें से कुछ यक्ष यक्षणी जैनो के तीर्थकरो के यक्ष-यक्षिणी की मूर्तियाँ हैं।

(२) वडनगर के उत्खनन से प्राप्त क्षत्रप और गुप्त काल के संधि काल के समय की अनेक मूर्तियाँ उपलब्ध हैं। उनमे एक मूर्ति देवी आकृति की है। जिसके सिर पर नाग का फन तथा उसके ऊपर एक शिशु का आकार है।

उपरोक्त प्रतिमा देवी पद्मावती की भगवान पार्श्वनाथ के साथ है।

(३) ईडर के १००८ भगवान संभवनाथ जिनालय में एक शान्तिनाथ जिनालय है। उसमे भगवान शान्तिनाथ की श्याम, प्रतिमाजी अष्ट प्रातिहार्य युक्त है। शांत मुद्राधारी भगवान शांतिनाथ के दर्शन मात्र से हृदय मे शांति पुंज फैल जाता है। यह प्रतिमाजी उत्तम शिल्पकार के हाथों गढी गई है तथा उत्तम शिल्प की अजोड़ कृति है। यह अलौकिक चमत्कारिक प्रतिमाजी खेड़ब्रह्मा से पाई गई है। यह महाराज रायचन्द (पहली शताब्दी के आसपास) के समय की प्रतीत होती है।

देखिए चित्र

(मुनि धर्म प्रदीप से)

(४) ईडर में विभिन्न मंदिरो मे पहाड़ पर अनेक जगह १०० से भी अधिक अति प्राचीन प्रतिमाएँ खेड़ब्रह्मा से लाकर विराजमान की गई हैं। इनमें एक मूर्ति अति प्राचीन है, जो कि पद्मावती देवी की मूर्ति है।

देखिए चित्र

(५) इसके सिवाय तारंगा तीर्थ क्षेत्र में कोटि शिला और सिद्धशिला जिनालयों में खड्गासन मूर्तियाँ जो अति प्राचीन है, वे भी खेड़ब्रह्मां से प्राप्त की गई हैं।

(सन्मति संस्मरणिका से)

(अहिच्छत्र के अवशेषो का पौराणिक आधार by. Dr. Vasudev Agrawal pp.127-128)

(. By U.P. Shah Sculplures from Samlaji and Roda)

Journal of M.S. University of Baroda, vol. IV, No. 1. pp 19ff :

१ और २ - देरोल - खनन से प्राप्त
प्राचीन शिल्प कृतियाँ

३. खेड़ब्रह्मा से लाई हुई तारंगा क्षेत्र के सिद्धक्षेत्र पर्वत पर तीर्थंकर मल्लीनाथ की मूर्ति

हूमड़ों के पूर्वज लाड क्षत्रियों के गुजरात में अस्तित्व के पौराणिक प्रमाण

युगपुरुष रामचंद्रजी । बात है उनके दो कर्मठ पुत्रों की । नाम हैं उनके लव-कुश । इन्होंने मोक्ष रूपी लक्ष्मी का वरण किया पावागढ़ से । सिद्धक्षेत्र पावागढ़ (जि. पंचमहाल-गुजरात) से मोह क्षय करके मोक्ष - सिद्धालय में बिराजमान हुए पांच कोटि मुनीश्वर । इनमें **लाडवंश** के नरेन्द्र भी थे ।

'' निर्वाणकांड भाषा '' की निम्नलिखित गाथा अपने थोड़े से श्ब्दों से भी बहुत कुछ कह रही है : -

रामचंद्र के सुत दोय वीर , लाड नरिंद्र आदि गुण धीर
पांच कोटि मुनि मुक्ति मंझार , पावागिरि वन्दो निरधार ।।

पावागिरि - पावागढ़

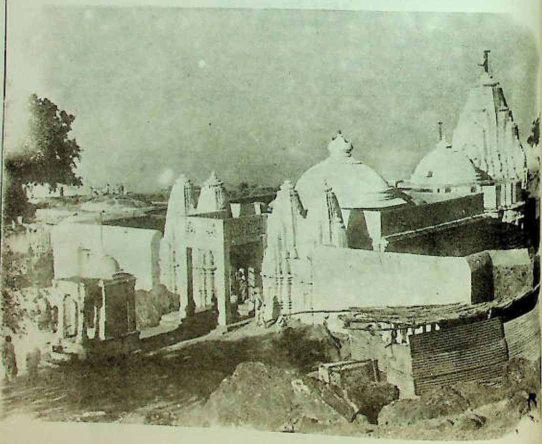

पावागढ़ : तहलटी के मुख्य मंदिर में अवस्थित धातु चैत्यालय

बहुत पुरानी बात है, पांच हजार वर्षों के पूर्व की । गुजरात की पहचान होती थी लाडदेश के नामसे । लोकमाताओ - नर्मदा एवं तापी तक गुजरात का आधिपत्य था । गुजरात के राजा लाड क्षत्रिय थे । आज़ के उत्तर गुजरात के एक कोने में स्थित ब्रह्मक्षेत्र (खेडब्रह्मा) उस समय भी सम्मिलित था गुजरात में - लाड़देश में । उसमें रहनेवाले क्षत्रिय लाड़ क्षत्रिय के नामसे प्रसिद्ध थे. ~

-पुरातन ब्रह्मक्षेत्र का प्राचीन इतिहास (पोथी) से उपलब्ध

लेखक श्री गणपतिशंकर जयशंकर शास्त्री (वड़ाली- ईड़र)

पुराणों से इस बात का वृत्तांत उपलब्ध है कि आजसे साढ़े तीन हजार वर्षो पहले खेडब्रह्मा में सूर्यवंशी राजा वेणीवत्स का शासन था । इल्वदुर्ग - ईडर के इतिहास में भी उनके बारे में उल्लेख किया गया है :

''श्री इल्वदुर्गाधिय वेणिवत्सः बमूव मूपाल मणि : स एषः ।

चकार राज्य मघ वेष भूमौ कलौगते द्रग् भुजहय ग्निरिन्दु ।।२४।।

राजा वेणीवत्सका प्रधान मंत्री था ,जैन धर्म का धारक एक लाड़ वणिक - हूमड़ वणिक

देखिए श्लोक ३६ से ४०

नृप मंत्री वणिक् जाति लाड इत्यभि विश्रुतः
प्रतिज्ञाम् करोत्तत्र सभा मध्ये विशेषतः ॥ ३६ ॥
मदीयाः सतिये सर्वे देशेग्रामे पुरे तथा
तेयुष्मान पालयिष्यं नात्र कार्या विचारणा ।।३७।।
वयं सर्वे क्षत्रियाश्च लाट देश समुद्भवा
कालयोगाद्धर्म भ्रष्टाः जाताः सर्वे मुनिश्वर ।।३८।।
ते सर्वे लाड़ वणिज : सच्छूद्रा वर्ण धर्मत
नमस्कारेण मंत्रेण पंच यज्ञा सदैवहि ।।३९।।
आराधना विवाहांता : संस्काराये प्रकीर्तिताः
ते सर्वेच कर्तव्या वेद मंत्रे विना द्विजः ।।४०।।

वेणीवत्स राजा के मंत्री लाड़ वणिक जाति के व्यक्ति ने इस सभा में जो प्रतिज्ञा की वह है- हे ब्राह्मण वृंद ! इस प्रदेश एवं प्रत्येक गांव गांव में भी मेरी जाति के लाड नामसे प्रख्यात वणिक वृंद तुम्हारी वंश परम्परा का पालन करते रहेंगे यह तथ्य तुम्हे ज्ञात हो इसमें कोई अन्तर नही रहेगा ।

हे मुनिवृंद! हम मूलतः क्षत्रिय है । लाट (गुज़रात) देश के निवासी से देशवाचक' लाट' (लाड) नामसे जाने जाते है । समय का अनुकरण करते हमने क्षत्रियों के संस्कारों को त्याग दिया है ।

हम सर्व 'लाड'नाम से प्रख्यात वणिक जन वाणिज्य कर्म करते हैं। हमारी धर्म क्रियाएँ हम पंच नमस्कार मन्त्र अनुसार पंच यज्ञ के द्वारा करते हैं। गर्भाधान से लगाकर विवाहादि सभी संस्कार आप यदि हमारे पुराण शास्त्रों के मन्त्रानुसार करवायेंगे, तो उसमें हमें कोई बाधा नहीं होगी ।

यह इस बात का अकाट्य प्रमाण है कि हूमड़ जाति जो आज से चार हजार वर्ष पूर्व में भी जैन धर्म की अनुयायिनी थी एवं अपने सारे संस्कार पंच नमस्कार या णमोकारके पवित्र मन्त्रोच्चार के साथ करती थी , देव गुरु उपासना ,स्वाध्याय सामायिक एवं पात्र दान के पंच यज्ञ ही इस पुरातन वणिक जाति की आस्थाओं के आधार थे।

गुजरात के प्राचीन इतिहास के अनुसार ई.पू.के ४०० वर्षों के पूर्व (वीर संवत् १२७) एक राज़ा हुए, राजा सुरेन्द्रसेन। वे लाडवंशीय ही थे। उनके पुत्र थे राजा वीरसेन। राजा वीर सेन की रानी का नाम था चंद्रवती। धर्मकार्यों में दत्तचित्त रानी ने पावागढ़ के मंदिरों का जीर्णोद्धार करवाया।

महाराज कनकसेन लाडवंशीय थे। सन् १४४ में उन्होंनें वीरनगर बसाया।

-ग्रीस देशके महान भूगोलवेत्ता श्री कर्नल टोली (पत्र नं. ९६ पर उन्होंने अपनी पोथी में राजस्थान के इतिहास को प्रस्तुत करते हुए ऊपर की बात लिखी है।)

एक समय गुजरातमें १३३ वर्षों तक महा आपत्तिकाल की स्थिति रही। उससे पीड़ित खेडब्रह्मा निवासी कई लाड वणिक पूर्व बंगाल एवं बिहार प्रांत के सुहृयदेश की ओर चले गये। एक शताब्दि से भी अधिक अवधि के बाद ये लोग पुनः गुजरात में आकर बसे।

-श्रीदलपतरामभाई कविश्री की एक ऐतिहासिक टिप्पणी

इतने प्रमाण देने के पश्चात '' भूवलय निर्वाण गाथा'' से भी एक गाथा प्रस्तुत की जा रही है 'लाड़वंश के समर्थनमें '

हूमड़ों के आदि पूर्वजों का विवरण '' भूवलय ग्रंथ - निर्वाण गाथा से

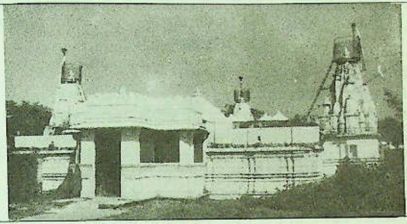

दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर

लाड़वंश पज्जुण्णो सम्भूकुमारो तहेव अणि रुहो ।
बहत्तर कोडीओ उज्जयन्तो सत्तिया सिद्धा।

उज्जयंत -उर्जयन्त यानी गिरनार ।।

गिरनार से बहत्तर करोड और सात सौ मुनि मोक्ष पधारे है । इस पवित्र भूमि से मोक्ष प्रयाण करनेवालों में है भगवान नेमिनाथ एवं प्रद्युम्नकुमार सम्भूकुमार , अनिरुद्ध आदि यादव कुमारों के साथ -लाड़वंश के बहुत से राजा ।

निर्वाण कांड भाषा की गाथा निम्नप्रकार से है ।

श्री गिरनार शिखर विख्यात कोडि बहत्तर सौ सात ।
संबू पद्युम्न कुमार द्वै भाय अनिरुद्ध आदि नमूं तसु पाय ।।

'' लाडवँश पज्जोणो सम्मुकुमारो तहेव अणिरुद्धो
बाहत्तर कोडीओं उज्जयन्तो सत्तिसया सिर्द्धा । ''

' भूवलय ' नामक अति प्रचीन ग्रंथ के अनुसार उर्जयन्त पर्वत से श्री नेमिनाथ, प्रद्युम्न, सम्मुकुमार, अणिरूद्ध आदि यादवकुमार और उनके लाडवँशीय राजाओं सहित बहत्तर करोड़ और सात सौ मुनि मोक्ष गये है । ये लाडवंशीय क्षत्रिय हूमड़ों के आदि पुरूष थे । यादावों ने वृन्दावन से आकर गुजरात, सौराष्ट्र पर राज्य किया , उनके आधीन लाड क्षत्रिय थे

विराम लेती हुई लेखनी भावाभिव्यक्ति के द्वारा इस बात पर प्रकाश ड़ालती है

पुरातन ब्रह्म क्षेत्रनो प्राचीन अर्वाचीन इतिहास

लेखक - गणपति शंकर जयशंकर शास्त्री
बडाली ईडर राज्य
पत्र ८८

राजमंत्री नु भाषण

वेणीवत्स राजाने मंत्री '' लाड'' जातिनो वणिक हतो ।

तेणे जाहेर सभामां प्रतिज्ञा करी । अने ऐ खास बाह्मणोने उपकारक हती (३६)

हे द्विजनो ! आ देशमां अने प्रत्येक गाममां मारी ज्ञातिना '' लाड'' ज्ञाति तरीके छो. तमारु वंशपरंपरानु पालन -पोषण करता रहेशे ते वातमां लगीरे फरक पडशे नहीं (३७)

हे मुनिश्वरो ! अमे मूलमां क्षत्रियो छीये लाट देशना होवाथी देशवाच लाट एवा नमथी ओलखाइए छीये ।

लाट देशना होवाथी समयने अनुसरीने अमोए क्षत्रीय तरीके ना धर्म-कर्म अने संस्कार तजी दीधा अने सर्वे लाट तरीके ओलखाता वैष्यो वैष्यं कर्म करीये छीये अने अमारी धर्म क्रियाओनाम मंत्रथी मनस शम्द ना प्रयोग थी करता रह्या छीये (३९)

ग्रर्भाधानथी मांडी विवाह सुधीना सघला संस्कारो अमारा पौराण मंत्रथी करावशो. तो तेमां अमने वांधो रहशे नहि . (३९)

आजथी अमे तमने पुरोहित तरीके स्वीकारीए छीये . अमारी आज्ञाने जे कोई ओलगंशे ते गुन्हेगार ठरशे . अने सजाने पात्र गणाशे । (४०)

ऐ प्रमाणे बाह्मणोना निभावनी सुन्दर योजना करी वेणीवत्स राजाए बह्म क्षेत्रमां तेमने निवास करवा सघला साधनो तैयार करी आप्याय बाह्मणओ बह्म क्षेत्रमां रह्या (६२)

उपर प्रमाणोना कारणथी खेटक चित्रोमां बे तट पड्या. हवे तेमना गौत्र विगेरेनो खुलासो जवाणी वीश (६३)

प्रत्र ७०

लाट देश कयो वारु !

'' पांच हजार वर्ष पूर्व नु गुजरात '' ए नामे पुस्तकमां '' लाट'' देशोनी ओलखाण करावता जणावे छे के लाट देश '' अपंरात '' नो ज एक विभाग छे. नर्मदा अने तापीना आस पास नो प्रदेश लाट गणातो पण लाटना चालुक्योनी सत्ता वधता मही नदीना छेक प्रदेशो पण लाट तरीके होवाना जाहेरमां आव्या आ उपर थी उत्तर गुजरात ने खूणे आवेलो बह्मक्षेत्रना प्रदेशनो भाग बण लाट देश गणातो हशे. अने तेमाना क्षत्रिओ लाट तरिके ओलखाता हशे ईडर राज्य ना वेणुवस्त राजा ना मंत्री लाट वैष्य वृति स्वीकारी हशे तेनी साथे ए जाती नो वैष्य वृति नो घंघो थई पडवाथी लाट वैष्यो तरीके ओलखाया हशे

वेणीवत्स राजा क्या समयमां थयो ?

वेणीवत्स राजानो समय क्यो हशे ? ते विशे इडरमांथी के तेना गढ उपरथी जाणवा जेवु कशुंसाधन मली आवतुं नथी । पण वेणीवत्स प्रशस्ति परथी तेमज ईडरना इतिहास मांथी एक श्लोक मली आवे चे ते परथी कालनुं अनुमान करी शकाय तेम छे. श्लोक नीचे मुजब छे,

'' श्री इल्वदुर्गाधिपवेणीवत्स
बभुच भूपाल मणि स एषः
चकोर राज्य मघचेच भूमौ
कलौगते द्रग भूजह्य ग्निरिन्दुः

भावार्थ - इल्वदुर्ग (ईडर)नी गादी उपर वेणीवत्स नामे राजा राज्य करतो हतोराजाओमां एक मणिसमान तेजस्वी हतो । ईन्द्र जेवा ऐश्वर्यथी पृथ्वी पर राज्य चलाव्युं अने तेनो समय गत काल१३२३ नो हतो. अर्थात कलियुगना १३२३ वर्षथी त्यां हतां ते समये ईडरनुं राज्य वेणीवत्स राजानां ताबामां हतुं हालमां कलियुगना गत वर्ष प्रकट थया छे. तेमांथी १३२३ बाद करीए तो ३७१५ वर्ष थवा जाय छे. युधिष्ठर शकनी गणत्री नी पद्धति एवी छे वेणीवत्स राजा युधिष्ठर शकमां १३२३ नी सालमां थयो होय एम इपरोक्त श्लोकथी समजाय छे.

(पत्र ९६)

गुहादीप्ति वगेरोनो क्यो समय हशे?

कर्नल टॉड साहेब तेमना राजस्थानना-इतिहासमां जणावे के - गुहादित्यना मूल पुरुष महाराजा कनक सेन्प्त ईस्वी सननी पहेली शताब्दीमां हयात हता. ई.स. १४४ मां तेमणे ''वीरनगर'' नामे भारे नगर वसाव्यु हतुं.

कनदां सेननी चोथी पेढीये विजयसेन नामे राजा थयो. विजय सेन राजाए सौराष्टमां केटलाक नगरों वसाव्या ते पैकी बह्मीपुरनामे एक आबाद शहेर गणातुं हतुं अने तेनो नाश पास्तु याने पारसी लोको ए ई.स. ५२४ मां कर्यो हशे । इ. स. ५२४मां शिलादिप्तनो अंत आव्यो अने गुहादिप्तनो जन्म थयो हतो. गुहादीपनी ५१ मी पेढीए आप्पा रावलनो जन्म थयो अने तेमना जन्म इ. स. ७१३ मां थयो ते दरम्यान गोहिल वंशना आठ राजाओए ईडरनुं राज्य कर्युं .

ए आठ राजाओ कया ?

गुहादित्य, नागादित्य,मंगादित्य , देवादित्य, आशादित्य, खलभोज, ग्रहादित्य ,अने छेल्लो नागा दित्य एम आठ राओ थया होवानु जणाय छे.

आसपासना गामोंमां वसवाट करी हती तमणे जैन दीक्षा स्वीकारी अने लाट ए देश वाचक नामे स्वीकार्युं अने सुहृभस्यो पाझळ थी हूमड़ तरीके ओलखववा मांड्या

'' सुहृभस्य '' शब्दनो अपभ्रंक्ष थई हुमस्य - हुंमड हुमंठ अने ह्रम्म '' एवुं माम व्यवहारमां प्रचलित थयुं अने दिगंबर मतना सिंतो कबूल राख्या

छताय असल संस्कृति जालवी । लाटक्षत्रीयो नी संस्कृति वैश्योमां पण दीर्घ काल जलवाई हती तेवीज जैन दीक्ष लीधा पछी पण जलवायेली अत्यारे पण जणाई आवे छे.

खेटक बाह्मणोनुं पुरोहित पणु कायम राख्युं मंलब प्रसंगोमां धर्मक्रियाओ करावता रहे छे. विवाह लग्न जेवा चारे मंगल प्रसंगोमां क्षत्रीयने छाजता रीवाजो जालव्या छे. अने धणा खहा रीत रिवाजो अण असलना क्षत्रीय पणाने घटता थोडा घणा रुपांते हजुपण प्रत्यक्ष थतां रह्या छे. खेडना बावन जीननो प्रासाद

आ समयमां बह्म क्षेत्रमां जैन धर्मनो प्रचार थयो जिनेश्वर भगवानने पण ए पवित्र क्षेत्रमां निवास करवानुं गम्युं सेकडो जिनालयो बंधाव्यां साधु महात्माओना उपाश्रय बंधाया बावन जिननो भव्या प्रासाद बंधायो

शिष मंत्र वैष्ण मंत्र अने बाह्ममंत्रो साथे जिन मंत्रोनी घोषणा थवा लागी । सिद्धराज महाराजनो अने धार्मिक सरदारोनी मददो थी भग्न थयेला मंदिरो तिर्थोनुं समारकाम थयुं ते साथे जैन मंदिरो पण दिपी उठ्या ।

सत्यात् नास्ति परो धर्मः ना आर्दश साथे अहिंसा परमो धर्म नुं आदर्श खडुं थयुं अने सत्य अहिंसाना तत्व पर खेडबह्मा लगभग पंयगंस्थवा तेना भाग्या सूर्य तरफ दष्टि करवा लाग्युं एम थोडोक समय पसार थयो एम एक शताब्दी थी कांई वधारे वखत पसार थेयो तेटलामां तो खेड ना भाग्य सूर्यपर अनेक संकटो ना वादलो चढी आववा लाग्या अने नाशनना चिन्हो देखावा लाग्या ।

दरम्यान पूर्वना एकसो तेवीस वर्षना खेडना भयानक प्रसंगने लीधे खेडना लाट शेश्यो केटलाक पूरेव बंगाल तरफ विहार सुह्य देश तरफ चाल्या गया हता. केटलाके नजीकना गामोमां वसवाट करी लीधो हतो अने खेडनीवसवाट पछी ए शब्द पछी केटलाके मारे जथ्थो खेडमां वसता आवी वस्यो हतो. अने ए सुम्ह्यस्य तरीके ओलखावतो हतो

खेडना वैश्य महाजनो जेजे गामोखेडनी आसपास दूर अथवा नजीक जई वस्या तेनी यादी पण मली आवी छे.

इतिहास के पृष्ठों में हूमड़ जाति

(एक विहंगावलोकन)

बाबूलाल चूनीलाल गाँधी, ईडर

एम् ए बी.एड्. एस. टी.सी. विनीत, साहित्य सुधाकर, एम्.जे. पी. एच, डी.

मंगलाचरण

श्रीमद् हिरण्य गंगा तट सुमनुधरा उत्तरा दिग्विभागे ।
सोमा सागत्य जायात् वर मुख चतुरं मिष्ट गौत्रं शर्तते
स्नास्ते ब्रह्माबाला जिनमति निरता सश्र अष्टादशश्च
ते सर्वे सौख्युक्ता धन स्वजन युता मंगलं विस्तरंतु ॥

अति प्राचीन हूमड पुराण से ......

हूमड़ पुराण में विद्वत्रत्न पुराणकार ने अपनी साहित्यिक शैली के द्वारा प्रकाश डाला है हिरण्यगंगा के तट पर बसी हुई प्राचीन धरा खेडब्रह्मा पर ।

हिरण्यगंगा हरणाव । कभी कहीं कूदती -फांदती कहीं, धीर - गंभीर प्रवाह से बढ़ती हुई कहीं कल - कल की मधुर ध्वनि के साथ बहनेवाली हरणाव में युगल नदियों कौशाम्बी एवं भीमाशंकरी के मधुर मिलन से इस क्षेत्र में लग गए है चार चाँद । संगम तीर्थ प्रयाग पवित्र माना जाता है....ठीक वैसा ही पवित्र है यहाँ का संगम ।

पीठबल इतिहास का, खेडब्रह्मा के बारे में

तो हाँ ! आज के गुजरात राज्यके अंतर्गत इल्व भूमि ईडर से २२ कि. मी. की दूरी पर स्थित खेडब्रह्मा का उल्लेख मिलता है अथर्ववेद ऋचा १०-२ में। खेडब्रह्मा को कहा गया है ब्रह्मपुर।

खेडब्रह्मा का संदर्भ मिलता है महाभरात विष्णुपुराण, हरिवंश पुराण इत्यादि विश्वमान्य ग्रन्थों में। इससे यह तो निर्विवाद रूप से स्पष्ट मानना ही पड़ेगा कि नगरी खेडब्रह्मा ५००० या उससे भी अधिक वर्षों पुरानी है ।

हूमड़ कैसे बने ?

एक समय ऐसा भी था कि खेडब्रह्मा में जैनधर्म में माननेवाले क्षत्रियों की भी बड़ी बस्ती थी । ये हूमड कैसे बने उसका एक रसप्रद उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ आपके समक्ष। विक्रम की प्रथम शताब्दि के अंत तक एवं द्वितीय शताब्दि के प्रंरभ में मौजूद थे एक महाराज।

नाम था उनका रायचंद ।

उस वक्त मौजूद थे एक दिगम्बर जैन तत्वज्ञ । नाम था आपका हूम्माचार्य । बड़ा प्रभाव था आपका । आपके प्रति उन क्षत्रियोंकी बड़ी आस्था थी एवं भक्ति भी। आपने खेडब्रह्मा ग्रामस्थ १८००० क्षत्रियों के संगठन को संबोधित किया 'हूमड' नामसे ।

वीर संवत ५५० में अर्हदबली के शिष्य माघनंदि ने नंदिसंघ की स्थापना की। हूम्माचार्यमी नंदिसंघ के थे और परिभ्रमण करते हुए वे रायदेश पहुँचे थे और वहाँ से ससंघ पहुँचे खेडब्रह्मा। उस समय के अंतर्गत उपरोक्त घटना घटी।

निम्नलिखित पंक्तियों से उपरोक्त घटना को बल मिलता है ....

विक्रम १०१ माघ सुदी पंचमी गुरुवार
पूजा प्रतिष्ठा दानविध वर्ती जय-जयकार।

वस्तुतः गुजरात -गुर्जर देशका पूर्वनाम था, लाट (लाड)। इसमें रहनेवाले क्षत्रिय लाट - लाड क्षत्रिय के नामसे पहचाने जाते थे। सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विषम परिस्थितियों के कारण कई क्षत्रिय लाड वैश्य बने। उन्होंने लक्ष बनाया व्यापार रोज़गार का ..

खेडब्रह्मा के बारे में संक्षिप्त परिचय

बात है १३१९ की। १४ वी शताब्दि के बादशाह अल्लाउद्दीन खिलजी ने आक्रमण किया गुजरात पर, गुजरातकी समृद्धिको तहस -नहस करने में उसने हिचकिचाहट का अनुभवतक नही किया। उसके क्रूर घातकी अत्याचार ने गुजरात की समृद्ध धरतीको मरूभूमि बना दिया।

बिशाल एवं समृद्ध खेडब्रह्मा भी उससे अछूता न रहने पाया बादशाह के सेनापति सूबेदार अलफखाँने आक्रमण किया खेडब्रह्मा पर। हिन्दु -शैव देवलाय एवं जिनालय मिट्टी में मिला दिये गये। मूर्तियोंके टुकडे - टुकडे कर दिये गये। और ये उनके पैरोके तले कुचले गये।

उन दिनों खेडब्रह्मा ने अपनी आखों से सावन भदों बरसाया।

ईडर संस्था के कुछ पुरातन अवशेष में पृष्ठ १५ लिखा गया है।

अदिति की बावड़ी के एक शिलालेख से स्पष्ट होता है कि १३ वी सदी के अंत तक खेडब्रह्मा समृद्धि की उचाँई पर ही था। ऐसा कहा जाता है कि प्राचीन काल में यहाँ पर मंदिरों एवं बावडियो की संख्या सैकडो की थी।

कई जगहो पर आज भी, नीवकी खुडई करते समय, हिन्दु एवं जैन मूर्तियाँ मिलती ही रहती है।

खेडब्रह्मासे ८ कि. मी. की दूरी पर खेडब्रह्माके अंतर्गत सरिता हरणाव के तटपर बसी हुई है, नगरी देरोल देवपुरी। यहाँ पर हूमड समाजके तीन जिनालय है, जिनमें एक है बावन जिनालय शिल्प स्थापत्यकला से युक्त अपनी अनोखी छटा लिए हुए। जिनालय के मूलनायक है भगवान श्री १००८ आदिनाथजी।

ऐसा कहा जाता है कि विजयादशमी दशेरा के दिन खेडब्रह्मा देरोल एवं विजयनगर (यानी खेडब्रह्मा से देरोल देसेल से विजयनगर) तक पाँचशेरी (वजन का एक माप) हाथोहाथ पहुँचती थी। कहने का मतलब यह है कि ये तीनों शहर एक समय कितने समृद्ध रहे होंगे एवं जनसंख्या भी उन स्थानो पर ठीक ठीक रही होगी।

ईडर से विजयनगर ५५ कि. मी. की दूरी पर है और देरोल -देवपुरी ३० कि. मी. की दूरी पर।

हूमड़ शब्द की व्युत्पत्ति

१. लाड क्षत्रिय आयुध धारी थे।

होम द्वारा आयुध त्यागके महत्वको चिरस्थायी रखनेकी दृष्टि से होम + आयुध-होमायुध के नये नाम से क्षत्रिय पहचाने जाने लगे ।

कालान्तर में होमायुध शब्दसे हूमड अंतिम शब्द आया और वह अधिक प्रचलित हो गया ।

देखिए......

होमायुध, होवाउढ, होवाउड्ड, होवाड्ड, हूँबडु,हूँबड, हूमड

ये लाट- लाड हूमंड जैनधर्म के अनुयायी थे ।

२. हूमड़ शब्दकी व्युत्पत्तिके बारेमें दूसरी मान्यता इस प्रकार है :

तीर्थंकरो की निर्वाणभूमि है बिहार प्रांत उसमें एक नगर था सूह्य ।

उसमें रहते थे दिगम्बर साधु । विहार करते-करते ये साधु पहुँचे गुजरातमें

बात है खेडब्रह्मा - ब्रह्मपुर की ।

उसमे रहते थे लाडवणिक (लाड वैश्य) उन्होंने जैन धर्म अंगीकार किया । उन साधुओं का उपदेश सुनकर ये भी हूमड़ कहलाये ।

हूमड़ की ब्युत्पति इस प्रकार है :

सुह्यस्थ, हूमस्थ, हूमड्ड, हूमडु, हूमड,

वस्तुतः सुह्य देश बिहार प्रांतके सिंह भूमि-क्षेत्रका पूर्व प्रचलित अप्रभंश नाम है ।

कथा वेणीवत्सकी .....

खेड़ब्रह्मा में सूर्यवँशी राजा वेणीवत्स के राज्य करने का वृतांत मिलता है, पुराण शास्त्रों में । ईडर दुर्गके इतिहास में भी उनके बारे में कहा गया है ....

श्री इल्व दुर्गाधिप वेणिवत्स
बभूव भूपाल मणिः स एव ।
चकार राज्य मघ वेष भूमौ
कलौगते द्रग भुजब्रग्निरिन्दु ॥२४॥

आइए वेणीवत्स शब्दों की कहानी सुनिए

अंग्रेजी में एक कहावत है -

TIME AND TIDE WAIT FOR NONE .

बात है आज से साढ़े तीन हजार वर्षों के पहले की ।

एक तेजस्वी राजा नाम था उसका वेणीवत्स । ईडर खेडब्रह्मा का अधिपति था वह

वेणीवत्स नाम कैसे पड़ा ?

ईडर की रमणीय पहाड़ी छोटी - छोटी पहाड़ियो के बीच है ईडर गढ - इल्वदुर्ग, वहाँ के ऋष्याश्रम के बछड़ोको चराता था एक बालक । बछडों के चरानेसे वह वत्स कहलाया ।

अब कथा प्रस्तुत है वेणी(वत्स) की । अरावली पहाड़के बिखरे हुए प्राकृतिक सौंदर्य के बीच देखने योग्य कई स्थल हैं जिनमें समाविष्ट है इल्वदुर्ग ।

इल्वदुर्ग के भीतर ही है एक कुंड । उसका जल पेय तो है ही साथ ही, स्वास्थ्य सुखकारी वर्धक भी ।

उसके बगलमें था एक बगीचा मनमोहक पेड़ों और पौधो से युक्त । वहाँ खिलते थे भाँति भाँति के रंगबिरंगी पुष्प केवडा चमेली गुलाब इत्यादि के पुष्पो की मधुर खुश्बू से दिन रात के वातवरणमें आह्लादक सुरभि यत्र -तत्र बिखरती रहती थी ।

यहाँ पर बात हो रही है निशा के समयकी ।

बगीचे में खिले हुए पुष्प रात्रि के समय गायब हो जाते थे, लेकिन पता नही चलता था किसी को भी । बागवान हैरान था । राजा के कानोंतक पहुँची यह बात

पहरेदार की नियुक्ति की गयी । मध्यरात्रिके समय बेचारा पहरेगीर सो जाता और पुष्प गायब हो जाते थे । कई रातों तक यह क्रम चलता रहा पहरेदार हटाया गया और उसका स्थान वत्सने लिया।

अंधेरी रात। निरभ्र आकाश में टिमटिमा रहे थे तारे, चारो ओर था सन्नाटा ।

समय मध्य रात्रि का

छम.. छम.. छम.... छम..... घुँघरूओ की मधुर आवाज आने लगी, वत्सका ध्यान उस दिशा की ओर गया । नजर उठाई अनुपम लावण्य देखकर वत्स मुग्ध हो गया ।

उसने एकदम नजर झुकाली एसा बतलानेके लिए कि उसने उसे देखा ही नहीं

अप्सरा के कदम आहिस्ते आहिस्ते उठते रहे । उसने सुगन्धयुक्त पुष्प इकट्ठे किये और उन्हे लेकर उसने कदम उठाये जलकुंडमें पहुंचने के लिये ।

दरवाजे से निकल गई वह . वत्स ने उसे पकड़ने के लिए उसका पीछा किया । सम्हलती हुई वह एकदम रफतार गति से दौडी जलकुंडमें सर.....सर.....सर... स...र. की प्रवेश करती हुई अप्सरा की बेनी (वेणी) वत्सने खींच ली ।

वेणी -बेनी के खिचने के इस प्रसंग विशेष के उपलक्ष्य में उसका नाम जोड़ दिया गया वत्स के साथ यानी वह बना वेणीवत्स ।

आगम समयानुक्रमणिका

प्रस्तावना

किसी भी जातिं या संस्कृति का विशेष परिचय पाने के लिए तत्सम्बन्धी उपलब्ध साहित्य एक मात्र आधार है ।

हूमड़ समाज़ जैन समाज़ का एक अभिन्न अंग है । उसे जैन इतिहास से अलग नहीं किया जा सकता और जब हम हूमड समाज के इतिहास का आलेखन करते हैं तब समस्त प्राप्त प्रामाणिक जैन साहित्य में हूमड जाति से सीधा सम्बन्ध रखनेवाले साहित्य पर आधार रखना होगा । हमारा प्रारम्भ से वर्तमान तक २००० वर्षो मे नन्दिसंघ बलात्कार गण सरस्वती गच्छ से सीधा सम्बन्ध है जिसका विशेष विवेचन हम अलग अध्यायमें करेंगे ।

अत: हूमड जाति की संस्कृति का परिचय पाने के लिये हमें जैन साहित्य से नन्दिसंघ के आचार्यो से रचित ग्रन्थ तथा उनके रचयिता के काल आदि का अनुसंधान करना चाहिए ।

अत: हमें अपने प्राचीन शास्त्र भंडरों, शिलालेखों, प्राचीन साहित्य सामग्री को आधार मानकर आगम समयानुक्रमणिका का आलेखन करना है ।

यह हम कुछ नन्दिसंघ सम्बन्धी विशेष आचार्यो के द्वारा रचित ग्रन्थो के नाम विषय आदि संकलन कर रहे हैं । उनका विशेष विवरण अलग अध्यायों में करेंगे ।

मानव की विगत विशिष्ट घटनाओ का दूसरा नाम इतिहास है । आज की प्रत्येक ऐसी घटना भविष्य का इतिहास बन जायेगी । इस प्रकार अतीत के सभी राजनीतिक सामाजिक तथा आर्थिक एवं विकास परिवर्तन भौतिक तथा आध्यामिक उत्थान एवं पुनरुत्थान वर्तमान का इतिहास बनकर प्राचीन मानव तथा उनके कृत्यों की स्मृति दिला रहे है ।

किसी देश या समाज को जानने के लिये उसके इतिहास को जानना आवश्यक है और वह इतिहास शीशे के समान है जिसमें झाँक कर अतीत को देखा जा सकता है ।

हमारा प्राचीन साहित्य ही अतीत और वर्तमान का निकट सम्बन्ध स्थापित कर सकता है और वही पुरातन नूतन बनकर हमारे सन्मुख उपस्थित होता है ।

महा पुरुषों द्वारा निर्मित साहित्य ही जीवन को प्रेरणा देने वाला है और उसका वर्तमान में लिपिबद्ध होना उसके अस्तित्व के लिये अत्यन्त आवश्यक है ।

हमारी विशाल सांस्कृतिक धरोहर है मूर्तिलेख, शिलालेख, पट्टावलियाँ एवं प्रशस्तियाँ, विशाल और जीते जागते जिनालय, सामाजिक परम्परायें और उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण हमारा इतिहास आगम ग्रन्थ -पुराण, प्राचीन रास हमारे आचार्यो भट्टारकों विद्वानो की साहित्य रचनाएँ है । जिनसे हमारे सामाजिक सांस्कृतिक इतिहास के पृष्ठ जीवित है।

विश्व की सभी प्राचीन सभ्यताओंका ज्ञान इन्ही कृतियो के आधार पर हो सकता है। साहित्यकारो की रचनाओं मूर्तिलेखों , शिलालेखों, वास्तुकला, भास्कर कला, चित्र कला, ललित कला की रचनाओं में केवल इतना अन्तर है कि एक मुखरित है और दूसरी मूक है, पर दोनों ही महत्वपूर्ण और उपयोगी हैं।

आगमकाल की संस्कृति और साहित्य

मानव समाज के विविध क्रिया कलापों तथा उनके प्रेरक मूल्यों एवं मान्यताओ की संज्ञा को संस्कृति कहते है । एक युग की संस्कृति अनेक प्रकार से न्यूनाधिक मात्रा में आगे आने वाले समाज को प्रभावित करती है ।

राष्ट्र की युग विशेष की संस्कृति उस समय की साहित्यिक कृतियों में स्वभाविक रूप में समाहित रहती है और वही साहित्य परवर्ती कालोंमें एक प्राचीन अभिलेख के स्वयुगीन संस्कृति के विविध पक्षों को उद्‌भाषित करता है। इसलिये साहित्य समाज का दर्पण है।

संस्कृति और साहित्य पुष्प एवं सौरभ की भाँति है । वास्तवमें साहित्य किसी भी समाज /देश/ की वह निधि है जिसमें उस देश / समाज के पूर्ववर्ती जन जीवन के विविध सांस्कृतिक आयाम निहित होते है । वे अपने युग की परम्पराओ गतिविधियों, मूल्यों एवं आदर्शों के प्रतीक हैं ।

हूमड़ समाज के नन्दिसंघके जैनाचार्यो द्वारा महत्वपूर्ण आगम परक साहित्य का निर्माण हुआ ।

अनुयोग व्यवस्था

प्रारम्भ में चारों अनुयोगों की भूमिका पर प्रत्येक आगम सूत्र का पठन-पाठन होता था। वह अत्यन्त दुसह पठन प्रणाली थी । प्रतिभा सम्पन्न शिष्य भी इस पद्धति से कठिनाई महसूस करते थे । इसलिये आचार्यों ने पठन-पाठन पद्धति की सरलता के लिये चार अनुयोगों में विभाजन किया ।

अनुयोग व्यवस्था आगम के पठन-पाठन का एक सुव्यस्थित और सुनियोजित क्रम है। सूत्र और अर्थ का समुचित सम्बन्ध- अनुयोग चार है :

(१) प्रथमानुयोग (२) करणानुयोग (३) चरणानुयोग (४) द्रव्यानुयोग

हम अपनी संस्कृति के इतिहास लेखन में सम्बद्ध आचार्यों भट्टारकों विद्वानों के प्राचीन उपलब्ध साहित्य की समयानुक्रमणिका प्रकाशित कर रहे हैं । जिसका विस्तृत वर्णन आगे या आगामी लेखों में किया जायेगा ।

मूलसंघ पट्टावली

प्रस्तावना

भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् उनका यह मूल संघ १६२ वर्ष के अन्तराल में होने वाले गौतम गणधर से लेकर अन्तिम श्रुत केवली भद्रबाहु स्वामी प्रथम तक अविच्छिन्न रूपमें चलता रहा। इनके समय में अवन्ति देश में पड़ने वाले द्वादश वर्षीय दुर्भिक्ष के कारण यह संघ दो भागो में विभाजित हो गया। एक आचार्य भद्रबाहु आम्नाय दिगम्बर और दूसरे आचार्य स्थूलभद्र आम्नाय जो आगे जाकर श्वेताम्बर मत से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रकार महावीर भगवान का एक अखंड संघ दो शाखाओ मे विभाजित हो गया। आचार्य अर्हत्‌बलीने यत्र - तत्र विखरे हुए आचार्यों तथा यतियों को संगठित करने के लिये दक्षिण देशस्थ महिमा नगर (जिला सतारा) में एक महान यति सम्मेलन आयोजित किया जिसमें सौ - सौ योजन से यतिगण आकर प्रतिक्रमण में सम्मलित हुए। उस अवसर पर यह एक अखंड संघ अनेक अवान्तर संघो में विभक्त होकर समाप्त हो गया।

वीर निवार्ण के पश्चात् भगवान के मूल संघ की आचार्य परम्परा में ज्ञानका क्रमिक ह्रास दर्शाने के लिए निम्न सारणी में तीन दृष्टियो का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। प्रथम दृष्टि तिलोयपणत्ति आदि मूल शास्त्रों की है जिसमें अंग अथवा पूर्वधारियो का समुचित काल निर्दिष्ट किया गया है।

द्वितीय दृष्टि इन्द्रनन्दि कृत श्रुतावतार की है, जिसमें समुचित काल के साथ- साथ आचार्यो का पृथक -पृथक काल भी बताया है। तृतीय दृष्टि पंडित कैलाशचन्द्रजी की है जिसमें भद्रबाहु प्रथम की चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ समकालीनता घटित करने के लिए उक्त काल में कुछ हेरफेर करने का सुझाव दिया गया है।

हूमड़ जातिका सीधा सम्बन्ध 'नन्दि संघ बलात्कार गण सरस्वती गच्छ' है इसलिए हमने आचार्य इन्द्र नन्दि कृत श्रुतावतार में जो नन्दिसंघ की पट्टावली दी है, वह दृष्टि नं २ के रूप में जैनेन्द्र सिद्धांत कोष में भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा संशोधित है। उसको मान्य रखकर यह सारणी दी जा रही है।

इसी के अनुसंधान में आचार्य इन्द्रनन्दि कृत '' श्रुतावतार '' प्राचीन ग्रन्थ श्लोक नं. १ से १९ के आधार पर तथा उसका अर्थ तीर्थंकर महावीर और उनकी परम्परा के आधार पर लिया गया है।

आचार्य पट्टावलियाँ

प्रस्तावना

जैन धर्म अपनी मौलिकता और वैज्ञानिकता के कारण अपने अस्तित्व को एक शाश्वत धर्म के रूपमें अभिव्यक्ति दे रहा है ।

भगवान महावीर इस युग के अन्तिम तीर्थंकर थे । उनके बाद आचार्यों की एक बहुत लम्बी श्रृंखला कड़ी से कड़ी जोड़ती रही है । सब आचार्य एक समान वर्चस्व वाले नही हो सकते । नदी की धारा में जैसे क्षीणता और व्यापकता आती है वैसे ही आचार्य परम्परामें उतार - चढ़ाव आता रहता है, फिर भी उसी श्रृंखला की अविच्छिन्नता अपने आप में ऐतिहासिक मूल्य है ।

पच्चीससौ वर्ष के इतिहास का एक सर्वांगीण विवेचन महत्वपूर्ण कार्य अवश्य है, पर है असम्भव, फिर भी कुछ दूरदर्शी आचार्यों ने.अपने ग्रन्थो में मूल्यवान ऐतिहासिक सामग्री को संरक्षित कर रखा है ।

जैन शासन सामुदायिक साधना की दृष्टि से अपूर्व है । भारतीय साधना की परम्परा को चिरंजीवी परम्परा कहा जा सकता है । यद्यपि व्यकितगत साधना की व्यवस्था भी सुरक्षित है, फिर भी सामुदायिक साधना की पद्धति ही मुख्य रही है ।

इस समूची पद्धति का प्रतिनिधित्व करने वाले दो शब्द हैं 'आचार्य संघ ' ।

आचार्य संघ

यह विभाग केवल व्यवस्था की दृष्टि से था । उत्तरवर्ती काल में अनेक संघ हो गए । उनमें मौलिक एकता भी नही रही । सम्प्रदाय भेद बढ़ते गए । बड़े संघ छोटे संघो में विभक्त होते गये, फिर भी संघो की परम्परा को सुरक्षित रखने का प्रयत्न निरन्तर चलता रहा । फलतः आज भी जैन शासन के रूपमें सुरक्षित है । गणो के आपसी भेद चलते थे। इन परिस्थितियों में प्रभावक आचार्य ही जैन शासन के अस्तित्व को सुरक्षित रख सकते थे ।

पच्चीस सौ वर्ष की लंबी अवधि में अनेक प्रभावक आचार्य हुए । उन्होने अपनी श्रुत भक्ति - चरित्र शक्ति तथा मंत्र शक्ति के द्वारा अपने प्रभाव की प्रतिष्ठा की और जैन शासन की भी प्रभावना बढ़ाई ।

' हमारे वर्षो की लम्बी अवधि में अनेक गणो के अनेक प्रभावी आचार्य हुए । चरित्र प्रबंध कोश, आगम ग्रन्थ जैसे कि नियुक्ति, भाष्य ,चूर्णियाँ , टीकाएँ एवं मंत्र - तंत्र की सामग्री .... इत्यादि

निर्ग्रन्थ शासन

निर्ग्रन्थ संघ संयम, त्याग और अंहिसा की भूमिका पर अधिष्ठित है । अनन्त आलोक पुंज महाबली तीर्थंकर उसके संस्थापक और संचालक होते है । तीर्थंकर की अनुपस्थिति में इस महत्वपूर्णदायित्व का निर्वहण आचार्य करते हैं ।

आचार्य विशुद्धतम आचार संपदा के स्वामी होते हैं । वे ३६ गुणों से अलंकृत हैं। दीपक की तरह स्वयं प्रकाशमान बनकर जन-जन के पथ को आलोकित करते हैं और तीर्थंकरों की गिरा पतवार सहस्त्रों - सहस्त्रो जीवन नौकाओं को भवसागर के पार पहुँचाती है ।

जैन शासन और भगवान महावीर

वर्तमान जैन शासन भगवान महावीर की अनुपम देन है। सर्वज्ञोपलब्धि के बाद अध्यात्म प्रहरी , मुक्तिदूत तीर्थंकर महावीर ने तीर्थ की स्थापना की । अहिंसा - अभय- मैत्री का स्नेह प्रदान कर उन्होंने समता का दीप जलाया । अध्यात्म के आयाम उद्घाटित किये। अपनी अनन्त महा संपदा से जन - जन को लाभान्वित कर एक समुचित व्यवस्था क्रम से जैन संघ को मार्गदर्शन देकर भगवान महावीर को निर्वाण प्राप्त हुआ ।

आचार्यों की गौरवमयी परम्परा का प्रारंभ

भगवान महावीर की विशाल संघ सम्पदा को जैनाचार्यो ने संभाला । वे सूक्ष्म चिन्तक एवं सत्य दृष्टा थे । धैर्य , औदार्य और गाम्भीर्य उनके जीवन के विशेष गुण थे । सहस्त्रो सहस्त्रो श्रुत संपन्न मुनियों को लील लेनेवाला विकराल काल का कोई भी क्रूर आघात एव किसी भी वात्याचक्र का तीव प्रहार उनके मनोबल की जलती मसाल न मिटा सका , न बुझा सका और न उनकी विराट ज्योति को मन्द कर सका । प्रसन्नचेता जैनाचार्यों की वृत्ति मंदराचल की तरह अचल थी ।

उदार चेता

'' जैनाचार्य उदार विचारों के धनी थे । उन्होंने अपने संघ व सम्प्रदाय की ही सीमा को सब कुछ न मान कर अत्यन्त व्यापक दृष्टिकोण से ही चिंतन किया । जन - जन के हित की बात कही ।

शास्त्रार्थ प्रधान युग में भी समन्वयात्मक भावभूमि को परिपुष्ट किया गया । समग्र धर्मों के प्रति उनका सद्भाव सिद्धान्त के अनुरूप माध्यस्थ दृष्टि कोण एवं अनाग्रहपूर्ण प्रतिपादन जैनाचार्यों की सफलता का मूल मंत्र था । ''

-साध्वी संघ मित्रा

दायित्व का निर्वाह

श्रमण- परम्परा में दीक्षित होकर आचार्य पद से अलंकृत हो जाने में ही उन्होंने जीवन और कर्तव्य की इतिश्री नहीं मानी, परन्तु दायित्व का वहन प्रतिक्षण जागरूक रहकर किया ।

' सुत्ता अमुणिणो मुणिणो सया जागरन्ति ' को सार्थक किया ।

जैनाचार्यों की ज्ञानाराधना

'' सद् धर्म धुरीण जैनाचार्यो की ज्ञानाराधना विलक्षण थी । मंदिर उपाश्रय - मठ ही उनके ज्ञान केन्द्र विद्यापीठ थे । श्रुतदेवी के वे कर्मनिष्ठ उपासक बने । ' सज्झाय रयस्य तायिणो' - इस आगम वाणीको उन्होने जीवन सूत्र बनाकर ज्ञान विज्ञान का गम्भीर

अध्ययन अध्यापन किया। महसागर में उन्होंने गहरी डुबकियाँ लगाई। फलतः जैनाचार्य दिग्गज विद्वान बने। संसार का विरल विषय ही होगा जो उनकी प्रतिभा से अछूता रहा। ज्ञान, विज्ञान, धर्म दर्शन, साहित्य, संगीत इतिहास गणित रसायन शास्त्र, आयुर्वेद शास्त्र ज्योतिष शास्त्र आदि विभिन्न विषयों के ज्ञाता अनवेष्टा एवं अनुसंधाता जैनाचार्य थे। ''

-साध्वी संघ

भारतीय ग्रन्थ राशि के जैनाचार्य पाठक ही नही स्वयं निर्माता थे। उनकी लेखनी अविरत गति से चली। विशाल साहित्य का निर्माण करके उन्होंने सरस्वती भंडार को भर दिया। उनका साहित्य सावन गीत प्रधान ही नहीं परन्तु काव्य - महाकाव्य विशालकाय पुराणों की संरचना, व्याकरण, कोश, दर्शन कोश में दार्शनिक दृष्टि-योग -न्यायशास्त्र के वे स्वयं प्रस्थापक थे। जैन साहित्य जैनाचार्यो की मौलिक सूझ बूझ एवं अनवरत परिश्रम का परिणाम है ~

पूर्व विवेक के साथ उन्होंनें महावीर संघ को संरक्षण दिया एवं विस्तार भी।

अध्यात्म प्रधान भारत

भारत अध्यात्म की अद्‌भुत भूमि है। यहाँ के कण - कण में तत्त्वदर्शन का रस है और धर्म का अंकुरण है। इस भूमि ने ऐसे नवरत्नों को जन्म दिया जो अध्यात्म के मूर्तरूप थे। उनके चिंतन ने जीवन को समझने का विशद दृष्टिकोण दिया . भोग में त्याग और कमलदल की भाँति निर्लेप जीवन जीने की कला सिखाई।

चौबीस तीर्थंकरो के अवतार ने इस धरा पर जन्म लिया।

जैन परम्परा और तीर्थंकर

जैन परम्परा में तीर्थंकरो का स्थान सर्वोपरि है। नमस्कार मंत्र में सिद्धो के पहले तीर्थंकरो का स्मरण किया गया है। वे तीर्थंकर मानवता के सदा उपकारी है।

परम्परा वस्तुतः एक सरिता का प्रवाह है जिसमें हर वर्तमान क्षण अतीत का आभारी होता है। वह परम्परा का प्रवाह ज्ञान, विज्ञान कला सभ्यता संस्कृति आदि गुणो को प्रगट करता है एवं सहज गुण तत्वो को भविष्य के चरणो में समर्पण कर अतीत में समाहित हो जाता है।

भारत भूमि पर वर्तमान अवसर्पिणी काल में प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ और तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वप्रभु और चौबीसवें महावीर हैं।

वर्तमान जैन परम्परा और भगवान महावीर

वर्तमान जैन शासन की परम्परा का सीधा सम्बन्ध भगवान महावीर से है। भगवान महावीर के १४ शिष्यो में - साधुओ में गौतम गणधर प्रमुख थे। अनेक श्रावक श्राविकाओं में श्रेणिक -उदयन चेटक प्रमुख शासक अनुयायी थे।

बौद्ध धारा विदेश की ओर अधिक प्रवाहित हुई और भारतमें विच्छिन्न् प्राय २५०० से भी अधिक वर्षो से कुछ विशिष्ट क्षमताओं से भारत में भगवान महावीर का धर्म गौरवपूर्ण मस्तक ऊँचा किये हुए है।

नन्दिसंघ बलात्कारगण सरस्वती गच्छ के हूमड़ों के सूरत गादी के भट्टारकों की पट्टावली

॥ श्री महावीराय नमः ॥

(इन्द्र नन्दि कृत श्रुतावतार प्राचीन ग्रन्थ श्लोक नं. १ से १९ के आधार पर तथा अर्थ '' तीर्थंकर महावीर'' और उनकी पट्टावली आचार्य परम्परा के आधार पर)

पट्टावली

नन्दी संघ -बलात्कारगण - सरस्वतीगच्छ की प्राकृत - पट्टावली

श्री त्रैलोक्याधिपं नत्वा स्मृत्वा सद्‌गुरु - भारतीम् ।
वक्ष्ये पट्टावली रम्यां मूलसंघागणाधिपाम् ॥१॥
श्रीमूलसंघप्रवरे नन्द्याम्नाये मनोहरे ।
बलात्कारगणोत्तसे गच्छे सारस्वतीयके ॥ २॥
कुन्दकुन्दान्वये श्रेष्ठ उत्पन्नं श्रीगणाधिपम् ।
तमेवात्र प्रवक्ष्यामि श्रूयतां सज्जना जनाः ॥३॥

मैं तीन लोकके स्वामी श्री जिनेन्द्र भगवानको नमस्कार कर तथा सद्‌गुरु की वाणीका स्मरण कर मूलसंघगण की पट्टावली को कहता हूँ। श्री मूलसंघ के नन्दीनामक सुन्दर आम्नाय में बलात्कारगण के सरस्वतीगच्छ के कुन्दकुन्दनामक वंश में जो गणों के अधिपति उत्पन्न हुए, उनका वर्णन करता हूँ -सज्जन लोग सुनें।

अन्तिम जिण - णिव्वाणे केवलणाणी य गोयम-मुणिंदो
बारह - वासे य गये सुधम्मसामी य संजादो ॥१॥
तह बारह वासे पुण संजादो जम्बुसामि मुणिणाहो ।
अठतीस वास रहियो केवलद्‌णाणी य उक्किट्ठो ॥२॥
बासठि केवल वासे तिण्हि मुणी गोयम सुधम्म जम्बू य ।
बारह बारह दो जण तिय दुगहीण चं चालीसं ॥३॥

अन्तिम श्री महावीरस्वामी के निर्वाण के बाद गौतम स्वामी केवलज्ञानी हुए जो बारह वर्ष तक रहे। इसके बाद बारह वर्ष तक सुधर्माचार्य केवलज्ञानी हुए। इसके बाद जम्बूस्वामी ३८ वर्षों तक केवली रहे। इस प्रकार ६२ वर्षों तक तीन केवली गौतम, सुधर्माचार्य और जम्बूस्वामी हुए।

सुयकेवलि पंच जणा बासिठ -वासे गये सुसंजादा ।
पढमं चउदह वासं विण्हुकुमारं मुणेयव्वं ॥४॥
नन्दिमित्त वास सोलह तिय अपराजिय वास वावीसं ।
इग-हीण वीस वासं गोवद्धन भद्‌बाहु गुणतीसं ॥५॥
सद सुयकेवलणी पंच जणा विण्हु नन्दिमित्तो य ।
अपराजिय गोवद्धण तह भद्‌बाहु य संजादा ॥६॥

श्री महावीरस्वामी के ६२ वर्ष बाद पाँच श्रुतकेवली हुए। प्रथम विष्णुकुमार चौदह वर्ष तक श्रुत केवली रहे, इसके बाद सोलह वर्ष नन्दिमित्र, बाईस वर्ष अपराजित, उन्नीस वर्ष गोवर्द्धन और उनतीस वर्ष तक महात्मा भद्रबाहु श्रुत केवली हुए। इस प्रकार सौ वर्षोंमें पांच श्रुतकेवली हुए - विष्णुकुमार, नन्दि -मित्र, अपराजित, गोवर्द्धन और भद्रबाहु ।

सद बासट्ठि सुवासे गएसु उप्पण दह सुपुव्वधरा ।
सद-तिरासी वासाणि य एगादह मुणिवरा जादा ॥७॥
आयरिय विशाख पोट्ठल खत्तिय जयसेण नागसेण मुणी ।
सिद्धत्थ धिति विजय बुहिलिग देव धमसेणं ॥८॥
दह उगणीस य सत्तर इकवीस अट्ठारह सत्तर ।
अट्ठारह तेरहं बीस चउ रह चोदय कमेणेयं ॥९॥

श्री महावीरस्वामी के १६२ वर्ष बाद १८३ वर्ष तक दस पूर्व के धारी ग्यारह मुनिवर हुए - १० वर्षों तक विशाखाचार्य, १९ वर्षों तक प्रोष्ठिलाचार्य, १७ वर्षों तक क्षत्रियाचार्य, २१ वर्षों तक जयसेनाचार्य, १८ वर्षों तक नागसेनाचार्य, १७ वर्षों तक सिद्धार्थाचार्य, १८ वर्षों तक घृतसेनाचार्य, १३ वर्षों तक विजयाचार्य, २० वर्षों तक बुद्धिलिंगाचार्य, १४ वर्षों तक देवाचार्य और चौदह वर्षों तक धर्मसेनाचार्य हुए ।

अन्तिम-जिण णिव्वाणं तिय सय पण चाल वास जादेसु ।
एगादहंगधारिय पंच जणा मुणिवरा जादा ॥१०॥
नक्खतो जयपालग पंडव धुवसेन कंस आयरिया ।
अठारह वीस -वासं गुणचालं चौद बत्तीसं ॥११॥
सद तेवीस वासे एगादह अङ्गधरा जादा ॥

श्री वीरस्वामी के निर्वाण के ३४५ वर्ष बाद १२३ वर्षों तक ग्यारह अगं के धारी पाँच मुनिवर हुए-१८ वर्षों तक नक्षत्राचार्य, बीस वर्षों तक जयपालाचार्य, ३९ वर्षों तक पाण्डावाचार्य, १४ वर्ष तक धुवसेनाचार्य और ३२ वर्षो तकं कंसाचार्य। इस प्रकार १२३ वर्षों में पाँच ग्यारह अंग के धारी हुए ।

वासं सत्तावणदिय दसंग नव - अंग अट्ठ धरा ॥१२॥
सुभद्ध च जसोभद्दं भद्बाहु कमेण च ।
लोहाचय्य मुणीसं च कहियं च जिणागमे ॥१३॥
छह अट्ठारहवासे तेवीस वावण (पणास) बास मुणिणाहं ।
दस - नव अट्ठंग-धरा वास दुसदवीस सधेसु ॥१४॥

इसके बाद ९७ वर्षों तक दस अंग, नव अंग तथा आठ अंगोंके धारी क्रमशः ६ वर्षों तक सुभद्राचार्य, १८ वर्षों तक यशोभद्राचार्य, २३ वर्षों तक भद्रबाहु और ५० वर्षों तक लोहाचार्य मुनि हुए। इसके बाद ११८ वर्षों तक एकाङ्गधारी रहे ।

पंचसये पणसठे अन्तिम जिण समय जादेसु ।
उप्पण्णा पंच जणा इयंगधारी मुणयव्वा ॥१५॥

अहिबल्लि माघनन्दि य धरसेण पुष्फयंत भूदबली ।
अडवीसं इगवीसं उगणीसं तीस वीस वास पुणो ॥१६॥

श्री वीरनिर्वाण से ५६५ वर्ष बाद एक अंगके धारी पाँच मुनि हुए । २८ वर्षों तक अहिबल्याचार्य , २१ वर्षो तक माघनन्द्याचार्य , उन्नीस वर्षों तक धरसेनाचार्य तीस वर्षों तक पुष्पदन्ताचार्य और २० वर्षो तक भूतबली आचार्य हुए ।

इग-सय अठारवासे इयंग -धारी य मुणिवरा जादा ।
छ-सय तिरासिय वासे णिव्वणा अंगद्धित्ति कहिय जिणे ॥१७॥

एक सौ अठारह वर्षो तक एक अंग के धारी मुनि हुए । इस प्रकार ६८६ वर्षों तक अंग के धारी मुनि हुए ।

अब मूलसंघ का पाठ वर्णित होता है ।

श्री महावीर के निर्वाण के ४७० वर्ष बाद विक्रमादित्यका जन्म हुआ । विक्रम जन्म के दो वर्ष पूर्व सुभद्राचार्य और विक्रम राज्य के चार वर्ष बाद भद्रबाहुस्वामी पट्टपर बैठे । भद्रबाहुस्वामी के शिष्य गुप्तिगुप्त हुए । इनके तीन नाम हैं -गुप्तिगुप्त अर्हद्‌बली और विशाखाचार्य । इनके द्वारा निम्न लिखित चार संघ स्थापित हुए ।

नन्दिवृक्षके मूल से वर्षायोग धारणकरनेसे नन्दिसंघ हुए । इनके नेता माघनन्दि हुए अर्थात् इन्होने ही नन्दिसंघ स्थापित किया । जिनसेन नामक तृणतलमें वर्षायोग करने से एक ऋषिका नाम वृषभ पड़ा । इन्होनें वृषभ संघ स्थापित किया । जिन्होंने सिंह की गुफा में वर्षा योग को धारण किया उनने सिंह संघ स्थापित किया और जिसने देवदत्ता नाम की वेश्या के नगर में वर्षायोग धारण किया उसने देवसंघ स्थापित किया ।

इसी प्रकार नन्दि संघ पारिजातगच्छ बलात्कारगण में नन्दी चन्द्रकीर्ति और भूषण नाम के मुनि हुए ।

उनमें श्रीवीरसे ४९२ वर्ष बाद, सुभद्राचार्य से २४ वर्ष बाद, विक्रम-जन्म से २२ वर्ष बाद और विक्रम राज्य से ४ वर्ष बाद द्वितीय भद्रबाहु हुए ।

सत्तरि--चउ- सद-युतो तिणकाला विक्कमो हवई जम्मो ।
अठ-वरस बाललीला सोडस वासेहि भम्मिए देसे ॥१८॥
पणरस वासे रज्जं कुणन्ति च्छोवदेससंयुतो ।
चालीस वरस जिणवर धम्मं पालीय सुरपयं लहियं ॥१९॥

अर्थात् श्री वीरनिर्माण के ४७० वर्ष बाद विक्रम का जन्म हुआ । आठ वर्षो तक इन्होने बाललीला की, सोलह वर्षों तक देश भ्रमण किया और ५६ वर्षों तक अन्यान्य धर्मो से निवृत्त होकर जिनधर्म का पालन किया ।

काल - गणना

कालगणना इतिहास की रीढ़ की हड्डी है। राजकीय तथा सांस्कृतिक , धार्मिक इतिहास की अनेक घटनाएँ उस समय के प्रचलित संवतों के वर्षों में लिखी गई है । इसी आधार पर उन घटनाओं का पूर्वापर संबध बनाया जा सकता है तथा इस घटना का प्रामाणिक समय निश्चित किया जा सकता है। इसलिये सब सवत्सरों का परस्पर सम्बन्ध आवश्यक है।

इतिहास की घटनाओ के विषय में वर्ष की संख्या अत्यंत महत्व की है ।

हूमड़ इतिहास विषयक विवरण में क्योंकि जैनागम के रचयिता नन्दिसंघ की परम्परा , तात्कालिक भट्टारकों , विद्वानों, कवियों अन्य महापुरुषों का तथा शास्त्रों का ठीक-ठीक काल-निर्णय करने की आवश्यकता पड़ेगी । अतः संवत्सर का परिचय सर्व प्रथम पाना आवश्यक है।

जैनागम के मुख्यतः चार संवत्सरों का प्रयोग पाया जाता है

वीर निर्वाण संवत	विक्रम संवत
इसवी सन	शक संवत

परन्तु इसके अतिरिक्त कुछ संवतों का व्यवहार होता है । जैसे गुप्त, हिजरी, मघा आदि ।

सबसे महत्व का संवत विक्रम संवत है। वीर निर्वाण के ४७० वर्ष पीछे विक्रम संवत का प्रारम्भ हुआ, जिसका आधार -

जरयणिं कालगओ, अरिहा तिर्थंकरो महावीरो ।
तं रयणिं अवन्तीवइ अहि सित्तो पालगो राया ॥१॥
सट्ठीपाल गरत्रो, पण्ण वन्नसयं तुहोई नंदाणं ।
अट्ठसयं मुरियाणं , तीस च्चिय पुष्त मित्त रस ॥२॥
वलमित्त भाणुत्तिाणं सट्ठिवरिसाणि चत्त नरवहणे ।
तहनद्दभिल्लरज्जं तेर सवासे सगस्स चऊ ॥३॥
विककम रज्जाणंतर सत्तर सवासे हिं वच्छ रवनि त्ती ।
से संपण तीसय विवकम लालम्मि य पविट्ठ ॥४॥
विककमरज्जारंमा , परओ सिरिवीर तिव्वुई भणिया ॥
सुन्न मुणिवेयजुत्तो विककम कालाओ जिण कालो ॥५॥
श्री वीर निवृत्ते वर्षे पड़मि पंचोतेर शने:
शाक संवत्सरदैषा प्रवृतिर्मरितेड भवत् ॥६॥

भगवान महावीर जिस रात्रि को निर्वाण हुए उसी दिन पालक अवन्ति का राजा हुआ ।

पालक राजा वर्ष	६०
नंद वर्ष	१५५
मौर्य वंश	१०८
पुष्प मित्र	३०
बलमित्र भानुमित्र	६०
नभसेन	४०
	४५३
गर्द भिल्ल	१३
शक वर्ष	४
	४७०

इस प्रकार ४७० वर्ष पीछे राजा विक्रम हुए । गर्दभिल्ल के १७ वर्ष पीछे विक्रम संवत की स्थापना हुई ।

वीर संवत् ६०५ एवं पांच महीने के पीछे शक संवत का आरम्भ हुआ।

वीर संवत और विक्रम संवत में ४७० वर्ष का अन्तर माना गया है । उपरोक्त गाथा जैन परम्परा का इतिहास भाग १ से उद्‌धृत की गयी है ।

पच्छा पावाणवरे कत्तियमासे किण्ह चौद सिए ।
सादीए स्तीए सेसस्यं छेतु निव्वाओ ॥

(जयध. भा १ पृष्ठ ८१)

कत्यिय किण्हे चोइसि पच्चूसे सादिणा मणकवते ।
पावाए णायरीए एक्को वीरेसरो सिद्धो ॥

(तिलो प. ४. १२०८)

सर्व संवत्सरों का परस्पर सम्बन्ध

निम्न सारिणी की सहायता से कोई भी एक संवत दूसरे में परिवर्तित किया जा सकता है ।

क्रम	नामसंकेत	१ वीर निर्वाण	२ विक्रम पूर्व	३ ईसवी पूर्व	४ शक पूर्व	५ गुप्त पूर्व	६ हिजरी पूर्व
१)	वीर वीनि	१	४७०	५२७	६०५	८४६	११२०
२)	विक्रम वि	४७०	१	५७	१३५	३७६	६५०
३)	ईसवी ई .	५२७	५७	१	७८	३१९	५९३
४)	शक श .	६०५	१३५	७८	१	२४१	५१५
५)	गुप्त गु .	८४६	३७६	३१९	२४१	१	२७४
६)	हिजरी हि .	११२०	६५०	५९४	५३५	२७४	१

उपरोक्त सारिणी जिनेद्र वर्णीकृत सिद्धांत कोष से ली गई है ।

भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित ॥

वीर निर्वाण सवंत

भगवान महावीर का निर्वाण ईसवी सन् के ५२७ वर्ष पूर्व हुआ है और महात्मा बुद्धका परिनिर्वाण महावीर निर्वाण से लगभग १७ वर्ष पूर्व अथवा ई. सन् के ५४४ वर्ष पूर्व हुआ है । सिंहल आदि देशो में बुद्ध के निर्वाण का यही काल माना है । वीर निर्वाण संवत् के विवाद पर प्रसिद्ध ऐतिहासिक विद्धान स्व. पं. जुगलकिशोर मुख्तार ने अनेक ग्रन्थोंके प्रमाण देकर यह प्रमाणित किया कि प्रचलित विक्रम संवत राजा विक्रम की मृत्यु का संवत् है, जो वीर निर्वाण संवत से ४७० वर्ष बाद प्रारम्भ होता है । मुनि कल्याण विजयने अपने '' वीर निर्वाण संवत और जैन काल गणना '' नामक निबन्ध में भी सप्रमाण यही विवेचन किया है ।

मूल संघ पट्टावली

इन्द्रनन्दि कृत नन्दिसंघ बलात्कार गण पट्टावली के आधार से प्रमाणित

१	२	३	४	५	६	७	८	९
क्रम	पेटा क्रम	नाम	उप नाम	समय वी.नि.स.	कुल समय		विशेष	
१	१	गौतम स्वामी	इन्द्रभूति	०-१२	१२	गणधर	केवलज्ञान	
२	२	सुधर्मा स्वामी	लोहाचार्य	१२-२४	१२		,, ,,	
३		जम्बू स्वामी	प्रथम	२४-६२	३८		,, ,,	
						६२		
४	१	विष्णु	नन्दि	६२-७६	१४	पूर्ण	श्रुत केवली	
५	२	नन्दि मित्र	नन्दि	७६-९२	१६	-	श्रुत केवली	
६	३	अपराजित		९२-११४	२२	-	श्रुत केवली	
७	४	गोवर्धन		११४-१३३	१९	-	श्रुत केवली	
८	५	भद्रबाहु (प्रथम)		१३३-१६२	२९			
					१००	कुलसमय १६२ वर्ष		

११ अंग १४ पूर्वधारी

९	१	विशालाचार्य	विशाखदत्त	१६२-१७२	१०	११ अंग १० पूर्व धारी
१०	२	प्रोष्ठितचार्य	चन्द्रगुप्त	१७२-१९१	१९	,,
११	३	क्षत्रियाचार्य	कृतिकार्य	१९१-२०८	१७	,,
१२	४	जयसेनाचार्य	नाग	२०८-२२९	२१	,,
१३	५	नागसेनाचार्य		२२९-२४७	१८	,,

१४	६	सिद्धार्थ		२४७-२६४	१७	
१५	७	धर्तसेण		२६४-२८२	१८	
१६	८	विजय	विजयसेन	२८२-२९५	१३	
१७	९	बुद्धिलिंग	बुद्धिल	२९५-३१५	२०	
१८	१०	देवाचार्य	गंगदेव	३१५-३२९	१४	
१९	११	धर्मसेनाचार्य		३२९-३४५	१६	
			धर्म सुधर्म			
(क्रम ९ से १९		**११ अंग एवं १० पूर्वधारी)**			**१८३**	
२०	१	नक्षत्राचार्य	क्षत्र	३४५-३६३	१८	११ अंगधारी
२१	२	जयपाल	यशपाल	३६३-३८५	२०	११ अंगधारी
२२	३	पाण्डव	पाण्डु	३८३-४२२	३९	११ अंगधारी
२३	४	धुवसेन	धुमसेन	४२२-४३६	१४	११ अंगधारी
२४	५	कंसाचार्य		४३६-४६८	३२	११ अंगधारी
क्रम २० से २४ ११ अंग धारी				**समय**	**१२३**	**११ अंगधारी**
२५	१	सुभद्राचार्य		४६८-४७४	६	१० अंग धारी
२६	२	यशोधर (यशोमद्राचार्य)		४७४-४९२	१८	१० अंग धारी
२७	३	भद्रबाहु (द्वितीय)		४९२-५१५	२३	९ अंग धारी
२८	४	लोहाचार्य		५१५-५७५	५०	८ अंग धारी
					९७	

वीरनिर्वाण कुल समय **५६५ - वर्ष**

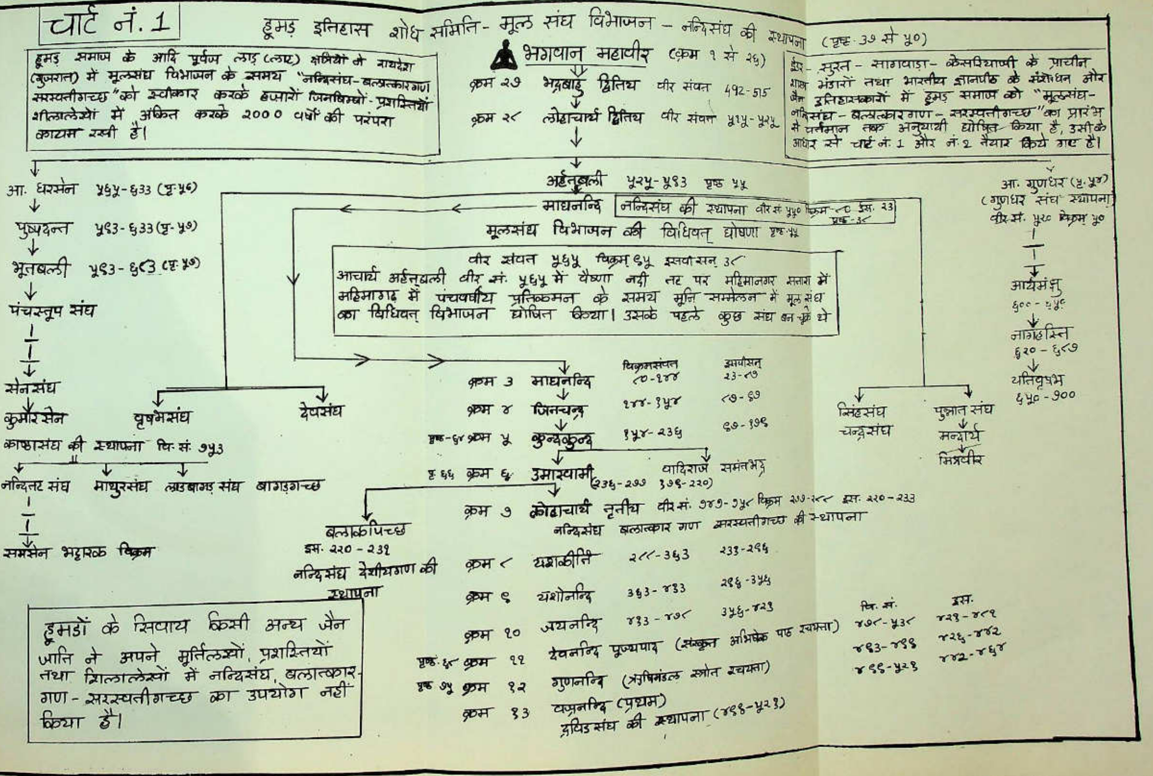
चार्ट नं. 1
हूमड़ इतिहास शोध समिति- मूल संघ विभाजन - नन्दिसंघ की स्थापना (पृष्ट ३७ से ५०)
हूमड़ समाज के आदि पूर्वज लाड़ (लाट) क्षत्रियों ने लाटदेश (गुजरात) में मूलसंघ विभाजन के समय "नन्दिसंघ-बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ" को स्वीकार करके हजारों जिनबिम्बों-प्रशस्तियों शीलालेखों में अंकित करके 2000 वर्षों की परंपरा कायम रखी है।
भगवान महावीर (क्रम १ से २६)
क्रम २७ भद्रबाहु द्वितिय वीर संवत 492-515
क्रम २८ लोहाचार्य द्वितिय वीर संवत ५१५-५२५
ईडर - सुरत - सागवाड़ा - केसरियाजी के प्राचीन शास्त्र भंडारों तथा भारतीय ज्ञानपीठ के संशोधन और जैन इतिहासकारों ने हूमड़ समाज को "मूलसंघ-नन्दिसंघ - बलात्कारगण - सरस्वतीगच्छ" का प्रारंभ से वर्तमान तक अनुयायी घोषित किया है, उसी के आधार से चार्ट नं. 1 और नं. 2 तैयार किये गए है।
अर्हद्बली ५२५-५९३ पृष्ठ ५५
माघनन्दि
नन्दिसंघ की स्थापना वीर सं. ५५० विक्रम ८० ईस. 23 पृष्ठ-३८
मूलसंघ विभाजन की विधिवत् घोषणा पृष्ठ ५५
वीर संवत ५६५ विक्रम ९५ इसवी सन् ३८
आचार्य अर्हद्बली वीर सं. ५६५ में वैष्णा नदी तट पर महिमानगर सतारा में महिमागढ़ में पंचवर्षीय प्रतिक्रमन के समय मुनि सम्मेलन में मूल संघ का विधिवत् विभाजन घोषित किया। उसके पहले कुछ संघ बन चुके थे
आ. धरसेन ५६५-६३३ (पृ-५६)
पुष्पदन्त ५९३-६३३ (पृ-५७)
भूतबली ५९३-६८३ (पृ-५७)
पंचस्तूप संघ
सेनसंघ
कुमारसेन
वृषभसंघ
देवसंघ
काष्ठासंघ की स्थापना वि. सं. ७५३
नन्दितट संघ
माथुरसंघ
लाडबागड़ संघ
बागड़गच्छ
रामसेन भट्टारक विक्रम
आ. गुणधर (पृ. ५७)
(गुणधर संघ स्थापना) वीर सं. ५८० विक्रम ५०
आर्यमंक्षु ६०० - ५५०
नागहस्ति ६२० - ६८७
यतिवृषभ ६५० - ७००
सिंहसंघ
चन्द्रसंघ
पुन्नाट संघ
मन्दार्य
मित्रवीर
विक्रमसंवत
इसवीसन्
क्रम ३ माघनन्दि ८०-१४४ 23-८७
क्रम ४ जिनचन्द्र १४४-१५४ ८७-९७
पृष्ठ-६४ क्रम ५ कुन्दकुन्द १५४-२३६ ९७-१७९
पृ. ६६ क्रम ६ उमास्वामी (२३६-२७७ १७९-२२०)
वादिराज
समंतभद्र
क्रम ७ लोहाचार्य तृतीय वीर सं. ७४७-७५८ विक्रम २७७-२८८ इस. २२०-२३३
नन्दिसंघ बलात्कार गण सरस्वतीगच्छ की स्थापना
बलाकपिच्छ
इस. २२० - २३१
नन्दिसंघ देशीयगण की स्थापना
क्रम ८ यशःकीर्ति २८८-३६३ २३१-२९६
क्रम ९ यशोनन्दि ३६३-४३३ २९६-३५६
क्रम १० जयनन्दि ४३३-४७८ ३५६-४२३
वि. सं.
इस.
पृष्ठ ६८ क्रम ११ देवनन्दि पूज्यपाद (संस्कृत अभिषेक पाठ रचयिता) ४७८-५३८ ४२१-४८१
क्रम १२ गुणनन्दि (ऋषिमंडल स्तोत्र रचयिता) ४८३-४९९ ४२६-४४२
पृष्ठ ७५ क्रम १३ वज्रनन्दि (प्रथम) ४९९-५२१ ४४२-४६४
द्रविड संघ की स्थापना (४९९-५२१)
हूमडों के सिवाय किसी अन्य जैन ज्ञाति ने अपने मूर्तिलेखों, प्रशस्तियों तथा शिलालेखों में नन्दिसंघ, बलात्कार-गण - सरस्वतीगच्छ का उपयोग नहीं किया है।

मूल संघ विभाजन

आचार्य इन्द्रनन्दि ने अपने श्रुतावतार ग्रन्थ में अपने कथन की पुष्टि में एक प्राचीन पद्य उद् धृत किया है :

आयातौ नन्दिवीरो प्रकट गिरि गुहा वासतो अशोक वाटा.
दे वाश्चान्यो अपराविर्जित इति यतयो सेन भद्राह्वयोच ।
पंच स्तूप्यातून गुप्तौ गुणधर वृषभ शाल्मती वृक्षमूलात ।
निर्यातौ सिंह चन्द्रौ पथित गुणगणौ केसरा त्खण्ड पूर्वात् ।।९६।।
अर्हद्बली गुरुश्चक्रे संघ संघरत परम ।
सिंह संघो नन्दिसंघो सेन संघस्त यापरः ।
देव संग इति स्पष्टं स्थान स्थिति विशेषतः ।

भगवान महावीर के निर्वाण के बाद मूल संघ वीर संवत १ गौतम स्वामी (क्रम नं.१) के बाद वीर संवत १३३-१६२ भद्रबाहु प्रथम क्रमनं. के समय जैन संघ का श्वेताम्बर दिगम्बर दो सम्प्रदायों में विभाजन हुआ । दिगम्बर सम्प्रदाय भद्रबाहु प्रथम से भद्रबाहु (द्वितीय) वीर संवत् (४९२ -५१५) तक चलता रहा ।

भद्रबाहु द्वितीय के अनेक शिष्य आगम अंग के जानने वाले हुए । उनमें गुणधर, धरसेन और लोहाचार्य द्वितीय मुख्य थे ।

उनमें से आचार्य धरसेन गिरनार पर अपनी तपस्या करते रहे । आचार्य गुणधरने अपना स्वतंत्र संघ रचा, जो आगे जाकर 'गुणधर संघ' के नामसे प्रसिद्ध हुआ । आचार्य लोहाचार्य सिर्फ १० वर्ष आचार्य पद पर रहे । उनकी जगह अर्हत्बली आचार्य पद पर आये । उनके शिष्य माघनन्दि ने अलग संघ की रचना की जो नन्दिसंघ कहलाया ।

हम अलग लेख में प्रमाणित करने जा रहे है कि हूमड समाज का प्रारम्भ से सीधा सम्बन्ध '' नन्दिसंघ बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ '' से रहा है ।

विभाजन का यह समय जैनधर्म का संक्राति काल था । वीर संवत् ४९२ से वीर संवत ७४७ तक मूलसंघ अनेक विभागों में विभक्त हो गया और उसी संक्राति काल में अनेक संगठनो की रचनाएँ हुयी थीं और ये संगठन आगे जाकर अनेक जातियों के नाम से अस्तित्व में आये ।

मूलसंघ के अनेक आचार्य अलग अलग सघों की रचना करने लगे है ऐसा जानकर आचार्य अर्हद्बली ने उन्हे व्यवस्थित करने के लिये पंचवर्षीय यति सम्मेलन में मूल संघ का विभाजन विधिवत घोषित किया ।

सर्वाङ्गपूर्व देशैक देश वित्पूर्वे देश मध्यगते।
श्री पुण्ड्र वर्धन पूरे मुनि रजनि ततो ङर्हबल्यारव्य ।। ८५ ।।
सचतत्प्रसारणा धरणा विशुद्धाति सक्रियो युक्तः ।
अष्टांग निमितज्ञ संघानुग्रह निग्रह समर्थः ।।८६।।

इन्द्रनन्दि श्रुतावतार से

अर्हत्‌बली ने पंच वर्षीय प्रतिक्रमण के समय मुनि सम्मेलन बुलाया। देखिये

आस्त संवत्सर पंचकारसाने युग प्रतिक्रमणम्
कुर्वन्योजन रात मात्र वर्ति मुनिजने समाजस्य ॥८७ ॥
अथ सोडभदा युगान्ते कुर्वत् भगवान्युग प्रतिक्रमणम्
मुनिजन वृन्द मपच्छत्कि सर्वे त्यागता यतः ॥८८॥

' इन्द्रनन्दि श्रुतावतार 'से

जैसा कि चार्ट में बताया गया है कि मुख्य ७ संघोंमें विभाजन हुआ जिसमें धरसेन, गुणधर और माघनन्दि के मुख्य संघ थे।

इस प्रकार अर्हदबली के शिष्य माघनन्दिने वीर संवत् ५५० में नन्दिसंघ की स्थापना की जिसकी विधिवत् घोषणा ५६५ में मुनि सम्मेलन में की गई।

जैसा कि हम बता चुके है कि वह काल वीर संवत ४९२ से वीर संवत ७९७ तक का समय जैन इतिहास और हूमड इतिहास में अत्यन्त महत्व का है। इसकी मुख्य घटनाएँ निम्न प्रकार है :

(१) मूलसंघ विभाजन

(२) इस समय तक यानी वीर संवत् ४९२ तक गुरु परम्परा का ज्ञान मौखिक रूपसे शिष्य / शिष्याों को देते थे और आगमज्ञान जो भगवान महावीर द्वारा दिया गया था सुरक्षित रहा, परन्तु इस समय महसूस किया गया कि इसे लिपिबद्ध किया जाना जरूरी है। अत एव इस उपरोक्त काल के प्रथम चरण में आचार्य गुणधरने 'कषाय पाहुड' की रचना की।

उस समय आचार्य धरसेन ने अर्हद्बली के दो शिष्यों - पुष्पदंत और भूतबली- को ज्ञान दिया और उसे लिपिबद्ध करने के लिये आदेश दिया जो ' धवला जयधवला ' के नाम से प्रसिद्ध है।

(३) मूलसंघ के विभाजन मे अनेक संघो का जन्म हुआ और इसी समय के अन्तिम चरण में अनेक गण और गच्छों का जन्म हुआ।

(४) इन्हीं विभाजित संघो के आचार्योंने अनेक जातियों / उपजातियों / संगठनों की स्थपना की जिनकी चर्चा हम अलग से करेंगे ।

आपने उपरोक्त '' मूल संघ विभाजन '' लेख में देखा कि हमें निम्न तीन विषयों पर विचार करना है-

(१) मूलसंघ के विभाजन से अनेक सघों का जन्म और आगे जाकर अनेक गणगच्छों का उद्‌भव।

(२) इन्हीं गण, गच्छों के विभाजन के कारण अनेक जाति, उपजातियों का उद्‌भव।

(३) सबसे महत्व का प्रश्न हमारे लिए हूमड़ जाति का सीधा सम्बन्ध ''नन्दिसंघ'', बलात्कार गण, सरस्वती गच्छ से है। इसी के अन्तर्गत महत्वपूर्ण प्रश्न हैं :

[अ] उद्‌भव स्थल

[ब] उद्‌भव समय

[क] वे परिस्थितियाँ, जिससे हूमड़ जाति/ समाज का उद्‌भव हुआ - (i) राजनैतिक (ii) आर्थिक (iii) धार्मिक (iv) सामाजिक इत्यादि।

भारतीय लौकिक -जीवन में कुल और गोत्र के समान जातिय व्यवस्था को भी बड़ा महत्व मिला है। इसका प्रभाव सभी क्षेत्रों मे दृष्टिगोचर होता है। अधिकतर मनुष्यों की बुद्धि में यह बात नहीं आती कि जाति का आश्रय लिए बिना भी कोई कार्य हो सकता है ? आत्मशुद्धि में प्रयोजक ध्यान, तप, संयम और भगवदुपासना रूप धर्म कार्य से लेकर विवाह,मरण आदि प्रत्येक सामाजिक कार्य में इसका विचार किया जाना आवश्यक माना जाता है।

'आदि-पुराण' में कर्तत्वयक्रियाओं का निदेर्श करते हुए सर्व प्रथम सज्जाति क्रिया दी हैं और उसका लक्षण बताते हुए कहा है कि दीक्षा के योग्य कुछ में जन्म होना ही सज्जाति है। जिसकी सिद्धि विशुद्ध कुल और विशुद्ध जाति के आश्रय से होती है। तात्पर्य यह है कि एक ओर तो पिता के अन्वय की शुद्धि से युक्त कुल होना चाहिए और दूसरी ओर माता के अन्वय की शुद्धियुक्त जाति होनी चाहिए । इन दोनों के मिलने पर संतति उत्पन्न होती हैं वह सज्जाति - सम्पन्न मानी जाती है।

सज्जाति दो प्रकार की होती है प्रथम शरीर- जन्म से उत्पन्न हुई सज्जाति- और दूसरी संस्कार -जन्म से। जिसे शरीर जन्म से उत्पन्न हुई सज्जाति - प्राप्त है उसे सब प्रकार के इष्ट अर्थों की सिद्धि होती है और जिसे संस्कार जन्म से उत्पन्न हुई सज्जाति - प्राप्त होती है वह भव्यात्मा सचमुच द्विज संज्ञा को प्राप्त होता है। कहा गया है कि जिस प्रकार विशुद्ध खान से उत्पन्न रत्न संस्कार के योग से उत्कर्ष को प्राप्त होता है उसी प्रकार क्रियाओं और मंत्रों से सुसंस्कार को प्राप्त हुई आत्मा भी अत्यन्त उत्कर्ष को प्राप्त हो जाती है। अथवा जिस प्रकार सुवर्ण उत्तम संस्कार को पाकर शुद्ध हो जाता है, उसी प्रकार भव्य जीव उत्तम-क्रियाओं के आश्रय से शुद्ध हो जाता है।

आदि पुराण (पर्व श्लोक- ८१ से)

जातियों का प्रादुर्भाव

साधुसंघो के संघ, गण एवं गच्छों में विभाजन से समस्त जैन समाज भी जातियों एवं उपजातियों में विभक्त हो गया। यद्यपि भगवान महावीर के समय जाति प्रथा ने अधिक ज़ोर नहीं पकड़ा था, लेकिन उनके निर्वाण के कुछ वर्षों पश्चात् से ही जातियाँ एक, दो उस समय चाहे उनमें पारस्पारिक भेद न हो अथवा दस- बीस नहीं रही, किन्तु सैकड़ों की संख्या में एक के पश्चात् दूसरी जाति का प्रादुभार्व होने लगा। भगवान महावीर के पश्चात् होने वाले गणधरों, केवलियों, आचर्यों एवं भट्टारकों की अनेक पट्टावलियाँ मिलती हैं। इन पट्टावलियों में भी बहुत से आचर्यों एवं भट्टारकों के नामों के आगे जातियों का उल्लेख मिलता है। यह भी एक विचारणीय तथ्य है तथा इससे भी पता चलता है कि जातिप्रथा का ज़ोर भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् ही हो गया था।

चौरासी जातियों का उद्भव एवं विकास

जातियों की उत्पति का कारण एवं समय कुछ भी रहा हो, लेकिन दिगम्बर जैन समाज में ८४ जातियाँ मानी जाती हैं। इन जातियों का उल्लेख अनेक जगहों पर मिलता है -

(१) आमेर शास्त्र भंडार

(२) ब्रह्मजिन दास की जयमाला

(३) विनोदी लाल कृत चौरासी जाति की जयमाला- अजमेर शास्त्र भन्डार

उक्त चौरासी जातियों में हूमड़ जाति का इतिहास विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया जायेगा। यहाँ पर कुछ मुख्य जातियों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है -

उपरोक्त चार्ट से मालूम होता है कि अधिकांश जातियों का उद्भव विक्रम सम्वत् के प्रारम्भ में हुआ और सभी जातियों के गोत्र उपलब्ध हैं ।

अनेक संघों का जन्म -

मूलसंघ के आचार्य भद्रबाहु द्वितीय पट्टावली समय ४९२-५१५ वीर वि. संवत् के समय उनके मुख्य तीन शिष्य (१) लोहाचार्य (द्वितीय) (२) गुणधर (३) धरसेन। सभी आगम के ज्ञानी थे । प्रत्येक के अनेक विद्वान शिष्यों ने अपना अलग-अलग संघ रचना प्रारम्भ किया । परिणाम स्वरूप आचार्य अर्हद्बली ने यह मानकर कि जैनधर्म के विशाल हित में विभाजन अत्यन्त आवश्यक है। आचार्य गुणधर वीर संवत् (५२० - ५५०) और माघनन्दि वीर संवत् ५५० में अपना अलग संघ स्थापित कर चुके थे। अतः वीर संवत ५६५ में आचार्य अर्हद्बली ने विधिवत् घोषणा की और उसे ७ संघों में विभाजित किया -

(१) नन्दिसंघ - जिसके प्रथम आचार्य माघनन्दि

(२) धरसेन की परम्परा- पुष्पदंत भूतबलि-

(३) वृषभ संघ - जो प्रारम्भ में पंच स्तूप संघ आगे जाकर सेनसंघ और कुमार सेन के वि. सवत् ७५३ से काष्ट संध की स्थापना

(४) देव संघ - वीरसंघ अपराजित संघ

(५) सिंह संघ- चन्द्रसंघ

(६) पुन्नटसंघ - भन्दार्य - मित्रवीर-

(७) गुणधर संघ - आर्य मंश्रु- नागहस्ति- यतिवृषभ

[इसकी विस्तृत जानकारी के लिए देखिये चार्ट मूल संघ विभाजन।]

जातियों का अस्तित्व प्राचीन समय

हमारे देश में जातियों का विभाजन होना कोई नयी बात नही है। यह परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। इसी वजह से आज एक ही जाति में कई प्रकार की उपजातियाँ देखने को मिलती है। इस प्रकार के जाति विभाजन के हमले से समस्त जैन समाज भी नहीं बच पाया और वह भी जातियों तथा उपजातियों में विभक्त हो गया।

जैन समाज का विभाजन मूल रूप से साधु संघो कें संघ , गण एवं गच्छ में विभाजन आदि को ही प्रमुख कारण माना जायेगा। यद्यपि भगवान महावीर के समय जाति प्रथा ने अधिक जोर नहीं पकड़ा था, लेकिन उनके निर्वाण के कुछ वर्षों पश्चात् से ही जातियाँ

एक दो अथवा दस बीस नही रहीं किन्तु सेंकडों की संख्या में एक के पश्चात् दूसरी जाति का प्रादुर्भाव होने लगा ।

यहाँ प्रमुख रूप से एक बात स्पष्ट दिखाई देती है कि जातिप्रथा का जोर भगवान महावीरके निर्वाण के पश्चात् ही हो गया था पर उस समय शायद उनमें पारस्परिक भेदभाव नहीं रहा हो हौ । पर बाद में धीरे धीरे समय गुजरने पर भगवान महावीर के पश्चात् होने वाले गणधरों, केवलियों , आचार्यों, एवं भट्टारकों की कितनी ही पट्टावलीयाँ हमें देखने को मिलती हैं । इन पट्टावलियों में भी बहुत से आचार्यो एवं भट्टारकों के नामों के आगे जातियों का उल्लेख मिलता है ।

उपरोक्त विभाजन की प्रक्रिया स्वरूप सभी संघों के आचार्यों के शिष्यों ने अपने अपने संघों का प्रचार करके उस समय के श्रावकों को अपने संघ में सम्मलित करने लगे । जिन-जिन आचार्यों का जिस- जिस विशेष- प्रदेश में प्रभुत्व था, उस- उस प्रदेश के श्रावक उसमें अधिकतर सम्मलित हुए । आचार्य माघनन्दि के शिषयों में गुजरात में लाड क्षत्रिय थे । उनमें से अधिकांश जैन थे । [देखिए लेख पृष्ठ] और वे विशेष परिस्थितियों के कारण अपना क्षत्रिय धर्म युद्धादि को छोड़ चुके थे,। .इस नये संगठन जिसका नाम हुबल [हूमड़] रखा गया, में सम्मलित हुए ।

अब हम उन विशेष परिस्थितियों का विवेचन करेंगे -

(१) विक्रम संवत् के प्रारम्भ में गुजरात के सौराष्ट्र- रायदेश खेड़ब्रह्मा आदि में लाड़ जैन क्षत्रियों का अस्तित्व होना ।

(२) गिरनार में आचार्य धरसेन की उपस्थिति उनका अनेक शिष्यों पुष्पदंत-भूतबली को आगम ज्ञानदान और अंकलेश्वर (गुजरात) के सजोत स्थान पर धवला-जय धवला ग्रन्थों की रचना का प्रारम्भ (वीर सं. ५६५-६३३)

(३) गुजरात राज्य के प्राचीन इतिहास टिप्पणी तथा जयशंकर शास्त्री की पुस्तक पुरातन जन्म के अनुसार विक्रम की पहली शताब्दि में नग्नपतियों (साधुओं) का होना घर-घर गांव-गांव भ्रमण(विहार) कस्के अपने संघ का प्रचार करना प्रमाणित करता है कि उसी समय इस नये संगठन का '' हूमड़'' नाम से उद्‌भव हुआ ।

(४) लाड़वंश के क्षत्रियों का क्षत्रिय धर्म त्याग कर वणिक-धर्म व्यापार का प्रमाण ईडर के इतिहास से प्रमाणित होता है ।

हूमड़ समाजका नन्दि संघ , बलात्कार गण , सरस्वती गच्छ से सीधा सम्बन्ध हमारे लिये हमारे इतिहास में उपरोक्त विषय अत्यन्त महत्व का है ।

(१) विक्रम के प्रारम्भ में अथवा चौथी पांचवी सदी तक मूर्तिलेख , शिलालेख आदि की प्रथा अल्प मात्रा मे थी और उन्हें सुरक्षित रखने के लिये उपाय भी नहीं किये गये थे ।

(२) विदेशियों मुगलों के आक्रमणो ने हमारे प्रचीन जिनालयों (विशेषकर गुजरात , राजस्थान आदि जिनस्थानों का सीधा सम्बन्ध है) को बूरी तरह नष्ट कर दिया जिससे इस प्रकार की सामग्री नष्ट हो गई ।

(३) उपरोक्त (एक - दो) परिस्थितयों में अति प्राचीन शास्त्र भंडारों से प्राप्त पट्टावलियाँ शिलालेख प्रशस्तियाँ आदि सबसे बड़ा उपलब्ध प्रमाण है ।

(४). हम हमारे ''मूल संघ विभाजन'' विस्तृत से चर्चा कर चुके हैं कि मूलसंघ अनेक संघों और आगे जाकर गण- गच्छो में विभाजित हो गया। वर्तमान में हमारें जैन समाज की जितनी भी जातियाँ हैं, उनमें से प्रमुख सात से आठ जातियों का इतिहास प्रकाशित हो गया है । उनके अवलोकन से प्रमाणित होता है कि प्रत्येक जाति भिन्न- भिन्न संघो ,गच्छों गणो से सीधा सम्बन्ध रखती है । उनमें से कुछ जातियों आगे जाकर उस समय के प्रभावशाली आचार्यो के प्रभाव में आकर उस विशेष संघ में दीक्षित हुई परन्तु उनकी जाति वही बनी रही पर वह उनका उद्भव का समय नहीं माना जायेगा ।"इस बात को विशेष रूप से ध्यान में लेना होगा।

(५). प्रारंभ में विभाजन के समय संगठनों का परस्पर इतना सम्बन्ध था कि आचार्य एक दूसरे के गुरु भाई थे। यहाँ पर हमें इस बात का पता चलता है कि प्रारंभ की कुछ सदियों तक जाति संगठन का उद्भव होने पर भी वे लोग आचार्यों द्वारा प्रतिपादित संघों गच्छो या गणों के नाम से ही मूर्ति, जिनालय, ग्रन्थों की प्रशस्ति आदि लिखते थे। अत एवं उन जातियों के इतिहास में उनके उद्भव समय का विचार करते समय उस विशेष जाति का सम्बन्ध, उन विशेष संघ गच्छों आदि से मानना होगा । जिसका विशेष रूप से विवेचन हम हमारे ''मूल संध विभाजन'' अध्याय मे कर चुके हैं।

प्रशस्तियों की उपयोगिता

भारतीय इतिहास के अनुसंधान में जिस तरह शिलालेख , प्रशस्तियाँ दानपात्र, स्तूप, मूर्तिलेख, नामपत्र और सिक्के आदि उपयोगी होते है । उसी तरह पुरातन ग्रन्थों के आदि अन्तमें प्रशस्तियाँ और लिपि प्रशस्तियाँ भी उपयोगी होती है । इनमें दिये हुए एतिहासीक उल्लेखों से अनेक तथ्य प्रकाशमें आते हैं । इनकी महत्ता भारतीय अनेक विद्धानो से छिपी हुई नहिं है । ये सब चीजे भारतकी प्रचीन आर्य संस्कृतिकी समुज्जवलधारी की प्रतिक है और यह इतिहास की उलझी हुई समस्याओं एवं कृत्थियों को सुलझाने में अमोघ अस्त्र का काम देती है । इनमें पूर्वजों की गुण-गरिमा का सजीव चित्रण एवं इतिवृत गुंफित मिलता है ।

ये महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रशस्तियाँ भारतीय साहित्यादि के अन्वेषण में ग्रन्थकर्ता विद्वानों, आचार्यों और भट्टारकों द्वारा लिखी गई होने से विद्वानों के समयादिका निर्णय करने में अथवा वस्तुत्व की जांच करने में महत्वपूर्ण योगदान देती है। और कहीं - कहीं प्रशस्तियों में अंकित इतिवृत उलझी हुई समस्याओं का केवल समाधान ही नहीं करते, प्रत्युत्त वास्तिविक स्थिति को प्रगट करनेकी अपूर्व क्षमता रखते हैं।

भारतीय पुरातत्त्व में जिम तरह मूर्तिकला, दानपात्र, शिलालेख, स्तूप, मूर्तिलेख, कूपबावड़ी, तडाग, मन्दिर प्रशस्तियाँ और सिक्के आदि वस्तुएं उपयोगी और आवश्यक हैं। इनकी महत्ता भारतीय अनवेषक विद्वानों से छिपी हुई नहीं है, यह सब चीजें भारतकी प्राचीन आर्यसंस्कृति की समुज्वल धाराकी प्रतिक है, और गुत्थियों को सुलझाने में अमोघ अस्त्रों का काम देती है, तथा पूर्वजों की गुण - गरिमाका जीता जागता सजीव इतिहास इनमें संकलित रहता है।

इस तरह भारतीय साहित्यादि के अनुसंधानमें ग्रन्थकर्ता विद्वानों आचार्यों और भट्टारकों द्वारा लिखी गई महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रस्तियाँ भी उतनी ही उपयोगी और आवश्यक हैं। जितने कि शिलालेख आदि जैन लेखक अपनें ग्रन्थों की प्रशस्ति अर्थात प्रारम्भीक भागमें और पुष्पिका अर्थात अंतके भाग में देवता नमस्कार आदि के अतिरिक्त आचार्य, गच्छ, शिष्य परम्परा, समसामयिक शासक, अपने आश्रयदाता, उसके परिवार, इष्टपूर्ति, धार्मिक कार्य, तिथी, सवंत, स्थान, एवं लेखक पाठक के सम्बन्धमें बहुत ही महत्वपूर्ण जानकारी लिख देते थे। वह सब इतिहास और वाड्मय के लिये महत्वपूर्ण है।

कुछ उदाहरण देखिए

चन्द्रगिरि पर्वत पर के शिलालेख

जैन शिलालेख संग्रह भाग-१.

श्रीमूल सङ्घकृत-पुस्तक- गच्छ-देशी
योद्यद्रणाधि पसुता वर्कक चक्रवर्ती।
सैद्वान्ति केश्वर शिखामणि मेधचन्द्र-
स्त्रैविधदेव इति सद्विबुधा स्तुवन्ति ॥२९॥

सक वर्ष १०३७ नेयमन्मथं संवत्सश्द मार्गसिर सुद्ध १२ बुहवारं धमुलग्नद पूर्व्वाडदारुधलिगेयप्पागलु श्री मूलसंङ्घद देसिगगणाद पुस्तकगच्छंद श्रीमेघचन्द्र- त्रैविध देवत्तंम्मवशानकालमनरिदु पल्यङ्काशनदोलि आत्मभावनेयं भाविसुतुं देवलोकक्के सन्दरा भावनेयेन्तप्पुदेन्दोडे॥

लेखांक १९३ -१

मूर्ति अजीतकीर्ति

शके १५७३ रवर नाम संवतसरे फाल्गुणमा से शुक्लपक्षे पंचम्यां तिलकदान श्रीमूलसंघे सरस्वती गच्छे बलात्कारगणे कुंदकुंदाचार्यन्चये भ. श्रीधर्मचँद्र तत्पट्टे भ. धर्मभूषण तदान्माये भ. अजित कीर्ति उपदेशात् जैन ज्ञाति कनयातुक सेटी च ताहु सेटी कुटुंबसहितेन नित्यं प्रणमंति।।

(बाळपुर, अ.४ पृ.५०५)

लेखांक २४४ निषीदिका लेख

श्री बलात्कारगणे सरस्वती गच्छे श्रीमहि (नंदि) संघे कुंदकुंदाचार्यान्चये भ. श्रीवसंतकीर्तिदेवाः तत्पट्टे भ. श्री विशालकिर्तिदेवाः तत्पट्टे भ. तत्पट्टे भ.श्री दमम(?) किर्तिदेवाः तत्पट्टे भ. धर्मचंद्रदेवाः तत्पट्टे भ. तत्पट्टे भ. श्रीरत्नकीर्तिदेवाः तत्पट्टे भ. श्री प्रभाचंद्रदेवाः तत्पट्टे भ. श्रीपद्मनंदि देवाः तत्पट्टे भ. श्री शुभचंद्रदेवाः।।

.... पद्मनंदिमुनेः पट्टे शुभचंद्रो यतीश्वरः।
तर्कादिकविद्यासु (पद) धारोस्ति सांप्रतम्।।

लेखांक ७५२ केशरियाजी मंदिर

संवत १७५४ वर्षे पौषमासे कृष्णपक्षी पंचम्यां बुध श्रीकाष्ठासंघे नंदितटगच्छे विद्यागणे भ. श्रीरामसेनान्वये तदनुक्रमणे भ. श्रीराजकीर्ति तत्पट्टे भ. श्री लक्ष्मीसेन तत्पट्टे भ. श्रीइंद्रभूषण तत्पट्टे भ. श्री सुरेंद्रकीर्त्युपदेशात् दसा हूमड़ ज्ञातीय वृद्धशाखायां विश्वेश्वरगोत्र सहा अल्हावंश....

इत्यादि सपरिवार सह संघवी पाहर तेन लघु प्रासाद कारयिता शुभं भवतु।।

(वीर २ पृ ४६०)

लेखांक ७५३

स्वस्तिश्री संवत् १७५६ वर्षे शाके १६५(२) ९ प्रवर्तमाने सर्वजितनाम संवात्सरे सासोत्रम मासे कृष्णपक्षे १३ दियौ शुक्रवासरे श्रीकाष्ठासंघे लाडबागडगच्छे लोहाचार्यान्वये तदनुक्रमणे भ. श्रीप्रतापकीर्ति आन्माये श्रीकाष्ठासंघे नदीतटगच्छे विद्यागणे भ. श्री रामसेनान्वये तदनुक्रमणे भ. श्री श्रीभूषण..

भ. श्रीइद्रभषण तत्पट्टकमलमधुकरायगान भ.
श्री सुरेद्रकीर्ति विराजमाने प्रतिष्ठितं बंघेखालज्ञाति
गोवालगोत्र संधवी श्री अल्हाभार्या कुडाई.....।

(वीर २ पृ. ४६०)

लेखांक २३५ (आराधना पंजिका)

संवत १४१६ वर्षे चैत्र सुदि पंचम्यां

सोमवासरे सकलराजशिरो मुकुट माणिकक्यमरी- चिपिंजरी कृतचरण कमल पादपीठस्य श्रीपेरोजसाहेः सकलसाम्राज्य धुरीबिभ्राणस्य समये श्रीदिल्लयां

श्री कुंद कुंदाचार्यान्वये सरस्वतीगच्छे

बलात्कारगणे भ. श्रीरत्नकीर्तिपट्टोदपाद्रि- तरुणतरणित्यमुर्बीकुर्वाण भ. श्री प्रभाचंद्रदेव तत्सिष्याणां ब्रह्म नाथूराम इत्यारा धनापंजिकाया ग्रन्थ आत्म पठनार्थ लिखापितं।।

(पूना, अ. १ पृ. २१३)

मूर्ति लेख

उपरोक्त प्रशस्तियों की पद्वतियों से सीधा सम्बन्ध मूलसंघ के नंदीसंघ बलात्कारगण, सरस्वतीगच्छ से है ।

अब मूर्तिलेख से हम हूमड़ों के जिनालयों की मूर्तियों के लेख की पद्धति उत्तर दक्षिण, पूर्व पश्चिम समी जगह है। एक प्रकार की थीं किसी भी दूसरी जाति ने उस संघ गच्छ का उल्लेख नहीं किया:-

देखिए मूर्तिलेख पहले हूमड़ जाति के पीछे ।

श्री चंद्रप्रभु - मूलनायकः- सफ़ेद संगमरमर की ३ फुट ऊँची चिह्न चंद्रमा ।

लेखः- सं.१६७९ वर्षे शाके १५५३ श्री मूलसंघ नंदिसंघे सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे कुन्देकुन्दान्वये भट्टारक श्री पद्मनंदी देवा तत्पट्टे भ. देवेन्द्रकीर्ति देवा स्त. भ. श्री विघानंदी देवा, तत्प. भ. श्री मल्लिभूषणं स्त. भ. श्री लक्ष्मीचंद्रा तत्प. भ. श्री वीरचंद्रा तत्प. भ. श्री ज्ञानभूषण त. भ. श्री लक्ष्मीचंद्रा तत्प. भ. श्री वीरचंद्रा तत्प. भ. श्री ज्ञानभूषण त. भ. श्री प्रभाचंद्रा स्त. भ. श्री वादिचंद्रा त. भ. श्री महीचंद्रोपदेशात् हूमड़ ज्ञाति वीउल वास्तव्य मांतरगोत्रे संघवी श्री वर्धमान भार्या संकोटमेद तयोः पुत्रः संघवी कुंवरजी भार्या संकोटमेद तयोः पुत्रः संघवी श्री धर्मदास भार्या संवलादे पुत्री वेजबाई चंद्रप्रभं प्रणमति ।

पार्श्वनाथ धातु की : सर्प चिह्न ७ फेण सहित ५ इंच ऊँची ।

लेखः सं. १७४९ वर्षे पोष सुद ५ रविवार श्री काष्ट संघे नंदितटगच्छे श्री भ. सुरेन्द्रकीर्ति प्रतिष्ठितम् नरसिंहपुरा ज्ञातीय रुणनर गोत्रे पं. कुंवरजी का भार्या तेज वहु सुत माणेकजी मेघवी हीरजी मेघवी प्रणमति श्री पार्श्वनाथम् ।

चंद्रप्रभुः- धातुकी ४११ इंच की लांछन चंद्र

लेखः सं. १६९८ वर्षे ज्येष्ठ सुद १० रवो काष्ठा संघे नंदीतटे भ. श्री. लक्ष्मीसेन प्रतिष्ठितम् नरसिंहपुरा ज्ञातीय बदर गोत्रे श्री समरथ भा. रंजादे. तयोः सुत शा. देवजी भार्या देवलदे चंद्रप्रभं नित्यं प्रणमति धातुकी चौबीसी ऊँचाई ४ इंच सं. १७४९ वर्षे वैशाखी सुदी ११ काष्टा संघे भ. श्री रामसेनान्वये भ. इन्द्रभूषण तत्पट्टे भ. श्री सुरेन्द्रकीर्ति भ.

प्रतिष्ठिते, सूर्यपुरे कुसुमलाल गोत्रे शा. गोकल त्रिकम भार्या आनंद वहु सुत सुरचंद भार्या राजकुंवर इत्यादि सपरिवार चतुर विशतिका नित्यं प्रणमति ।

चरण पादुका काले पाषाण की पांच चरण पादुका सं. १४८९ वर्षे वैशाख सुद वद ११ वार रवो दिने श्री काष्टा संघें नंदीतट गच्छे भ. श्री भुवनकीर्ति भ. श्री भावसेन भ. श्री रत्नकीर्ति भ. लक्ष्मीसेन मुनि विरेन्द्रकीर्ति पादुका। नरसिंहपुरा ज्ञाति कलशधर गोत्रे श्रेष्ठी नराव तत्पुत्र संघवी बाल सं. वीका भगिनी भन्नकु साहु चरणांनि कारायितं ।

शांतिनाथ (हिरण का लांछन)

लेखः सं. १६४८ वैशाख सुद १३ शुकरे श्री मूलसंघे भ. श्री विद्यानंदी तत्पट्टे भ. श्री वीरचंद्र, भ. श्री ज्ञानभूषण, भ. श्री प्रभाचंद्र, भ. श्री. वादीचंद्र उपदेशात् गांधार हूमड़ बुहृदशाखा (बीसा हूमड़) संघवी श्री सवा भार्या संघवी श्री जीवाई सुत संघपति श्री धनजी तयोः पुत्रौ वर्धमान........सूर्यपुरे (सूरत) सदेवा..... धनजी प्रणमति ।

चेविष्टु धातु की ऊँचाई १३ इंच। नीचे इन्द्राणी है और आसपास इन्द्र आदि हैं।

लेखः सं. १६८९ श्री मूल संघे सारकागच्छे बलात्कारगणे कुन्दकुन्दाचार्य भ. श्री विद्यानंदी स्त्दन्वये भ. श्री ज्ञानभूषण स्त्पत्पट्टे भ. श्री वादिचंद्रास्त्तपत्तट्टे भ. श्री महीचंद्रोपशात् हुबड़ ज्ञातीयः जमाइसा प्रेमजी रामदास भ्राता जीदासता रहिया तेजलदे पुत्री कोडइ हरबाईसा रत्रन पुत्रः सां नेमा भार्या नागलदे पुत्र प्रेमजी पुत्री वीरा बाई भ्रातृज सवजी भागिनव गांगजी प्रणमति तीर्थंकर देवात्।

चोविष्टु धातु कीः ऊँचाई १३ इंच नीचे बीच में इन्द्राणी तथा दोनो ओर इंद्र प्रतिहार्य आदि हैं।

लेखः सं. १७९३ वर्षे वैशाख सुदी १३ बुध श्री मूलसंघे सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे कुन्दकुन्दाचार्यन्वये श्री वीरचंद्रास्त्तत्पट्टे भ. श्री ज्ञानभूषण स्तत्पट्टे भ. प्रभाचंद्र तत्पट्टे भ. वादीचंद्र तत्पट्टे विजय राज्ये भ. श्री महीचंद्रास्तेषामुपदेशात् रोनेर(रांदेर होना चाहिए) वास्तव्यः हुंबड़ ज्ञातीय सं. श्री धनजी भार्या श्री कोडलदे तयोः पुत्रः सं. श्री मनजीभार्या भा. श्री माणक तयोः पुत्रः सं.श्री जीवराज ऐतेषांमध्ये सं. ह केना लाकिं प्रतिष्ठा सं. वर्धसम विमल संमेघां सं. लाबाइ सुरतन संभानां नित्यं प्रणमति ।

चौबीसी धातु की ऊँचाई १४ इंच है।

लेखः- सं. १६८० वर्षे वैशाख वदी ५ गुरु श्री मूलसंघे सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे कुन्कुन्दान्वये श्री प्रमचंद्र त. प. भ. वादीचंद्र त. प. म. श्री महीचंद्रोपदेशात् हूमड़ ज्ञातीय धोधा वा. साय श्री पत्य भार्या समइदे तयोः शा श्री मेघराज भार्या गंगादे स. श्री ग्लेइया सु. स. श्री वर्धमानां भार्या सं. वनादे तयोः पुत्रः सं. श्री उवाजी सं. कोडमदे तयोः पुत्र सं. धर्मदास ऐते मुनिसुव्रतनाथ नित्यं प्रणमति।

पंच परमेष्ठी धातु के व इंच के ।

लेखः सं. १५१९ वर्षे माघ सुदी १३ काष्टा संघे नंदीतटगच्छे विद्यागणे श्री सोमकीर्ति देवेन प्रतिष्ठितम् नारसिंह ज्ञातीय कमलेश्वर गोत्रे श्री शान्तिनाथम् प्रणमति ।

उपरोक्त मूर्तिलेखों में से प्रमाणित होता है कि जहां भी हूमड़ समाज में मूर्तियों स्थापति की है वहाँ ''मूलसंघ, नंदीसंघ बलात्कारगण सरस्वती गच्छ'' का उपयोग किया है।

यह पद्धति प्रारंभ से भट्टारकों के समय भी पाई जाती थी। उपरोक्त संघ का दूसरी अन्य जातिने उपयोग नहीं किया है। इससे प्रमाणति होता है कि हूमड जाति का नंदिसंघ सरस्वती गच्छ से सीधा संबंध है।

राजनीतिक परिस्थितियाँ

गुजरात की मुख्य घटनाएँ

मौर्यकाल (ई. पू. ३२२- से ई. पू. १८५)

इस समय कौटिल्य अर्थशास्त्र मे बताया है सुराष्ट्र मे क्षत्रिय, कृषि, पशुपालन वाणिज्य तथा शस्त्रों द्वारा आजीविका चलाते थे ।

यवनों का उस समय आक्रमण हुआ और अशोक ने गुजरात सौराष्ट्र मे तुषारक को सूबेदार नियुक्त किया ।

भद्रबाहु प्रथम ने जब सम्राट चन्द्रगुप्त के साथ गिरनार होकर -दक्षिण -श्रवण वेलगोल विहार किया। सम्राट चन्द्रगुप्त ने आचार्य भद्रबाहु से दीक्षा ली थी , इसीसे प्रमाणित होता है कि गुजरात-सौराष्ट्र में उस समय जैन धर्म था ।

भारत का व्यवस्थित इतिहास नंदवंश से प्रारम्भ होता है (३६६-३२५ ई.पू.) इसके पश्चात् मौर्यसाम्राज्य (३२५-२६२ ई.पू.) चन्द्रगुप्त व चाणक्य बिन्दुसार (२९८-३०२ ई.पू.) आते है ।

अशोक और उसके उतराधिकारी (२११ ई.पू. तक)

सातवाहन वंश (२१० ई.पू. से २०० ई.)

इसकी स्थापना दक्षिण में सिगुव ने की । इसी के वंश को 'नहपाल' (नहवाण, नरवाहन नहपान) ने गुजरात सौराष्ट्र को जीता । नहपाल और उसके दामाद उषवदास के लेख मिलते हैं। नहपाल का राज्य उत्तरी महाराष्ट्र तक था । उसकी राजधानी भरूकच्छ (भरूँच) थी। वह अपने को 'महा-क्षत्रप' कहता था । उसवदास ने पुष्कर के पास मालवगण को हराया। श्री परमानंद शास्त्री ने अपने ग्रंथ मे '' जैनधर्म का प्राचीन इतिहास '' भाग -२- में नहपान के लिए निम्न उल्लेख किया है-

जैन अनुश्रुति मे नहवाण, नहपान और नरवाहन आदि नाम मिलते हैं। नहपान बमिदेश में स्थित वसुन्धरानगरी का क्षहरात वंश का प्रसिद्ध शासक था। इसकी रानी का नाम सरूपा था । नहपान अपने समय का वीर और पराक्रमी शासक था और वह धर्मनिष्ट तथा प्रजा का संपालक था । नहपान के अपने तथा जामाता उषभदत्ता या ऋषभदत्त और मंत्री अयम के अनेक शिलालेख मिलते है जो वर्ष ४१ से ४६ तक के हैं। नहपान के राज्य पर ईस्वी सन ६१ में लगभग गौतमी पुत्र शातकर्णी ने भृगकच्छ पर आक्रमण किया था । घोर युद्ध के बाद नहपान पराजित हो गया और युद्ध मे उसका सर्वस्व विनष्ट हो गया । अपने संधि के सिक्कों को प्राप्त कर और उन पर अपने नाम की मुहर अंकित कर राज्य चालू किया । वह उस समय वहाँ आया हुआ था। उसमे नहपान ने अपने मित्र मगध नरेश को मुनि रूप में देखकर और उनके उपदेश से प्रेरित हो अपने जामाता ऋषभदत को राज्यभार सौंप कर अपने राज्य श्रेष्ठि सुबुद्धि के साथ मुनि दीक्षा ले ली । इन दोनों साधुओं ने संघ मे रहकर तपश्चरण तथा आवश्यकादि क्रियाओं के अतिरिक्त ध्यान अध्ययन द्वारा ज्ञान

का अच्छा अर्जन किया, यह अत्यन्तः विनयी विद्वान और ग्रहण धारण में समर्थ थे। इन दोनो साधुओं को आचार्य धरसेन के पास गिरि नगर भेजा गया था। आचार्य धरसेन ने इसकी परीक्षा कर महाकर्म प्रकृति प्राभृति पढ़ाया था। इनमें एक का नाम भूतबलि और दूसरे का नाम पुष्पदन्त रखा गया था। उनका दीक्षा नाम क्या था, इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता।

नरवाहन या नहपान राजा भूतबलि हुआ। और राजश्रेष्ठ सुबुद्धि सेठ को पुष्पदन्त बतलाया गया है।

नन्दिसंघ - स्थापना

पसियउ मह धरसेणों पर - वाइ-गओह-दाण-वरसी हो ।
सिद्धंनामिय- सायर -तरंग संधाय-धोय-मणो ।

मुनि पुँगव धरसेन सौराष्ट्र (गुजरात कठियावाड़) देश के गिरिनगर की चन्द्रगुफा के निवासी, अष्टांग महानिमित्त के पारगामी विद्वान थे। उन्हें अंग और पूर्वों का एकावेश ज्ञान आचार्य परम्परा से प्राप्त हुआ था । आचार्य धरसेन अग्रायनी पूर्व स्थित पंचम वस्तुगत चतुर्थ महाकर्म प्रकृति प्राभृत के ज्ञाता थे। उन्होंने प्रवचन वात्सल्य से प्रेरित हो अंग-श्रुत के विच्छोद हो जाने के भय से किसी ब्रह्मचारी के हाथ एक लेख सतारा महिमानगर में हो रहे पंच वृषीय यति प्रतिक्रमण के समय आचार्य अर्हदबली के पास भेजा । लेख में लिखे गए धरसेनाचार्य के वचनों को भली भाँति समझा कर उन्होंने ग्रहण धारण में समर्थ, देश-कुल- जाति से शुद्ध और निर्मल वचन से विभूषित , समस्त कलाओं मे पारंगत अपने दो प्रमुख शिष्यों पुष्पदंत और भूतबली को आंधप्रदेश में बहने बाली बेणा नदी के तट से भेजा। उन दोनों शिष्यों से संतुष्ट हो कर आचार्य धरसेन ने आगम ज्ञान दिया।इसके पश्चात् धरसेनाचार्य अपनी समाधि निकट जान शिष्यों को दु:ख न हो इसलिए आज्ञा देकर अंकलेश्वर के पास सजोत नामक स्थान पर वर्षाकाल बिताने का आदेश दिया।

सजोत अंकलेश्वर के पास हूमड़ों का वर्तमान में भी प्राचीन तीर्थ है । वहाँ पुष्पदंत और भूतबलि ने आचार्य धरसेन से प्राप्त आगम ज्ञान के अनुसार महाबन्ध-रूप स्पष्ट खण्डागम की रचना प्रारम्भ की ।

उपर्युक्त साक्ष्यों के आधार पर यह प्रमाणित हो जाता है कि विक्रम सम्वत् के प्रारम्भ में गुजरात में नग्न मुनियों का अस्वित्व बन गया था। यह समय वीर सम्वत् ५६५ से ६८३ (विक्रम सम्वत् ९५ से २३० तक) का है । आचार्य पुष्पदंत व भूतबलि आचार्य अर्हदबलि के शिष्य थे और उन्होंने ही अपने शिष्य माधनंदी से नन्दीसंघ की स्थापना की। इन्ही आचार्यों के अनेक शिष्यों में से हूम्माचार्य ने रायदेश के खेड़ब्रह्मा में हूमड़जाति की स्थापना की ।

हम यहां पर मूलसंघ विभाजन के समय की पट्टावली और नन्दिसंघ स्थापना के टेबल नं 3, 4A, 4B, प्रस्तुत कर रहे हैं ।

Table No. 3

मूलसंघ विभाजनके समय की पट्टावली
और नन्दिसंघ स्थापना
नन्दिसंघ पट्टावली क्रम १ से ३

क्रम	आचार्य नाम	वीर संवत्	विक्रम संवत्	समय इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
०	भद्रबाहु(द्वितीय)	४४२-५१५	२२-४५	३५ से १२		
१	लोहाचार्य(द्वितीय)	५१५-५२५	४५-३५	१२ से २		
२	अर्हतबली	५२५-५९३	५५-१२३	-२ से ६६		
३	माघनन्दि	५५०-६१४	८०-१४४	२३-८७		
	नन्दिसंघ स्थापना	५५०	८०	२३		
	मूलसंघ विभाजन	५६५	९५	३८		

Table No. 4 (A)

मूलसंघ विभाजन के समय अन्य मुख्य आचार्य

क्रम	आाचार्य नाम	वीर संवत्	विक्रम संवत्	इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
o	भद्रबाहू (द्वितीय)					सिकन्दर प्रभावित हुआ
A	आचार्य दौलमन (धृतिसेन)	२०४	-२६६	-३२३		
B	मुनि कल्याण (धृतिसेन शिष्य)	204	-266	-323		सिकन्दर अपने साथ कल्याण मुंनि को तक्षशिला फिर युनान ले गया।
C	गुणधर	५१५-५५०	४५-८०	-१२ २३	पंच्चदास पाहुड	
	गुणधर संघ की स्थापना					
		५५०	८	२३		

Table No. 4 (B)

क्रम	आचार्य नाम	वीर संवत्	विक्रम संवत्	इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
०	भद्रबाहु द्वितीय	४९२-५१५	-२२-४५	-३५ १२		
१	धरसेन आचार्य	५५०-६३३	८०-१६३	६६-१८६		विवरण पृष्ठ
२	पुष्पदंत आचार्य	५९३-६३३	१२३-१६३	६६-१०६		"
३	भूतबली	५९३-६८३	१२३-२१३	६६-१५६	षट खण्डागम जिसकी धवला माधवला	"

लब्धगौरव आचार्य गुणधर

वि. सं.-४५-८० ई.-१२-२३

षट्खण्डागम की भांति प्राकृत भाषा में निबद्ध कषाय प्राभृत ग्रन्थ को दिगम्बर परम्परा में मौलिक स्थान प्राप्त है। इस ग्रन्थ के रचनाकार आचार्य गुणधर थे। गुणनिधि आचर्य गुणधर आचार्य धरसेन के समकालीन थे। धरसेनाचार्य की भाँति वे भी पूर्वांशों के ज्ञाता थे। ज्ञानप्रवाद नामक पंचमपूर्व की १० वीं वस्तु के अधिकारान्तर्गत तृतीय पेज्जदोष पाहुड़ से उन्होंने कषाय प्राभृत ग्रन्थ का निर्माण किया था। इस ग्रन्थ के २३३ गाथा सूत्र हैं। प्रत्येक सूत्र की भाषा संक्षिप्त एवं गूढ़ार्थक है ।

पट्ट ग्रन्थ पन्द्रह अधिकारो मे विभक्त हैं । इन अधिकारो में क्रोध आदि कषायों की राग-द्वेषमय परिणतियो का विस्तार से वर्णन है तथा मोहनीय कर्म की विभिन्न अवस्थाओ को और इसे शिथिल करने वाले आत्मपरिणामों को ससन्दर्भ समझाया गया है ।

प्रस्तुत ग्रन्थ पर यतिऋषभ ने छह सहस्त्र श्लोक परिमाण चूर्णि साहित्य की रचना की है। आचार्य वीरसेन एवं जिनसेन ने इसी ग्रन्थ पर ६० सहस्त्र श्लोक परिमाण जयधवला नामक टीका लिखी है।

कषाय प्राभृत के रूप मे साहित्य युग को अनुपम उपहार प्रदान करने वाले अतिशय गौरवलब्ध आचार्य गुणधर का समय आचार्य धरसेन के समकालीन होने के कारण वी. नि.५१५-५५० (वि. सं.४५-८०) ई.सं. १२ से २३ तक माना है।

आलोक - कुटीर आचार्य अर्हद्बली

वि.सं. ५५-१२३, ई.२-६६

आचार्य अर्हद बलि मूल संघ के अधिपति थे। वे अंगो के एक देशपाठी थे। पूर्वांशों का ज्ञान भी उन्हें था। इनका दूसरा नाम 'गुप्ति गुप्त' भी था।

आचार्य अर्हद्बलि महान समर्थ आचार्य थे। उनके पुष्पदन्त और भूतबलि नामक दो विद्वान शिष्य थे। पुष्पदन्त श्रेष्ठीपुत्र थे। भूतबलि सौराष्ट्र के 'नहपान' नामक नरेश थे। 'गौतमीपुत्र' 'सातकरणी' से पराजित होकर अर्हद् बलि के पास उन्होंने श्रमण-दीक्षा ग्रहण की थी।

आन्ध्र प्रदेश में स्थित वेणा नदी के तट पर बसे हुए महिमा नगर में महामुनि-सम्मेलन हुआ था। उसकी अध्यक्षता आचार्य अर्हद् बलि ने की थी। इस सम्मेलन में संघ की अंतरंग और बहिरंग स्थितियों पर विचार-विमर्श हुआ था।

मूल संघ में उस समय अनेक विद्वान, तपस्वी, स्वाध्यायी, ध्यानी एवं अध्ययन-अध्यापन रत श्रमण विद्यमान थे। अर्हद् बलि ने इस संघ को नन्दी, देव, सिंह, भद्र, वीर, अपराजित, पंच स्तूप, गुणधर आदि भिन्न-भिन्न उपसंघों में विभक्त कर एक नई संघ व्यवस्था को जन्म दिया। इन संघों को स्थापित करने में धर्मवात्सल्य की अभिवृद्धि एवं जैन संघ की प्रभावना का उद्देश्य प्रमुख था।

आचार्य अर्हद् बलि पुण्ड्रवर्धन नगर के निवासी थे। शिष्य पुष्पदन्त और भूतबलि के योग से उनकी प्रख्याति अधिक विश्रुत हुई।

आचार्य अर्हद् बलि ज्ञानलोक के कुटीर थे एवं अपने युग की महान् हस्ती थे। उनका समय वी. नि. ५२५-५९३ (वि. ५५-१२३) के आस पास माना गया है।

दूरदर्शी आचार्य धरसेन

वि. सं.- ८०-१६३, ई. ६६-१८६

दिगम्बर परम्परा के आचार्य धरसेन आगम-ज्ञान के विशिष्ट एवं अष्टांग निमित्त के पारगामी विद्वान थे। द्वितीय पूर्व का आंशिक ज्ञान भी उनके पास था। सौराष्ट्र के गिरिनगर की चन्द्र गुफा में उनका निवास था। उन्होंने योनि पाहुड़ (योनि प्राभृत) ग्रन्थ लिखा जो आज अनुपलब्ध है।

श्रुत की धारा को अविच्छिन्न रखने के लिए महिमा महोत्सव में एकत्रित दक्षिणापथ विहारी महासेन आचार्य प्रमुख श्रमणों के पास एक पत्र भेजा था। इस पत्र के द्वारा उन्होंने प्रतिभा सम्पन्न मुनियों की मांग की थी।

श्रमणों ने धरसेन द्वारा प्रेषित पत्र पर गम्भीरता से चिन्तन किया और समग्र श्रमण मुनि परिवार से चुनकर दो मेधावी मुनियों को उनके पास भेजा था। उनमें एक नाम सुबुद्धि तथा दूसरे का नाम नरवाहन था। दोनों ही श्रमण विनयवान्, शीलवान्, जातिसम्पन्न, कुलसम्पन्न एवं कलासम्पन्न थे। आगमार्थ को ग्रहण और धारण करने में समर्थ थे।

टीकाकार वीरसेन के शब्दों में यह प्रसंग निम्नोक्त प्रकार से उल्लिखित है:

''तेण वि सोरट्ठ विसयगिरिणयपरपट्टणचंदू गुहाठियेण अट्ठंग महाणिमित्त पारायण गन्धवोच्छेदो होहदित्ति जादभयण पवयण-वच्छलेणदविरवण- वहाइरियाणं महिमाए मिलियाणं लेहो पेसिदो। लेहट्ठिय धरसेणवयणमवधारिय ते हि वि आइरिएहि बे साहू गहण धारण समत्था धवलामलबहुविह विणयबिहूसियंगा सीलमालाहरा गुरुपेसणासणातित्ता देसकुलजा-इसुद्धा सजलकलापारया त्रिक्खुत्ता बुच्छियाइरिया अन्धविसयवेण्णायणादो पेसिदा।''

जब दोनों श्रमण धरसेनाचार्य के पास आने के लिए प्रस्थित हुए थे उस समय आचार्य धरसेन ने स्वप्न देखा था और उनका स्वप्न फलित् हुआ।

आचार्य धरसेन की परीक्षाविधि में मुनि उत्तीर्ण हुए और उनका अध्ययन शुभ तिथि से प्रारम्भ हो गया। आचार्य धरसेनाचार्य ने एक का नाम भूतबलि और दूसरे का नाम पुष्पदन्त रखा था।

निमित्त ज्ञान से अपना मृत्युकाल निकट जानकर धरसेनाचार्य ने सोचा, 'मेरे स्वर्गगमन से इन्हे कष्ट न हो।' उन्होंने दोनों मुनियों को श्रुत की महा उपसम्पदा प्रदान कर कुशलक्षेम पूर्वक उन्हे विदा किया।

आगम निधि सुरक्षित रखने का यह कार्य आचार्य धरसेन के महान दूरदर्शी गुण को प्रकट करता है। जैन समाज के पास आज षट्खण्डागम् जैसी अमूल्य कृति है उसका श्रेय आचार्य धरसेन के इस भव्य प्रयत्न को है।

आचार्य धरसेन आचार्य लोहाचार्य के निकटवर्ती थे। लोहाचार्य का स्वर्गवास वि.सं.११५३ (वि.सं.६८३) में माना जाता है। आचार्य धरसेन का समय वी.नि.५५०-६३३(वि.सं.८०-१६३) माना जाता है।

प्रबुद्धचेता आचार्य पुष्पदन्त एवं भूतबलि

वि.सं. १२३-२१३, ई.सं. ६६-१५६

पुष्पदन्त और भूतबलि महामेधा सम्पन्न आचार्य थे। उन्होंने अगस्त्य ऋषि के सागपान की परम्परा को श्रुतोपासना की दृष्टि से दुहरा दिया था।

आचार्य धरसेन से ज्ञान-सम्पदा लेकर लौटने के बाद दोनों ने एक साथ अंकलेश्वर में चातुर्मासिकि स्थिति सम्पन्न की। वहाँ से पुष्पदन्त का वन पदार्पण द्रमिल देश को हुआ।

आचार्य पुष्पदन्त ने जिनपालित नामक व्यक्ति को दीक्षा प्रदान की जो योगियों के अधीश्वर माने गये हैं।

षट्खण्डागम दिगम्बर साहित्य का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। सत्कर्म प्राभृत, खण्ड सिद्धांत तथा षट्खण्ड सिद्धान्त की संज्ञा से भी यह ग्रंथ पहचाना जाता है । इसके रचनाकार आचार्य पुष्पदन्त और भूतबलि थे ।

आचार्य पुष्पदन्त ने बीसदिसूत्र के अन्तगर्त सत्प्ररुपणा के १७७ सूत्रों का निमार्ण कर उन्हें जिनपालित के द्वारा भूतबलि के पारन प्रेषित किया था।

आचार्य पुष्पदन्त द्वारा रचित १७७ सूत्रों के आगे साठ सहस्त्र सूत्रों का निमार्ण कर आचार्य भूतबलि ने अवशिष्ट ग्रंथ को पूर्ण किया था। इस ग्रंथ का नाम ही ''षट्खण्डागम'' है ।

षट्खण्डागम के छह विभाग हैं। उसके आठ अनुयोग और नौ चूलिकाएं हैं। श्लोक परिमाण संख्या अठारह सहस्त्र है ।

षट्खण्डागम के छह खण्डो में चालीस सहस्त्र श्लोक यह महाबन्ध तथा महाधवल के नाम से भी जाना जाता है । यह महाबन्ध आधुनिक शैली मे सात भागों में 'भारतीय ज्ञानपीठ' द्वारा प्रकाशित है।

साहित्य को स्थायित्व प्रदान करने की दृष्टि से पुष्पदन्त और भूतबलि के समय में प्रथम बार साहित्य निबद्ध किया गया था। दिगम्बर परम्परा में इससे पहले श्रुत पुस्तक निबद्ध नहीं थी।

महाबन्ध की प्रस्तावना में आचार्य भूतबलि और पुष्पदन्त का काल वि.संवत् ५९३-६८३ और वि. संवत् १२३-२१३ ई.सं. ६६-१५६ माना गया है ।

मूलसंघ विभाजन समय

Table No. 5

विक्रम संवत ८० से विक्रम संवत २८८ तक

नन्दिसंघ पदावली

क्रम	आचार्य नाम	वीर संवत्	विक्रम संवत्	इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
३	माघनन्दि	५५०-६व	८०-१४४	२३-८७		
४	जिनचंद्र	६१४-६२४	१४४-१५४	८७-९७		विभाजन १. उमा स्वामी
५	कुन्द कुन्द	६२४-७०६	१५४-२३६	९७-१७९		२. वादिराज -समन्त भद्र
६	उमास्वामी	७०६-७४७	२३६-२७७	१७९-२२०		विभाजन १. लोहाचार्य
७	लोहाचार्य तृतीय	७४७-७५८	२७७-२८८	२२०-२३३		२. बल्वाक पिच्छ
नन्दिसंघ (वालाक पिच्छ)						
	देशीगण स्थापना			२२०-२३१		
नन्दिसंघ बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ (लोहाचार्य तृतीय) स्थापना				२२०-२३३		

Table No. 6

समय : विक्रम संवत २८८ से ११८९

नन्दिसंघ बलात्कार गण सरस्वती गच्छ पट्टावली क्रम से

क्रम	आचार्य नाम	वीर संवत्	विक्रम संवत्	इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
७	लोहाचार्य तृतीय		२७७-२८८	२२०-२३३		क्रम नं. ७ से २७ भद्रपुर-भद्दिलपुर गद्दी
८	यशकीर्ति		२८८-३६३	२३१-२९६		
९	यशोनन्दि		३६३-४१३	२९६-३५६		
१०	जयनन्दि		४१३-४७८	३५६-४२१		
११	देवनन्दि पूज्यपाद (जिनेन्द्र बुद्धि)		४७८-५३८	४२१-४८१		विवरण पृष्ठ
१२	गुणनन्दि		४९३-४९९	४२६-४४२		ऋषि मंडल स्त्रोत के रचयिता वि. पृ.
१३	वज्रनन्दि (प्रथम)		४९९-५२१	४४२-४६४		

द्रविड संघ की स्थापना वज्रनन्दि से (४९९-५२१)

क्रम	आचार्य नाम	वीर संवत्	विक्रम संवत्	इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
१४	कुमारनन्दि		५२१-५६२	४६४-५०५		
१५	लोकचन्द्र		५६२-५८८	५०५-५३१		
१६	प्रभाचन्द्र (प्रथम)		५८८-६१३	५३१-५५६		
१७	नेमीचन्द्र (प्रथम)		६१३-६२२	५५६-५६५		
१८	भानुनन्दि		६२२-६४३	५६५-५८६		
१९	सिंहनन्दि (२)		६४३-६६०	५८६-६०३		
२०	वसुनन्दि (१)		६६०-६६६	६०३-६०९		
२१	वीरनन्दि		६६६-६९६	६०९-६३९		
२२	रत्ननन्दि		६९६-७२०	६३९-६६३		
२३	माणिक्यनन्दि		७२०-७३६	६६३-६७९		
२४	मेघचन्द्र (प्रथम)		७३६-७६२	६७९-७०५		
२५	शान्तिकीर्ति		७६२-७७७	७०५-७२०		
२६	मेरूकीर्ति		७७७-८१५	७२०-७५८		

क्रम	आचार्य नाम	वीर संवत्	विक्रम संवत्	इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
२७	भूषण कीर्ति श्री भूषण		८१५-८२२	७५८-७६५		क्रम नं. २८ से ३९ उज्जैन गद् दी
२८	शीलचन्द्र		८२२-८३६	७६५-७७९		
२९	नन्दि कीर्ति		८३६-८५२	७७९-७९५		
३०	देशभूषण		८५२-८६२	७९५-८०५		
३१	अनन्त कीर्ति		८६२-८७२	८०५-८१५		
३२	धर्म नन्दि		८६२-८८५	८०५-८२८		
३३	विद्या नन्दि		८८५-९१७	८२८-८६०		
३४	रामचन्द्र		९१७-९३४	८६०-८७७		
३५	नागचन्द्र		९३४-९४६	८७७-८८९		
३६	नयनचन्द्र		९४६-९६१	८८९-९०४		
३७	हरिचन्द्र		९६१-९७३	९०४-९१६		
३८	महिचन्द्र		९७३-९९०	९१६-९३३		
३९	माघचन्द्र		९९०-१०२३	९३३-९६६		

क्रम	आचार्य नाम	विक्रम संवत्	इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
४०	लक्ष्मीचन्द्र	१०२३-१०३७	९६६-९८०		क्रम नं. ४० से ४३ चन्देरी गद्दी
४१	गुण कीर्ति	१०३७-१०४८	९८०-९९१		
४२	विमल कीर्ति	१०४८-१०६६	९९१-१००९		
४३	लोकचन्द्र	१०६६-१०७९	१००९-१०२२		
४४	शुभचन्द्र	१०७९-१०९४	१०२२-१०३७		क्रम नं. ४४ से ४८ भेसका (कोपाल गद्दी)
४५	शुभकीर्ति (श्रुतकीर्ति)	१०९४-१११०	१०३७-१०५३		
४६	भावचन्द्र	१०९४-१११५	१०५३-१०५८		
४७	महाचन्द्र(महीचन्द्र)	१११५-११४०	१०५८-१०८३		
४८	माघचन्द्र (मेघचन्द्र)	११४०-११४४	१०८३-१०८७		
४९	ब्रह्म नन्दि (ब्रह्मचन्द्र)	११४४-११४८	१०८७-१०९१		क्रम नं. ४९ से ५९ धारा गद्दी)
५०	शिवनन्दि	११४८-११५६	१०९१-१०९९		
५१	विश्वनन्दि	११५६-११६०	१०९९-११०३		
५२	हरिनन्दि	११६०-११६८	११०३-११११		

क्रम	आचार्य नाम	विक्रम संवत्	इसवी सन्	आगम ग्रन्थ	विशेष घटना
५३	भावनन्दि	११६८-११७६	११११-१११९		
५४	सुरेन्द्र कीर्ति (सुरकीर्ति)	११७६-११५४	१११९-११२७		
५५	विद्याचन्द्र	११५४-११८८	११२७-११३१		
५६	रामचन्द्र	११८८-११९३	११३१-११३६		
५७	माघनन्दि	११९३-११९९	११३६-११४२		क्रम नं. ६० से ९३ ग्वालियर गद्दी)
५८	ज्ञाननन्दि (श्री नन्दि)	११९९-१२०४	११४२-११४७		
५९	गंगनन्दि (गंगकीर्ति)	१२०४-१२०९	११४७-११५२		
६०	हेमकीर्ति (सिंहकीर्ति)	१२०९-१२१६	११५२-११५९		
६१	चारूकीर्ति	१२१६-१२२३	११५९-११६६		
६२	मेरूकीर्ति	१२२३-१२३०	११६६-११७३		
६३	नामिकीर्ति	१२३०-१२३२	११७३-११७५		
६४	नरेन्द्रकीर्ति	१२३२-१२४१	११७५-११८४		
६५	श्री चन्द्र (चन्द्र कीर्ति)	१२४१-१२४८	११८४-११८९		

कीर्ति निकुंज कुन्दकुन्दाचार्य

सं. १५४-२३६

भारतीय जैन श्रमण परम्परा मे श्री कुन्दकुन्दाचार्य का नाम उल्लेखनीय है। आप यद्यपि इस परम्परा के प्रवर्तक आचार्य नहीं थे तथपि आपने आध्यात्मिक योग-शक्ति का विकास कर आध्यात्मविद्या की उस अपिछइन्न धारा सो जन्म दिया जो निष्ठा एवं अनुभूति आत्मानंद की जननी थी। इसी कारण श्रुतघर आचार्यों की परम्परा में कुन्दकुन्दाचार्य का स्थान महत्वपूर्ण है।

आपकी गणना ऐसे युग संस्थापक आचार्य के रूप में की गई है जिनके नाम से उत्तरवर्ती परम्परा 'कुन्दकुन्द आम्नाय' के नाम से प्रसिद्ध हुई है। जिस प्रकार भगवान् महावीर, गौतम गणघर और जैन घर्म मंगलरूप है, उसी प्रकार कुन्दकुन्दाचार्य भी। आपके जैसा प्रतिभाशाली, अघ्यात्म द्रव्यानुयोग के क्षेत्र में प्रायः दूसरा आचार्य दिखाई नहीं देता। आप श्रमण ऋषियो में अग्रणी थे। किसी भी कार्य के प्रारम्भ में मंगलरूप में इनका स्तवन किया जाता है। मंगल स्तवन का प्रसिद्ध पद्य निम्न प्रकार है-

मंगलं भगवान् वीरो मंगलम् गौतमो गणी ।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैन घर्मोऽस्तु मंगलंम् ॥

जीवन-परिचय

आचार्य कुन्दकुन्द का दीक्षा नाम पद्मानंदी था। 'तस्यान्वये भूविदिते बभूव यः पद्मनन्दि प्रथमा मिघानः।'

आप कौण्कुण्डपुर के निवासी थे। आपके पिता का नाम 'कर्मण्डु' और माता का नाम 'श्रीमती' था। गाँव का दूसरा नाम 'कुकमरई' भी बताया जाता है। यह स्थान पेदथनाडु नामक जिले में है। बाल्यास्था से ही कुन्कुन्द प्रतिभाशाली थे। इनकी विलक्षण स्मरण शक्ति और कुशाग्र बुद्धि के कारण ग्रंथाघ्यान में इनका अघिक समय व्यतीत नहीं हुआ। युवावस्था में इन्होने दीक्षा ग्रहण कर आचार्य पद प्राप्त किया। आपका संघ 'मूलसंघ' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। आप 'मूलसंघ' के अद्वितीय नेता थे। आपकी कृतियाँ दिगम्बर व श्वेताम्बर दोनों में समान रूप से आदरणीय मानी जाती है। आप कलन्दै के वाचानंद मुनि के शिष्य थे। आपने मलयपुर के नेमिनाथ मन्दिर में बैठ कर 'नेमिनाथम्' नामक विशाल तमिल व्याकरण की रचना की थी।

रचनाएँ -

आचार्य कुन्दकुन्द ई. सन् की प्रथम शताब्दी के विद्वान थे। दिगम्बर साहित्य के महान प्रणेताओं मे श्री कुन्दकुन्द का मूर्धन्य स्थान है। इनकी रचनाएँ शौरसेनी प्रकृत में है।

(१) प्रवचनसार
(२)समय सार
(३) पंचास्तिकाय

ये तीनों ग्रंथ विश्रुत हैं और तत्वज्ञान प्राप्त करने की कुंजी हैं। शेष रचनाएँ भी आध्यात्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

(१) प्रवचनसार - इसमें तीन अधिकार है- ज्ञान, ज्ञेय और चरित्र। आचार्य अमृतचन्द्र की टीकानुसार इसमें २७५ गाथाएँ और जयसेन की टीकानुसार ३१७ हैं। इन बढ़ी हुई गाथाओं का ३ वर्गो में विभाजन किया जा सकता है-

(१) नमस्कारात्मक

(२)व्याख्यान विस्तार विषयक

(३) अपर विषय विज्ञापनात्मक (विज्ञापनात्क)

(२) समयसार - यह सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मिक ग्रंथ है। यहाँ समय शब्द के दो अर्थ विवक्षित है-समस्त ओर आत्मा। जिस ग्रंथ में समस्त पदार्थों अथवा आत्मा का सार वर्णित हो, वह समयसार है। यह भेद विज्ञान का निरूपण करता है। यह ग्रंथ १० अधिकारो में विभक्त है।

(३) पंचास्तिकाय- इस ग्रंथ में काल द्रव्य से भिन्न जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश इन पाँच अस्तिकायो का निरूपण किया गया है। यह ग्रंथ दो अधिकारो में विभक्त है। प्रथम में द्रव्य, गुण, पर्यायों का कथन है और द्वितीय में पुण्य, पाप, जीव, अजीव, आस्त्रव, बन्ध, संवर निर्जरा एवं मोक्ष इन नवपदार्थों के साथ मोक्षमार्ग का निरूपण किया है।

आपकी १० रचनाएँ और है तथा प्रांकृत भाषा की कुछ भक्तियाँ भी आपकी कृतियाँ मानी जाती है। भक्तियो के टीकाकार प्रभाचन्द्राचार्य ने लिखा है कि - 'संस्कृता सर्वा भक्तयः पादपूज्य स्वामिकृता प्राकृतास्तु कुन्दकुन्दाचार्य कृताः। 'अर्थात् संस्कृत की सब भक्तियाँ कुन्दकुन्दाचार्य कृत है। कुन्दकुन्दाचार्य की ८ भक्तियाँ है जिनके नाम इस प्रकार है।

(१) सिद्धभक्ति (२) श्रुतभक्ति (३) चारित्रभक्ति (४) योगि (अगनार) भक्ति (५) आचार्य भक्ति (६) निर्वाणभक्ति (७) पंचगुरू (परमेष्ठि) भक्त (८) थोस्सामि थुदि (तीर्थंकर भक्ति)

आपकी भाषा पद्यात्मक है। इनकी रचना के प्रत्येक श्लोक को दिव्यध्वनि का संदेश माना जाता है इसीलिए कुन्दकुन्द को कलिकाल सर्वज्ञ कहा गया है जो उनके प्रति महान आदर भाव प्रकट करता है। उनकी वाणी को '' गणधरगिरा'' की भाँति प्रमाणित समझा गया है।

कर्णाटिक पहाड़ियो की जैन गुफाओं में उन्होंने ध्यान और तप की उत्कृष्ट साधना की, उनकी मुख्य निवास स्थली नन्दी पर्वत की गुफाएँ थीं। धर्म प्रसार व प्रचार के लिए उन्होंने सम्पूर्ण भारत में भ्रमण किया था।

अतएव संक्षेप में श्री कुन्दकुन्दाचार्य का अपूर्व पांडित्य, उनकी शास्त्रग्रंथन प्रतिमा एवं सिद्धान्तग्रंथो के सारभाग को आध्यात्मिक और द्रव्यानुयोग के रूप मे प्रस्तुति करण की क्षमता ने, आगमिक तत्वो को तर्क संगत परिधान दिया तथा उनकी आत्मानुभूतिपरक वाणी ने अध्यात्म के नए क्षितिज का उदघाटन किया है जो अविस्मरणीय रहेगा।

श्री उमास्वामी (गृद्धपिच्छाचार्य, उमा स्वाति)

मूलसंघ की पट्टावली में कुन्दकुन्दाचार्य के पश्चात् उमास्वाति का नन्दिसंघ के पट्ट पर उल्लेख मिलता है जो गृद्धपिच्छाचार्य नाम से प्रसिद्ध थे, उस समय गृद्धपिच्छाचार्य के समान समस्त पदार्थों को जानने वाला कोई दूसरा विद्वान नहीं था। तत्वार्थसूत्र के रचियता का नाम गृद्धपिच्छाचार्य दिया है-

' तत्वार्थसूत्र कत्तारं गृद्धपिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥

तत्वार्थसूत्र

इसमें गृद्धपिच्छाचार्य नाम के साथ उनका दूसरा नाम 'उमास्वामि मुनीश्वर' भी बताया गया है। वादिराज ने इस नाम की सार्थकता बताते हुए कहा है कि ' आकाश में उड़ाने की इच्छा रखने वाले पक्षी जिस प्रकार अपने पंखों का सहारा लेते है। उसी प्रकार मोक्षरुपी नगर को जाने के लिए भव्य लोग जिस मुनीश्वर का सहारा लेते हैं वे गृद्धपिच्छ महाराज हैं। श्रवणवेलगोला के एक अभिलेख में, कुन्दकुन्दाचार्य के वंश में इनकी उत्पति बताते हुए इनका नाम उमास्वाति भी बताया है। एक अन्य शिलालेख में उल्लेख मिलता है कि ....

' आचार्य कुन्दकुन्द के पवित्र वंश में सकलार्थ के ज्ञाता उमास्वाति को सूत्रों में निबद्ध किया । इन आचार्य ने प्राणिरक्षा के हेतु गृद्धपिच्छों को धारण किया , इसी कारण वे 'गृद्धपिच्छाचार्य' के नाम से प्रसिद्ध हुए। श्रवण वेल गोल के १०५ वें शिलालेख में स्पष्ट लिखा है कि ' श्रीमान' उमास्वाति ने तत्वार्थसूत्र को प्रकट किया था, जो मोक्षमार्ग के आचरण में उद्यत मुमुक्षुजनों के लिए उत्कृष्ट पाथेय है। इन गृद्धपिच्छाचार्य के एक शिष्य बलाकपिच्छ थे जिनके सूक्तिरत्न मुकत्यंगना के मोहन करने के लिए आभूषणों का काम देते है ।

दिग्मबर साहित्य और अभिलेखों का अध्यय करने से ज्ञात होता है कि तत्वार्थसूत्र के रचियता गृद्धपिच्छाचार्य, अपरनाम १. जैनधर्म का प्राचीन इति. - भाग-२- पृष्ठ संख्या ८८.(३) उमास्वामी या उमास्वाति है।

रचना

गृद्धपिच्छाचार्य की रचना का नाम तत्वार्थसूत्र है। प्रस्तुत ग्रंथ दश अध्यायों में विभाजित है। इसमे जीवादि सप्ततत्वों का विवेचन किया गया है। जैन साहित्य मे यह संस्कृत भाषा का एक मौलिक आध सूत्र ग्रंथ है। रचना प्रोढ़ और गंभीर है। इसमें जैन वाड्मय का रहस्य अन्तनिर्हित है। इस कारण यह जैन ग्रंथ परम्परा मे समानरुप से मान्य है। हिन्दुओं में जिस तरह गीता का, मुसलमानों में कुरान का, और ईसाइयों में बाइबिल का जो महत्व है, वही महत्व जैन परम्परा में तत्वार्थ सूत्र को प्राप्त है।

ग्रंथ के १० अध्यायों में से प्रथम के ४ अध्यायों में जीवतत्त्व का, पांचवे अध्याय मे अजीव तत्त्व का, छटवे और सातवे अध्यान मे आस्रवतत्त्व का, आठवें अध्याय में बन्धतत्त्व का, नवमें अध्याय में संवर और निर्जरा का और दशवें अध्याय में मोक्षतत्त्व का वर्णन किया गया है। वर्तमान में तत्त्वार्थसूत्र के दो पाठ प्रचलित (१) सर्वार्थसिद्धिमान्य दिगम्बर सूत्रपाठ (२) भाष्यमान्य श्वेताम्बर सूत्रपाठ।

तत्त्वार्थ सूत्र के कर्ता उमास्वाति चूँकि कुन्दकुन्दान्वय में हुए है, इनके तत्त्वार्थसूत्र के मंगल पद्य को लेकर विद्यानन्द के अनुसार स्वामी समन्तभद्र ने आप्त की मीमांसा की है। समन्तभद्राचार्य का समय विक्रम की द्वितीय शताब्दी माना जाय तो उमास्वाति उनसे पूर्व दूसरी शताब्दी के विद्वान होने चाहिये।

इन सब उल्लेखों से स्पष्ट है कि गृद्धपिच्छाचार्य, उमास्वाति का नाम बहुत प्रसिद्ध था। वे जिनागम के पारगामी विद्वान थे। इसी से तत्त्वार्थसूत्र के टीकाकार समन्तभद्र, पूज्यपाद, अकलंक और विद्यानन्द आदि मुनियों ने बड़े ही श्रद्धापूर्ण शब्दों में इनका उल्लेख किया है।

दिव्य विभूति श्री देवनन्दि पूज्यापाद

विक्रम संवत ४७८ - ५३८

प्रस्तुतकर्त्री :- श्रीमतार्त्र डॉ. संगीता मेहता

श्रीमती मंजु भटनागर

भारतीय जैन परम्परा में, लब्ध प्रतिष्ठ ग्रंथकारों की श्रंखला में पूज्यपाद (देवनन्दि) का नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है। इन्हें विद्वत्ता और प्रतिभा का वरदान वरद् रूप से प्राप्त था। आपकी अमरकृतियों का प्रभाव दिगम्बर श्वेताम्बर दोनों ही परम्पराओं में समान रूप से दृष्टिगत होता है। इसीकारण सभी इतिहासज्ञों एवं साहित्यकारों ने इनकी महत्ता व विद्वत्ता को स्वीकार करते हुए चरणों मे श्रद्धा- सुमन अर्पित किए हैं।

श्री पूज्यपाद अपने समय के प्रसिद्ध तपस्वी मुनि पुंगव थे। इनका दीक्षा - नाम देवनन्दि था। बुद्धि की प्रखरता के कारण वे जिनेन्द्र बुद्धि कहलाए और देवों द्वारा उनके चरण पूजे गए थे, इसीलिए वे '' पूज्यपाद '' नाम से प्रख्यात् हुए। जैसा कि श्रवण बेलगोल के शिलालेख नं. ४० के निम्नपद्य से स्पष्ट है-

यो देवनन्दि प्रथिमाभिधानो बुद्धया महत्या स जिनेन्द्र बुद्धि
श्री पूज्यपादोऽ जनि देवताभिर्यत्पूजिते पादयुंगऽयदीयम्।

श्री देवनन्दि साहित्यजगत के प्रकाशमान सूर्य थे। वे कवि,वैयाकरण और दार्शनिक तीनों व्यक्तित्व की त्रिवेणी थे। आचार्य जिनसेन ने आदिपुराण में लिखा है-

कवीनां तीर्थकृदेव किं तरां तत्र वर्ण्यते
विदुषां वड्मलध्वंसि तीर्थ यस्य वचोमयम्।

- आदिपुराण , १/

अर्थात् जो कवियों में तीर्थंकर के समान थे जिन्होंने कवियों का पथ प्रदर्शन करने हेतु लक्षण ग्रंथों की रचना की थी और जिनका वचन रूपी तीर्थ विद्वानों के शब्द सम्बन्धी दोषों को नष्ट करने वाला है। ऐसे देवनन्दि आचार्य का कौन वर्णन कर सकता है ?

जीवन- परिचय

आचार्य पूज्यपाद कर्नाटक देश के निवासी और बाह्मण कुलं में उत्पन्न हुए थे। पूज्यपाद चरित और राजावली कथा नामक ग्रंथ में आपके पिता का नाम माघव भट्ट और माता का नाम श्रीदेवी बताया गया है। आपका जन्म कोले नामक ग्राम में हुआ था।

शुभचन्द्राचार्य ने अपने पाण्डवपुराण में अपनी गुर्वाविलिका का उल्लेख करते हुए बताया है -

श्री मूलसंघऽजनि नन्दिसंघस्तस्मिन्-बलात्कारगणोऽतिरम्यः।
तत्राभवत्पूर्णपदांश वेदी- श्रीमाघनन्दि नरदेव वन्द्या।

अर्थात्- नन्दिसंघ, बलात्कारगण मूलसंघ के अन्तगर्त है। इसमें पूर्वो के एकदेश ज्ञाता और मनुष्य एंव देवों से पूजयनीय माघनन्दि आचार्य हुए।

माघनन्दि के बाद जिनचन्द्र, पद्मनन्दि , उमास्वामी, लोहाचार्य, यश :कीर्ति, यशोनन्दि और देवनन्दि के नाम क्रम से नन्दिसंघ की पट्टावली में भी मिलते हैं। अतएवं यह प्रमाणित होता है कि पूज्यपाद मूलसंघ के अन्तर्गत नन्दिसंघ बलत्कारगण के पट्टाधीश थे।

आचार्य पूज्यपाद के जीवन की अनेक महत्वपूर्ण घटनाएँ हैं। यथा - विदेह गमन करना, घोर तपश्चरण के कारण नेत्र - ज्योति का क्षीण होना तथा शन्घोयाष्टक के सृजन एंव एकाग्रता पूर्वव पाठन से नेत्रज्योति की पुनः प्राप्ति , देवताओं द्वारा चरणों का पूजा जाना, औषध ऋद्धि की उपलब्धि, पाद स्पर्श जल से लोहे की स्वर्ण में परिणिति इत्यादि इनकी पुष्टि करता है। श्रवण बेलगोल में वर्णित यह श्लोक इसका प्रमाण है -

श्री पूज्यपाद मुनिरप्रतिभोषधर्द्धि-
जीयाद्विदेह जिन दर्शन पूत गात्र
यत्पादधौत जल संस्पर्श प्रभावात्कालायशं-
किल तदा कनकीचकार ॥

(श्रवण बेलगोल शि नं. १०८-२५८)

आचार्य पूज्यपाद ने धर्मराज का उद्धार किया था। इससे आपके चरण इन्द्र द्वारा पूजे गए थे। इसी कारण आप पूज्यपाद नाम से सम्बोधित किये जाने लगे। आपके विद्या विशिष्ट गुणों को आज भी आपके द्वारा रचे हुए शास्त्र प्रमाणित कर रहे हैं। आप जिनेन्द्र के समान विश्व बुद्धि के धारक, समस्त शास्त्रविषयों में पारंगत थे, कामदेव को जीतने वाले थे, इसलिए योगीजन उन्हें '' जिनेन्द्र बुद्धि '' नाम से सम्बोधित करते थे।

''श्री पूज्यपादोद्धृत धर्मराज्यस्ततः सुराधीश्वर पूज्यपाद

इस प्रकार हम देखते हैं कि पूज्यपाद देवनन्दि नन्दिसंघ के प्रधान आचार्य थे, साथ ही महान दार्शनिक, अद्वितीय वैयाकरण, अपूर्व वैद्य, आध्यात्मिक कवि, महान तपस्वी, सातिशय योगी और पूज्य महात्मा थे।

अंतिम समय में अपने ग्राम में आकर उन्होंने समाधिकरण किया था। इनके शिष्य वज्रनन्दि ने द्रविड़संघ की स्थापना की थी-

''श्री पूज्यपाद सीसो द्राविड़संघस्य कारगो दुय्धो
णमेण वज्जनंदी पाहूड़ वेदी महासतो ।।२४।।

दर्शन सार

नीराजनापाद्यार्धविधि ।

वाभिर्निर्भरसौरर्मधुकृतां गन्धैः सुगन्धाप्रियैः
प्राप्तैर्मौक्तिकदामशालिसदकैः पुष्पैः सुपुष्पन्धयै ।
सामोदैश्चरूभिः प्रकाशितशिखैर्दीपैर्जगद्बन्धुरैः
धूपैः सूतसुधैः फलैर्महमहं निर्मामि कर्मच्छिदः ।।१०।।
ॐ ह्रीं अर्हन्नमः परमेष्ठिभ्यःस्वाहा ।
ॐ ह्रीं अर्हन्नमः परमात्मकेभ्यः स्वाहा ।
ॐ ह्रीं अर्हन्नमः अनादिनिधनेभ्यः स्वाहा ।

ॐ ह्री अर्हन्नमः सर्वनृसुरासुरपूजितेभ्यः स्वाहा ।
ॐ ह्री अर्हन्नमोऽनरतज्ञानेभ्य स्वाहा ।
ॐ ह्रीं अर्हन्नमोऽनन्तवीर्येभ्यः स्वाहा ।
ॐ ह्री अर्हन्नमोऽनन्तसौख्येभ्यः स्वाहा ।
पानीय गंध सित तंदुल पुष्पमाला ।
मिष्ठान्न दीप वर धूप फलादि भरके ॥
अर्हंत देव चरणाब्जयुगं जजूँ मैं ।
इंद्रादिवद्य जिनवंद निजात्म पाऊं ॥१०॥
(यह अनृविध अर्चन हुआ ।)

इत्यष्टविधार्चनम् ।

पूर्वाशादेश हव्यासन महिषगते नैर्‌ऋते पाशपाणे
वायो यक्षेन्द्र चन्द्राभरण फणिपते रोहिणीजीवितेश।
सर्वेप्यायात यानायुधयुवतिजनैः सार्घर्मो भूर्भुवः स्वः
स्वाहा गृह्णीत चार्घ्यं चरूममृतमिदं स्वस्तिकं यज्ञभागं ॥११॥

ॐ हीं प्रशस्तवर्णसर्वलक्षणसम्पूर्णस्वायुधवाहनवधूचिन्ह्मसपरिवारा इन्द्राग्नियमनैऋृतवरूणवाहनडवायु कुबेरेशानधरणेन्द्रसोमनामदशलो कपाला आगच्छत आगच्छत संवौषट्, स्वस्थाने तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, ममात्र सन्निहिता भवत भवत वषट् इदमर्घ्य पाद्यं गृह्णीध्वं गृह्णीध्वं ॐ भूर्भुव स्वः स्वाहा स्वधा ।

इन्द्रादिदशलोकपालपरिवार देवतार्चनम् .
पूर्वादि दशदिक् क्रमाद् दश दिक्कपाला ।
ये इंद्र अग्नि यम नैऋत वरूण नामा ॥
वायु कुबेर ईशान कणीन्द्र चंद्रा
ॐ भूर्भुवः स्वः स्वधा लो यज्ञभागा ॥ (११)
(इन्द्र आदि इन दिक्पाल देवों को अर्घ चढावें ।)
ॐ तुर्यारावेशपर्याचितरूचिरचरूप्रीतदिक्पालसंस-
त्संगीतारंभवाद्यारव इव सरति व्योमसूद्दामगीते ।
देवं धर्मैकचक्रे श्वरमखिलजगद्भव्यचक्रात्मसार्थ-
स्वार्थाभ्युद्धारहेतोः स्नपयितुमयमप्युदद्धृतः पूर्णकुंभः॥१२॥
ॐ ह्रीं स्वस्तये पूर्णकलशोद्धरणं करोमि स्वाहा ।
ॐ धर्म चक्रपति के अभिषेक हेतु ।
संगीत गीत युत सुघोष फैला ॥

मैं पूर्ण कुंभ विधि से कर में उठाऊँ।
उद्धार हेतु यह कुंभ जगत्रयी का ॥१२॥
(जल से भरा पूर्ण कलश हाथमें उठावें)

एतज्जैनेन्द्रवृन्दारकजनसवनानन्द कन्दप्ररोह -
त्कल्याणोद्यानकुल्या जल इति मनसा नेत्रपेयं विनेयैः।
भूयाद्भूतैकबन्धो स्नपनजलमिदं मोहनीयग्रहोग्र-
व्याबाधाशांतिधाराजलमखिलजगद्भमव्यसत्वव्रजस्य॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं ह सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सत्रैलोक्यस्वामिनो जलाभिषेक करोमि नमोऽर्हते स्वाहा।

जलाभिषेकं:

जैनेन्द्र देव अभिषेक विधि करूं मैं
कल्याण नीरभूत निर्झरणी यही है. ॥
त्रैलोक्य भव्यजन को सुख शांति देती।
स्वामी करूं न्हवन मैं जल से तुम्हारा ॥१३॥

अच्छं चन्द्रमणिद्रवादपि हिमं चन्द्रांशुजालादपि
स्वादामोदि सुधारसादपि जगत्कान्तं च काव्यादपि।
एतत्कोमलनारिकेलसलिलं जैनाभिषेकात्पुनः
पूतं क्षीरधि-वारिणाऽपि कुरूतादात्मोपमं मद्वचः ॥१४॥

ॐ हैं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय झं झं झ्वी क्ष्वीं हं सत्त्रैलोक्यस्वामिनो नारिकेलरसाभिषेकं करोमि नमोऽर्हते स्वाहा।

नारिकेल रसाभिषेक

जो चन्द्रकांतमणि के जल सम धवल है।
पीयूषवत् अतुल स्वाद लिये अमल है।
इस नालिकेर रस से अभिषेक करके।
चाहूं प्रभो ! मुझ वचन इसके सदृश हो ॥१४॥

नीराजन-कषायो दिकाभिषेकः।

तृष्णार्तिच्छेदसिद्धौषधिसलिलघटैर्धर्मसिद्धाश्रमोद्य-
त्पुण्यक्षोणीरूहाम्युक्षणजलकलशैर्भक्तिभाजां जनानाम्।
मांगल्यद्रव्यगर्भैरभिषवणमहीकोणकल्याणकुंभै-
रेभिः संस्नापयेऽहं त्रिजगदधिपतिं स्वामिनं देवदेवम् ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हौं अर्हः असिआउसा नमोऽर्हते भगवते मंगलो-

त्तमकरणाय कोणकलशजलाभिषेकं करोमि नमोऽर्हते स्वाहा ।

चतुः कोणकुम्भजलाभिषेकं ।

तत्काल पेलकर पात्र भरा लिया है ।
माधुर्य पूर्णयुत ये रस इक्षु का है ॥
हे नाथ ! आपका अभिषेक करूं रूचि से ।
मेरे वचन त्रिजग कर्ण रसायन हों ॥१५॥

गन्धामम: कुम्भधारा जयति मलयजक्षोदकपूरचूर्ण-
प्राज्यामोद्‌प्रमोदग्रहिलमधुकरश्रेणिझऽकांरणीयम् ।
स्वस्वामीये भवेऽस्मिन् महति भगवती भारती चानुरागात्-
पुण्यं पुण्यानुबन्धित्रिभुवनभविनामुद्‌धमुद्‌घोषयंति ॥२२॥

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगाप-मृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वश्याम(क्षाम)डामर विनाशनायॐ ह्रां ह्रीं ह्र
अर्हौं द्रौंः अर्हन् असिआउसा नमः मम
सर्वशान्तिं कुरू, मम सर्वतुष्टिं कुरू, मम सर्वपुष्टिं कुरू स्वाहा स्वधा

गन्धोदकाभिषेकः

अत्यंत पुष्टिकर ये घृत तृप्तिकारी ।
संताप दूरकर अतिशय कांति देता ॥
घी से जिनेन्द्र अभिषेक करूं अभी मैं।
दीर्घायु हो अतुल शक्ति बढ़े इसी से ॥१६॥

भक्तेरस्याभिषेक्तुः सपदि परिणतैर्नूनमिष्टैर्गन्धैः।
सिद्धायाः कामधेनोः प्रथमतरमयं प्रस्नवौघप्रवृत्तः ।
इत्यालोक्यस्त्रिलोकी परमपरवृढैः स्नानदुग्धलवोऽयं
पुष्यान्नः पुष्पलक्ष्मीदयितजनमनोवर्तिनी कीर्तिहंसीम्॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐ अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं
ईवीं क्ष्वीं हं सत्रैलोक्यस्वामिनः क्षीराभिषेकं करोमि नमोऽर्हते स्वाहा ।

एला वंग कपूर्र सुचंदनादी।
नाना सुगंधवर वस्तु मिलाय करके ॥
सर्वौषधि मिलितसार कषाय जल से ।
संसाररोगहर हेतु करूं न्हवन मैं ॥१९॥

क्षीराभिषेकंम् ।

स्त्यानं शीतगमस्तिलिविमलज्योत्स्नाम्बु जायेत् चेत्
प्रालेयघुतिनूत्नरत्नसलिलं शीतं भवेद्वादि........।?
तत्स्याल्लब्धसमोपमानमिदमित्यावर्णनीयं जिन-
स्नानीयं दधि सर्वमंगलमिदं सवैर्जनैर्वैन्घताम्॥१८॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं
इवीं क्षवीं हं सत्रैलोक्यस्वामिनो दधिस्नपनं करोमि नमोऽर्हते स्वाहा ।
त्रैलोक्य पुष्पप्रद चंदनको घिसा है।
सौभाग्यकारी जिर्नाबब विलेप हेतु ॥
सौरभ्य प्राप्त कर लूं निज के गुणों की ।
हे नाथ ! आप गुणसौरभ विश्वव्यापा ॥२०॥

दध्यभिषेकः ।

स्नेहोमज्जनहेतवे जिनपतेस्त्रैलोक्यपुण्योत्तरा-
लम्बं बिम्बमुपागम्य गमितं सौभाग्यमत्यद्भुतम् ।
एभिर्बन्धुरगन्धवस्तुजनितैरूद्धर्तनैश्चन्दन-
क्षोदाढ्यैर्मवतां विभूतिवनितावश्यौषधैर्भूयताम् ॥१९॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं
इवीं क्ष्वीं हं सत्रैलोक्यस्वामिनो कल्कचूर्णैरूद्धर्तनं करोमि नमोऽर्हते स्वाहा ।
उद्वर्तनं ।
पूर्णो शशांक किरणों सम कांति धारे ।
ये दूध उत्तम रसायन विश्व में हैं ॥
हे नाथ ! क्षीरघट से अभिषेक करके .
मैं कामधेनु सम वांछित प्राप्ति कर लूँ ॥१७॥
वर्णान्नप्रमुखैर्निवर्तनविधिद्रव्यैजग्वृतये
निर्वर्त्य त्रिजगत्प्रभोरभिषवोपान्तावतारक्रियां।
सारक्षीरतरूत्वचां परिचयादेभिः कषायैर्जलै-
रस्मत्संसृति संजरज्वरहरैर्निर्वर्तये मज्जनम् ॥२०॥
ॐ ह्रीं क्रौं समस्तनीराजनद्रव्यैर्नीराजनं करोमि दुरितमस्माकमपहरतु भगवान्
स्वाहा ।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं त्रिभुवनपतेः कषायोदकाभिषेकं करोमि नमोऽर्हते स्वाहा ।
जैनेन्द्र कीर्ति यह एकत्रित हुई क्या ?
क्षीरोदधी पय हुआ बर्स्ध बर्फ सम ही ॥

अति मंगलीक दधि से अभिषेक करके ।
त्रैलोक्य मंगलमयी निज सौख्य पाऊं ॥१८॥
एतैरिक्षुरसैश्च दुग्धसलिलैरक्षीरसिन्धूद्भवै-
रेभिश्चूतरसैश्च नूनममृतै संक्रान्तनामान्तरैः ।
प्राज्यश्रीजिनराजमज्जनविधिः प्राप्तोपयोगाचित-
स्तोत्रैः श्रोत्ररसायनं त्रिजगतां सम्पद्यतां मद्वचः ॥१५॥
ॐ ह्री श्रीं क्लीं ऐं अर्ह वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं
झ्वीं क्ष्वीं हं सत्रैलोक्यस्वामिनो इक्षुरसाभिषेवकरोमि नमोऽर्हते स्वाहा ।

इक्षुरसाभिषेकः।

तृष्णा निवारण करे बहु पुण्यकारी ।
मांगल्यद्रव्य वर मिश्रित कोल कलशे ॥
त्रैलोक्य नाथ जिन का अभिषेक करके ।
पा जाऊं शीघ निज के सुचतुष्टियो को ॥२१॥
यत्प्राज्यं बालसूर्यत्विषिपदविरलं कुड्कु कुमाम्भश्छटाभं
यत्पूर्व कर्णिकारस्त्रजि यदुपचितं रोचनाम्भोजदाम्नि ।
तल्लावण्यं लवोस्या रूचयति विनुतच्छायमामोदपीनं
धाराहैयड्गवीनं जिंनसवनविधावस्तुदीर्घायुष नः ॥१६॥
ॐ हीं श्रीं क्ली ऐं अर्ह वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं झं झं
झ्वीं क्ष्वीं हं सत्रैलोक्यस्वामिनो घृताभिषेककरोमि नमोऽर्हते स्वाहा।

घृताभिषेकः ।

कर्पूर चूर्ण मलयागिरि चंदनादि।
नाना सुगंधिकर द्रव्य मिलाय लीने ॥
गंधाम्बु से नित करूं अभिषेक प्रभु का ।
कैवल्यज्ञानमय आत्म ज्योति पाऊं ॥२२॥

संस्कृति संरक्षक आचार्य गुणनन्दि

वि. सं. ४९३-४९९ ई. ४२६-४४२

आचार्य गुणनन्दि नन्दिसंघ के आचार्य पूज्यपाद के शिष्य थे। आचार्य पूज्यपाद ने सर्वप्रथम अभिषेक पूजा आदि की परम्परा संस्कृत भाषा मे प्रारम्भ की। उसी के अनुसंधान में आचार्य गुणनन्दि ने सर्वप्रथम ''ऋषिमंडल स्त्रोत'' की रचना की।

यह स्त्रोत दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनो सम्प्रदायों को मान्य है। जैन आगम में प्राप्त मंत्र, जाप, आदि का संस्कृत में सबसे प्राचीन या प्रथम उपलब्ध ग्रंथ है। और ध्यान का भी यह प्रथम संस्कृत ग्रंथ है।

इस स्त्रोत के यंत्र में २४ तीर्थकारों की आराधना के सिवाय सम्यक दर्शन ज्ञान चारित्र आदि के साथ २४ भगवानों के यक्ष-यक्षिणी आदि का भी समावेश किया है।

हूमड़ समाज प्रारम्भ से इस यंत्र की विशेष आराधना करता रहा है। हूमड़ों के सभी जिनालयों में इस यंत्र की स्थापना की जाती है। यहाँ १६ ऋषि मंडल स्त्रोत के कुछ मूल श्लोक हिन्दी अनुवाद के साथ प्रस्तुत किये जा रहे है ।

अथ हषिमंडल स्त्रोत

आद्यंताक्षरसंलक्ष्यमाक्षरं व्याप्त यत्स्थितं ॥
अग्निज्वालासमं नादं बिंदुरेखासमन्वितं ॥१॥
अग्निज्वालासमाक्रांत मनोमल विशोद्यनं।
देदीप्यमानं हृदत्पदमेतत्पदं नौमि निर्मलं ॥२॥

आदि के अक्षर अ और अंत के अक्षर ह को लेने से बीच के सर्व अक्षर आ जाते हैं। अन्तके वर्ण के साथ अग्निज्वाला अर्थात् र कार मिलना, और उसका मस्तक बिन्दु और अर्धचन्द्रकारसे युक्त करना, एवं अर्हं ऐसा बन गया है। वह पद अग्निज्वाला के समान तेजपुंज है, मनके दोषों को धोनेवाला है, देदीप्यमान है, अतः मैं उस परमपवित्र अर्हं पदको हृदयरूपी कमलपर स्थापन कर निर्मल चित्त से उसको नमस्कार करता हूँ। क्योंकि यह अर्हं पर अर्हंत पदको प्रदान करनेवाला है ॥२॥

ओं नमोऽर्हद्‌भ्य ई शेभ्य ओं सिद्धेभ्यो नमो नमः ॥
ओं नमः सर्वसूरिभ्य उपाध्यायेभ्य ओं नमः॥३॥
ओं नमः सर्वसाधुभ्यः तत्वदृष्टिभ्य ओं नमः ॥
ओं नमः शुद्धबोधभ्यश्चारित्रेभ्यो नमो नमः ॥४॥

अर्हंतों को नमस्कार हो, सिद्धोंको नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो, सर्व साधुओं को नमस्कार हो इसी प्रकार सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यक्‌चारित्र को नमस्कार हो ॥ ३-४॥

श्रेयसेस्तु श्रियेस्त्वेत-दर्हदाद्यष्टकं शुभं ॥
स्थानेष्वष्टसु सन्यस्तं पृथग्बीजसमन्वितं ॥५॥

इन अरहंतादि आठ पदो को कल्याण स्वरूप बीजाक्षरों के साथ आठ दिशाओं मे स्थापन करें। वह सुखकारक है। और लक्ष्मीको प्रदान करनेवाला है।

जंबूवृक्षधरो द्वीपः क्षारोदधिसमावृतः ॥
अर्हदाद्यष्टकैरष्टकाष्ठाधिष्ठैरलंकृतः ॥११॥
तन्मध्ये संगतो मेरूः कूटलक्षैरलंकृतः॥
उच्चैरुच्चैस्तरस्तारतारामंडलमंडितः ॥ १२॥

इस मध्यम लोक मे जंबू वृक्षको धारण करनेवाला एक जंबूद्वीप है। वह चारो ओर से क्षारोदधि अर्थात् लवण समुद्र से बेष्टित है। जबकि जंबूद्वीप आठ दिशाओं के अधिपति अर्हंत आदि आठ पदो से शोभित है। उसके बीचो बीच मेरु नाम का पर्वत है। इसे सुमेरु पर्वत भी कहते हैं। वह अगणित कूटों से युक्त है। उसके चारों ओर एक के ऊपर एक से ज्योतिषचक्र का भ्रमण होने से अत्यन्त शोभा को प्राप्त हो रहा है । ११-१२॥

तस्योपरि सकारंतं बीजमध्यास्य सर्वगं ॥
नमामि बिंबमार्हत्यं ललाटस्थं निरंजनं॥ ३॥

ऐसे मेरु पर्वत के ऊपर ही बीजाक्षर स्थापित है। उस पर घातिया कर्मों से रहित अर्हत भगवान विराजमान हैं। घातिया कर्मो से रहित निरंजन अर्हंत भगवान को ललाट में स्थापतिकर नमस्कार पूर्वक ध्यान करे ।

वाङ्मय-वारिधि आचार्य विद्यानन्द

वि. सं. ८८५ से ९१७

सन् ८२८ से ८६०

दिगम्बर परम्परा के प्रभावी आचार्य विद्यानन्द विद्या के सागर थे। विविध विषयों मेंउनका ज्ञान अगाध था। वे उच्चकोटि के साहित्यकार,प्रामाणिक,व्याख्याता,अप्रतिहबाद,गंभीर, प्रकृष्ट सैद्धान्तिक्, उत्कृष्ट वैयाकरण, श्रेष्ठ कवि और जिनशासन के अनन्य भक्त थे। अपने युग के वे अद्वितीय विद्वान थे।

वाङ्मय-वारिधि आचार्य विद्यानन्द के जीवन से संबंधित परिचय उपलब्ध नहीं है। उनके माता-पिता, परिवार, कुल, जन्मभूमि, दीक्षा-गुरु, दीक्ष-स्थान और दीक्षकाल आदि के बारे में कुछ भी जानकारी उपलब्ध नहीं है।

कुछ विद्वानों ने शोध करने के पश्चात् उन्हे ब्राह्मण कुल में उत्पन्न बताया है। उनके मैसूर में जन्मे होने की प्रतीति उभय दर्शनो की पारमिता द्वारा होती है, जो जैन और ब्राह्मण दोनो संस्कृतियों का केन्द्र रहा है। आचार्य विद्यानंद की विशाल साहित्यनिधि को देखकर विद्वानों ने उनके अविवाहित रहने का अनुमान किया है। उनके मतानुसार अखंड ब्रह्मतेज के बिना इस प्रकार का साहित्य रचना संभव नहीं लगता . धवला, जयधवला टीका के निर्माता वीरसेन एवं जिनसेन आचार्य भी अखंड ब्रह्मचारी थे।

गहन साहित्य-साधना के साधक आचार्य विद्यानन्द ने नौ ग्रंथ लिखे। उनमे छह स्वतंत्र रचनाएँ और तीन टीका ग्रंथ है। उनकी कृतियाँ हैं- तत्वार्थ श्लोकवार्तिक, अष्टसहस्त्री, देवागमालंकार, युक्त्यनुशासनालंकार, विद्यानन्द महोदय, आप्त परीक्षा, प्रमाण परीक्षा. पत्र परीक्षा, सत्य शासन परीक्षा, श्रीपुर पार्श्वनाथ स्तोत्र।

तत्वार्थलोकवार्तिक

यह टीका आचार्य उमास्वाति के तत्वार्थ सूत्र पर है। इस ग्रंथ में १८००० श्लोक हैं। यह टीका आचार्य विद्यानन्द की परिमार्जित एवं प्रसन्न रचना है। इसमे उनका अगाध पांडित्य प्रतिबिम्बित है। इस कृति से उनके महान सैदन्तिक ज्ञान का परिचय मिलता है। इनकी शैली मेधावी कुमारिल भट्ट से मिलती तथा प्रतिस्पर्धा करती हुई प्रतीत होती है। इस ग्रंथ का नाम भी कुमारिल भट्ट के ' मीमांसक श्लोक वार्तिक ग्रंथ की प्रतिच्छाया है।

अष्ट सहस्त्री

यह रचना आचार्य समंतभद्र की आप्तमीमांसा पर है। अष्टशती के प्रत्येक पद्य की व्याख्या इस कृति मे हुई है। अष्ट सहस्त्री टीका आठ सहस्त्र श्लोक परिमाण है, यह तथ्य इसके नामकरण से स्पष्ट है। इसे पढ़ने पर तीनो ग्रंथो (आप्त मीमांसा, अष्टशती, अष्टसहस्त्री) का एक साथ स्वाध्याय हो जाता है। इस ग्रंथ की रचना द्वारा आचार्य विद्यानन्द ने आचार्य अकलंक भट्ट के गूढ़ ग्रंथ को समझने का सुगम मार्ग प्रशस्त किया है।

युक्त्यनुशासनालंकार

यह ग्रंथ आचार्य समंतभद्र स्वामी का स्तुति-प्रधान ग्रंथ है। इसके ६४ पद्य हैं। प्रत्येक पद्य अत्यंत गूढ है। आचार्य विद्यानन्द की 'युक्त्यनुशासनालंकार' की टीका की रचना इसी ग्रंथ पर हुई है। यह टीका युक्त्ययनुशासन जैसे दुरूह ग्रंथ में प्रवेश करने का पथ है।

विद्यानन्द महोदय

आचार्य विद्यानन्द की सर्वप्रथम रचना' विद्यानन्द महोदय' है जो अब अप्राप्य है। श्लोक-वार्तिक आदि टीकाओं में इस ग्रंथ का अनेक स्थानों पर उल्लेख है।

आप्त परीक्षा

इस ग्रंथ में १२४ कारिकाएं हैं। इसमें सर्वज्ञ के स्वरूप का विवेचन है। ईश्वर ,कपिल, बुद्ध और बह्म के स्वरूप का युक्तिपूर्ण निरसन भी है।

प्रमाण परीक्षा

यह प्रमाण विषयक कृति है। प्रत्यक्ष-परोक्ष आदि के भेद-प्रभेदों का वर्णन है। 'आप्त परीक्षा' के बाद इस कृति की रचना हुई है।

पत्र परीक्षा एवं सत्यशासन परीक्षा

'पत्र परीक्षा' आचार्य जी की लधु रचना है। यह रचना बहुत समय तक अप्राप्य रही, यह आचार्य विद्यानन्द की अंतिम रचना है।

श्री पुरपार्श्व स्तोत्र

इस ग्रंथ की रचना देवागम की शैली में हुई । अतः इन दोनों कृतियों के श्लोकों का परस्पर साम्य भी है।

आचार्य विद्यानन्द की सूक्ष्म प्रज्ञा समग्र भारतीय दर्शनो के उपवन में विहरण कर प्रौढ़ता प्राप्त कर चुकी थी। अतः उनकी कृतियों में विविध दर्शनों के अध्ययन का आनन्द एक ही समय पर सहज रूप से मिलता है।

आचार्य विद्यानन्द की गहरी रूचि , आचार्य समंतभद्र के देवागम , अकलंक की अष्टशती, आचार्य उमास्वाति के तत्त्वार्थ सूत्र में थी अतः इन तीनों पर ही उन्होने टीका साहित्य लिखा है।

आचार्य विद्यानन्द के ग्रंथों में गांभीर्य पाया जाता है। जिसका कारण परवर्ती जैन आचार्यों का उपलब्ध साहित्य रहा है। उन पर आचार्य उमास्वामि, सिद्धसेन, समंतभद्र स्वामी, पात्र स्वामी, भट्ट अकलंक देव और कुमार नन्दी भट्टारक आदि का प्रभाव दिखाई देता है।

वैदिक दर्शन की ही तरह बौद्ध दर्शन के गम्भीर पाठी आचार्य विद्यानन्द का कार्य क्षेत्र गंगवंश था। उन्होंने अपनी ग्रंथ रचना गंगनरेश शिवमार द्वितीय एवं राजमल्ल सत्यवाक्य प्रथम के समय में की थी।

शक संवत् १३२० के उत्कीर्ण एक शिलालेख मे नंदी संघ के साथ आचार्य विद्यानन्द का नाम है। इस आधार पर आचार्य विद्यानन्द का नंदी संघ मे दीक्षित होना संभव है।

विभिन्न शोधें के आधार पर आचार्य विद्यानन्द का समय ई.स.७७५ से ८४० तक निर्धारित हुआ है। इस आधार पर आचार्य विद्यानन्द वीर निर्वाण १३०२ से १३६७ (वि.स. ८३२ से ८८७) तक के विद्वान सिद्ध होते है ।

संवत १५१३ के मूर्तिलेख में उनका श्री देवेन्द्रकीर्ति दीक्षित आचार्य श्री विद्यानंदी के रूप में उल्लेख आया है । संवत १५३७ के मूर्तिलेख में देवेन्द्रकीर्ति पट्ट प्रतिष्ठीत विद्यान्छदी को बताया है इससे स्पष्ट है कि वे संवत १५१३ के पश्चात और संवत १५३७ के पूर्वे भट्टारक गद्दी पर आसीन हो चुके थे । श्री जोहरापुरकर ने विक्रम संवत १४९९-१५३७ तक उनका भट्टारककाल माना है ।

विद्यानंदीने पर्याप्त भ्रमण किया था । पट्टावली के अनुसार उन्हों ने सम्मेतशिखर, चंपापुरी, पावापुरी, उर्जयन्तगिरि आदि समस्त तीर्थक्षेत्रों की यात्रा की थी । इनका सन्मान राजाधिराज महामण्डलेश्वर वज्राङ्ग-गङ्ग -जयसिंह -व्याघ-नरेन्द्र आदि के द्वारा किया गया था इनके द्वारा प्रतिष्ठित करवाई गई मूर्तिओं में हूंमड जाति श्रावकोंके उल्लेख अधिक आये है । अन्य जाति और वर्ग सम्बन्धी निर्देषों में काष्ठा संघ, हूबंडवंश । सिंहपुराजाति, राइकवाल जाति , गोलशृंगार वंश , पल्लीवाल जाति एवं अग्रोतकान्वय (अग्रवाल) के नाम प्राप्त होते हैं ।

पट्टावलियों मूर्तलेखों एवं ग्रन्थप्रशस्तियों के आधार पर विद्यानंदि का समय विक्रम सं. १४९९-१५३८ तक माना जाता है । इस काल के भीतर उन्हों ने धर्म प्रचारक के लिए धर्मोपदेशके साथ मूर्ति एवं मन्दिरों की प्रतिष्ठा कराई ।

रचनाएँ

भट्टारक विद्यानंदि के द्वारा सुदर्शन चरितनामक चरितकाव्य की रचना गन्धार नगर या गन्धारपुरी मे की गयी है । इस गन्धारनगर का उल्लेख अन्य आचार्यों के ग्रन्थों में भी मिलता है सम्भवतः ह सूरत नगर का ही नामान्तर है । इस कृति की रचना वि. सं.१३५५ के लगभग सम्पन्न हुई है ।

इस ग्रन्थ में पुण्यपुरुष सुदर्शन का आख्यान वर्णित है । कथा वस्तु १२ अधिकारों में विभक्त है । प्रथम और द्वितीय अधिकार में तीर्थकर महावीर का विपुलाचल पर समवसरण प्रस्तुत होता है और उसमें गौतम गणधर उनसे धर्मविषयक प्रश्न पूछते है । स्तवनप्रकरण में गणधरों के नमस्कार के पश्चात् कुन्द कुंन्द उमास्वामी समन्तभद्र पात्रकेसरी अकलंक जिनसेन, रत्नकीर्ति , गुणभद्र, प्रभाचन्द्र, देवेन्द्रकीर्ति और आशाधर का संस्मरण किया है । श्रेणिक जिनेन्द्रकी पूजा स्तुति के अनन्तर गौतम गणधर से पच्चाम अन्त:कृत-तकेवली सुदर्शनमुनि के चरित वर्णन की प्रार्थना करते है । गौतम गणधर उस चारित का वर्णन करते है । विद्यानंदिने इस प्रकार तृतीय अधिकार में सुदर्शन के जन्म महोत्सव का वर्णन किया हैं । चतुर्थ अधिकार में सुदर्शन- मनोरमा विवाह पंचम में सुदर्शन की श्रेष्ठ पद प्राप्ति षष्ठ में कपिल का प्रलोभन तथा रानी अभयमती का व्यामोह , सप्त में अभयकृत उपसर्ग निवारण और शीलप्रभाव वर्णन अष्ट में सुदर्शन और मनोरमा के पूर्वभव नवम, में द्वादशानुप्रेक्षा दशममें सुदर्शन का दीक्षाग्रहण और तप, एकादश में केवलज्ञानोत्पति और द्वादश में सुदर्शनमुनि की मोक्षप्राप्ति का वर्णन आया है । समस्त ग्रंथ अनुष्टुप छंदों में

निर्मित है । सर्गान्त मे छंद परिर्वतन हुआ है । कवि ने प्रसंगवंश शुभाषितों का प्रयोग किया है । पुण्का माहत्म्य बतलाते हुए लिखा है

पुण्येन दूरतरवस्तुसमागमोऽस्ति
पुण्यं विना तदपि हस्ततलात्प्रयाति ।
तस्मात्सुनिर्मलधिय कुरुत प्रमोदात्
पुण्यं जिनेन्द्रकथितं शिवशर्मबीजम् ॥

इस प्रकार सुदर्शन चरित के द्वारा कवि ने पुराण धर्मशास्त्र और दर्शन का प्रणयन किया है । इस ग्रन्थ की कुल श्लोक संख्या १३६२ है ।

आचार्य शुभचन्द्र

वि. स.१०७९ - १०९४

मंजुभटनागर - 'महिमा'

शुभचन्द्र नाम के अनेक विद्वान हो गए है। 'ज्ञानार्णव' (ज्ञान का समुद्र) ग्रंथ के रचियता आचार्य शुभचन्द्र ने इस महत्वपूर्ण ग्रंथ को रचकर अपना कहीं कोई परिचय नहीं दिया और न ही ग्रंथ का रचनाकाल बताया । आपने अपनी कोई गुरुपरंपरा का भी उल्लेख नहीं किया। यह उनकी निराभिमानता का द्योतक है। इस अभिप्राय को उन्होंने व्यक्त करते हुए लिखा भी है-

'न कवित्वाभिमानेन न कीर्ति प्रसरेच्छया ।
कृतिः किंतु मदीये यं स्वबोधायैव केवलम् ॥ (ज्ञानर्णव)

इसे केवल शिष्टता न समझ कर उनकी आन्तारिक भावना ही समझना चाहिए। उन्हो ने इस ग्रंथ की रचना अपने ज्ञानबर्धन के लिए की थी। ग्रंथ के १६ वे प्रकरण के छठवे पद्य के बाद उक्तं च रूप से आचार्य अमृतचन्द्र के पुरुषार्थ सिद्धचुपाय का ११६ वाँ पद्य मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि शुभचन्द्र अमृतचन्द्र के बाद हुए थे और अमृतचन्द्र का समय दसवीं शताब्दी है अतः यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि आचार्य शुभचन्द्र का समय दसवीं शताब्दी के बाद का है।

ग्रंथ में समन्तभद्र,देवनंदी (पूज्यपाद) अकलंक देव और जिनसेनाचार्य का स्मरण किया हैं। जिनसेन की स्तुति करते हुए उनके वचनों को 'त्रैविध बन्दित' बतलाया है। शुभचन्द्र ने जिनसेन के बाद अन्य किसी विद्वान का स्मरण नहीं किया इससे अनुमान होता है कि जिनसेनाचार्य उनके आदर्श गुरु रहे होंगे ।

कवि शुभचन्द्र ने ग्रंथ रचना का प्रयोजन स्पष्ट करते हुए लिखा है कि 'संसार में जन्म ग्रहण करने से उत्पन्न हुए दुर्निवार क्लेशों के संताप से पीड़ित मै अपनी आत्मा को योगीश्वरों से सेवित ध्यानरूपी मार्ग में जोड़ता हूँ'। कवि ने अपना प्रयोजन संसार के दुखों को दूर करना बताया है-

'भव प्रम-दुर्वार क्लेशसन्ताप पीड़ितम् ।
योजयाम्यहमात्मांनड पथियोगीन्द्र सेविते ॥१८ (ज्ञानार्णव)

आचार्य शुभचन्द्र बहुश्रुत विद्वान एवं प्रतिभा सम्पन्न कवि भी रहे हैं। ग्रंथ की भाषा सरस, सरल, व सुबोध है। कविता मधुर व आकर्षक हैं। ग्रंथ में जो अनेक विषयों के साथ इतर सम्प्रदायों की भी चर्चा व समीक्षा की गई है, उसी से उनकी बहुश्रुतता का बोध होता है। उनके समय में जो योग विषयक साहित्य प्रचलित रहा है,। उनका उन्होंने गम्भीरता पूर्वक अध्यन किया है। तथा अपनी इस कृति में उन्होंने उसका समुचित उपयोग भी किया हैं । इसका उदाहरण प्राणायाम और पिण्डस्थ पदस्थ आदि ध्यानों का विस्तृत वर्णन है। ज्ञानार्णव में ४२ प्रकरण हैं, जिनमें १२ भावना, पंच महाव्रत और ध्यानादि का विस्तृत कथन है। आचार्य शुभचन्द्र के इस ग्रंथ पर पूज्यपाद के समाधि तंत्र और इष्टोपदेश का

प्रभाव है। ग्रंथ अपने विषय का सम्बन्द्ध और वस्तु तत्व का विवेचक है। यह स्वाध्याय प्रेमियों के लिए उपयोगी हैं। इस पर आचार्य अमृतचन्द्र के अमित गति प्रथम और तत्वानुशासन तथा जिनसेन के आदि पुराण का प्रभाव परिलक्षित है।

इस प्रकार हम देखते है कि आचार्य शुभचन्द्र प्रकाण्ड विद्वान, आगम के ज्ञाता, निस्वार्थ, निराभिमानी, सच्चे तपस्वी कवि थे, जिन्होंने 'ज्ञानार्णव'जैसा ग्रंथ प्रदान किया है तथा जैन धर्म को कृत-कृत किया है।

Table No. 7

क्रम	आचार्य नाम	विक्रम संवत्	ईस्वी सन्
६६	पद्मकीर्ति	१२४८-१२५३	११८९ - ११९६
६७	वर्धमान	१२५३ - १२५७	११९६ - १२००
६८	अकलंक	१२५७ - १२६१	१२०० - १२०४
६९	ललितकीर्ति	१२५७ - १२६१	१२०४ - १२०९
७०	केशवकीर्ति		
७१	चारुकीर्ति		
७२	अभयकीर्ति		
७३	वसंतकीर्ति	१२६१ - १२६६	१२०४ - १२०९

भट्टारक प्रथा के प्रवर्त्तक

भट्टारक संप्रदाय का उद्भव एवं योगदान

प्रस्तावना

जैन समाज के इतिहास में सामान्य तौर पर निर्वाण के बाद करीब ६०० वर्ष तक जैन समाज विकासशील था। अपने मौलिक सिद्धान्तों का विकास और प्रसार करने के लिए उस समय साधुजीवन व्यतीत करते थे। जनसाधारण से सम्पर्क कायम रहे इस उद्देश्य से वे परिव्रज्या-निरन्तर भ्रमण का अवलम्ब करते थे। मठ, मन्दिर या वाहन, आसनों की उन्हें कोई आवश्यकता नहीं थी। तपश्चर्या के उनके नियम भी भगवान महावीर के आदर्श से बहुत कुछ मिलते जुलते थे। श्वेताम्बर समप्रदाय के रूप में साधुओं में वस्त्रधारण की प्रथा यद्यपि उस समय भी थी तथापि भगवान के आदर्श जीवन को वे भुल नहीं सके थे।

ईस्वी सन् की दूसरी शताब्दी से जैन समाज व्यवस्था प्रिय होने लगी। व्यवस्थापन का यह युग भी करीब ६०० वर्ष चलता रहा। इस युग के आरम्भ में कुन्दकुन्द और धरसेन आचार्य ने विशाल जैन शास्त्रों को सूत्रबद्ध करने का आरम्भ किया। पाँचवीं सदी में श्वेताम्बर सम्प्रदाय ने भी अपने आगम शास्त्रबद्ध किये। अनुश्रुति से चली आई पुराण कथाएं इसी समय विमलसूरी, संघदास, कवि परमेश्वर आदि के द्वारा ग्रन्थबद्ध हुई। तत्वज्ञान के क्षेत्र में भी समन्तभद्र और सिद्वसेन के मौलिक विवेचन को अकलङ्क और हरिभद्र द्वारा इसी युग में सुव्यतस्थित सम्प्रदाय का रूप प्राप्त हुआ। पल्लव, कढम्ब गंग और राष्ट्रकूट राजाओं के आश्रय से इसी युग में मठ और मन्दिरों का निमार्ण वेग से हुआ तथा आचार्य परम्पराएं सार्वदेशीय रूप छोड़ कर स्थानिक रूप ग्रहण करने लगीं।

नौवीं शताब्दी से राजनैतिक स्थिरता समाप्त जैसी ही गई, अनेक जगह युगलों के आक्रमण होने लगे थे। वे हिन्दू और जैनों की मूर्तियों, मंदिरों को तोड़ने लगे। मुस्लिम शासकों का प्रभाव धीरे धीरे बढ़ने लगा। इन परिस्थितियों में विकास और व्यवस्था की प्रवृतियों पीछे रह गई।

प्राचीन कलाकृतियों, मंदिरों को संरक्षण देना अत्यंत आवश्यक हो गया था। इस समय किसी युग प्रवर्तक नेता के अभाव के कारण जैन समाज को अपनी संस्कृति टिकाए रखना अत्यंत कठिन हो गया। मुगलों के आक्रमण से सभी धार्मिक प्रवृतियों बंद सी हो गई।

इन परिस्थितियों में जिन मंदिरों संस्कृति, धर्म की रक्षा का सबसे बड़ा प्रश्न उपस्थित हुआ। धर्म और संस्कृति को बचाने के लिये मुगल बादशाह तथा उनके सूबेदारों को प्रभावित करके धर्म की रक्षा करना एक मात्र उपाय महसूस होने लगा।

विशेषकार राजस्थान और गुजरात,जहाँ हूमड़ समाज के सैकड़ों की संख्या में जिनालय थे । उनका रक्षण करना और भी आवश्यक हो गया। इसके फलस्वरूप मंत्रतंत्र से युगल अधिकारियों को प्रभावित करने के लिए भट्टारक सम्प्रदाय का उद्भव हुआ।

चार्ट नं. 2

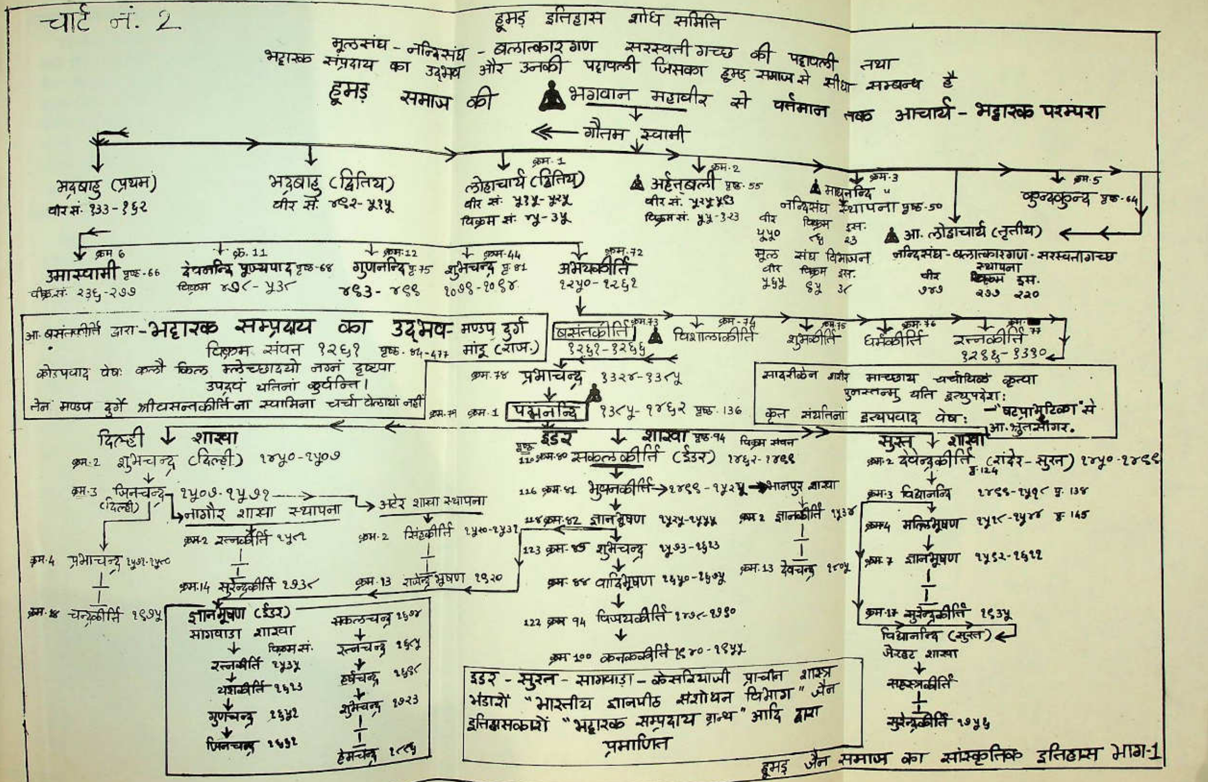

हूमड़ इतिहास शोध समिति
मूलसंघ - नन्दिसंघ - बलात्कारगण सरस्वती गच्छ की पट्टावली तथा
भट्टारक संप्रदाय का उद्भव और उनकी पट्टावली जिसका हूमड़ समाज से सीधा सम्बन्ध है
हूमड़ समाज की भगवान महावीर से वर्तमान तक आचार्य - भट्टारक परम्परा
गौतम स्वामी
भद्रबाहु (प्रथम) वीर सं. १३३ - १६२
भद्रबाहु (द्वितिय) वीर सं. ४९२ - ५१५
क्रम 1 लोहाचार्य (द्वितिय) वीर सं. ५१५ - ५६५ विक्रम सं. ४५ - ३५
क्रम 2 अर्हत्बली पृष्ठ 55 वीर सं. ५६५-५९३ विक्रम सं. ५५-३२३
क्रम 3 माघनन्दि नन्दिसंघ स्थापना पृष्ठ 50
क्रम 5 कुन्दकुन्द पृष्ठ 64
आ. लोहाचार्य (तृतीय)
वीर ५५० विक्रम ८४ ई.स. २३
मूल संघ विभाजन वीर ५६५ विक्रम ९५ ई.स. ३८
नन्दिसंघ - बलात्कारगण - सरस्वतीगच्छ स्थापना वीर ७४७ विक्रम २७७ ई.स. २२०
क्रम 6 उमास्वामी पृष्ठ 66 वीर सं. २३६-२७७
क्र. 11 देवनन्दि पूज्यपाद पृष्ठ 68 विक्रम ४७८-५३८
क्रम 12 गुणनन्दि पृ. 75 ४९३-४९९
क्रम 44 शुभचन्द्र पृ. 81 १०७४-१०९४
क्रम 72 अभयकीर्ति १२५०-१२६१
आ. बसंतकीर्ति द्वारा - भट्टारक सम्प्रदाय का उद्भव - मण्डप दुर्ग मांडू (राज.) विक्रम संवत १२६१ पृष्ठ 84-477
कोऽपवाद वेषः कलौ किल म्लेच्छादयो नग्नं दृष्ट्वा उपद्रवं यतिनां कुर्वन्ति।
तेन मण्डप दुर्गे श्रीवसन्तकीर्तिना स्वामिना चर्या वेलायां नही
क्रम 73 बसंतकीर्ति १२६१-१२६६
क्रम 74 विशालकीर्ति
क्रम 75 शुभकीर्ति
क्रम 76 धर्मकीर्ति
क्रम 77 रत्नकीर्ति १२९६-१३१०
क्रम 78 प्रभाचन्द्र १३२४-१३८५
क्रम 79 क्रम 1 पद्मनन्दि १३८५-१४६२ पृष्ठ 136
सादरीकेन शरीर माच्छाद्य चर्यादिकं कृत्वा पुनस्तन्मु यति इत्युपदेशः
कृत संयतिनां इत्यपवाद वेषः - "षटप्राभृटिका" से आ. श्रुतसागर.
दिल्ही शाखा
क्रम 2 शुभचन्द्र (दिल्ही) १४५०-१५०७
क्रम 3 जिनचन्द्र (दिल्ही) १५०७-१५७१
अटेर शाखा स्थापना
नागौर शाखा स्थापना
क्रम 2 रत्नकीर्ति १५८१
क्रम 2 सिंहकीर्ति १५८०-१५३१
क्रम 4 प्रभाचन्द्र १५७१-१५८०
क्रम 14 सुरेन्द्रकीर्ति १७३८
क्रम 13 राजेन्द्र भूषण १९२०
क्रम 18 चन्द्रकीर्ति १६७५
ईडर शाखा पृष्ठ 94 विक्रम संवत
पृष्ठ 110 क्रम 80 सकलकीर्ति (ईडर) १४६२-१४९९
126 क्रम 81 भुवनकीर्ति १४९९-१५२५ भानपुर शाखा
118 क्रम 82 ज्ञानभूषण १५२५-१५५५
क्रम 2 ज्ञानकीर्ति १५३४
123 क्रम 85 शुभचन्द्र १५७३-१६१३
क्रम 88 वादिभूषण १६५०-१६७५
क्रम 13 देवचन्द्र १८०५
122 क्रम 94 विजयकीर्ति १७७८-१७१०
क्रम 100 कनककीर्ति १९४०-१९५५
ज्ञानभूषण (ईडर) सागवाड़ा शाखा विक्रम सं.
रत्नकीर्ति १५३५
यशकीर्ति १६१३
गुणचन्द्र १६५२
जिनचन्द्र १६९२
सकलचन्द्र १६७४
रत्नचन्द्र १६९५
हर्षचन्द्र १७४८
शुभचन्द्र १८२३
हेमचन्द्र १८८५
सूरत शाखा
क्रम 2 देवेन्द्रकीर्ति पृ. 124 (रांदेर - सूरत) १४५०-१४९९
क्रम 3 विद्यानन्दि १४९९-१५१८ पृ. 138
क्रम 4 मल्लिभूषण १५१८-१५४४ पृ. 145
क्रम 7 ज्ञानभूषण १५६२-१६२२
क्रम 17 सुरेन्द्रकीर्ति १९३५
विद्यानन्दि (सूरत)
जेरहट शाखा
सहस्त्रकीर्ति
सुरेन्द्रकीर्ति १९५६
ईडर - सूरत - सागवाड़ा - केसरियाजी प्राचीन शास्त्र भंडारों "भारतीय ज्ञानपीठ संशोधन विभाग" जैन इतिहासकारों "भट्टारक सम्प्रदाय ग्रन्थ" आदि द्वारा प्रमाणित

भट्टारकों और यतिओं का समान आचरण

यह कहना मुश्किल है कि किसी समय सबके सब साधु आगमोंपदिष्ट आचारों के पालन करते होंगे। परन्तु ज्यों ज्यों समय बीतता गया साधुओं की संख्या बढ़ती गई और भिन्न भिन्न विचारवाले साधु विभिन्न देशों में फैलते गये। धनिक और राजाओं द्वारा पूजा प्रतिष्ठा मिलने लगी और श्रावकों में भक्ति और दोषों उपेक्षा बढती गई त्यों त्यों शिथिलता आती गई। दिगम्बर चर्या इतनी उग्र और कठोर इससे नग्न साधुओं की संख्या कम रही है। विक्रम की नवीं शताब्दी के बाद लेखों से लगता है कि बड़े- बड़े मुनियों के अधिकार में भी गाँव बगीचे थे। वे जिर्णोद्धार करवाते थे। इस प्रकार के सैकडों दान पत्र श्रवणबेलगोल तथा अन्य जगह उपलब्ध है।

परम्परा भेद और विशिष्ट आचरण

साधुसंघ की साधारण स्थिति से यह परम्परा पृथक हुई। इसका पहला कारण वस्त्रधारण था। यह पद्धति बहुत पहले विवाद का कारण बन चुकी थी। भगवान पार्श्वनाथ की परंपरा के आचार्य केशी कुमारश्रमण ने गणधर इन्द्रभूति गौतम से इस पद्धति के विषय में प्रश्न किया था। इसके परिणाम स्वरूप यह विवाद शान्त हुआ। किन्तु वस्त्रधारी साधुओं का अस्तित्व बना रहा। आगे चलकर आर्य महागिरि और शिवभूति के समय फिर यह विवाद जागृत होता गया। अन्त में आचार्य कुन्दकुन्द के नेतृत्व में संघने दिगम्बरत्व का सम्पूर्ण समर्थन किया तब हमेंशा के लिए श्वेताम्बर और दिगम्बर भेद दृढ हो गये। इसके बावजूद भी दिगम्बर सम्प्रदाय में फिर वस्त्राधारण की प्रथा शुरू हुई। इसे मुस्लिम राज्य कालमें और अधिक बल मिला और आखिर वह भट्टारकों के लिए अपवाद मार्ग के रूपमें मान्य कर ली गई। व्यवहार में यद्यपि वस्त्रका उपयोग भट्टारकों के लिये समर्थनीय ठहरा दिया गया तथापि तत्वकी द्रष्टिसे नग्नता ही पूज्य मानी जाती रही। भट्टारक पद प्राप्ति के समय कुछ क्षणों के लिए क्यों न हो, नग्न अवस्था धारण करना आवश्यक रहा। कुछ भट्टारक मृत्यु समीप आने पर नग्न अवस्था लेकर सल्लेखना का स्वीकार करते रहे। नग्नता के इस आदर के कारण ही भट्टारक परम्परा श्वेताम्बर सम्प्रदाय से पृथकता घोषित करती रही।

भट्टारक परम्परा का दूसरा विशिष्ट आचरण मठ और मन्दिरों का निवास स्थान के रूप में निर्माण और उपयोग था। इसी के अनुषंग से भूमिदान का स्वीकार करने और खेती आदि की व्यवस्था भी भट्टारक देखने लगे थे। संवत् ५२६ में वज्रनन्दने द्राविड संघकी स्थापना की उस के ये ही मुख्य कारण थे ऐसा देवसेन ने कहा है। शक सं. ६२४ में रविकीर्ति ने ऐहोळ ग्राम में जो मन्दिर बनवाया वह इस पद्धति का पर्याप्त पुराना उदाहरण है, यद्यपि भूमि स्वीकारके उल्लेख इससे भी पहले के मिले हैं।

इन दो ग्रन्थों के कारण भट्टारकों का स्वरूप साधुत्व से अधिक शासकत्व की और झुका और अन्तमें यह प्रकट रूप से स्वीकार भी किया गया। वे अपने को राजगुरु कहलाते थे और राजा के समान ही पालकी, छत्र, चामर, गादी आदि का उपयोग करते थे। वस्त्रों में भी राजा के योग्य जरी आदिसे सुशोभित वस्त्र रूढ हुए थे। कमण्डलु और पीच्छा

में सोने चांदी का उपयोग होने लगा था। यात्रा के समय राजा के समान ही सेवक सेविकाओं और गाडी-घोड़ा का इन्तजाम रखा जाता था , तथा अपने - अपने अधिकारक्षेत्र का रक्षण भी उसी आग्रहसे किया जाता था । इसी कारण भट्टारकों का पट्टाभिषेक भी राज्याभिषेक की तरह बड़ी धूमधाम से होता था । इसके लिए पर्याप्त धन खर्च किया जाता था । जो भक्त श्रावकों में से कोई एक करता था । इस राजवैभव की आकांक्षा ही भट्टारक पीठों की वृद्धिका एक प्रमुख कारण रही, यद्यपि उनमें तत्व की दृष्टिसे कोई मतभेद होने का प्रसंग ही नहीं आया ।

स्थल और काल

साधुत्वके नाते भट्टारकों का आवागमन भारत के प्रायः सभी भागों में होता था । दक्षिण में मूलबद्री , श्रवणबेलगोल, कारकल, हुंबच इन स्थानों पर देशी. गण आदि शाखाओं के पीठ स्थापित हुए थे । प्रस्तुत ग्रन्थ में वर्णित भट्टारक भी यात्रा के लिये श्रवणबेलगोलतक आते-जाते थे यद्यपि इस प्रदेश के उन से कोई स्थायी सम्बन्ध नहीं थे । इस से दक्षिण में तामिलनाडु और केरल ये दो प्राचीन समय जैन धर्मके प्रभाव क्षेत्रमें रहे थे किन्तु भट्टारकों. का कोई सम्बन्ध उनसे नहीं था ।

पूर्व भारत में सम्मेतशिखर चम्पापुर, पावापुर, और प्रयाग की यात्रा के लिए बिहार होता था। वैसे इस प्रदेश में न तो कोई भट्टारक पीठ था, न उनका शिष्य-वर्ग था ।

गुजरात में सूरत बलात्कारगण का और सोजित्रा नन्दीतट गच्छ का केन्द्र था । समुद्रतटवर्ती इलाकों में नवसारी भड़ौच, खंभात जाबूसंर , घोघा आदि स्थानों में भट्टारकों का अच्छा प्रभाव था । उत्तर गुजरात में ईडर का पीठ महत्व पूर्ण था । सौराष्ट्र में गिरनार और शत्रुंजय की यात्रा के लिए भट्टारकों का आगमन होता था किन्तु वहां कोई स्थायी पीठ स्थापित नहीं हुआ।

मालवा में धारा नगरी प्राचीन समय में जैन धर्म का केन्द्र था । उत्तरवर्ती काल में इसी प्रदेश में सागवाड़ा और अटेर के पीठ स्थापित हुए । महुआ , डूंगरपुर, इन्दौर आदि स्थान इन्ही पीठों के प्रभाव में थे । इसी के कारण उत्तर में ग्वालियर और सोनागिरि में माथुर गच्छ और बलात्कारगण के केन्द्र थे । देवगढ़ ललितपुर आदि स्थानों में इनका प्रभाव था ।

राजस्थान में नागौर, जयपुर, अजमेर चित्तौड, भानपुर और जेरहट में बलात्कारगण के केन्द्र थे । हिसार में माथुर गच्छ का प्रधान पीठ था।

५. कार्यः मूर्ति प्रतिष्ठा

मूल ग्रन्थ का सरसरी तौर पर अवलोकन करने से भी स्पष्ट होता है कि भट्टारकों के जीवन का सबसे अधिक विस्तृत कार्य मूर्ति और मन्दिरों की प्रतिष्ठा, यही था । इस पूरे युग में मूर्ति प्रतिष्ठा का यह कार्य बड़े पैमाने पर हुआ । इस का यह कारण यह है कि प्रतिष्ठा उत्सव को धार्मिक से अधिक सामाजिक रूप प्राप्त हुआ था । जिस प्रतिष्ठा का निर्देश इस ग्रन्थ के दो पंक्तियों के मूर्तिलेख में हुआ है उसके लिए भी कम से कम हजार व्यक्तियों को इकट्ठे होने का मौका मिला था । प्रतिष्ठा कर्ता को समाज का नेतृत्व अनायास ही प्राप्त होता था और उसी प्रतिष्ठा में यदि गजरथ भी हो तब संघपति का पद भी उसे

विधिवत दिया जाता था । सामाजिक मान्यता की इस अभिलाषा के साथ ही मुस्लिम शासकों का मूर्ति भंजकता की प्रतिक्रिया के रूप से भी जैन समाज में मूर्ति प्रतिष्ठा को सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान मिला ।

इस युग में प्रतिष्ठित की गई मूर्तियां साधारणतः पाषाण और धातुओ की थीं । धातु मूर्तियों का प्रमाण कुछ बढ़ता गया हैं । तीर्थकर ,नन्दीश्वर ,पंचमेरु, सहस्त्रकूट, सरस्वती पद्मावती आदि यक्षिणि क्षेत्रपाल, औग गुरु ये मूर्तियों के प्रमुख प्रकार थे । तीर्थकरों की मूर्तियाँ पद्मासन और कायोत्सर्ग इन दो मुद्राओं मिलती थी । इनमें पार्श्वनाथ की मूर्तियाँ सर्वाधिक संख्या में और विविध रूपों में पाई जाती हैं । नागफण के उपर नीचे आगे या बाजू में होने से पार्श्वनाथ की मूर्तियों में यह विविधता पाई जाती है । शांतिनाथ कुंन्थुनाथ, और अरनाथ इन तीन तीर्थकरो की संयुक्त मूर्तिको रत्नत्रय मूर्ति कहा जाता है । किसी एक तीर्थंकर की मूख्य मूर्ति के ऊपर और दोनों ओर अन्य २३ तीर्थकरों की छोटी मूर्तियाँ हों तो उसे २४ मूर्ति कहा जाता है । इसी प्रकार अनंतनाथ तक के चौदह तीर्थकरो की सयुंक्त मूर्तियों भी पाई जाती है । और इसका खास उपयोग अन्नत चतुर्दशी पूजामें किया जाता है । सामान्य तौर पर इस युग की तीर्थकर मूर्तियाँ सादी होती थी । मूर्ति के साथ ही भा मंडल, छत्र, सिहासंन आदि भी उकरने की पहली पद्धति इस युग के प्रायः लुप्त हो गई । मूर्तियों का विस्तार दो इंच से २० फुट तक विभिन्न प्रकार का रहा है फिर भी अधिकांश मूर्तियाँ एक फूट उचाँई की है । मूर्तियों का निर्माण मुख्य तौर पर राजस्थान में होता था ।

यंत्रों की प्रतिष्ठा यह इस काल की विशेष निर्मिति है । दश लक्षण धर्म रत्नत्रय, षोडसकारण भावना, द्वादशांग आगम, नवग्रह , ऋषि मंडळ, और सकलीकरण के यंत्र ये इनके विविध प्रकार थे. सभी धर्म तत्व का मूर्त रूप में बांधने की प्रवृति ही इस यंत्र प्रतिष्ठाका मूलभूत कारण है ।

पहले तीर्थकरों के साथ अनुचरों के रूप में यक्ष आदि देवताओं की मूर्तियाँ का निर्माण होता था । इस युग में उनकी स्वतंत्र मूर्तियाँ बनने लगी यक्षों में धरणेन्ध और क्षेत्रपाल प्रमुख हैं . यक्षिणियों में चक्रेश्वरी ज्वालमालीनी, कूष्माडिनी , अंबिका और पद्मावती यह प्रमुख है ।

संख्या की दृष्टि से दिल्ली शाखा के भ. जिनचन्द्र द्वारा प्रतिष्ठित मूर्तियाँ सबसे अधिक है। प्रतिष्ठा कर्ता सेठ जीवराज पापडीवाल के प्रयत्नों से यह हजारों मूर्तियाँ भारत के कोने कोने में पंहुची हैं । इन की प्रतिष्ठा सवंत् १४४८ की अक्षय तृतीया को हुई थी । विशालता की दृष्टि से ग्वालियर और चंदेरी की मूर्तियाँ उल्लेख योग्य है, कारंजा के उपन्यास भ. देवन्द्रकीर्तिने भी रामटेक नागपुर आदि स्थानों में विशालमूर्तियाँ स्थापित की है ।

मूर्तियों के पाद पीठ के लेख बहुधा टूटी फूटी संस्कृत में लिखे जाते थे । क्वचित हिन्दी, मराठी आदि लोक भाषाओं का उपयोग हुआ है । उनका विस्तार मूर्ति के विस्तार के अनुरूप होता था । सर्वाधिक विस्तृत लेख में समय प्रतिष्ठा कर्ता सेठ श्री वंश परम्परा प्रतिष्ठा संचालक भट्टारक की गरू परम्परा स्थान, स्थानीय और प्रादेशिक शाशक तथा एकाध मंगल राज्य इनका निर्देष होता था।

कार्यः ग्रन्थ लेखन और संरक्षण

भट्टारक युग का ग्रन्थ लेखन मुख्य रूप से पुराण कथा और पूजा पाठ इन तीन प्रकारकी रचनाएँ संख्या की दृष्टिसे सर्वाधिक है .कर्मशास्त्र आध्यात्म आदि गम्भीर विषयों के ग्रन्थों पर टीकाओं का भी कार्य पर्याप्त मात्रा में हुआ ।

भट्टारक संप्रदाय का प्रदान

पुराण और कथाएं साधारणतः जिनसेन कृत हरिवंशपुराण , रविषेण कृत पद्मपुराण तथा जिनसेन कृत महापुराण के आधार पर लुखी गई । संस्कृत में ईडर शाखा के भ. सकलकीर्ति और भ. शुभचन्द्र के विभिन्न पुराण ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं । राजस्थानी में ब्रह्म जिनदास के रास ग्रन्थ बहुत सुन्दर हैं । गुजराती में सूरत शाखा के भ.वादिचन्द्र जयसागर और नन्दीतट गच्छ के धनसागर तथा भ.चंद्रकीर्ति की रचनाएं उल्लेखनीय हैं ।

पूजा पाठों में अष्टक ,स्त्रोत जयमाला आरती उद्यापन ये मुख्य प्रकार थे । जिन मूर्तियों और यंत्रो की प्रतिष्ठा भट्टारकों द्वारा हुई उन सब के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए ये पूजा पाठ नितान्त आवश्यक थे । पूजनीय व्यक्ति या तत्व की अपेक्षा पूजा के द्रव्य का अधिक वर्णन करना इस युग के पूजापाठो की विशेषता कही जा सकती है । इन की दूसरी विशेषता इन की गेयता है । छोटे बड़े विविध मात्राओं के छंदों में रची होने से बहुधा सामान्य आशय की पूजा भी बहुत आकर्षक मालूम पडती थी । गुजराती और राजस्थानी के पुराण ग्रन्थों में और खासकर रास ग्रन्थों में भी यह गेयता मौजूद है जिससे उनकी लोक प्रियता बढ़ी है ।

इन प्रमुख विभागों के बाद न्यायशास्त्र में भ. धर्मभूषण कृत न्यायदीपिका और भ. शुभचन्द्र कृत संशयि वदनविदारण उल्लेखनीय हैं । आचारधर्म पर षट्कर्मोपदेश , धर्म सग्रंह और त्रैवर्णिकाचार ये ग्रन्थ इस युग के प्रतिनिधिक कहे जा सकते हैं । सकलकीर्ति के मूलाचारप्रदीप में मुनि धर्म का वर्णन हुआ है । कर्मशास्त्र पर ज्ञानभूषण और सूमतिकीर्ति की कर्म काण्ड टीका एक मात्र उल्लेख योग्य ग्रन्थ है । प्राकृत का एक व्याकरण भ. शुभचन्द्र ने और दूसरा एक श्रुतसागरसूरि ने लिखा है । गणित ज्योतिष में भ. ज्ञानभूषण के कार्य का उल्लेख मिलता है किन्तु उन के कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होते । इनके अतिरिक्त कैलास, समवसरण आदि अनेक स्फुट विषयों पर छोटी छोटी कविताओं की रचना की गई है ।

प्राचीन ग्रन्थों के हस्तलिखितों की रक्षा यह भट्टारकों के कार्य का सब से श्रेष्ठ अंग है। व्रतों के उद्यापन आदि के अवसर पर नियमित रूप से एकाध प्राचीन ग्रन्थ की नई प्रति लिखा कर किसी मुनि या आर्यिका को दान दी जाती थी। गणितसार संग्रह जैसे पाद्य पुस्तको की कई प्रतियां शिष्यों के लिए तैयार की जाती थीं । पुराने हस्तलिखित खरीद कर उन का संग्रह किया जाता था । पुराने संग्रहों को समय समय पर ठीक किया जाता था । ग्रन्थों की भाषा कठिन हो तो उनके समासो में टिप्पणी लगा कर पढ़ने के लिए साहाय्य किया जाता था । हस्त लिखितों की अन्तिम प्रशस्तियों का ऐतिहाषिक महत्व सर्व मान्य है । इस ग्रन्थमें सम्मलित समयसार पंचास्तिकाय की प्रतियों की प्रशस्तियां नमूने के तौर पर देखी जा सकती हैं । गणितसार संग्रह की प्रतियाँ भी प्रातिनिधिक हैं ।

७. कार्यः शिष्य परम्परा

जैन समाज में विद्याध्ययन की व्यवस्था कुल परम्परा पर आधारित नहीं थी। शायद इसी लिए वह ब्राह्मण परम्परा जितनी सुदृढ नहीं रह सकी। यह कमी दूर करने के लिए हमेंशा शिष्य परम्पराओं के विस्तार का प्रयत्न जैन साधुओं द्वारा किया गया। भट्टारक सम्प्रदाय भी इस प्रवृत्ति को निभाता रहा। ग्रन्थ के मूल पाठ से स्पष्ट होगा कि इस कार्यमें भट्टारकोंने काफी सफलता प्राप्त की। ब्रह्म जिनदास, श्रुतसागरसूरि, पण्डित राजमल आदि भट्टारक शिष्यों के नाम उन के गुरुओं से भी अधिक स्मरणीय हुए है।

व्यक्तिगत महात्वकांक्षा के फल स्वरूप जिस प्रकार भट्टारक पीठों की वृद्धि हुई उसी प्रकार शिष्य परम्पराओं भी पृथक् अस्तित्व रह सका। अनेक बार देखा गया है कि भट्टारकों के जो शिष्य पट्टाभिषिक्त नहीं हुए थे उनकी स्वतन्त्र शिष्य परम्पराएँ छह सात पीढियों तक चलती रही। गणितसार संग्रह और शब्दार्थ चन्द्रिका की प्रशस्तियों में इस के अच्छे उदाहरण मिलते हैं।

विभिन्न भट्टारक पीठों में सौहार्द की रक्षा करने में भी शिष्यपरम्परा का महत्वपूर्ण उपयोग हुआ। दक्षिण में पण्डितदेव और नागचन्द्र जैसे विद्वानों का उत्तर के जिनचन्द्र और ज्ञानभूषण जैसे भट्टारकों से सहकार्य हुआ यह इसी का उदाहरण है। ब्रह्म शान्तिदास के सूरत और ईडर इन दोनों पीठों से अच्छे सम्बन्ध थे। इसी प्रकार पण्डित राजमल्ल भी माथुर गच्छ की दो भिन्न शाखाओं से एक ही समय संलग्न रह सके थे। कारंजा के लाड वागड गच्छ के करिपामों जैसे शिष्यों ने नन्दीतट गच्छ के भट्टारकों से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया था। इस दृष्टि से परस्पर सम्बन्ध और अन्य संप्रदायों से इन दो विभागों में आगे और विचार किया गया है।

८. कार्यः जाति संघटना

साधुपद पर प्रतिष्ठित होने के नाते भट्टारक जातिभेद से ऊपर होते थे। फिरभी विरुदावलियों में उनकी जाति का अनेक बार उल्लेख हुआ है। जाति संस्था के व्यापक प्रभाव का ही यह परिणाम है। इसी प्रकार यद्यपि भट्टारकों के शिष्यवर्ग में सम्मलित होने के लिए किसी विशिष्ट जाति का होना आवश्यक नहीं था। तथापि बहुतायत से एक भट्टारक पीठ के साथ किसी एक ही विशिष्ट जातिका सम्बन्ध रहता था। बलात्कारगण की सूरत शाखा तथा ईडर से हूमड जाति, अटेर शाखा से बमेचू जाति, जेरहट शाखा से परवार जाति तथा दिल्ली जयपुर शाखा से खंडेलवाल जाति का विशेष सम्बन्ध पाया जाता है। इसी प्रकार काष्ठा संघ के माथुर गच्छ के अधिकांश अनुयायी अग्रवाल जाति के नन्दीतट गच्छ के अनुयायी हूमड जाति के और लाड वागड गच्छ के अनुयायी बघेरवाल जाति के थे।

कार्यः तीर्थयात्रा और व्यवस्था

तीर्थक्षेत्रों की यात्रा और व्यवस्था ये मध्ययुगके जैन समाज के धार्मिक जीवन के प्रमुख अंग थे। तीर्थक्षेत्रों के दो प्रकार किये जाते हैं। जहां किसी तीर्थंकर या मुनि को निर्वाण प्राप्त हुआ हो उसे सिद्ध क्षेत्र कहते हैं। जहां किसी व्यक्ति, मूर्ति, या चमत्कार के कारण क्षेत्र स्थापित हुआ हो उसे अतिशय क्षेत्र कहते हैं। सिद्धक्षेत्रों में पश्चिम में गिरनार,

शत्रुंजय विशेष प्रसिद्ध थे। दक्षिण में गजपंथा और मांगी तुंगी प्रसिद्ध थे। पूर्वमें सम्मेतशिखर, चम्पापुरी, और पावापुरी ये सर्वमान्य सिद्धक्षेत्र थे। मध्य भारतमें सोनागिरी और चूलगिरि (बडवानी) का कुछ महत्व था। अतिशयक्षेत्रों में सुदूर दक्षिण में श्रवलबेलगोल की गोमटेश्वकी महामूर्ति अधिक प्रसिद्ध थी। राजस्थान में धूलिया के केशरियाजी, की कीर्ति सर्वाधिक थी। हैद्राबाद राज्य के माणिक्यस्वामी भी काफी लोकप्रिय थे।

कारजां के सेनगण के पट्टाधीशों में भ. जिनसेन और नरेन्द्रसेन ने लम्बी यात्रा की। वही के बलात्कारगण के पट्टाधीश देवेन्द्रकीर्ति तृतीय ने पश्चिम क्षेत्रों की छह यात्राएं कीं। ईडर शाखा के (प्रथम) और भ. पद्मनन्दि की शुत्रुजंय यात्राओं स्मरणीय रही। मानपुर शाखा के भ. रत्नकीर्ति के शिष्योंने दक्षिण की यात्र की। सूरत शाखा के भ. विद्यानन्दि, उनके शिष्य श्रुतसागरसूरि और भ. इन्द्रभूषण ने विस्तृत यात्राओं का नेतृत्व किया।

१० कार्यः चमत्कार

मन्त्र तन्त्रों की साधना द्वारा देवी या देव को प्रसंन्न कर लेना भट्टारकों का विशेष कार्य माना जाता था। इस दृष्टि से मुक्त होने के कारण और श्रावकों से कम सम्बन्ध होने के कारण मुनियों को मन्त्र साधना करने का निषेध था। भट्टारको का स्थान समाज के शासक के रुपमें होने से उन के लिए मन्त्र साधना इष्ट ही समझी जाती थी। सूरत शाखा के भ. मल्लिभूषण ने पद्मावती देवी की आराधना की थी तथा लाड वागड गच्छ के भ. महेन्द्रसेन ने क्षेत्रपाल, को सम्बोधित किया था। ऐसे उल्लेख प्राप्त हुए हैं।

मन्त्र साधना के द्वारा भट्टारकों ने जो चमत्कार किये उनके कुछ उल्लेख प्राप्त हुए है। इनमें पालकी का आकाश गमन मुख्य है। भ.सोमकीर्तिने पावागढ में और भ. मलयकीर्ति ने आंतरी में वह चमत्कार किया था। सूरत के अन्तिम भट्टारकों के विषय में भी ऐसी अनुश्रुति प्राप्त हुई है। सरस्वती की पाषाण मूर्ति के द्वारा दिगम्बर सम्प्रदाय का प्राचीनत्व सिद्ध किया गया यह भी चमत्कारों का अच्छा उदाहरण है। यह चमत्कार आचार्य कुन्द कुन्द द्वारा किया गया।

११. कार्यः कलाकौशल्य का संरक्षण

मध्ययुगीन समाज के जीवन में धर्म को जो महत्वपूर्ण स्थान था उसके कारण अन्यान्य अनेक क्षेत्रों का धर्म से सम्बन्ध स्थापित हो गया था। धर्म के नेता के नाते भट्टारकों ने विविध कलाओं को विविध समय-समय पर प्रोत्साहन दिया यह इसका उदाहरण हैं। संगीत, शिल्प, चित्र, नृत्य आदि कलाओं के विषय में इस ग्रन्थ में अनेक उल्लेख प्राप्त हुए हैं।

पूजा प्रतिष्ठा भट्टारकों का प्रमुख कार्य था और इसमें संगीत का महत्वपूर्ण स्थान था। इस युग के पूजा पाठों में गेयता विशेष रुपसे है इसका निर्देश पहले किया जा चुका है। प्रतिष्ठा उत्सव के समय अक्सर दूर दूर से भजन या कीर्तन के लिए गायक बुलाए जाते थे। इसके अलावा अन्य समय भी हफ्ते में एक बार मन्दिरों में सामुदायिक भजन करने की प्रथा थी। भजनों के लिए भट्टारकों द्वारा रचे गए कई पद उपलब्ध होते हैं।

मूर्ति यन्त्र और मन्दिरों की निर्मिति से भट्टारकों द्वारा शिल्पकला के संरक्षण में महत्त्वपूर्ण योगदान मिला है। कई स्थानों पर मन्दिरों में पाषाण या लकडी से स्तम्भों या छतों पर जिनेन्द्र जन्माभिषेक, सम्मेतशिखर आदि तीर्थक्षेत्र और अन्योंन्य कथाओं की प्रतिकृतियां प्राप्त होती हैं। सूरत के गोपीपुरा मन्दिर की एक मेरु मूर्ति पर चार भट्टारकों की मूर्तियाँ निर्मित हैं। जिन्तूरके निकट नेमागिरी पर नेमिनाथ की विशाल मूर्ति के पाद पीठ पर उस क्षेत्र के संस्थापक वीर सघपति और उनके कुटुंबियों की सुदंर मूर्तियाँ उत्कीर्ण है। इसी प्रकार अनेक स्थानों पर मन्दिरों के सामने विशाल मानस्तम्भों का निर्माण हुआ है। जिन पर समवसरणादि विविध दृश्य अंकित मिलते है। भट्टारकों के समाधि स्थान पर निर्माण किये गए स्मारक भी कई स्थानों पर दर्शनीय है।

हस्तलिखितों की प्रतियाँ कराते वक्त कई भट्टारकों ने अपने चित्र कला प्रेम का परिचय दिया है। जिनसागर विरचित सुगन्धदशमी कथा की एक प्रति ७३ चित्रों से विभूषित है जो नागुपर के सेनगण मन्दिर में उपलब्ध हुई है। अंजनगाव के बलात्कार गण मन्दिर में चौवीस तीर्थंकरों के शास्त्रोक्त आसन, यक्ष, यक्षिणियाँ, वर्ण आदि से युक्त सुन्दर चित्र प्राप्त हुए हैं। नागपुर के त्रैलोक्य दीपक नामक हस्तलिखित में बडे प्रमाण पर मान चित्रों का अंकन हुआ है। सुन्दर प्रतियों का लेखन सुर्वणक्षरों द्वारा हुआ है। पूजा के लिए जो मण्डल बनाये जाते थे उनमें भी कई बार चित्रकला के अच्छे नमूने प्राप्त होते हैं।

इन सब कलाओं के केन्द्रित होने के कारण ही मध्ययुग में मन्दिरों को समाज जीवन के केन्द्रों का स्थान मिल सका। इससे इन कलाओं का अस्तित्व बना रहा और साथ ही उनमें गम्भीरता और पवित्रता की भावना भी दृढ हो सकी। इसीलिए बाल और वृद्ध, स्त्री पुरुष, सभी प्रकार के व्यक्ति मन्दिरों की ओर आकर्षित हो सके। जैन समाज का अन्य समाजो से सौह्यार्द स्थापित करने में भी इन कलाओं का विषेश महत्व रहा।

१२ अन्य सम्प्रदायों से सम्बन्ध

सत्रहवी शताब्दी में राजस्थान के आसपास जैन सम्प्रदाय में शुद्धीकरणवादी तेरापंथ की स्थापना हुई। नाटक समयसार आदि के कर्ता पण्डित बनारसीदास इस सम्प्रदाय के नेता थे। पूजा पद्धति से सादी करना, मूल अध्यात्मशास्त्रों का अध्ययन और अध्यापन बढाना तथा शास्त्रोक्त आचरण न करनेवाले भट्टारकों को पूज्य नहीं मानना ये इस सम्प्रदाय के प्रमुख लक्षण थे। भट्टारक सम्प्रदाय में शासनदेवताओं की पूजा को एक प्रमुख स्थान मिला था। उसे भी तेरापंथ ने नष्ट करना चाहा। स्वभावतः भट्टारकों द्वारा ईस पंथ का विरोध किया गया।

दक्षिण में स्वर्णबेलगोल में, कारपल, हूंबच और मूळबद्री, इस स्थानों पर देशीय गण आदि परम्पराओं के भट्टारक पीठ थे। ये दिगम्बर सम्प्रदाय के ही होनेसे इनके सम्बन्ध उत्तरीय भट्टारकों से प्रायः अच्छे रहते थे। पण्डित देव नागचन्द्र सूरी, श्रुतमुनी आदि दाक्षिणात्य विद्वान भ. जीनचन्द्र, ज्ञानभूषण श्रूतसागरसूरि से सम्बन्ध स्थापित करते थे। कारंजा के भ. धर्म चन्द्र श्रवणबेलगोल पहुंचे तब भ. चारुकीर्ति से उनकी मुलाकात हुई थी। नन्दितट गच्छ के भ. चन्द्रकीर्ति ने नरसिंहपुर के एक विवाद में विजय पाई उस समय, भ. चारकीर्ति उन्हे मिलने आये थे।

१३ परस्पर सम्बन्ध

भट्टारक सम्प्रदायों के परस्पर सम्बन्ध प्रायः व्यक्तिगत मनोवृत्ति पर निर्भर रहते थे इसी लिये न तो उनमें कोई स्थाई वैर दिखाई देता था न स्थाई प्रेम। सहकार्य या झगडे के लिए कोई तत्व आधारभूत नहीं था इसीलिये समय पर विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध स्थापित हो सके।

दिल्ली शाखा के भ, जिनेन्द्र का प्रभाव व्यापक था। सूरत के भ. विद्यानन्दि , ईडर के भ.ज्ञानभूषण तथा अटेर के भ. सहकीर्ति और नागौर के भ. रत्नकीर्ति इनके प्रभाव क्षेत्रमें सम्मिलित होते थे। इसी शाखा के भ. चन्दकीर्ति का उल्लेख नागौर के भ. नेमिचन्द्र द्वारा एक ग्रन्थ प्रशस्ति में मिलते हैं ।

ईडर के भ. सकलकीर्ति ने ज्ञानकीर्ति , धर्मकीर्ति और भुवनकीर्ति इनको भट्टारक पदपर प्रतिष्ठित किया था। इनके शिष्य ब्रह्म जिनदास के अनेक शिष्य थे। इनमें ब्रह्म शान्तिदास ने सकलकीर्ति की परम्परा के समान सूरत की भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र की परम्परा से सम्बन्ध स्थापित किये थे। अपने ग्रन्थों के कारण अन्य अनेक सम्प्रदायों द्वारा सकलकीर्ति सन्मानित हुए थे। ईडर शाखा के ही भट्टारक शुभचन्द्र ने सूरत के लक्ष्मीचन्द्र और वीरचन्द्र का स्मरण किया है। भानपुर शाखा के भट्टारक गुणचन्द्र के गुरु भट्टारक सिहंनन्दि का सूरत शाखा के श्रुतसागरसूरि तथा ब्रह्म नेमिदत्तने आदर पूर्वक स्मरण किया है। इसी शाखा के भट्टारक रत्नचन्द्र (प्रथम) का पट्टाभिषेक हेमकीर्ति द्वारा हुआ था। किन्तु इस समय बड़ी शाखा के (सम्भवत) ईडर कुछ श्रावकों ने विघ्न उपस्थित करने की कोशिश की थी। सूरत शाखा के भ. विद्यानन्दि ने काष्टासंघिय श्रावकों के लिए मूर्ति प्रतिष्ठा की। इनके शिष्य श्रुत सागरसूरि के विविध सम्बन्ध का उल्लेख पहले हो चुका है। इनके परम्परा के भ. लक्ष्मीचन्द्र के शिष्य कारंजा के वीरसेन और विशालकीर्ति भ. प्रमुख थे। इनके प्रशिष्य भ. ज्ञानभूषण के विशेषोमें भी काष्टा संघके भ. रत्नभूषण का समावेश होता था। सूरत के ही भ. वादीचन्द्र का नन्दितट गच्छके भ. श्री भूषण के साथ एक बार वाद-विवाद हुआ था।

जेरहट शाखा के श्रुतकीर्ति ने दिल्ली के भ. जिनचन्द्र के शिष्य विद्यानन्दि का स्मरण किया है।

१४ शासकों से सम्बन्ध

ईडर के राव भाणजी के मन्त्री भोजराज जैनधर्मी थे। इनके कुटुम्बिओं ने श्रुतसागरसूरि के साथ गंजपंथा और मांगी तुंगी तीर्थक्षेत्रों की यात्रा की थी। इस प्रकार विजयनगर के मंत्री इरुगदण्ड नायक जैन थे। आपने भट्टारक धर्मभूषण के उपदेश से विजयनगर में कुन्थुनाथका भव्य मन्दिर बनवाया था। जयपुर आदि राजस्थान के राज्यों में भी समय समय पर जैन धर्मी मन्त्री हुए है।

जो राजा स्वंय जैन नही थे उनने भी समय - समय पर भट्टारकों की विद्वत्ता या मन्त्र प्रभावसे प्रभावित होकर उनका सत्कार किया था। (राजा भोज की सभा में लाडबागड गच्छ के भट्टारक शान्तिसेन सत्कृत हुए थे। इसी गच्छ के भट्टारक विजयसेन कन्नोज के राजा हरिश्चन्द्र द्वारा सन्मानित हुए थे। ईडर के राव रणमल ने भ. मलयकीर्ति का तथा

कलबुर्गी के सुलतान फिरोजशाह ने भ. नरेन्द्रकीर्ति का सन्मान किया था। मालवा के सुलतान गयासुद्दीन द्वारा सूरत शाखा के भ. मल्लिभूषण का आदर किया गया। इसी शाखा के भ. लक्ष्मीचन्द्र और ईडर के भ. ज्ञानभूषण ने कर्णाटक के देवराय मल्लिराय भैरवराय आदि कई स्थानीय शासकों से सन्मान पाया था। (कारजां शाखा के पूर्व रूप के भ. विशालकीर्ति दिल्ली के सुलतान सिकन्दर, विजयनगर के सम्राट वुरुपाक्ष एवं आरग के दंडनायक देवप्प द्वारा सत्कृत हुए थे। इन्हीं के शिष्य विद्यानंद ने भी मल्लिराय आदि शासकों से सम्मान पाय था।

सेनगण , बलात्कारगण एवं पुन्नाटगण के प्राचीन समय के उल्लेख बहुधा दानपात् उल्लेखनीय है। कच्छप धात वंश के राजा विक्रमसिंह ने भ. विजयकीर्ति को नवनिर्मित जिनमन्दिर के लिए भूमिदान दिया था। उत्तर कालीन भट्टारकों के विषय में भी ऐसे अनेक उल्लेख प्राप्त हो सकेंगे यद्यपि ऐसे प्रत्यक्ष उल्लेख अभी उपलब्ध नहीं हो सके है।

इन प्रत्यक्ष सम्बन्धों के अतिरिक ग्रन्थ प्रशस्ति आदि में तत्कालीन राजाओं के अनेक उल्लेख मिलते हैं। ग्वालियर के तोमर वंशीय राजा वीरमदेव , डूंगरसिंह कीर्तिसिंह एवं मानसिंह का कालनिर्णय माथुर गच्छ के भट्टारकों ने उनके जो उल्लेख किए हैं उन्ही से हो सकता है। मुगल वंश के बाबर से लेकर महम्मदशाह तक प्रायः सभी सम्राटों के उल्लेख अन्यान्य ग्रन्थ प्रशस्तियों में मिले हैं । हिन्दुओं को भयभीत कर देने वाले औरंगजैब के समय भी जैन ग्रंथकर्ता अपना कार्य शान्ति पूर्वक जारी रख सके थे। इन उल्लेखों में सम्राट अकबर के विषय में लाटसंहिता के कर्ता पण्डित राजमल्ल द्वारा लिखे हुए ७० श्लोक विशेष महत्व के हैं। इनमे एक महाकाव्य के समान ही अकबर और उसकी राजधानी आगरा का वर्णन किया है।

१५. उपसंहार

भट्टारक सम्प्रदाय का इतिहास अब तक उपेक्षित जैसा रहा है। इस ग्रन्थ में एक सीमित संख्या में ही साधनों का उपयोग हो सका है। अभी अनेक भट्टारक पीठों के शास्त्र भण्डार, अनेक मूर्तिलेख एवं शिलालेखों का अवलोकन कर के नई सामग्री प्रकाश में लाई जा सकती है। यदि सब साधनों का पूरा उपयोग किया जाए तो यह संख्या आसानी से दुगुनी हो सकती है।

भट्टारक सम्प्रदाय के इतिहास में जैन समाज की अवनति का ही इतिहास छिपा है। किन्तु उसमे कई उज्जवल व्यक्तित्व हमारा ध्यान आकर्षित करने के लिए समर्थ हैं। भ. शुभचन्द्र और भ. सकलकीर्ति जैसे ग्रन्थकर्ता और भ. जिनचन्द्र जैसे मूर्तिप्रतिष्ठापक आचार्यों की सवर्था उपेक्षा की जाए तो जैन समाज का इतिहास अधूरा ही रहेगा। उनन्ति का इतिहास प्रेरक शक्ति के रूप में उपयुक्त होता है। उसी प्रकार अवनति का इतिहास भी अनेक शिक्षाएँ दे सकता है। भट्टारक सम्प्रदाय के इतिहास में जो संरक्षणशीलता दृष्टि गोचर होती है, उसके परिणामों से सावधान होकर यदि हम फिर एक बार विकासशील प्रवृत्ति को अपना सकें तो जैन समाज फिर एक बार अपने प्राचीन गौरव को प्राप्त कर सकता है।

नन्दिसंघ बलात्कारगण एवं सरस्वती गच्छ के हूमड़ों की मूल भट्टारक गद्दी ईडर

आचार्य बंसत कीर्ति ने भट्टारक प्रथा का उद्‌भव किया (विशेष विवरण के लिए देखिये भट्टारक उत्पति लेख) उसी परम्परा में क्रम नं. ७९ में भट्टारक पद्मनन्दि हुए उनके तीन शिष्य थे (१) सकल कीर्ति (२) देवेन्द्र कीर्ति (३) शुभ चन्द्र । अपने तीनो शिष्यों को अलग दो भट्टारक गद्दी स्थापित करने का आदेश दिया जिसमें सकल कीर्ति को ईडर, देवेन्द्र कीर्ति को गन्धार (जो पीछे रांधेर और अन्त मे सूरत गद्दी के नाम से प्रसिद्ध हुई और तीसरी गद्दी दिल्ली लाल किले के सामने शुभचन्द्र की थी जो पीछे से जयपुर और उसके बाद नागौर में स्थापित हुयी। और ईडर से सागवाडा और गलियाकोट, डूंगरपुर, भानपुरा और अटेर में उनकी शाखायें स्थापित हुई ।

ईडर, सुरत, सागवाडा,नागौर और राजस्थान के अनेक शास्त्र भंडारों में नन्दिसंघ बलात्कार गण की पट्टावली प्राप्त है जो प्राकृत भाषा मे है जो इसी ग्रन्थ में दी गई है। इसके उपरान्त भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली की तथा'' तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा मे ज्योतिषाचार्य नेमीचन्द्रशास्त्रीजी ने तथा ब. शीतलप्रसादजी ने अपने अनेक ग्रन्थों मे नन्दिसंघ बलात्कार गण सरस्वती गच्छ की पट्टावली को प्रमाणित किया है। जिसमें नन्दिसंघ की स्थापना लोहाचार्य द्वितीय क्रम न. १ से उसकी परम्परा में क्रम नं. ३ माघनन्दि (नन्दिसंघ के प्रर्वतक) क्रम नं. ७ लोहाचार्य तृतीय बलात्कारगण सरस्वती गच्छ के आचार्य उसके क्रम नं. ११ आचार्य पूज्यपाद (मूल संस्कृत अभिषेक-शांतिधारा के रचियता जो वर्तमान में प्रचलित है।) क्रम नं. १२ आचार्य गुण नन्दि जिन्होंने ऋषिमंडल स्त्रोत की रचना की, जो सारे जैनधर्म (सभी श्वेतम्बर - दिगम्बर) का सर्वोच्च आराधना का मूल स्त्रोत है । उसी क्रम में न.७३ में आचार्य बसंत कीर्ति ने भट्टारक प्रथा का आरंभ किया उन्ही क्रम न.७३ मे बसंतकिर्ति के शिष्य परम्परा में क्रम न.७९ पद्मनन्दि द्वारा ईडर में सकलकीर्ति को भट्टारक बनाकर गद्दी स्थापित की । उनकी परम्परा क्रम ८० से लगाकर भट्टारक कनक कीर्ति क्रम नं १०० विक्रम १९४० इस्वी १८८३ तक चलती रही।

उपरोक्त अनेक प्रमाणों के साथ ईडर की गद्दी का विवरण दिया जा रहा है।

ईडर भट्टारकों की गद्दी

विक्रम संवत् १४६२ से वि. स. १९५५ इस्वी सन् १३२८ से १८९८

क्रम	नाम	विक्रम संवत	ईस्वीसन्	विशेष
(७९)	पद्म नन्दि	१३८५-१४६२	१३२८-१४०५	
(८०)	सकलकीर्ति	१४६२-१४९९	१४२५-१४३४	
(८१)	भूषण कीर्ति	१४९९-१५२५	१४३४-१४६८	
(८२)	ज्ञानभूषण	१५२५-१५५५	१४०८-१४९८	
(८३)	विजयकीर्ति	१५५५-१५६५	१४९८-१५०८	
(८४)	भरतचन्द्र	१५२५-१५७३	१५०८-१५७६	
(८५)	शुभचन्द्र	१५७३-१६१३	१५७६-१५५६	
(८६)	सुमन कीर्ति	१६१३-१६३०	१५७६-१५७३	
(८७)	गुण कीर्ति	१६३०-१६५०	१५७३-१५९३	
(८८)	वादिभूषण	१६५०-१६७५	१५९३-१६१०	
(८९)	राम कीर्ति	१६७५-१६९०	१६१०-१६२५	
(९०)	पद्म नन्दि(२)	१६९०-१७०५	१६२५-१६४८	
(९१)	देवेन्द्र कीर्ति	१७०५-१७२०	१६४८-१६५५	
(९२)	योगकीर्ति	१७२०-१७४०	१६५५-१६७५	
(९३)	नरेन्द्र कीर्ति	१७४०-१७४८	१६७५-१६९१	
(९४)	विजय कीर्ति	१७४८-१७९०	१६९१-१७३३	
(९५)	नेमचन्द	१७९०-१८७५	१७३३-१७५८	
(९६)	राम कीर्ति	१८१५-१८६०	१७५८-१७९३	
(९७)	जश कीर्ति	१८६०-१८८१	१७९३-१८२४	
(९८)	सुरेन्द्र कीर्ति	१८८१-१९०२	१८२४-१८४५	
(९९)	राम कीर्ति	१९०२-१९४०	१८४५-१८८३	
(१००)	कनक कीर्ति	१९४०-१९५५	१८८३-१८९८	

प्रथम शुभचन्द्रकी गुर्वावली

श्रीमानशेषनरनायक-वन्दिता-ङ्घी: श्रीगुप्तिगुप्त (१) इति विश्रुत-नामधेय:।यो भद्रबाहु (२) मुनिपुंगव-पट्टपद्म: सूर्य्य: सवो दिशतु निम्मलसंघवृद्धिम् ॥१॥

श्रीमूलसंघेऽजनि नन्दिसंघस्तस्मिन् बलात्कारगणोऽतिरम्य:।
सत्राऽभवत्पूर्व-पदांशवेदी श्रीमाघनन्दी (३) नर-देव-वन्द्य: ॥२॥
पट्टे तदीये मुनिमान्यवृतो जिनादिचन्द्र (४) स्समभूदतन्त्र:-
ततोऽभवत्पञ्चसुनामधाम श्रीपद्मनन्दी मुनिचक्रवर्ती ॥३॥

आचार्य्य: कुन्दकुन्दाख्यो (५) वक्रग्रीवो महामुनि:। एलाचार्य्यो गृद्धपिच्छ: पद्मनन्दिति तन्नुति:॥४॥ तत्वार्थसूत्रकतृत्व-प्रकटीकृतसन्मना: । उमास्वाति (६) पदाचार्यो मिथ्यात्वतिमिरांशुमान् ॥५॥ लोहाचार्य(७)स्ततो जातो जातरूपधरोटमरे:। यश: कीर्ति (८) यंशानन्दी (९) देवनन्दी (१०) महामति:। पूज्यपाद: पराखअयेयो गुणनन्दी (११) गुणाकर ॥८॥ वज्रनन्दी (१२) पज्रवतिस्तरिकिकाणा महेश्वर:। कुमारनन्दी (१३) लोकेन्दु: (१४) प्रभाचन्द्रो (१५) ययचोनिधि:॥९॥ नेमिचन्द्रो (१६) भानुनन्दी (१७) सिंहनन्दी (१८) जटाधर:। वसुनन्दी (१९) वीरनन्दी (२०) रत्ननन्दी (२१) रतीशमित् ॥१०॥ माणिक्यनन्दी (२२) मेघेन्दु: (२३) शान्तिकिर्ति (२४) र्महायशा:। मेरूकिर्ति र्महाकिर्ति (२६) विश्वनन्दी (१७) वदाम्बर: ॥११॥ श्रीभूषण (२८) शीलचन्द्र: (२९) श्रीनन्दी (३०) देशभूषण (३१)। अनन्तकीर्ति (३२) र्धर्मादिनन्दी (३३) नन्दीति शासन: ॥१२॥ विद्यानन्दी (३४) रामचन्द्रो (३५) रामकिर्ति (३६) रनिन्द्यावाक्। अभयेन्दु (३७) नरेचन्द्रो (३८) नागचन्द्र: (३९)स्खिरवत: ॥१३॥ नयनन्जी (४०) नकिश्टन्द्रो (४१) महीचन्द्रो (४२) मगोज्झित। माधखेन्जु (४३) लक्ष्मीचन्द्रो (४४) गुणकीर्ति (४५) गुणाश्रय: ॥१४॥ गुणचन्द्रो (४६)वासुवएन्दु (४७) लोंकचन्द्र: (४८)स्वतत्ववित्।

तैरैविद्य: श्रुतकीतर्त्याख्यो (४९) खेआतकण: भास्कर: ॥१५॥ भानुन्द्रो (५०) महाचनद्रो (५१) माघचन्द्र: (५२) क्रियागुणी:। बह्मनन्दी (५३) शिवनन्दी (५४) विश्वचन्द्र: (५५) स्तपोघन: ॥१६॥ सैद्धान्तिको हरिनन्दी (५६) भावनन्दी (५७)मुनीश्वर। सुरकीर्ति: (५८) विद्याचन्द्र (५९) सुरचन्द्र: (६०) श्रियांनिधि: ॥१७॥ माघनन्दी (६१) ज्ञाननन्दी (६२) गङगनन्दी (६३) महतम:। सिंहकीर्ति (६४) हेमकिर्ति (६५) श्चारूनन्दी (६६) महोज्ञधी: ॥१८॥ नेमिनन्दी (६७) नाभिकीर्ति (६८) नरेन्द्रादि (६९) यश:परम्। श्रीचन्द्र: (७०) पद्मकीर्तिश्च (७१) वर्द्धमानो (७२) मनीश्वर: ॥१९॥ अकलङक (७३) श्चन्द्रगुरूर्ललितकीर्ति (७४) रूतम:। त्रेविद्य: केशवश्चन्द्र (७५) श्चारूकीर्ति (७६) सुघार्मिक: ॥२०॥ सैद्धान्तिकोऽभयकीर्ति (७७) र्वनवासी महातपा:। बसन्तकीर्ति (७८) र्व्याधाहिसेवित: षीग,दक: ॥२१॥ तस्य श्रीवनवासिनस्त्रिभुवन प्रख्यात (७९) कीर्तेरभूत्। शिष्योऽनेकगुणालय: सम-यम-ध्यानापगासागर:। वादीन्द्र: परवादि-वारणगण-प्रागल्भविद्रावण:। सिंह श्रीमति मणडर्योति विदितस्त्र विद्यविद्यास्पदम् ॥२२॥ विशालकीर्ति (८०) र्वरवृतमूर्तिस्तपोमहात्मा सुभकीर्ति (८१) देव:। एकान्तराद्युग्र तपोविधाना द्धातेव सन्मार्गविधोविधाने ॥२३॥ श्रीधर्म (८२) चन्द्रोऽजनि तस्य पट्टे हमीरभूपालसमर्चनीय:। सैद्धान्तिक: संयमसिन्धुचन्द्र: प्रख्यातमाहात्म्यकृतावतार:॥२४॥

तत्पट्टेऽजनि रत्नकीर्ति (७३) रनघः स्याद्वादविद्यांबुधिः।
नानादेश-विवृत्तशिष्यनिवहः प्राच्यांघियुग्मो गुरूः।।
धर्माधर्मकथासुरक्तधिषणः पापप्रभाबाधको
बालब्रह्मतपः प्रभावमहितः कारूण्यपूर्णाशयः।।२५।।
अस्ति स्वस्तिसमस्तसङ्घतिलकः श्रीनन्दिसंघोऽतुलो
गच्छस्तत्र विशालकीर्तिकलितः सारस्वतीयः परः ।।
तत्र श्रीशुभकीर्तिमहिमा व्याप्ताम्बरः सन्मतिः ।
जीयादिन्दुसमानकीर्तिरमलः श्रीरत्नकीर्तिर्गुरूः।।२६।।
श्रीरत्नकीर्तिरनुपमतपसः पूज्यपादीयशास्त्रः ।
व्याख्याविख्यातकीर्तिर्गुणगणनिधिपः सत्क्रियाचारूचचुः।।
श्रीमानानन्दधामप्रतिबुधनुतमामानसंदायिवादो।
जीयादाचन्द्रतारं नरपतिविदितः श्रीप्रभाचन्द्र (८४) देवः।।२७।।
श्रीमत्प्रभाचन्द्रमुनीन्द्रपट्टे शश्वत् प्रतिष्ठाप्रतिभागरिष्टः।
विशुद्धसिद्धान्तरहस्यरत्नरत्नाकरो नन्दतु पद्मनन्दी(८४)।।२८।।
हंसो ज्ञानमरालिकासम समाश्लेषभूताद्भूता
नन्दंक्रीड़ति मानसेति विशदे यस्यानिशं सर्वतः।।
स्याद्वादामृतसिन्धुवर्द्धनविधौ श्रीमत्प्रभेन्दुप्रभाः
पट्टे सूरिमतमल्लिका स जयतात् श्रीपद्मनन्दी मुनिः।।२९।।
महाव्रतपुरन्दरः प्रशमदग्धरागाऽकुरः
स्फुरत्परमपौरूषः स्थितिरशेषशास्त्रार्थवित् ।।
यशोभरमनोहरीकृतसमस्तविश्वम्भरः
परोपकृतितत्परो जयति पद्मनन्दीश्वरः।।३०।।
पद्मनन्दिमुनीन्द्रेण वंश-वाणी-वसुन्धरा
सन्नयासपदवीन्यास पादन्यासैः पवित्रिता।।३१।।
श्रीपद्मनन्दिपदपङ्कज-भानुरूद्धो
जय्यो जितादभुतमदो विदितार्थबोधः।।
ध्वस्तान्धकारनिकटो जयतान्महात्मा
भट्टारकः सकलकीर्तिरीतिप्रसिद्धः(८६) ।।३२।।
सुयति-भुवनकीर्ति (८७) स्तत्पदाब्जार्कमूर्तिः
परमतपसि निष्ठः प्राप्तसर्वप्रतिष्ठः।
मुनिगणनुतपादो निर्जितानेकवादः
स्ववतु सकलसङ्वान् नाशिताऽनेकविघ्नान्।।३३।।
पट्टावलीः ३१५
प्रोघग्ज्ञानकरस्तपोभरधरः सद्बोधतार्घो धुरो
नानान्यावरो यतीश्वतरो वादीन्द्रभूभृत्वसरूः ।
तत्पट्टोन्नतिकृन्निरस्तनिः कृतिः श्रीज्ञानभूषो (८८) यतिः
पायाद्वो निहताहितः परमसज्जैनावनीशैः स्तुतः ।।३४।।

विजयकीर्ति (८९) यतिर्जितमत्सरो
विदितगौमट्टसारपरागमः ।
जयति तत्पदभासितशासनो
निखिलतार्किकतर्कविचारकः ॥३५॥
यः पूज्यो नृपमल्लिभैरवमहादेवेन्द्रमुख्यैर्नृ पैः।
षट्तर्कागमशास्त्रकोविदमतिश्रीग्रद्यशश्चन्द्रमाः।
भव्याम्भोरुहभास्करः शुभकरः संसारविच्छेदकः
सोऽव्याद्यीविजयादिकीर्तिमुनिपो भट्टारकाधीश्वरः ॥३६॥
तत्पट्टकैरवविकाशनपूर्णचन्द्रः
स्याद्वादभाषितविबोधितभूमिपेन्द्रः।
अव्याद्गुणान् सुशुभचन्द्र (९०) इति प्रसिद्धो
रम्यान् बहून् गुणवतो हि सुतत्वबोधः ॥३७॥
जीयात् षट्तर्कचंचुप्रवणगुणनिधिस्तत्पदाम्भोजभृङ्गः
शुम्भद्वादीनकुम्भोद्मटविकटसटाकुण्ठकण्ठीरवेन्दुः ।
श्रीमत्सु सौभचन्द्रः स्फुटपटुविकटाटोपवैकुण्ठसुनुः
हन्ता चिद्रूपवेत्ता विदितसकल सच्छास्त्रसारः कृपालुः ॥३८॥
तत्पट्टचारुशतपत्रविकाशनेन
पुण्यग्रवालघनवर्द्धनमेघतुल्यः ।
व्याख्यामितावलिसुतोषित-भव्यलोको
भट्टारकः सुमतिकीर्ति (९१) रतिप्रबुद्धः ॥३९॥
ज्ञात्वा संसारभावं विहितवरतपो मोक्षलक्ष्मी सुकांक्षी
स्याद्वादी शान्तिमूर्तिर्मदनमहलरो विश्वतत्वैकवेत्ता।
सुज्ञानं दानमेतद्वित्तरति गुणनिधिर्मोहमातङ्गसिंहो
जीयाभ्दट्टारकोऽसौ सकलयतिपतिः श्रीसुमम्त्यादिकीर्तिः॥४०॥
तत्पट्टतामरसरंजनभानुमूर्तिः
स्याद्वादवादकरणेन विशालकीर्तिः।
भाषासुधारससुपुष्टितभव्यवर्णौ
भट्टारकः सुगुणकीर्ति(९२) गुरुर्गणार्च्यः॥४१॥
प्राज्ञो वादीभसिंहः सकलगुणनिधिर्ध्वस्तदोषः कृपालुः।
शान्तो मोक्षाभिकांक्षी विशदतरमतिः कस्मकातिः कलावान ॥
क्षिप्ताशन्तर्कवेत्ता शुभतरवचनः सर्वलोकस्थितिज्ञः।
श्रीमानीषः कृतज्ञो जयति जगति सः श्रीगुणाद्यन्तकीर्त्तिः॥४२॥
तत्पट्टपङ्कजविकाशनपद्मबन्धुः।
जीयात्कुवादिमुखकैरवपद्मबन्धुः
कान्त्या क्षमा तिमिरनाशनपद्मबन्धुः
श्रीवादिभूषण(९३) गुरूर्जितपद्मबन्धुः॥४३॥
यो नानागमशब्दतर्कनिपुणो जैनैर्नृपैः पूजितः

कर्णाटे कलिकालगौतमसमो भट्टारकाधीश्वरः।।
हेयाहेयविचारबुद्धिकलितो रत्नत्रयालंकृतः
सः श्रीमान् शुभचन्द्रवद्धि श्रयते श्रीवादिभूष्यो गुरूः।।४४।।
तत्पट्टपुष्पंकरभासनमित्रमूर्त्तिः
कुज्ञानपङ्कपरिशोषणमित्रमूर्तिः।
निःशेषभव्यहृदयाम्बुजमित्रमूर्त्तिः
भट्टारको जगति भाति सुरामकीर्तिः(९४)।।४५।।
स्याद्वादन्यायवेदी हतकुमतिमदस्त्यक्तदोषो गुणाब्धिः।
श्रीमच्चिद्रुपवेत्ता विमलतरसुवाक् दिव्यमूर्तिः सुकीर्त्तिः।।
साक्षाच्छ्रीशारदायाः गच्छपतिगरिमा भूपवन्धो गुणज्ञः
पायाद्भट्टारकोऽसौ सकलसुखकरो रामकीर्त्तिर्गणेन्द्रः।।४६।।
शास्त्राभ्यासनिबन्धनादिषु पटुः रामादिकीर्त्तिस्तत
स्ततपट्टे यशकीर्त्तिनाम सततं विभ्राजते धर्म्मभाक्।
ध्यानाभ्यासकरः सुनिर्मलमनास्तर्कादिकाव्यामृतः
नव्यानां प्रतिबोधनार्थनिपुणः सर्वकलायां रतः।।४७।।
तत्पट्टपङ्कजविकाशनभानुमूर्त्ति-
र्विद्याविभूषित-समन्वित-बोधचन्द्रः।
स्याद्वाद-शास्त्र-परितोषित-सर्वभूपो
भट्टारकः समभवद्यशपूर्वकीर्तिः(९४) ।।४८।।
तत्पट्टवारिजविकाशनतिग्मरश्मिः
पापानबोधतिमिर-क्षय-तिग्मरश्मिः
पायात्सुभव्य-भर-पद्मसुतिग्मरश्मिः
श्रीपद्मनन्दिमुनिपो जिततिग्मरश्मिः।।४९।।
नानाऽनेकान्तनीत्या जितकुमतशठो विश्वतत्वैकवेत्ता
शुद्धात्मध्यानलीनो विगतकलिमलो राजसेव्यक्रमाब्जः।
शास्त्राब्धिपोतप्रख्यो विमलगुणनिधी रामकीर्त्तेः सुपट्टे
पायाद्वः श्रीप्रसिद्धयै जगति यतिपतिः पद्मनन्दी(९६) गणीशः।।५०।।
तत्पट्टपद्मविकचीकरणैकमित्रः
सद्बोधबोधितनृपो विलसच्चरित्रः।
भट्टारको भुवि विभात्यवबोधनेत्रः
देवेन्द्रकीर्त्ति (९७) रतिशुद्धमतिः पवित्रः।।५१।।
श्रीसर्वज्ञोक्तशास्त्रऽध्ययनपटुमतिः सर्वथैकान्तभिन्नः
चिद्रूपो भाति वेत्ता क्षितिपतिमहितो मोक्षमार्गस्य नेता।
भव्याब्जोद्बोधभानुः परहितनियतः पद्मनन्दीन्द्रपट्टे
जीयादभ्ट्टारकेन्द्रः क्षितितलविदितो देवेन्द्रकीर्त्तिः।।५२।।
तत्पट्टनीरजविकाशननकर्मसाक्षी
पापान्धकारविनिवारणकर्मसाक्षी

दूर्वादिदुर्वनकैरवकर्मसाक्षी
श्रीक्षेमकीर्त्ति (९८) मुनिपो जितकर्मसाक्षी ॥५३॥
हेयाहेयविचारणाङ्कितमतिर्वादीन्द्रचूड़ामणिः
स्फुर्य्यद्विश्वजनीनवृतिरनिशं सम्यक्त्वतालंकृतः।
सद्वाक्यामृतरञ्जिताखिलनृपो देवेन्द्रकीर्तेः पदे
जीव्याद्वर्षपरः शतं क्षितितले श्रीक्षेमकीर्त्तिर्गरूः॥५४॥
तत्पट्टकोकनद-मोदन-चित्रभानुः
दुःकर्मदुस्तरसुनाशन-चित्रभानुः।
भव्यालि-तामरस-रंजन-चित्रभानुः
जीयान्नरेन्द्रवरकीर्त्ति (९९) सुचित्रभानुः ॥५५॥
श्रीमत्स्याद्वादशास्त्रावगमवरमतिः शान्तमूर्तिर्मनोज्ञः
दिव्यत्स्वमोपलब्धिः प्रहतकलिमलो मोक्षमार्गस्य नेता।
सर्वज्ञाभासवेदालिमकलमदरूत् क्षेमकीर्तेः सुपट्टे
सूरिः श्रीमन्नेरन्द्रो जयति पट्टगुणः कीर्तिशब्दाभियुक्तः॥५६॥
तत्पट्टवारिधिविवर्द्धनपूर्णचन्द्रः
पुष्पायुधेभहरिणाधिपतिर्वितेन्द्रः।
सद्बोधवारिजविकाशनवासरेन्दः
भट्टारको विजयकीर्ति (१००) रसौ मुनीन्द्रः॥५७॥
स्याद्वादामृतवर्षणैकजलदो मिथ्यान्धकारांशुधान्
भास्वन्मूर्तिनरेन्द्रकीर्त्तिसुसरो पट्टावलीक्ष्माधिपः।
नानाशास्त्रविचारचारुचतुरः सन्मार्गसंवर्त्तको
जीयात् श्रीविजयादिकीर्त्तिरमलो दद्याच्च सन्मंगलम् ॥५८॥
तत्पट्टपंकजविकाशनपंकजेन्द्रः
स्याद्वादसिन्धुवरवर्द्धनपूर्णचन्द्रः।
वादीन्द्रकुम्भमदवारणसन्मृगेन्द्रः
भट्टारको जयति निर्मलनेमिचन्द्रः(१०१) ॥५९॥
नानान्यायविचारचारूचतुरो वादीन्द्र-चूडामणिः
षट्तर्कागमशब्दशास्त्रनिपुणो स्फुर्जद्यशश्चन्द्रमाः।
स्वात्मज्ञानविकाशनैकतरणिः श्रीनेमिचन्द्रो गुरुः
सदभ्भट्टारकमौलिमण्डनमणिर्जीव्यात्सहस्त्रं समाः ॥६०॥
तत्पट्टपंकज-विकाशन-सूर्य्यरूपः
शास्त्रामृतेन परितोषित-सर्वभूपः।
सच्छास्त्रकैरव-विकाशन-चन्द्रमूर्तिः
भट्टारकः समभवत् वरचन्द्रकीर्तिः (१०२) ॥६१॥
श्रीमान्नाभिनरेन्द्रसुनुचरणाम्भोजद्वये भक्तिमान्
नानाशास्त्रकलाकलापकुशलो मान्यः सदा भूभृतां।
नित्यं ध्यानपरो महाव्रतधरो दाता दयासागरः

ब्रह्मज्ञान-परायणस्समभवत् श्रीचन्द्रकीर्तिः प्रभुः ॥६२॥
पद्मनन्दी गुरुर्जातो बलात्कारगणाग्रणीः
पाषाणघटिता येन वादिता श्रीसरस्वती।
उज्जयन्तगिरौ तेन गच्छः सारस्वतोऽभवत्
अतस्तस्मै मुनीन्द्राय नमः श्रीपद्मनन्दिने ॥६३॥

समस्त राजाओंसे पूजित पादपद्मवाले, मुनिवर भद्रबाहु स्वामीके पट्टकमलको उद्योत करने मे सूर्यके समान श्रीगुप्तिगुप्त मुनि आप लोगोको शुभसङ्गति दे ॥१॥

श्रीमूलसङ्घ में नन्दिसंङ्घ में अतिरमणीय बलात्कार-गण हुआ, और उस गण में पूर्वके जाननेवाले मनुष्य और देवों के वन्दनीय श्रीमाघनन्दि स्वामी हुए ॥२॥

उनके पट्टपर मुनिश्रेष्ठ जिनचन्द्र हुए और इनके पट्टपर पाँच नामधारक मुनिचक्रवर्ती श्रीपद्मनन्दि स्वामी हुए ॥३॥कुन्दकुन्द,वकग्रीव, एलाचार्य्य,गुद्धपिच्छ और पद्मनन्दी उनके ये पाँच नाम हुए॥४॥

उनके पट्टपर दशाध्यायी-तत्वार्थसूत्रके प्रसिद्ध कर्ता मिथ्यात्व-तिमिरके लिए सूर्य्य समान उमास्वाति (उमास्वामी) आचार्य हुए॥५॥

उनके पट्ट पर देवोंसे पूजित समस्त अर्थके जानने वाले श्रीलोहाचार्य्य हुए॥६॥

यहाँसे इस नन्दिसङ्घमें दो पट्ट हो गये, पूर्व और उत्तरभेदसे (अर्थात् यहाँसे लोहाचार्य्यकी पट्टावली का क्रम काष्टासङ्घमें चला गया और यह अनुक्रम नन्दिसंघका रहा) जिनके नाम क्रमसे यह हैं॥७॥

यशःकीर्त्ति,यशोनन्दी,देवनन्दी-पूज्यपाद, अपरनाम गुणनन्दी हुए॥८॥

तार्किकशिरोमणि वज्रवृतिके धारक वज्रनन्दी, कुमारनन्दी, लोकचन्द्र और प्रभाचन्द्र हुए॥९॥

नेमिचन्द्र, भानुनन्दी, सिंहनन्दी, बसुनन्दी, वीरनन्दी और रत्नन्दी हुए॥१०॥

माणिक्यनन्दी, शीलचन्द्र, शान्तिकीर्त्ति, मेरुकीर्त्ति, महाकीर्त्ति, विश्वनन्दी हुए॥११॥

श्रीभूषण, शीलचन्द्र, श्रीनन्दी, देशभूषण, अनन्तकीर्त्ति, धर्म्मनन्दी, हुए॥१२॥

विघानन्दी, रामचन्द्र, रामकीर्त्ति, अभयचन्द्र, नरचन्द्र, नागचन्द्र, हुए॥१३॥

नयनन्दी, हरिश्चन्द्र (हरिनंन्दी), महीचन्द्र, माघवचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र, गुणकीर्त्ति हुए॥१४॥

गुणचन्द्र, वासवेन्दु (वासवचन्द्र), लोकचन्द्र और त्रैबिध्यविघाधीश्वर वैयाकरणभास्कर श्रुतकीर्त्ति हुए॥१५॥

भानुचन्द्र, महाचन्द्र, माघचन्द्र, ब्रह्मनन्दी, शिवनन्दी, विश्वचन्द्र, हुए॥१६॥

सैद्धान्तिक हरनन्दी, भावनन्दी, सूरकीर्त्ति, विघानन्द, सूरचन्द्र हुए॥१७॥

माघनन्दी, ज्ञाननन्दी, गंगनन्दी, सिंसकीर्त्ति, हेमकीर्त्ति और चारुकीर्त्ति हुए॥१८॥

नेमिनन्दी, नामकीर्त्ति, नरेन्द्रकीर्त्ति, श्रीचन्द्र, पद्मकीर्त्ति, वर्द्धमानकीर्त्ति हुए॥१९॥

अकंलकचन्द्र, ललितकीर्त्ति, त्रैविद्यविघाधीश्वर केशवचन्द्र, चारुकीर्त्ति हुए॥२०॥

सैद्धान्तिक महातपस्वी अभयकीर्ति और वनवासी महापूज्य वसन्तकीर्त्ति हुए॥२१॥

जगत्प्रख्यातकीर्त्ति उन श्रीवनवासी वसन्तकीर्त्ति आचार्यके शिष्य अनेक गुणोंके स्थान, यम, नियम, तपश्चरण, महाव्रतादि-नदियोंके सागर, परवादिगजविदारण-सिंह और

वादीन्द्र भुवनविख्यात विद्याधीश्वर श्रीविशालकीर्ति हुए और उनके पट्टधर श्रेष्ठ चरित्रमूर्ति एकान्तरादि-उग्रतपोविधानमें ब्रह्माके समान सन्मार्गप्रवर्तक श्रीशुभकीर्त्ति हुए।।२२।।

इनके पट्टपर हमीरमहाराजसे पूजनीय संयमसमुद्र को बढ़ानेमें चन्द्रामसमान प्रसिद्ध सैद्धान्तिक श्री धर्मचन्द्र हुए।।२४।।

उनके पट्टपर यतिपत्ति स्याद्वादविघासगार रत्नकीर्त्ति हुए, जिनके शिष्य अनेक देशोंमें विस्तरित हैं, वे धर्म्मकथाओंके कर्त्ता बालब्रह्मचारी श्रीरत्नकीर्त्ति गुरू जयवन्त रहें।।२५।।

समस्त संघोंमें तिलक श्रीनन्दिसंघमें शुभकीर्त्तिसे प्रसिद्ध निर्म्मल सारस्वतीय गच्छमें चन्द्रामासमान दिगन्तविश्रामकीर्त्ति श्रीरत्नकीर्त्ति गुरु जयवन्त रहें।।२६।।

इनके पट्टपर, श्रीपूज्यपादस्वामीके ग्रन्थोंकी टीका करनेसे पायी है प्रसिद्धि जिन्होंने, नानागुण विभूषित, वादविजेता, अनेक राजोओंसे पूजित श्रीप्रभाचन्द्र-चन्द्रवेतारास्थिति-पर्य्यन्त जयवन्त रहें।।२७।।

श्रीप्रभाचन्द्रवेवके पट्टपर विशुद्ध सिद्धान्तरत्नाकर और अनेक जिनप्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा करानेवाले श्रीपद्मनन्दी हुए।।२८।।

जिनके शुद्ध हृदय में अभेदवसे आलिङ्गन करती हुई ज्ञानरूपी हँसी आनन्दपूर्वक क्रीड़ा करती है। जिन्होंने दीक्षा धारण कर जिनवाणी और पृथ्वीको पवित्र किया है, वह परमहंस निर्ग्रन्थ पुरूषार्थशरी अशेषशास्त्रज्ञ सर्दहितपरायण मुनिश्रेष्ठ श्रीपद्मनन्दी मुनि जयवन्त रहें ।।२९।।३०।।३१।।

श्रीपद्मनन्दी के शिष्य अनेक वादियो में प्राप्तविजय, उपदेशसे अज्ञानतम-दलन करनेवाले जगत् प्रसिद्ध श्रीसकलकीर्ति भट्टारक की जय रहे ।।३२।।

श्रीमान् सकलकीर्त्ति आचार्य्य के पट्टधर श्रीभुवनकीर्त्तिमुनि, परमतपस्वी अनेक मुनिगणोंसे सेवित, अनेक वादोंमें जिनधर्म्मकी प्रभावना करनेवाले समस्तसंघोकी रक्षा करें।।३३।।

उनके शिष्य ज्ञानशील, तपोभूमु, नीतिज्ञ, अनेक जैन राजाओं से स्तुत, श्री ज्ञानभूषणयति सबकी रक्षा करें ।।३४।।

तत्पदसेवी, निखिल-तार्किकचूड़ामणि, श्रीगोमट्टासार आदि महाशास्त्रज्ञ विजयकीर्त्ति हुए ।।३५।।

मल्लिसेरव, महादेवेन्द्र प्रभृति मुख्य राजाओ द्वारा पूजित, कर्कादिषद् शास्त्रके ज्ञाता, यशः शाली, भवदुःखभञ्जन वह विजयकीर्त्ति मुनि हम सबकी रक्षा करें ।।३६।।

भव्यों को आनन्द देने में पूर्णचन्द्र, स्याद्वादन्यायसे अनेक राजाओको जैन बनाने वाले, आत्मानुभवी, समस्तशास्त्रपारङ्गत, दयालु, श्रीशुभचन्द्राचार्य्य, समस्त मुनिगणों की रक्षा करें ।।३७।।३८।।

श्री शुभचन्द्राचार्य्य के पट्टधर, भद्र लोगों को उपदेशामृतवर्षी, श्रीसुमतिकीर्ति भट्टारक हुए ।।३९।।

संसार को क्षणभंगुर जानकर मोक्षाभिलाषी हो तपस्वी हुए वे यतिपति श्रीसुमतिकीर्त्तिदेव, मोह-कामादिशत्रु-विजयी, जयवन्त रहें ।।४१।।

विद्वम्दट, विशुद्धमति, मुमुक्षु, मधउरवचन, व्यवहारवेत्ता, तर्कशास्त्रज्ञ वह श्रीमान् गुणकीर्ति इस जगत् में जयवन्त रहें ।।४२।।

उनके पट्टकमल को विकसित करने में पद्मबन्धो, कुवादियों के मुखकुमुदों को मुद्रित करने मे सूर्य्य, अन्धकार नष्ट करने मे तपन, सूर्य से भी अधिक तेजस्वी श्रीमान् वादिभूषण यतिवर चिरंजीवी रहे ॥४३॥

अनेकन्यायशास्त्रवेत्ता, अनेक जैन नृपोंसे पूजित, कर्णाटक देश को सुशोभित करनेवाहे, कलिकालमे गोतमगणधर के समान, रत्नत्रयविभूषित, श्रीशुभचन्द्राचार्य्य समानप्रभाशाली, श्रीवादिभूषणगुरु वर्तमान रहें ॥४४॥

उनके पट्टकमलको विकसित करनेवाले, अज्ञानका शोषणकरनेवाले, भव्यकमलोंके सूर्य्य श्रीरामकीर्त्तिभट्टारक हुए ॥४५॥

वह व्याकरणादि सर्वशास्त्रनिपुण, श्रीस्याद्वादन्यायायवेदी, राजमान्य, सरस्वतीयगच्छपति रामकीर्त्ति भट्टारक इस जगत् में अलङ्कृत रहें॥४६॥

उनके पट्टपर सर्वशास्त्रके जाननेवाले सर्वकलासम्पन्न, श्रीयशःकीर्ति हुए ॥४७॥४८॥

अज्ञान-तिमिरनाशक, मव्यजीवप्रतिबोधक, श्रीयशःकीर्त्तिके पट्टको प्रसारनेवाले, सूर्य्यतिशायी तेजस्वी, श्रीपद्मनन्दी हुए ॥४९॥

वह श्रीमान् पद्मनन्दी मुनि कुवादिवादविजयी, शुद्धात्मलीन, निर्म्मलचरित्र, शास्त्रसमुद्रपारगामी, राजमान्य, श्रीरामकीर्त्ति के पट्ट को अलंकृत करें ॥५०॥

उनके पट्टधर, अनेक राजाओं को सम्बोधनेवाले, बुद्धिशाली, श्रीदेवेन्द्रकीर्त्ति हुए। वह श्रीदेवेन्द्रकीर्ति के गुरु जगत्प्रसिद्ध अनेक राजाओ से मानित सदा कल्याण करें॥५१॥५२॥

उनके पट्टपर पापतिमिरविनाशक, श्रीक्षेमकीर्त्ति मुनि हुए। वह क्षेमकीर्त्ति मुनि वस्तु के हेयोपादेयता में प्रवरबुद्धि, प्राणिमात्र-हिताकांक्षी, वचन माधुरी से समस्त राजाओं को अनुरञ्जित करनेवाले इस पृथ्वीतल पर अनेक शतवर्ष जीव्यमान रहें ॥५३॥५४॥

उनके पट्टपर दुष्कर्महत्ता, भव्य-कमलों के अपूर्व सूर्य्य, श्रीनरेन्द्रकीर्त्ति जयवन्त रहें, जो श्रीस्याद्वादशास्त्रज्ञ, स्फूर्य्यमाण, अध्यात्म-रसास्वा मदी, मोक्षमार्गको दिखानेवाले, सर्वज्ञमन्य-कुवादि-वादियोंके मदहर्त्ता हुए ॥४६॥

इनके पट्टरूपी समुद्रको बढानेमें पूर्णचन्द्रके समान, कामहस्तिविदारणगजेन्द्र, सम्यक्ज्ञानपद्मविकाशी-सूर्य्य, उपदेशवृष्टि करने में मेघतुल्य, मिथ्यान्ध-कार नष्ट करने में अतिशायी भानु, अनेकशास्त्रपारगामी श्रीविजयकीर्त्ति हमारा मंगल करें॥५७॥५८॥

उनके पट्टपर वादीन्द्रचूडामणि श्रीनेमिचन्द्राचार्य्य हुए। वह षट्शास्त्रपारगंत, दिक्प्रसरितशोभागी, आत्मज्ञान-रस-निर्भर, यतिशिरोमणि, हजारों वर्ष जीवित रहें॥५९॥६०।

उनके शिष्य, अनेक राजसभामें सम्मानित, श्रीचन्द्रकीर्त्ति भट्टारक हुए,जो श्रीऋषभदेव-चरणभक्तिपरायण, नित्यध्यानाध्ययनमें लीन, दयाके समुद्र, महाव्रती, आत्मानुभवी और गुणाशाली थे तथा जिन्होंने इस भारतभूमि को सुशोभित किया॥६१॥६२॥

श्रीपद्मनन्दी गुरुने बलात्कारगणमें अग्रसर होकर पट्टारोहण किया है और जिन्होंने पाषाणघटित सरस्वतीको ऊर्ज्जयन्तगिरि पर वादिके साथ वादित कराया (बुलवाया) है, तबसे ही सारस्वत गच्छ चला। इसी उपकृतिके स्मरणार्थ उन श्रीपद्मनन्दी मुनिको मैं नमस्कार करता हूँ ॥६३॥

द्वितीय शुभचन्द्र की पट्टावली

स्वस्ति श्रीजिननाथाय स्वस्ति श्रीसिद्धसूरयः।
स्वस्ति पाठक-सूरिभ्यां स्वस्ति श्रीगुरवे नमः ॥१॥
मङ्गलं भगवानर्हन् मंगलं सिद्धसूरयः।
उपाध्यायस्तथा साधुर्जैनधर्म्मोऽस्तु मंगलम् ॥२॥
स्वस्ति श्रीमूलसंघेऽवनितिलकनिभे मोक्षमार्गैकदीपे
स्तुत्ये भू-खेचराद्यैर्विशदतरगणे श्रीबलात्कारनाम्नि ॥
गच्छे श्रीशारदायाः पदमवगमचरित्राद्यलङ्कारवन्तो ।
विख्याता गौतमाद्या मुनिगणबृषभा भूतलेऽस्मिञ्जयन्तु ॥३॥

स्वस्ति श्रीमन्महावीरतीर्थंकर-मुखकमल-विनिर्गत-दिव्यध्वनि धरण-प्रकाश-प्रवीण-गौतमगणधरान्वय-श्रुतकेवलि-समालिङ्गित- श्रीभद्रबाहुयोगीन्द्राणाम् ॥४॥

तद्वंशाकाश-दिनमणि-सीमन्धरवचनामृतपान-सन्तुष्टचित्त-श्रीकुन्दकुन्दाचार्याणाम् ॥५॥

तदाम्नायधरणधुरीण-कवि-गमक-वादि-वाग्मि-चतुर्विध-पाण्डित्यकला-निपुण-बौद्ध-नैयायिक-सांख्य-वैशेषिक-भट्ट-चार्वाक-मताङ्गिकार-मदोद्यत-परवादि-गज-गण्ड.भैरव (भेदक) श्रीपद्मनन्दिभट्टारकाणाम् ॥६॥

तच्छिष्याग्रेसरानेकशास्त्रपयोधिपारप्राप्तानां, एकावलि-द्विकावलि-कनकावलि-रत्नावलि-मुक्तावलि-सर्वतोभद्र -सिंहविक्रमादि-महातपो-वज्र-विनाशित-कर्म्मपर्व-तानाम्, सिद्धान्तसार-तत्वसार-यत्याचाराद्यनेकराद्धान्तविधातृणाम्, मिथ्यात्व-तमो-विनाशैकमार्तण्डानाम्, अभ्युदयपूर्व-निर्वाणसुखावश्यविदधायि-जिनधर्माम्बुधि-विवर्द्ध-पूर्णचन्द्राणाम्, यथोक्तचरित्राचरणसमर्थन-निर्ग्रन्थाचार्यवर्य्याणाम्, श्री-श्री-श्रीसकलेकीर्तिभट्टारकाणाम् ॥७॥

तत्पट्टाभरणानेकदक्षमौख्य (इय)-निष्पादन-सकल-कलाकलाप- कुशल-रत्न -सुवर्णरौप्यपितलाश्मप्रतिमा-यन्त्रप्रासादप्रतिष्ठायात्रार्चन-विधानोपदेशाज्जिर्तकीर्तिकर्पूरपूरित-त्रलोक्यविवराणाम्, महातपाद्यनानां श्रीमद्भुवनकीर्तिदेवानाम् ॥८॥

तत्पट्टोदयाचलभास्कराणां, गुर्जरदेशप्रथमसागारधर्म्मवरिष्ठ- सद्धर्मनिष्ठानाम्, अहोरदेशाङ्गीकतैकादशप्रतिमापवित्रीकृतगात्राणां, वाग्वरदेश-स्वीकृतदुर्द्धर-महाव्रतभारधुरन्धराणां, कर्णाटदेशोतुङ्गचैत्यलयावलोकनार्जितमहापुण्यानाम्, तौलवदेशमहावादीश्वर राजवादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्याद्यने-

कविरूदावलिविराजमान-यतिसमूहमध्यसप्राप्तप्रतिष्ठानाम्,
तैलङ्गदेशोतम-नरवृन्द-वन्दितचरणकमलानाम्,
द्राविडदेशाप्तविदग्घवदनारविन्दविनिर्गतस्तवानाम्,
महाराष्ट्रदेशार्जितेन्दु-कुन्द-कुवलयोज्ज्वलयशोराशीनाम्,
सौराष्ट्रदेशो-तमोपासक-वर्ग-विहितापूर्वमहोत्सवानाम्,
रायदेशानिवासिसम्यग्दर्शनोपेत- पाणिसङ्घातकप्रमाणीकृतवाक्यानाम्,
मेदपाटदेशानेकमुग्धाङ्गीवर्गप्रतिबोधकानाम्,
मालवदेशभव्यचितपुण्डरीकबोधन-दिनकरावताराणाम्, मेवातदेशाग-
माध्यात्मरहस्यव्याख्यानरञ्जितविविधविबुधोपासकानां,
कुरूजाङ्गलदेश-प्राण्यज्ञानरोगापहरण-वैद्यानाम्,
तूरवदेशषट्दर्शनतर्काध्ययनोद्भूताऽखर्वगर्वा-
कुमितहृदयदयप्रज्ञावदन्तर्लब्ध-विजयानां, विराटदेशोभयमार्गदर्शकानां,
नमियाढ- देशाधिकृतजिनधर्मप्रभावनां, नवसहस्राद्यनेकर्मोपदेशकानां,
टगराटहडीवटी- नागरचलप्रमुखाऽनेकजनपद- प्रतिबोघन-
निमित्त-विहित-विहाराणां, श्रीमूलसङ्घे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे डिल्ली
(दिल्ली) सिंहासनाधीश्वराणां, प्रतापाक्रान्त-
दिङ्मण्डलाऽऽखण्डनसमानभैरवनरेन्द्रविहितातिभक्तिभारणां, गजान्त-
लक्ष्मीध्वजान्तपुण्य-नाट्यान्तभोग- समुद्रान्तभूमिभागरक्षकसामन्तसमस्तकधृष्ट-
क्रमाग्रमेदिनीपृष्ठराजाधिराजश्रीदेवरायसमाराधितचरणवारिजानां,
जिन-धर्मधारकमुदिपालराय-रामनाथराय-बोमरसराय-कलपराय
-पाण्डुरायप्रभृतिअनेक- महीपालार्च्चितकमलयुगलानाम्,
विहितानेकतीर्थयात्राणां, मोक्षलक्ष्मीवशीकरणा- नर्घ्यरत्नत्रयालंकृतगात्राणां,
व्याकरण-छन्दोलङ्कार- साहित्य-तर्कागमाध्यात्मप्रमुख- शास्त्रसरोजराज-हंसानां,
शुद्धध्यानामृतपानलालसानां, वसुन्धराचार्याणाम्,
श्रीमद्भट्टारकवर्य्यश्रीज्ञानभूषणभट्टारकदेवानाम् ॥९॥
तत्पट्टाम्भोजभास्कराणां, कारितानेकसविवेकजीर्णनूतन-
जिनप्रासादोद्धरण-धीराणां, समुपदिष्ट-
विशिष्टाक्लिष्टप्रतिष्ठजिनबिम्बप्रकाराणां, अङ्गवङ्गकङ्ग
तौलव-मालव-मरहठ-सौराष्ट्र-गुर्ज्जर-वागवर-रायदेश- मेदपाट-प्रमुख-जनपद-
जनजेगीयमानयशोराशीनां,जैनराजान्यराजपूजित- पादपयोजानां,
अभिनवबाल- ब्रह्मचारीश्रीभट्टारकविजयकीर्तिदेवानाम् ॥१०॥
तत्पट्टप्रकटचतुर्विधसंघ- समुद्रोल्लासन- चन्द्राणां, प्रमाणपरीक्षा-
पत्रपरीक्षापरीक्षामुख- प्रमाणनिर्णय- न्यायमकरन्द- न्यायकुमुदचन्द्रोदय-
न्यायविनि श्चयालङ्कार- श्लोकवार्तिक- राजवार्तिकालङ्कार- प्रमेयकमलमार्तण्ड-
आप्तमीमांसा- अष्टसहस्री- चिन्तामणि- मीमांसाविवरण-
वाचस्पतितत्त्वकौमुदीप्रमुखतर्क- शतर्क- जैनेन्द्र- शाकटायनेन्द्र- पाणिनि-
कलाप- काव्य- स्पष्ट- विशिष्ट- सुप्रतिष्ठाष्ट- सुलक्षण- विचक्षणत्रैलोक्यसार-

गोम्मटसार- लब्धिसार- क्षपणासार- त्रिलोकप्रज्ञप्ति-
सुविज्ञप्त्याध्यात्मकष्टसहस्त्रीछन्दोलङ्कारादिशास्त्रसरित प्रतिप्राप्तानां,
शुद्धचिद्रूप- चिन्तन- विनाशि- निद्राणां, सर्वदेशविहरावाप्तानेकभद्राणां,
विवेक- विचार- चातुर्य- गाम्भीर्य- धैर्य- वीर्यगुणगणसमुद्राणां, उत्कृष्टपात्राणां,
पालितानेकश(स)च्छात्राणां, विहितानेकोत्तमपात्राणाम्,
सकलविद्वज्जनसभाशोभितगात्राणां, गौड़वादितमःसूर्य-
कलिङ्गवादिजलदसदागति- कर्णाटवादिप्रथमवचन- खण्डनसमर्थ-
पूर्ववादिमतमातङ्गमृगेन्द्र- तौलवादिविडम्बनवीर- गुर्जरवादिसिन्धु-
स्वसमयपरसमयशास्त्रार्थानां, अङ्गीकृतमहाव्रतानाम्, अभिनवसार्थकनामधेय-
श्रीशुभचन्द्राचार्याणाम् ॥११॥

तत्पट्टप्रवीणोत्कृष्टमति- विराजमान- सुनिश्चितासम्भवबाधकप्रामाणादि- साधन-
निकरसंसाधितासाधारण विशेषणत्रयार्लिगितपरमात्मराजकुञ्जरबन्धुबद-
नाम्भोजप्रकटीभूतपरमागवार्द्धिवर्द्धनसुधाकराणाम्, परवादिवृन्दारकवृन्द-
वन्दित- विशद- पादपङ्केरुहाणां बालब्रह्मचारिभट्टारकश्रीसुमतिकीर्तिदेवा नाम्
॥१२॥

तत्पट्टाम्बुज- विकाशन- मार्तण्डानां, पञ्चमहाव्रत- पञ्चसमिति- त्रिगुप्त्यष्टा-
विंशतिमूलगुणसंयुक्तानां, व्याख्यामृत- पोषित- जिनवर्गाणां,
निजकर्मभूरुहदारुण- धरणप्रवीणानाम् परमात्मगुणातिशयपरीक्षितविश्वङ्-
स्वरूपाणाम्, विशद- विज्ञान-विनिश्चित-सामान्यविशेषात्मककार्थसमर्थानां,
परमपवित्रभट्टारकश्री-गुणकीर्तिदेवानाम् ॥१३॥

तत्पट्टकुमुद-प्रकाशन-शुद्धाकराणां,
अंग-वंग-तिलंग-कलिंग-वेट-भोट-लाट-कुङ्कण-कर्णाट-
मरहट्ट-चीन-चोल-हब्ब-खुरासाण-आरब-तौलक-तिलात-
मेदपाट-मालव-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तर-गुर्जर-वागर-
रायदेस-नागर-चाल-मरूस्थल-स्फूर-दंगि-कोशल- मगध-
पल्लव-कुरूजांगल-कांची-लाश्रुस-पुट्रौट-काशी-कलिंग-
सौराष्ट्र-काश्मीर-द्राविड-गौड़-कामरू-मलत्ताण-मुंगी-पठाण
-बुगलाण-हडावट्ट-सपादलक्ष-सिन्धु-सिन्धुल-कुन्तल-केरल
-मंगल-जालौरगंगल-संतुल-कुरल-जांगल-पंचालन- नट्ट-
धट्ट-खेट्ट-कोरट्ट-वेणुतट-कलिकोट-मरहट्ट-कौरट्ट-
चैरट्ट-खैरट्ट-स्मैरतट्ट-महाराष्ट्र-विराट-किराट-नमेद- सिन्धुतट-
गंगेतट-पल्लव-मल्लवार-कपोठ-गौड़वाड-
तिंगल-किंगल-मलयम-मरुमेखल-नेपाल-हैवतरुल-संखल-
करल-वरल-मोरल-श्रीमाल-नेखलपिच्छल- नारल- डाहलताल-
तमाल-सीमाल-गौमाल-रोमाल-तोमल-केमाल-हेमाल-देहल-
सेहल-टमाल-कमाल-किरात-मेवात-चित्रकूट-हेमकूट- चूरंड-
मुरंड-उद्रयाणा-आद्रभाद्र- पुलिन्द्र- सुराष्ट्र- प्रमुखदेशार्ज्जिन्दु-

कुवलयोज्जल-यशोराशीनां, सकलशास्त्रसमुद्रप्राप्तानां, समग्रविद्वज्जन-नमित-चरणपङ्केरुहाणां, व्याख्यामृतपेषित- सकलभव्यवर्गाणां, सकलतार्किकशिरोमणीनां, दिल्लीसिंहासनाधीश्वराणाम्, सार्थकनामविराजमान- अभिनवभट्टारकश्रीवादिभूषणदेवानाम् ॥१४॥

पट्टावली का भाषानुवाद

श्री जिननाथको स्वस्ति हो, सिद्धाचार्यों को स्वस्ति हो, पाठक और आचार्यों को स्वस्ति हो तथा श्रीगुरुको स्वस्ति हो ॥१॥

अर्हन्तदेव मङ्गलस्वरूप हैं। सिद्धाचार्यगण मंगलस्वरूप है और उपाध्याय, साधु तथा जैनधर्म मंगलमय हों॥२॥

मोक्ष का मार्ग दिखाने के लिये अन्नयप्रदीप, भू खेचरों से स्तुत्य, भूतलमें तिलकस्वरूप, श्रीमूलसंघ के अति उज्जवल बलात्कारनामक गण के सरस्वतीगच्छ मे सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान तथा सम्यक्चारित्र से समलंकृत प्रसिद्ध गौतम आदि गणधर इस भूतलमे जयवन्त हों ॥३॥

श्रीमहावीर स्वामी के मुखकमल से निकली हुई दिव्यध्वनि को धारण और प्रकाशन करने मे प्रवीण गौतम गणधर के वंशधर श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु स्वामी हुए ॥४॥

इनके वंशाकाश के सूर्य श्रीसीमन्धर के वचनामृत के पानसे सन्तुष्ट चित्तवाले श्रीकुन्दकुन्दाचार्य हुए ॥५॥

इनके आम्नाय को धारण करने मे अग्रगण्य, कविता, गमकता वादिता और वाग्मिता आदि चार प्रकार की पाण्डित्यकला में निपुण, बौद्ध नैयायिक, सांख्य, वैशेषिक और चार्वाक मत को माननेवाले वादिगजके लिये सिंहके समान श्री पद्मनन्दि भट्टारक हुए ॥६॥

इनके शिष्योंमें अग्रगण्य और अनेक शास्त्रसमुद्रमें पारंगत, एकावली, द्विकावली, कनकावलि, रत्नावलि, मुक्तावलि, सर्वतोभद्र और सिंहविक्रमादि बड़ी-बड़ी तपस्यारूपी वज्रसे कर्मरूपी पर्वतोंको नष्ट करनेवाले, सिद्धान्तसार, तत्वसार और अनेक यत्याचारके सिद्धान्तग्रन्थो को बनानेवाले, मिथ्यात्वरूपी अन्धकार को दूर करनेके लिये सूर्य, कुशलतापूर्वक मोक्षलक्ष्मी के सुख को प्रकटित करनेवाले, जिनधर्मरूपी समुद्र को बढ़ाने के लिये पूर्णचन्द्रमाके सदृश, यथोक्त चरित्रका आचरण और समर्थन करनेवाले दिगम्बराचार्य श्री सकलकीर्ति भट्टारक हुए ॥७॥

इनके पट्ट के भूषणतुल्य सभी कलाओं मे कुशल, रत्न, सुवर्ण, रौप्य, पितल, तथा पाषाण की प्रतिमा, यन्त्र और प्रासादकी प्रतिष्ठा और अर्चन-विधान जन्य कीर्ति-कर्पूरसे त्रिभुवन- विवरको पूरित करनेवाले, महातपस्वी श्रीभुवनकीर्तिदेव हुए ॥८॥

इन के पट्टरूपी उदयाचल के लिये सूर्य के समान, गुर्जर देश मे सर्वप्रथम सागारधर्म का प्रचार करनेवाले, अहीरदेश में स्वीकृत एकादश प्रतिमा (क्षुल्लक पद) से पवित्र शरीरवाले, वाग्वरदेश में अंगीकृत दुर्धर महाव्रत (मुनिपद) के महापुण्यको उपार्जित करनेवाले, तौलव देशके महावादीश्वर विद्वज्जन- चक्रवर्तियोंमे प्रतिष्ठा प्राप्त करनेवाले, तिलंग देशके सज्जनोंसे पूजित चरणकमलवाले, द्रविड देशके सुविज्ञोंसे स्तुति किये जानेवाले, महाराष्ट्र देशमें उज्जवल यशका विस्तार करनेवाले, सौराष्ट्र देश के उत्तम

उपासकों से महोत्सव मनाये जानेवाले, सम्यग्दर्शन से युक्त रायदेश के निवासी प्राणिसमूहसे प्रमाणी- हृदय-कमल को विकसित करनेके लिये सूर्यके समान, मेवातदेश के अन्यान्य विज्ञउपासकों को अपने आध्यात्मिक व्याख्यानों से रंजित करनेवाले, कुरुजांगल देश के प्राणियों के अज्ञानरुपी रोग को हटानेके लिये सद्वैधके समान, तुरवदेशमें षड्दर्शनन्याय आदिके अध्ययनसे उत्पन्न अखर्व गर्व करने वालोंको दबाकर विजय प्राप्त करनेवाले, विराट देश में उभय मार्गको प्रदर्शित करनेवाले, नमियाड़ देशमे जिनधर्मकी अत्यन्त प्रभावना और नव हजार उपदेशकों को नियत करनेवाले, टग, राट हड़ीवटी, नागर और चाल आदि अनेक जनपदोंमें ज्ञानप्रचारके लिये विहार करनेवाले , श्रीमूलसंघ बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ के दिल्लीसिंहासन के अधिपति, अपने प्रतापसे दिङ्मण्डलको आक्रमण करनेवाले, अष्ट अंगयुक्त सम्यकत्व आदि अनेक गुणगणसे अलंकृत और श्रीमत् इन्द्र भूपालोंसे पूजित चरणकमलवाले, गजान्त लक्ष्मी, ध्वजान्त पुण्य, नाद्यान्त भोग, समुद्रान्त भूमिभागके रक्षक सामन्तों के मस्तकसे घृष्ट चरणकमलवाले श्रीदेवरायराजसे पूजित पादपद्मवाले, जिनधर्मके आराधक मुदिपालराय, रामनाथराय, बोमरसराय, कलपराय, पाण्डुराय आदि अनेक राजाओंसे अर्चित चरणयुगलवाले, अनेक तीर्थयात्राओं को करनेवाले, मोक्षलक्ष्मीको वशीभूत करनेवाले, रत्नत्रयसे सुशोभित शरीरवाले, व्याकरण, छन्द, अङ्कार, साहित्य, न्याय और अध्यात्मप्रमुख शास्त्ररूपी मानसरोवर के राजहंस, शुद्ध ध्यानरूपी अमृतपान की लालसा करनेवाले और वसुन्धरा के आचार्य श्री मद्भट्टारकवर्य्य श्री ज्ञानभूषण हुए ॥९॥

जो इनके पट्टरूपी पद्मके लिये सूर्यके समान हैं, विवेकपूर्वक अनेक जीर्ण अथवा नूतन जिन-प्रासादोंका उद्धार करनेवाले हैं, अनेक प्रकारके जिनविम्ब की प्रतिष्ठा का उपदेश देनेवाले हैं, जिनकी यशोराशि का मान अङग, बङग, कलिङ्ग, तौलव, भालव और मेदपाट आदि देशो के निवासियोंने किया है, जिनके चरणकमल जैन राजाओं तथा अन्य राजाओंसे पूजे गये है, ऐसे अभिनव बालब्रह्मचारी श्री भट्टारक विजयकीर्तिदेव हुए ॥१०॥

जो इनके पट्टरूपी पयोनिध को उल्लसित करने के लिये चन्द्रमा के समान हैं, प्रमाणपरीक्षा, पत्रपरीक्षा, पुष्पपरीक्षा, परीक्षामुख, प्रमाणनिर्णय, न्यायमकरन्द, न्यायकुमुदचन्द्रोदय, न्यायविनिशचयालङ्कार, श्लोकवार्तिक, राजवार्तिकालङ्कार, प्रमेयकमलमार्तण्ड, आप्तमीमांसा, अष्टसहस्त्री, चिन्तामणि, मीमांसाविवरण, वाचस्पति की तत्वकौमुदी आदि कर्कश न्याय, जैनेन्द्र, शाकटायन, इन्द्र, पाणिनि, कलाप, काव्यादि में विचक्षण हैं, त्रैलोक्यसार, गोम्मटसार, लब्धिसार, क्षपणसार, त्रिलोकप्रज्ञप्ति, अध्यात्माष्टसहस्त्री और छन्द, अलङ्कारादि शास्त्रसमुद्रके पारगामी हैं, शुद्धात्माके स्वरूपके चिन्तन से निद्रा को विनष्ट करनेवाले हैं, सब देशों में विहार करने से अनेक कल्याणों को पानेवाले है, विवेकविचार, चतुरता, गम्भीरता, धीरता, वीरता आदि गुणगण के समुद्र हैं, उत्कृष्टपात्र है, अनेक छात्रों का पालन करनेवाले हैं, उत्तम-उत्तम यात्राओं के करनेवाले हैं, विद्वन्मण्डलीमे सुशोभित शरीरवाले है, गौडवादियों के अन्धकार के लिए सूर्यके समान है, कलिग के वादिरुपी मेघोंके लिये वायुके समान हैं, कर्नाटके वादियों के प्रथम वचन का खण्डन पकरने में परम समर्थ है, पूर्व के वादिरुपी मातंग के लिये सिंहके समान हैं, तौलके वादियों की विडम्बना के लिये वीर हैं, गुर्जरवादिरूपी समुद्र के लिये अगस्त्य के समान

हैं, मालववादियों के लिये मस्तकशूल हैं, अनेक अभिमानियों के गर्व का नाश करनेवाले हैं, स्वसमय और परसमय के शास्त्रार्थ को जाननेवाले हैं और महाव्रत को अंगीकार करनेवाले हैं, ऐसे अभिनव सार्थक नामवाले श्रीशुभचन्द्रचार्य हुए ॥११॥

इनके पट्टपर जो अलौकिक बुद्धिसे युक्त हैं, सुनिश्चित और असम्भव बाधकप्रमाणादि साधनसनूह से संसाधित, तीनों असाधारण विशेषणों से परमात्मा को सिद्ध करनेवाले हैं, परमागमरूपी समुद्र को बढाने के लिये चन्द्रमा के समान है, जिनके स्वच्छ चरणकमल परवादियों के समूह से अर्चित हैं, ऐसे बालबह्मचारी श्री भट्टारक सुमतिकीर्तिदेव हुए॥११॥

इनके पट्टरूपी कमलके लिये सूर्यके समान, पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति और अट्ठाईस मूलगुणों से युक्त, अपने उपदेशरूपी अमृतसे भव्योको परिपुष्ट करनेवाले, कर्मरूपी भयङ्कर पर्वत को चूर्ण करने मे समर्थ, परमात्मगुणों की अतिशय परीक्षा से सरवज्ञ का स्वरूप माननेवाले और समुज्जवल विज्ञान के बलसे सामान्य और विशेषरूप वस्तु को समझनेवाले परमपवित्र भट्टारक श्रीगुणकीर्तिदेव हुए ॥१२॥

इनके पट्टरूपी कुमुद को प्रकाशित करने के लिये चन्द्रमा के सामन, अङ्ग, वङ्ग, तैलङ्ग वेट, भोट, लाट, कुंवल, कर्णाट, मरहट, चीन, चोल्ह, हव्व, खुरखाण, आरब, तौलात, मेदपाट, मालव, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उतर, गुर्जर, वाग्वर, रायदेश, नागर, चाल, मरूस्थल, स्फुरदंगि, कोशल, मगध, पल्लव, कुरूजांगल, काञ्ची, लाबुस, पुट्टोट, काशी, कलिङग, सौराष्ट्र, काश्मीर, द्राविड़, गौड़, कामरू, मलताण, मुंगी, पठाण, बुगलाण, हडावट्ट,संपादलक्ष, सिन्धु, सिन्धुल, कुन्तल, केरल, मंगल, जालोर, गंगल, सुन्तल, पुरल, जांगल, पंचालन, नट्ट, धट्ट, खेट्ट, कोरट्ट, वेणुतट, कलिंकोट, मरहट्ट, कौरट्ट, चैरट्ट, खेरट्ट, स्मैरतट्ट, महाराष्ट्र, विराट, किराट, नमेद, सिन्धुतट, गंगेतट, पल्लव, मल्लवार, कवोट, गौड़वाड़, तिंगल, किंगल, मलयम, मरूमेखल, नेपालस, हैवतरूल, संखल, करल, मोरल, श्रीमाल, नेखल, पिच्छल, नारल, डाहल, ताल, तमाल, सौमाल, गौमाल, रोमाल, तोमाल, केमाल, हेमाल, देहल, सेहल, टमाल, कमाल, किरात, मेवात, चित्रकूट, हेमकूट, चुरंड, उद्रयाण, आद्रमाद्र, पुलिन्द्र

और सुराट्र आदि देशों मे इन्दु और कुवलय के समान स्वच्छ यशोराशि को उपार्जित करनेवाले, सभी शास्त्ररूपी समुद्र में पारंगत, अपनी व्याख्या-सुधा-धारा से सभी भव्यजनों को पुष्ट करने वाले और सभी तार्किकों के शिरोमणि दिल्ली-सिंहासन के अधीश्वर सार्थक नामवाले अभिनव भट्टारक श्रीवादिभूषणदेव हुए ॥१३॥

ईडर गद्दी के प्रथम भट्टारक सकलकीर्ति

समयः वि. सं. १४६२ से १४९९ ई. सन १४०५ से १४३४

सकल कीर्ति आचार्य - परिचय

संस्कृत भाषा एवं साहित्य के विकास में जैनाचार्यों एवं सन्तों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। यद्यपि भगवान महावीर ने अपने दिव्य संदेश अर्धमागधी भाषा में दिये थे और उनके परिनिर्वाण के पश्चात एक हजार वर्ष से भी अधिक समय देश में प्राकृत भाषा का वर्चस्व रहा और उसमें अपार साहित्य लिखा गया, लेकिन जब जैनाचार्योंने देश के बुद्धिजीवीयो की रुचि संस्कृत की ओर अधिक देखी तथा संस्कृत भाषा का विद्वान ही पंडितों की श्रेणी में समझा जाने लगा तो उन्होने संस्कृत भाषा को अपनाने में अपना पूर्ण समर्थन दिया और अपनी लेखनी द्वारा संस्कृत में सभी विषयो के विकास पर इतना अधिक लिखा कि अभी तक पूर्ण रूपसे उसका इतिहास भी नही लिखा जा सका। उन्होंने काव्य लिखे, कथा एवं नाटक लिखे। आध्यात्मिक एवं सिद्धांन्त ग्रंथो की रचना की। दर्शन एवं न्यायपर शीर्षस्थ ग्रंथों की रचना करके संस्कृत साहित्य के इतिहास में अपना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। यही नहीं आयुर्वेद, ज्योतिष, मन्त्र शास्त्र, गणित जैसे विषयों पर भी उन्होने अनेक ग्रन्थों की रचना की। संस्कृत भाषा में ग्रन्थ निर्माण का उनका यह क्रम गत डेढ़ हजार वर्षों से उसी अबाध गति से चल रहा है। आचार्य समन्तभद्र, आचार्य सिद्धसेन, आचार्य पूज्यपाद आचार्य रविषेण आचार्य अकलंकदेव, आचार्य जिनसेन, विद्यानन्द एवं अमृतचन्द्र जैसे महान आचार्य पर किसे हर्ष नही होगा ? इसीतरह आचार्य गुणभद्र, वादीभसिंह, महावीराचार्य, आचार्य शुभचन्द्र, हस्तिमल्ल, जैसे आचार्य ने संस्कृत भाषा में अपार साहित्य लिख कर संस्कृत साहित्य के यश एवं गौरव को द्विगुणित किया। १४ वी शताब्दी में ही देशमें भट्टारक संस्था ने लोकप्रियता प्राप्त की। ये भट्टारक स्वंय ही आचार्य उपाध्याय एवं सर्वसाधु के रूप में सर्वत्र समादृत थे। इन्होंने अपने ५०० वर्षों के युग में न केवल जैन धर्म की ही सर्वत्र प्रभावना की किन्तु अपनी अपनी महान विद्वत्ता से संस्कृत साहित्य की अनोखी सेवा की और देश को अपने त्याग एवं ज्ञानसे एक नवीन दिशा प्रदान की।

इन भट्टारकों में सकलकीर्ति का नाम विशेषत : उल्लेखनीय है।

वे ऐसे ही सन्त शिरोमणी है जिनकी रचनायें राजस्थान के शास्त्र भण्डारों का गौरव बढ़ा रही हैं। इस प्रदेश का ऐसा कोई ग्रन्थागार नहीं जिसमें कम से कम तीन चार कृतियां संग्रहीत नही हों। वे साहित्य-गगन के ऐसे महान् तपस्वी सन्त है जिनकी विद्वत्ता पर देश का सम्पूर्ण विद्वद समाज गर्व कर सकता है। वे साहित्य गगन के सूर्य हैं और अपनी काव्य प्रतिभा से गत ७०० वर्षो से सभी आलोतॉकित कर रखा है। उन्होंने संस्कृत एवं राजस्थानी में दो चार नहीं पचासो रचानयें निबद्ध कीं और काव्य पुराण, चरित, कथा, आध्यात्म, सुभाषित आदि विविध विषयो पर अधिकार पूर्वक लिखा। गुजरात बागड़ मेवाड एवं ढूढाहड़ प्रदेश में जिनके पचासों शिष्य प्रशिष्यो ने उनकी कृतियों की प्रतिलिपियां करके यहां के शास्त्र भण्डारों की शोभा में अभिवृद्धि की। और गत ५०० वर्षों

से जिनकी कृतियों का स्वाध्याय एवं पठन पाठन का समाजमें सर्वाधिक प्रचार रहा है। जिनमें कितने ही पुराण एवं चरित्र ग्रन्थों की हिन्दी टीकायें हो चुकी है तथा अभी तक भी वही क्रम चालू है। ऐसे महाकवि का संस्कृत साहित्य के इतिहास में कोई विशेष उल्लेख नहीं मिलना निसन्देह विचारणीय है। राजस्थान के जैन सन्त वयक्तित्व एवं कृतित्व पुस्तकमें सर्व प्रथम लेखकने भट्टारक सकलकीर्ति पर जब विस्तृत प्रकाश डाला तो विद्वानों का इस और ध्यान गया और उदयपुर विश्वविद्यालय से डॉ. बिहारीलालजी जैन ने भट्टारक सकलकीर्ति पर एक शोध प्रबन्ध लिख कर उसके जीवन एवं कर्तृत्व पर गहरी खोज की और बहुत ही सुन्दर रीति से उनका मूल्यांकन प्रस्तुत किया। प्रसन्नता का विषय है कि उदयपुर विश्वविद्यालय ने शोध प्रबन्ध को स्वीकृत करके श्री बिहारीलाल जैन को पी.एच.डी. की उपाधि से सन्मानित भी कर दिया है। डा. जैन ने सकलकीर्ति की आयु एवं जीवन के सम्बन्ध में कुछ नवीन तथ्य उपस्थित किये है। लेकिन सकलकीर्ति के विकास साहित्य को देखते हुए अभी उनका और भी विस्तृत मूलांयकन होना शेष है। अभी तक विद्वानों ने क्षेत्र के रूपमें उनके साहित्य का निम्नलेख किया है तथा उनका सामान्य परिचय पाठकों के समक्ष उपस्थित किया है किन्तु उनकी प्रत्येक कृति अपूर्व कृति है जिसमें सभी प्रकार की सामग्री उपल्बध होती है। उन्होंने काव्य लिखे पुराण लिखे एवं कथा साहित्य. लिखा और जन साधारण में उन्हे लोक प्रिय बनाया। उन्होंने संस्कृतमें ही नही राजस्थानी भाषा में भी लिखा। इसमें भट्टारक सकलकीर्ति के महान व्यक्तित्व को देखा एवं परखा जा सकता है ~

जीवन परिचय

भट्टारक सकलकीर्ति का जन्म संवत १४४३ सन(१३८६) में हुआ था। इनके पिता का नाम करमसिंह एवं माता का नाम शोभा था। ये अणहिलपुर पट्टण के रहने वाले थे. इनकी जाति हूमड थी।'' होनहार विरवान के होत चीकने पात '' कहावत के अनुसार गर्भ धारण करने पश्चात इनकी माता ने एक सुन्दर स्वप्न देखा और उसका फल पूंछने पर करमसिंहने इस प्रकार कहा।

> तजि वयण सुणीसार, कुमर तुम्ह होइसिइए।
> निर्मल गंगानीर, चन्दन नन्दन तुम्ह तणुए ॥ ९॥
> जलनिधि गहिर गम्भीर खीरोपम सोहामणुए।
> ते जिही तरण प्रकाश जग उद्योतन जस किरणि ॥१० ॥

बालक का नाम पूनसिंह अथवा पूरण सिंह रखा गया। एक पट्टावलि में इनका नाम पदर्थ दिया हुवाहै। द्वितिय. के चन्द्रमा के समान वह बालक दिन प्रतिदिन बढने लगा। उसका राजहंस के समान शुभ था तथा शरीर बत्तीस लक्ष्णों से युक्त था पांचवर्ष के होनेपर पूर्णसिंह को पढ़ ने बैठा दिया गया। बालक कुशाग्र बद्धि का था इसलिये शीघ ही उसने सभी ग्रंथो का अध्ययन कर लिया। विद्यार्थी अवस्थामें भी इनका अर्हदभक्ति की ओर अधिक ध्यान रहता था तथा क्षमा सत्य शौच एवं ब्रह्मचर्य आदि धर्मों को जीवन में उतारने

का प्रयत्न करते रहते थे। पिताने १४ वर्ष की अवस्था में उनका विवाह कर दिया लेकिन विवाह बंधन में बाधने के पश्चात भी उनका मन संसार में नही लगा। और वे उदासीन रहेन लगे। पुत्र की गतिविधियाँ देखकर मातापिता ने उन्हें बहुत समझा लेकिन उन्हे कोई सफलता नही मिली। पुत्र एवं माता पिता के मध्य बहुत दिनो तक वाद विवाद चलता रहा। पूर्णसिंहको कुछ समझ में नही आता और वे बार बार साधु जीवन धारण करने उनसे स्वीकृति मागते रहते।

अन्त में पुत्र की विजय हुई और पूर्णसिंह ने २६ वें वर्ष में अपार सम्पति को तिलांजलि देकर साधु जीवन अपना लिया। वे आत्म कल्याण के साथ साथ जन कल्याण की ओर चल पड़े भट्टारक सकलकीर्तिनुं रास के अनुसार उनकी इस समय केवल १८ वर्ष की आयु थी।

हरषी सुणीय सुवाणि पालइ अन्य ऊअरि सुपर।
चोऊद त्रिताल प्रमाणि पूरइ दिन पुत्र जन्मोउ ॥
न्याति माहि मुहतवंत हूंबड़ हरषि वखाणिइये।
करमसिंह पितपद्म उदयवंत इन जाणिए।
शोभित रस अरधांगि भूलि सरीस्य सुन्दरीय।
सील स्यंगारित अगि पेखु प्रत्यक्ष पुरंदरीय ॥४॥

सकलकीर्ति रास

देखवि चंच्चल चित्त माता पिता कहि वछ सुणी।
अहम् मन्दिर बहू वित्त आविसिह कारणि कवइ
लहुआ लीलावंत सुख भोगवि संसार तणाए।
पछइ दिवस बहूत अछिह संयम तर तणाए ॥
वयणि तं जि सुणेवी पुत्र पिता प्रति हम कहिए।
निजमन सुविस करेवि धीर जे तरणि तप गहिए ॥
ज्योवन गिइ गमार पछइ पालइ शीयल घणां।
ते कुहु कवण विचार विण अवसर जे वरसीयिए ॥

उस समय भट्टारक पद्मनन्दिका मुख्य केन्द्र नेएवां (उदयपुर) था और वे आगम ग्रन्थों के पारमगामी विद्वान माने जाते थे इसलिये ये भी नेणवां चले गये और उनके शिष्य बनकर अध्ययन करने लगे। यह उनके साधु जीवन की प्रथम पद यात्रा थी। वहां ये ८ वर्ष रहे और प्राकृत एवं संस्कृत के ग्रन्थो का गम्भीर अध्ययन किया। उनके मर्म को समझा और भविष्य में सत साहित्या का प्राचार -प्रसार हू अपना जीवन का एक उदेश्य बना लिया ३४ में वर्षमें उन्होंने आचार्य पदवी ग्रहण की। और नाम सकलकीर्ति रखा गया। आचार्य सकलकीर्ति ने बागड और गुजरात में पर्याप्त भ्रमण किया था। और धर्मोपदेश देकर श्रावकों में धर्म भावना जागृत की थी उन दिनो में उक्त प्रदेशो में दि. जैन मन्दिरों की संख्या भी बहुत कम थी तथा साधु केना पहुँचने कारण अनुयायिओं में धार्मिक शिथिलता आ गई थी। अतएव इन्होने गाव गावमें विहार कर लोगोके ह्रदय में स्वाध्या और

भगवदभक्तिकी रुचि उत्पन्न की । बलात्कारगण ईड़र शाखा का आरम्भ भट्टारक सकलकीर्ति से ही होता हैं । यह बहुत ही मेधावी प्रभावक ज्ञानी और चरित्रवान थे। बागड देश में जहाँ कही पहले कोई भी प्रमाव नहीं था वि. सं. १४९२ में गलीयाकोट में भट्टारक गद्दी की स्थापना की तथा अपने आपको सरस्वती गच्छ एवं बलात्करगण से संबोधित किया । ये उत्कृष्ट तपस्वी और रत्नावली सर्वतोभद्र मुक्तावली आदि व्रतों का पालन करनेमें सजग थे ।

विहार

सकलकीर्ति का साधु-जीवन सं १४७७ से प्रारम्भ होकर १४९९ तक रहा । इन २२ वर्षों में उन्होंने मुख्य रुप से राजस्थान के उदयपुर बांसवाडा प्रतापगढ आदि राज्यों एवं गुजरात प्रान्त के राजस्थान के समीस्पथ प्रदेशमें खूब विहार किया ।

उस समय जन साधारण के जीवन में धर्म के प्रति काफी शिथिलता आगई थी । साधु संतों के विहार का प्रभाव था जन साधारण की न तो स्वाध्याय के प्रति रुचि रही थी और न उन्हे सरल भाषामें साहित्य ही उपलब्ध होता था । इसलिये सर्व प्रथम सकलकीर्ति ने उन प्रदेशो में विहार किया । सारे समाज को एक सूत्र में बाधनेक प्रयास किया । इसी उद्देश्य से उन्होंने कितने ही यात्रा संघो का नेतृत्व किया सर्व प्रथम उन्होंने गिरनार की संघ के साथ यात्रा प्रारम्भ की । फिर वे चांपानेर की ओर यात्रा करने निकले । वहाँ से आने के पश्चात हूमड़ जातिय रत्ना के साथ मागींतुगी की यात्रा के लिये प्रस्थान किया इसके पश्चात उन्होंने अन्य तीर्थो की वंदना की जिससे देश में धार्मिक चेतना फिर से जाग्रत होने लगी ।

प्रतिष्ठाओं का आयोजन

तीर्थयात्रा के पश्चात सकलकीर्ति ने नव मन्दिर निर्माण एवं प्रतिष्ठाएँ करवाने का कार्य हाथ में लिया । उन्होंने अपने जीवन में १४ बिम्ब प्रतिष्ठाओका संचालन किया इस कार्यो में योग देने वाले में संघपति नरपाल एवं उनकी बहुरानी का नाम विशेषतः उल्लेखनीय है । गलियाकोट में संघ पति मूलराजने इन्ही के उपदेशसे '' चतुर्विंशति जिन बिम्ब '' की स्थापना की थी । बागदा जाति के श्रावक संघपति ठाकुरसिंहने भी कितनी ही बिम्ब प्रतीष्ठाओं में योगदिया । भट्टारक सकलकीर्ति द्वारा संवत १४९० १४९२ १४९७ आदि संवतोमें प्रतिष्ठापित मूर्तियाँ उदयपुर डूंगरपुर एव सागवाड़ा आदि स्थानों के जैन मन्दिर में मिलती है । प्रतिष्ठा महोत्सवों के इन आयोजनों से तत्कालीन समाज में जो जन जाग्रति उत्पन्न हुई थी उसने देश मे जैन धर्म एवं संस्कृति के प्रचार प्रसार में अपना पूरा योग दिया ।

वयक्तित्व एवं पांडित्य

भट्टारक सकलकीर्ति असाधारण व्यक्तित्व के धनी थे इन्होने जिन जिन परम्पराओ नींव रखी उनका बादमें खूब विकास हुआ वे गम्भीर अध्ययन युक्त संत थे प्राकृत एवं संस्कृत भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार था ब्रह्म जिनदास एवं भ. भुवनकीर्ति जैसे विद्वानो का इनके शिष्य होना ही इनके प्रबल पांडित्य का सूचन है । इनकी वाणी में जादू था

इसलिये जहाँ भी इन्होने विहार हो जाता था वही इनके सैकड़ों भक्त बन जाते थे वे स्वंय तो योग्यतम विद्वान थे ही किन्तुं इन्होंने अपने शिष्य को भी अपने समान विद्वान बनाया। ब्रह्म जिनदासने अपने ग्रन्थों में भट्टारक सकलकीर्ति को महाकवि निर्गन्थराज शुद्ध चरित्र धारी एवं तपोनिधि आदि उपाधियों से संबोधित किया है । भट्टारक सकलभूषण ने अपने उपदेश रत्नमाला की प्रशस्ति में कहा कि सकलकीर्ति जिनका चित स्वतः ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेत थे ये पुण्यमूर्ति स्वरूप थे तथा अनेक पुराण ग्रन्थों के रचयिता थे ।

इसी तरह भट्टारक शुभचन्द्र ने सकलकीर्ति को पुराण एवं काव्य का प्रसिद्ध नेता कहा। इनके अतिरिक्त इनके बाद होने वाले प्रायः समी भट्टारको ने सकलकीर्ति के व्यक्तित्व एवं विद्वत्ता भारी प्रशंसा की है ये भट्टाराक थे किन्तु मुनीनाम से भी अपने आपको संबोधित करते थे । कुमार चरित्र ग्रन्थ को पुष्पिका में इन्होने अपने आपको मुनिसकलकीर्ति नाम से परिचय दिया है । ये स्वंय भी नग्न अवस्थामें रहते थे । और इसीलिये निर्ग्रथकांर अथवा निर्ग्रन्थराज के नामसे भी अपने शिष्यों द्वारा किये गये है इन्होंने बागड प्रदेश में जहाँ भट्टारकों का प्रभाव नहीं था । संवत १४९२ में गलियाकोट में एक भट्टारक गादी की स्थापना की और अपने आपको सरस्वती गच्छ एवं बलात्कार गण की परम्परा का भट्टारक घोषित किया । ये उत्कृष्ट तपस्वी थे तथा अपने जीवन में इन्होने कितने ही व्रतों का पालन किया था । सकलकीर्ति ने जनता को जो कुछ चरित्र सम्बन्धी उपदेश दिया था पहिले उसे अपने जीवन में उतारा २२ वर्ष के एक छोटे से समयमें ३५ से अधिक ग्रन्थों की रचना विविध ग्रामों एवं नगरो में विहार भारत के राजस्थान उत्तरप्रदेश गुजरात मध्य प्रदेश आदि प्रदेशो के तीर्थों की पद यात्रा एवं विविध व्रतों का पालन केवल सकलकीर्ति जैसे महा विद्वान एवं प्रभावशाली व्यक्तित्व वाले साधु से ही सम्पन्न हो सकते थे । इस प्रकार ये श्रद्धा ज्ञान एवं चरित्र से विभूषित उत्कृष्ट एवं आकर्षक व्यक्तित्व वाले साधु थे ।

मृत्यु

एक पट्टावली के अंनुसार भट्टारक सकलकीर्ति ५६ वर्ष तक जीवित रहे । संवत १४९९ में महसाना नगर में उनका स्वर्गवास हुआ । पं. परमान्दजी शास्त्री ने भी प्रशस्ति संग्रह में भी उनकी मृत्यु संवत १४९९ में महेसाना (गुजरात) में होना लिखा है . डा. ज्योतिप्रसादजन एवं डा. प्रेमसागर भी इसी संवत को सही मानते है । लेकिन डा. ज्योतिप्रसाद इनका पूरा जीवन ८१ वर्ष स्वीकार करते है जो अब लेखक को प्राप्त विभिन्न पट्टावलायो के अनुसार वह सही नहीं जान पड़ता सकलकीर्ति रास में उनकी विस्तृत जीवन गाथा है । उसमें स्पष्ट रूप से संवत १४४३ को जन्म एवं संवत १४९९ में स्वर्गवास होने का स्वीकार किया है ।

तत्कालीन सामाजिक अवस्था

भट्टारक सकलकिर्ति के समय देश की सामाजिक स्थिति अच्छी नही था।. समाज में सामाजिक एवं धार्मिक चेतना का अभाव था शिक्षा की बहुत कमी था। साधुओं का प्रभाव था भट्टारक के नग्न रहेने की प्रथा थी स्वंय भट्टारक सकलकीर्ति भी नग्न रहते थे । लोगो में धार्मिक श्रद्धा बहुत थी तीर्थ यात्रा बडे - बडे संघों में होती थी उनका नेतृत्व करनेवाले

साधु होते थे। तीर्थयात्रा ये बहुत लम्बी होती थी तथ वहाँ से सकुशल लौटने पर बड़े बडे उत्सव एवं समारोह किये जाते थे। भट्टारकों ने पंच-कल्याणक प्रतिष्ठाओं एवं अन्य धार्मिक समारोह करने की अच्छी प्रथा डाल दी थी। इनके संघों में मुनि आर्यिका श्रावक आदि सभी होते थे साधुओं में ज्ञान प्राप्ति की काफी अभिलाषा होती थी तथा संघ के सभी साधुओं को पढ़ाया जाता था। ग्रन्थ रचना करने का भी खूब प्रचार हो गया था। भट्टारक गण भी खूब ग्रन्थं रचंना करते थे। वे प्राय: अपने ग्रन्थ को श्रावकों के आग्रह से निबद्ध करते रहते थे। व्रत उपवास की समाप्ति पर श्रावकों द्वारा इन ग्रन्थों की प्रतियाँ विभिन्न ग्रन्थ भंडारों की भेट स्वरूप दे दी जाती थी। भट्टारकों के साथ हस्तलिखित ग्रन्थों के साथ बस्ते के बस्ते होते थे। समाज में स्त्रीओकी स्थिति अच्छी नही थी और न उनके पढने लिखनेका साधन था। व्रतोद्यापन पर उनके आग्रह से ग्रन्थों की स्वाध्यायार्थ प्रतिलिपि कराई जाति थी और उन्हें साधु संतों को पढ़ने के लिये दे दिया जाता था।

साहित्यसेवा

साहित्य सेवा में सकल कीर्ति का जबरदस्त योग रहा। कभी कभी तो एसा मालूम होने लगा है जैसे उन्होने अपने साधु जीवन के प्रत्येक क्षण का उपयोग किया हो। संस्कृत, प्राकृत एवं राजस्थानी भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार था। वे सहज रूप में ही काव्य रचना करते थे। इसलिये इनके मुख से जो भी वाक्य निकलता था वही काव्य रूप में परिवर्तित हो जाता था। साहित्यरचना को परम्परा सकलकीर्तिने ऐसी डाली की राजस्थान के बागड एवं गुजरात प्रदेश में होनेवाले अनेक साधुसंतों ने साहित्य की खूब सेवा की तथा स्वाध्याय के प्रति जन साधारण की भावना को जागृत किया। इन्होने अपने अन्तिम २२ वर्ष के जीवन में २७ से अधिक संस्कृत रचनाएँ एवं ८ राजस्थानी रचनाएँ निबद्ध की थी।

राजस्थान में ग्रन्थ भण्डारों की जो अभी खोज हुई है, उनमें हमें अभी तक निम्न रचनाएँ उपलब्ध हो सकी हैं।

संस्कृत रचनाएँ

१ मूलाचार प्रदीप २ प्रश्नोत्तरोपासकाचार ३. आदिपुराण ४. उत्तरपुराण ५. शांतिनाथ चरित्र ६. वर्धमान चरित्र ७. मल्लिनाथ चरित्र ८. यशोधरचरित्र ९. धन्यकुमार चरित्र १०. सुकुमालचरित्र ११. सुर्दशन चरित्र १२. सतभाषितावली १३. पार्श्वनाथचरित्र १४. व्रत कथा चरित्र १५. निमिजीन चरित्र कर्मविपाक १७. तत्वार्थसार दीपक १८. सिद्धांतसार दिपक १९. आगमसार २०. परमार्थराज स्तोत्र २१. सारचर्तुविंशिका २२. श्रीपालचरित्र २३. जम्बूस्वामी चरित्र २४. द्वादसानुप्रेक्षा।

पूजा ग्रन्थ

२५. अष्टाह्नहनिका पूजा २६. सोलहकारण पूजा २७. गणधरवलय पूजा।

राजस्थानी कृतियाँ

(१) आराधना प्रतिबोधसार (२) नेमीश्वर गीत (३) मुक्तवलि गीत (४) णमोकार फल गीत (५) सोलहकारण सार (६) सारशिखामणिरास (७) शान्तिनाथ फागु।

विपुल साहित्यनिर्माण की दृष्टिसे आचार्य सकलकीर्ति का महत्वपूर्ण स्थान है। इन्होंने संस्कृत एवं प्राकृत वाडमयो का संरक्षण ही नही किया अपितु उसका पर्याप्त प्रचार और प्रसार किया। हरिवंशपुराण की प्रशस्ति में ब्रह्मजिनदास ने इनको महाकवि कहा है।

भुवन कीर्ति (१५०४-२७)

झालरापाटन के शान्तिनाथ के मंदिर में विराजमान प्रतिमा और यंत्र पर का लेख
१-सं. १५०४ वर्षे फागुन सुदी ११....श्री मूलसंघे भट्टारक श्री सकलकीर्ति देवास्तपट्टे भ. श्री भुवनकीर्तिदेवा हूमड़ज्ञातीय श्रेष्ठि खेता भा. लाषू तयो........।

अर्थ

अर्थात् सं.-१५०४ फागुन सुदी ११ श्री मूलसंघ के भट्टारक श्री सकलकीर्ति देव उनके पट्ट पर भ. श्री भुवनकीर्ति देव हूमड़ जाति के श्रेष्ठि खेता भार्या लाषू उनका.........।

२- सं.-१५२७ वर्षे वैसाख़ वदी ११ बुद्ये श्री मूलसंघे भ. श्री भुवनकीर्ति य. ह. श्रे. नाना भा. पूरा सुत कूणा भा. घन्नी भ्रातृहाया भा. पहुता भ्रातृ.........।

अर्थ

अर्थात् सं.-१५२७ वर्षे वैसाख वदी ११ बुधवार के दिन श्री मूलसंघ के भ. श्री भुवनकीर्ति य.ह. श्रे.नाना भा. पूरा सुत कूणा भा. घान्नी भ्रातृ हाया भा. पहुता भ्रातृ........।

स्थितकाल

भट्टारक सकलकीर्ति द्वारा वि.सं. १४९० (ई.सन्१४३३) वैशाख शुक्ला नवमी शनिवार की एक चौबीसी मूर्ति., विक्रम संवत् १४९२ (ई.सन् १४३६) वैशाख कृष्ण दशमीको पार्श्वनाथमूर्ति सं. १४९४ (ई.सन् १४३७)

वैशाख शुक्ला त्रयोदशी को आबू पर्वत पर एक मन्दिर की प्रतिष्ठा करायी गयी., जिसमे तीन चौबीसी की प्रतिमाएँ परिकर सहित स्थापति की गयी थीं। वि. सं.१४९७ (ई.सन् १४४०) मे एक आदिनाथस्वामी की मूर्ति तथा वि.सं. १४९९ (ई.सन्.१४४२) मे सागवाड़ा मे आदिनाथ मन्दिर की प्रतिष्ठा की थी। इसी स्थान में आपने भट्टारक धर्मकीर्ति का पट्टाभिषेक भी किया था।

भट्टारक सकलकीर्ति ने अपनी किसी भी रचना मे समय का निर्देश नहीं किया है, तो भी मूर्तिलेख आदि साधनों के आधारपर से उनका निधन वि.सं.१४९९ पौष मास मे महसाना (गुजरात) मे होना सिद्ध होता है। इस प्रकार उनकी आयु ४६ वर्ष की आती है।

" भट्टारकसम्प्रदाय" ग्रन्थ मे विघाधर जोहरापुरकरने इनका समय वि.सं.१४५०-१५१० तक निर्धारित किया है। पर वस्तुतः इनका स्थितकाल वि.सं.१४४३-१४९९ तक आता है।

प्रशस्ति संग्रह से:-

ये पद्मनन्दी के पट्ट पर अभिषिक्त हुए थे। इनने अनेकों ग्रन्थ बनाए हैं। ये भारी विद्वान् थे। इनके समय मे अनेको प्रतिष्ठाएं भी हुई हैं। सं. १४६० और १४६२ मे ये मौजुद थे। देखो इनके द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमाओ के लेख प्रशस्ति नं.१० (D.५७.)। इनके परम्परा के पट्टाचार्यो ने इनका सर्वत्र स्मरण किया है। देखो प्रशस्ति नं.११-१२-१३-१४-१५-१८-१९-२०-२१

(D.५८.५९.६०.६१.६२.६३. ६४.६७.६८.६९.७०)

प्रशस्ति नं.१०
सकलकीर्ति (१३६०-६२)
(प्रशस्ति-संग्रह मूलसंघ)

झालरापाटन के शान्तिनाथजी के मंदिर में विराजमान प्रतिमाओं के लेख

१-सं- १४६० वर्षे माघ वदी १२ गुरौ भ. श्री सकलकीर्ति देव, हूमड़ दोशी मेघा श्रेष्ठी अर्चति।

सं. -१४९० वर्षे माघ वदी १२ गुरूवार भट्टारक श्री सकलकीर्ति हूबड़ दोशी मेघा श्रेष्ठी अर्चन करता है।

२-स. १४६२ वर्षे वैसाख वदी १ सोमे श्री मूलसंघे भ. श्री पद्मनन्दि देवास्तत्पदे भ. श्री सकलकीर्ति हूमड़ ज्ञातीय......

सं.-१४९२ वैसाख वदी १ सोमवार श्री मूलसंघ के भट्टारक श्री पद्मनन्दि देव उनके पट्ट पर पर भट्टारक श्री सकलकीर्ति हूमड़ जातीय...................।

अष्टसहस्त्री (झालरापाटन)

सं. १७०१ वर्षे कार्तिक सुदी ८ गुरौ श्री मूलसंघे सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे श्री कुंदकुंदाचार्यान्वये भ. श्री सकलकीर्तिस्तत्पट्टे भ. श्री भुवनकीर्तिस्तत्पट्टे भ. श्री ज्ञानभूषणस्तत्पट्टे भ. श्री विजयकीर्तिस्तत्पट्टे भ. श्री शुभचन्द्रस्तत्पट्टे भ. श्री सुमतिकीर्तिस्तत्पट्टे भ. श्री गुर्णाकीर्तिस्तत्पट्टे भ. श्री वादिभूषणास्तत्पट्टे भ. श्री रामकीतिस्तत्पट्टे भ. श्री पद्मनन्दी श्री गुर्जरमध्यदेशवतिनि दुर्गप्रकारोतुंगप्रतोली चित्रचन्द्रोपक शोभिते श्री खंभात बन्दरे हुबड़ज्ञातीय लघु शाखायां............।

आशय

सं.१७०१ की साल में कार्तिक सुदी ९ गुरूवार के रोज श्री मूलसंघ सरस्वती गच्छ के बलात्कारगण में श्री कुन्दकुन्दाचार्य के अम्वय में भ. श्री सकलकीर्ति उनके पट्ट पर भ. श्री भुवनकीर्ति उनके पट्ट पर भ. श्री ज्ञानभूषण उनके पट्ट पर भ. श्री शुभचंद्र उनके पट्ट पर भ. श्री सुमतकीर्ति उनके पट्ट पर भ. श्री गुर्णाकीर्ति उनके पट्ट पर भ. श्री बादिभूषणा उनके पट्ट पर भ. श्री रामकीर्ति उनके पट्टपर भ. श्री पद्मनंदी गुजरात, मध्यदेशवर्ती दुर्ग प्राकार ऊँचा गलियाँ चित्रविचित्रित चंदोवों से शोभित श्री खंभात बंदर में हूबड़ जाति की लघुशाखा मे............।

भट्टारक ज्ञानभूषण

वि. सं.- १५२५-१५५५

ज्ञानभूषण नाम के चार विद्वानों का उल्लेख मिलता है। उनमें तीन ज्ञानभूषण इनके बाद के विद्वान हैं।

प्रस्तुत ज्ञानभूषण मूलसंघ सरस्वती गच्छ बलात्कारगण के भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा में होने वाले भ. भुवनकीर्ति के पट्टधर थे।

भ. ज्ञानभूषण संस्कृत भाषा के अच्छे विद्वान और कवि थे। गुजरात निवासी होने के कारण गुजराती भाषा पर इनका अधिकार रहा है। यह सागवाड़ा गद्दी के भट्टारक थे। उन्होंने अपने पद पर स्वयं ही विजयकीर्ति को प्रतिष्ठित कर भट्टारक पद से निवृत्ति ले ली। भट्टारक पद पर रहते हुए इन्होंने अनेक मूर्तियों की प्रतिष्ठा कराई।

गुजरात में इन्होंने सागर धर्म और आमीर देश में श्रावक की एकादश प्रतिमाओं को धारण किया था और वाग्वर (वागड़) देश मे पंचमहाव्रत धारण किये थे।

भट्टारक पद पर आसीन होकर इन्होंने आभीर, बागड़ तैलब, दैलंग, द्रविण, महाराष्ट्र और दक्षिण प्रान्त के नगरों और ग्रामो में विहार कर उन्हें संबोधित किया तथा सन्मार्ग में लगाया था। द्रविड देश के विद्वानों ने इनका स्तवन किया था और सौराष्ट्र देशवासी धनी श्रावकों ने इनका महोत्सव किया था। इन प्रदेशों के साथ ही उत्तर प्रदेश मे मी धर्म मार्ग की विमल धारा बहाई थी। यह ऊँचे दर्जे के प्रतिष्ठाचार्य मी थे, आप द्वारा प्रतिष्ठित मूर्तियाँ आज मी प्राप्त होती हैं।

इन्होंने भट्टारक पद पर प्रतिष्ठित होते ही डूंगरपुर में सहस्त्रकूट चैत्यालय की प्रतिष्ठा का संचालन किया। सं. १५४० में हुबड़ श्रावक लाखा और उसके परिवार ने इन्हीं के उपदेश से आदिनाथ की प्रतिमा की प्रतिष्ठा करवाई थी।

ऋषभदेव के यशः कीर्ति भण्डार की पट्टावली से ज्ञात होता है कि ज्ञानभूषण पहले भ. विमलेन्द्र के शिष्य थे और इनके सगे भाई एवं गरुभ्राता ज्ञानकीर्ति थे। ये गोलालारीय जाति के श्रावक थे।

भ. ज्ञान भूषण अपने समय के अच्छे प्रतिभा सम्पन्न मट्टारक थे। इनकी रचनाएँ निम्नलिखित हैं।

(१) पूजाष्टक टीका

यह भ. ज्ञानभूषण की पहली कृति है। मुनि अवस्था में डूंगरपुर के आदिनाथ चैत्यालय में बनाकर समाप्त की थी। यह ज्ञानभूषण रचित पूजाओं की स्वोपज्ञ टीका है। दश अधिकारों में विभाजित यह टीका सम्भवनाथ मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार में उपलब्ध है। उसमें इसे 'विद्वज्जनवल्लभा' बतलाया है।

(२) तत्वज्ञानतरंगिणी स्वोपज्ञ टीका सहित

यह ग्रन्थ १८ अध्यायों मे विभक्त है। इसमें शुद्ध चिद्रूप का अच्छा कथन दिया हुआ है और यह ग्रंथ अध्यात्म रस से सराबोर है। ग्रंथ रोचक और मुमुक्षुओं के लिये उपयोगी है।

स्वकीयं शुद्धचिन्द्रवे सचिर्या निश्चयेन तत्।
सद्दर्शनं मतं तज्ज्ञैः कर्मेन्धन हुताशनम्।।

जिसकी शुद्ध चिद्रूप में रूचि होती है उसे तत्वज्ञानियो ने निश्चय सम्यग्दर्शन बतलाया है। वह सम्यग्दर्शन कर्म ईंधन को जलाने के लिये अग्नि के समान है।

प्रसतुत उदाहरण द्वारा यह जानकारी दी जाती है कि इस ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित हुआ है।

(३) आदिनाथ फाग

यह ग्रंथ ५९१ श्लोकों की संख्या को लिए हुए है. जिसमे २२९ पद्य संस्कृत भाषा के हैं और २६२ पद्य हिन्दी भाषा के है । इन सब को मिलाकर ग्रंथ की ५६१ श्लोक प्रमाण संख्या आती है।

''सर्वामेव नवीन षट्शहमितान (५९१)
श्लोकान्विबुध्याउन्नर्वे ।
शुद्धं ये सुधियः पठन्ति सवहं ते पाठयन्तादरात्।

इसमे भगवान आदिनाथ की जीवन गाथा अंकित है। उनके जन्म, जन्माभिषेक, बाल्य लीला, राज्य पद और तपस्वी जीवन का सुन्दर एवं संक्षिप्त परिचय दिया है। हिन्दी पद्यों मे जिन पर गुजराती भाषा का प्रभाव अंकित हैउन्हीं संस्कृत पद्यों का भाव दिया हुआ है।

(४) नेमि निर्वाण पंजिका

इसमें वाग्भट के नेमि निर्वाण महाकाव्य के विषय पदो का अर्थ स्पष्ट किया है। कहीं-कहीं यमक आदि के गूढ़ स्थलों के उदघाटन करने का भी प्रयत्न किया है। पंजिका उपयोगी है उसका मंगल पद्य निम्न प्रकार है-

धुत्वा नेमीश्वरं चित्ते लब्धानन्तचतुष्टयं।
कुर्वेहं नेमिनिर्वाण महाकाव्यस्थ पंजिका ।।
श्री नाभिसूनोः युगादिदेवस्य प्रथयंतु विस्तारयंतु। समं युगपत्। विस्तृताः अधः पतिताः, मणीयितं मणिभिखि चरितं । येः पदपद्मयुग्मनरवैः।

दिल्ली धर्मपुरा मंदिर के शास्त्र भंडार मे इस पंजिका की प्रति उपलब्ध है.

(५) परमार्थोपदेश-

यह - ग्रंथ सूचियो मे दर्ज है।

(६) सरस्वती स्तवन

यह छोटा - सा स्तोत्र है, जिसमें सरस्वती का स्तवन किया है। यह स्तोत्र अनेकान्त मे प्रकाशित हो चुका है।

(७) आत्मसंबोधन -

इस ग्रंथ के संबंध मे अभी कुछ निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता ।

इन्हीं ज्ञानभूषण के उपदेश मे नागचन्द्र सूरि ने विषापहार और एकाकीभाव स्तोत्र की टीका की है। इनके जीवन के विषय में अधिक जानकारी उपलब्ध न होने के कारण इनकी मृत्यु का स्थान और समय भी ज्ञात नहीं है।

भट्टारक विजयकीर्ति ।

ई. स. १४९८ - १५१३

भट्टारक सकलकीर्ति ने अपने त्याग एवं विद्वतापूर्ण जीवन से गुजरात और राजस्थान में भट्टारकसंस्था को लोकप्रिय बना दिया था। इनके पश्चात् भुवनकीर्ति और ज्ञानभूषण ने भी जैनपरम्परा के प्रचार और प्रसार मे पूर्ण योगदान दिया। विजयकीर्ति भट्टारक ज्ञानभूषण के शिष्य थे और सकलकीर्ति द्वारा स्थापित भट्टारक गद्दीपर आसीन हुए थे। विजयकीर्ति के प्रमुख शिष्य भट्टारक शुभचन्द्र थे, जिन्होंने अपने गुरु की पर्याप्त प्रशंसा की है। यद्यपि भट्टारक विजयकीर्ति के प्रारम्भिक जीवन के सम्बन्ध में निश्चित जानकारी प्राप्त नहीं होती। पर शुभचन्द्र के गीतो में पाये जानेवाले उल्लेखों से यह ज्ञात होता है कि इनके पिता का नाम शाहगंग और माता का नाम कुँअरि था। इनका शरीर कामदेव के समान सुन्दर था। बाल्यकाल मे इन्होंने विशेष अध्ययन नहीं किया था, पर भट्टारक ज्ञानभूषण के सम्पर्क में आते ही इन्होंने गोम्मटसार, लब्धिसार और त्रिलोकसार जैसे सैद्धान्तिक ग्रन्थों के साथ न्याय, काव्य, व्याकरण आदि विषयों का भी अध्ययन किया था। युवावस्था में ही इन्होंने साधुजीवन ग्रहण कर लिया था और पूर्णतः संयम का पालन कर कठोर साधना स्वीकार की थी।

विजयकीर्ति की साधना का वर्णन आचार्य शुभचन्द्र ने-रूपक काव्य के रूप में किया है। बताया है कि जब कामदेव को आचार्य विजयकीर्ति की सुन्दरता एवं संयम का ज्ञान हुआ तो वह ईर्ष्या से जलभुन गया और क्रोधित होकर उसने उन्हें संयम से विचलित करने का निश्चय किया। उसने देवाङ्गनाओं को बुलाया और उन्हे विजयकीर्ति के संयम को भंग करनेका आदेश दिया। विजयकीर्ति की साधना के समक्ष देवादङ्गनाएँ अपने क्रियाकलाप में निष्फल हो गयीं। इसके पश्चात् कामदेवने क्रोध, मान, मद एवं मिथ्यात्व की सेना एकत्र की। चारों ओर वसन्त ऋतु व्याप्त हो गयी और अमराइरायों में कोयल की मधुर कूज सुनायी पड़ने लगी। रणभेरी बज उठी और आचार्य विजयकीर्ति को कामदेव की सेनाने आवेष्टित कर लिया। क्रोध,मान, आदि विकारो ने अपने-अपने प्रहार आरम्भ किये, पर विजयकीर्ति के संयम के समक्ष कामदेव का एक भी सैनिक ठहर न सका। मोहसेना में भगदड़ मच गयी। विजयकीर्ति ध्यान में तल्लीन हो गये। उनके समा, दम और यम के समक्ष मदनराज पराजित हो गया तथा विजयकीर्ति के चरित्र की निर्मलता सर्वत्र व्याप्त हो गयी। श्रेणिकचरित में विजयकीर्ति को यतिराज, पुण्यमूर्ति आदि विशेषणों द्वारा उल्लिखित किया है-

जयति विजयकीर्तिः पुण्यमूर्तिः सुकीर्तिः,
जयतु च यतिराजो भूमिपैः स्पृष्टपादः ।
नयनलिनहिमांशुज्ञानभूषस्य पट्टे
विविधपर विवादि क्षमाधरे वज्रपातः'।।

विजयकीर्ति ने अनेक सांस्कृतिक और सामाजिक कार्योका सम्पादन किया है। वि.सं. १५५७, १५६०, १५६१, १५६५, १५६८ एवं १४७० आदि वर्षों में सम्पन्न होनेवाली

प्रतिष्ठाओं में इन्होंने भाग लिया है। वि.सं.१५६१ मे इन्होने सम्यग्दर्शन, सम्यकज्ञान एवं सम्यक्चरित्र की महत्ता को व्यक्त करने के लिए रत्नत्रय की मूर्ति प्रतिष्ठापित की थी।

स्थितिकाल

भट्टारक विजयकीर्ति ज्ञानभूषण के पट्ट पर आसीन हुए थे। ज्ञानभूषण वि. सं. १५५७ तक गद्दी पर आसीन रहे हैं। अतएव वि. सं. १५५७-१५७० तक इनके भट्टारक पद पर आसीन रहने का उल्लेख मिलता है। श्री डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल ने विजयकीर्ति के जीवन का स्वर्णकाल वि.सं. १५५२-१५७० माना है। उन्होंने लिखा है- "इन १८ वर्षो मे इन्होंने देश को एक नयी सांस्कृतिक चेतना दी तथा अपने त्याग एवं तपस्वी जीवन से देश को आगे बढ़ाया। संवत् १५५७ में इन्हें भट्टारक पद अवश्य मिल गया था।" अतएव विजयकीर्ति का समय विक्रम की १६वीं शताब्दी है। डॉ. जोहरापुरकर ने लिखा है-" भट्टारक ज्ञानभूषण के पट्टशिष्य भट्टारक विजयकीर्ति हुए। आपने संवत् १५५७ की माघ कृष्णा पंचमी को तथा संवत् १५६० की वैशाख शुक्ला द्वितीया को शान्तिनाथ मूर्तियाँ तथा संवत् १५६१ की वैशाख शुक्ला दशमी को रत्नत्रय मूर्ति स्थापति की। संवत् १५५८ की फाल्गुन शुक्ला दशमी को श्रीसंघ ने अपनी भगिनी आर्यिका देवश्री के लिए पद्मनन्दि-पंचविंशति की प्रति लिखवायी थी। पट्टावलीके अनुसार मल्लिराय,भैरवराय और देवेन्द्रराय ने विजयकीर्ति का सम्मान किया था।"

विजयकीर्ति शास्त्रार्थी विद्वान् थे। इन्होने अपने विहार और प्रवचन द्वारा जैनधर्म का प्रचार एवं प्रसार किया था। इनके द्वारा लिखित कोई भी ग्रन्थ अभी तक उपलब्ध नहीं हुआ है।

भट्टारक विजयकीर्ति द्वितीय

ये ज्ञानभूषण के पट्ट पर हुए हैं। देखो प्रशस्ति नं.१३-१४-१५-१६-१८-२१। (D. ६०,६१,६२,६३,६४,६५,६७,७०.) वि.सं.१५८४ और १५९०में ये मौजूद थे।

बीसनगर (गुजरात) के शान्तिनाथ मन्दिर की एक दिगम्बर प्रतिमा पर लेख-

सां १५५७ वर्ष माघ वदि ५ गुरौ श्री मूलसंघे सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे श्री कुन्दकुन्दाचार्यात्व भ. सकलकीर्ति सिल्पटे-मुव-ज्ञानभूषण स्तंतत्पटे विजयकीर्ति गुरु उदेशात् हूमड़ जातीय एते श्री शान्तिनाथ नित्य प्रणमिना.

पट्टे तस्य गुणाम्बुधिर्वतद्यरो धीमान् गरीयान् वरः।
श्रीमच्छ्रीशुभचन्द्र एष विदितो वादीभसिंहो महान्॥१७१॥
तेनेदं चरितं विचारसुकरं चाकारि चंचद्रुचा।
पांडोः श्रीशुभसिद्धिसातजनक सिद्धियै सुतानां सदा॥१७२॥
चन्द्रनाथचरितं चरितार्थं पद्मनामचरितं शुभचंद्रः।
मन्मथस्य महिमानमतंद्रो जीवकस्य चरितं चकार॥१७३॥
चन्दनायाः कथा येन दब्धा नान्दीश्वरी तथा।
आशाधरकृताचार्या वृतिः सदिवृत्तिशालिनी॥१७४॥
त्रिंशच्चतुर्विंशतिपूजनं यः सद्वृद्धसिद्धार्चनमाब्यधतः ।
सरस्वतीयार्चनमत्र शुद्धं चिंतामणीयार्चनमुच्चरिष्णुः॥१७५॥
श्रीकर्मदाहविधिबंधुरसिद्धसेवां नानागुणोधगणनाथसमर्चनंघः।
श्रीपार्श्वनाथवरकाव्यसुपंजिकां च यःसंचकार शुभचंद्रयतीन्द्रचंद्रः॥१७६॥
उद्यापनमदीपिष्ठ पल्योपममिधेश्च यः।
चारित्रशुद्धितपसश्च चतुस्त्रिद्वादशात्मनः॥१७७॥
संशयवदनविदारणमपशब्दसुखंडन परं तर्क ।
सतत्वनिर्णयं च वरस्वरूपसंबोधिनीं वृत्ति॥१७८॥
अध्यात्मपद्मवृत्तिं सर्वार्थापूर्वसर्वतो भद्रां।
योप्राऽकृत सदव्याकरणां चिन्तामणीनामध्येयं च॥१७९॥
कृता येनांगप्रज्ञप्तिः सर्वांगार्थ प्ररूपिका।
स्तौत्राणी च पवित्राणी षडवादाः श्रीजिनेशिनां॥१८०॥
तेन श्रीशुभचंद्रदेवविदुषा सत्पांडवानां परं
दीप्यद्वंशविभूषणं शुभभरभाजिष्णुशोभा कुरं
शुंभ्दारतनामनिर्मलगुणं सच्छब्दचिन्तामणि
पुष्पत्पुण्यपुराणमत्र सुकरं चाकारि प्रीत्या महत्॥१८१॥

श्रीपालवर्णिना येनकारि शास्त्रार्थसंग्रहे ।
साहाय्यं सचिरं जीयाद्वरविद्याविभूषणः॥१८२॥
श्रीमद्विक्रमभूपतेर्द्विकहतस्य षष्टे संख्ये शते (?)
रम्याष्टधिकवत्सरे सुखकरेभाद्रेद्वितीयायां तिथौ ।
श्रीमद्वागवरनींवृतीदमतुले श्रीशाकवाटे पुरे।
श्रीमर्च्छ्रीपुरुधाम्नि व विरचितं स्थेयात्पुराणां चिरं॥१८३॥

इति श्रीपांडवपुराणे भारतनाम्नि भट्टारक श्री शुभचन्द्रप्रणीते ब्रह्मश्रीपाल साहाय्यसापेक्षे पांडवोपसर्गसहनकेवलोत्पतिमुक्ति सर्वार्थसिद्धिगमनश्रीनेमिनाथनिर्वाणगमनवर्णनं नाम पंचविशंतितमं पर्वं॥२५॥

आशय

मूलसंघ में पद्मनन्दी हुए,उनके पट्ट पर सकलकीर्ति हुए। उनके पट्ट पर भुवनकीर्ति, उनके पट्ट पर ज्ञानभूषण, उनके पट्ट पर विजयकीर्ति और उनके पट्ट पर यह शुभचन्द्र हुए॥१६७ से १७१॥

शुभचंद्र [१६०८]

श्रीमूलसंघेऽजनि पद्मनन्दि तत्पट्टधारी सकलादिकीर्तिः।
कीर्तिःकृता येन च मर्त्यलोके:शास्त्रार्थकर्त्रीसकला पवित्रा॥१६७॥
भुवनकीर्तिरभूद्भवनाधिपैर्भुवनशासनचारुमतिः स्तुतः।
वरतपश्चरणोधसमानसो भवभयाहिखगेटक्षितिवत्क्षमी॥१६८॥
चिंदरुपवेत्ता चतुरश्चिरन्तनश्चिद्भूषणश्चर्चितपादपद्मकः।
सूरिश्चन्द्रादिचयैश्चिनोतु वै चारित्रशुद्धिं खलु नः प्रसिद्धिदां॥१६९॥
विजयाकीर्तियतिर्मुदितात्मको जिततान्यमतः सुगतैः स्तुतः।
अवतु जैनमतः सुमतो मतो नृपतिभिर्भवतो भवतो विभुः॥१७०॥

ये विजयकीर्ति के पट्ट पर हुए। वि.सं. १५५९ में चंद्रप्रभचरित्र और १५६२ मे जीवंधर चरित बनाया है। उस समय में आचार्य पट्ट पर थे। इन्होंने कई ग्रन्थ बनाए हैं। वि.सं. १५९६ के पहले ये भट्टारक पद पर अभिषिक्त हो गये थे। वि.सं. १६०८ मे पांडवपुराण बनाया हैं। उसमें भी पद्मनन्दि से लेकर स्वपर्यंत की नामावली दी हैं। १६०० मे स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा की टीका धुलेव के केशरियानाथजी के मन्दिर मे खेला मंडप की प्रतिमा नं.१-५-१६ १९-२०-२३ और बावन जिनालय की प्रतिमा नं. २२-३६-४८ वि.सं.१६११-१२-१३ मे इनके द्वारा प्रतिष्ठा की हुई है। देखो प्रशस्ति नं.१३-१४ १५-१६-१८-१९-२०। (D.६०,६१,६२,६३,६४,६५,६७,६८,७०)

नन्दिसंघ बलात्कार गण सरस्वतीगच्छ की परम्परा में सूरत हूमड़ों के भट्टारकों की गद्दी

ईडर के भट्टारकों की गद्‌दी कि क्रम नं. ७३ बंसतकीर्ति जिन्होने भट्टारक प्रथा प्रारंभ की। उनकी परम्परा में पद्मनन्दि क्रम नं. ७९ के अपने एक शिष्य देवेन्द्रकीर्ति को सूरत (रांदेर) में भट्टारक पद पर स्थापित कर वहां भट्टारको की गद्दी की स्थापना की। यह हूमडो के भट्टारकों की ईडर के बाद नं. २ की गादी है। इस में क्रम नं. १ पर पद्मनन्दि हैं। जो मूलसंघ नन्दिसंघ की पट्टावली में क्रम नं. ७९ पर है। और इसमें क्रम नं. २. देवेन्द्रकीर्ति विक्रम संवत १४५० इसकी १३९३ की परम्परा में क्रम नं. १७ सुरेन्द्रकीर्ति वि. सं. १९१४ ई.सन् १९१७ तक है जिसे ईडर की तरफ सभी शास्त्र भण्डारों के प्राचीन ग्रन्थों भारतीय ज्ञानपीठ, तथा ज्योतिशाचार्य नेमीचन्द शास्त्री ने मान्य रखा है, जिनकी प्राचीन ग्रन्थ के आधार पर प्राचीन और संस्कृत पट्टावली हिन्दी अर्थ के साथ इसी ग्रन्थ में दी गई है जिसकी विस्तृत शोध का काम जैनमित्र के संपादक श्री मूलचंद किसनदास कापडिया ने किया है। वह दी जा रही है (इस पट्टावली की प्रस्तावना दी गई है)

क्रम	नाम	विक्रम संवत	ईस्वीसन्	विशेष
७९ (१)	पद्मनन्दि	१३८५-१४५०	१३२८-१३९३	
+ (२)	देवेन्द्रकीर्ति (रादेर)	१४५०-१४९९	१३९३-१४४२	
(३)	विद्यानंदजी (सुरत)	१४९९-१५७८	१४४२-१४६१	
(४)	मल्लिभूषण	१५१८-१५४४	१४६१-१४८७	
(५)	लक्ष्माचन्द्र	१५४४-१५७२	१४८७-१५१५	
(६)	वीरचाचन्द्र	१५७२-१५९२	१५१५-१५३५	
(७)	ज्ञानभूषण	१५९२-१६११	१५३५-१५५४	
(८)	वादिचन्द्र			
(९)	महिचन्द्र	१६४१-१६७९	१५८४-१६१२	
(१०)	मेरुचन्द्र	१६७९-१७२२	१६१२-१६६५	
(११)	जिनचन्द्र	१७२२-१७९७	१६६५-१७४०	
(१२)	विद्यानन्दि स्वामी	१७९७-१८०४	१७४०-१७४८	
(१३)	देवेन्द्रकीर्ति (२)	१८०४-१८४४	१७४८-१७८७	
(१४)	विद्याभूषण	१८४४-१८७३	१७८७-१८१६	
(१५)	चन्द्रकीर्ति	१५७३-१८८५	१८१६-१८२८	
(१६)	गुणचन्द्र	१८८५-१९३५	१८२८-१८७८	
(१७)	सुरेन्द्रकीर्ति	१९३५-१९१४	१८७८-१९१७	

नन्दिसंघ बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ के हूमड़ों की सूरत गादी के भट्टारकों की पट्टावली
(तीर्थंकर भगवान महावीर और उनकी परम्परा ग्रन्थ से .....)

''स्वस्ति श्री जिननाथाय, स्वस्ति श्री सिद्धसूरिणे (?) ।
स्वस्ति पाठकसाधुभ्यां, स्वस्ति श्री गुरवे तथा ॥१॥
मंगल भगवानर्हन् मंगलं सिद्धसूरयः ।
उपाध्यायस्तथा साधुर्जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ॥२॥
सद्धर्मामृतवर्षहर्षितजगज्जन्तुर्यथाम्भोधरः ।
स्थैर्यान्मेरुरगाधताब्धिखनिसारोह्यपारक्षमः ॥
दुर्वारस्मरवारिवाहपवनः शुभ्रप्रभाभास्करः ।
चन्द्रः सौम्यतया सुरेन्द्रमहितो वीरः श्रियो वः क्रियात् ॥३॥
स्वस्ति श्रीमूलसंघे प्रव रबलगणे कुन्दकुन्दान्वये च ।
विद्यानन्दिप्रबन्धुं विमलगुणयुतं मल्लिभूषं मुनीन्द्रम् ॥
लक्ष्मीचंन्द्र यतीन्द्रं विबुधवरनुतं वीरचन्द्रं स्तुवऽहम् ।
श्री मज्ज्ञानादिभूषं सुमतिसुखकरं श्री प्रभाचन्द्रदवम् ॥४॥

श्री जिननाथ मंगलमय हों, श्रीसिद्ध और सूरि मंगलमय हों उपाध्याय और साधु मंगलमय हों और श्री गुरु मंगलमय हों ॥१॥

भगवान् अर्हत मंगलमय हों, सिद्ध और आचार्य मंगलमय हों, उपाध्याय, साधु तथा जैनधर्म मंगलमय हों ॥२॥

सद्धर्म (जैनधर्म) रूपी अमृत की वृष्टि से जगत के जीवों को हर्षित करने वाले, अतएव मेघके समान, स्थिरतामें मेरु पर्वतके समान, अगाधतामें समुद्र के समान, संसार के सारका ऊहापोह करके पार जाने में समर्थ, दुर्दमनीय कामदेव रूपी मेघमण्डल के लिए पवनस्वरूप, शुभ्र-दीप्ति के कारण सूर्य के समान, सौम्यता के कारण चन्द्रमा के समान और देवताओंके अधिपति इन्द्र द्वारा पूजित (वे भगवान) वीर आप लोगों का कल्याण करें॥३॥

मंगलमय श्री मूलसंघ में श्रेष्ठ बलात्कारगण में और कुन्दकुन्द की शिष्य परम्परा में विद्यानन्दी के श्रेष्ठ बन्धु, शुभ गुणों से युक्त मल्लिभूषण मुनीन्द्र की, लक्ष्मीचन्द्र यतीन्द्र की, देवताओं से वन्दित वीरचन्द्र की और ज्ञान आदि गुणों से भूषित, सुमति तथा सुख देनेवाले श्रीप्रभाचन्द्रदेव की मैं स्तुति करता हूँ ॥४॥

स्वस्ति श्रीवीर महावीरातिवीर सन्मति वर्द्धमान तीर्थंकर परमदेववदना रविन्द विनिर्गत दिव्यध्वनिप्रकाशनप्रवीण श्री गौतमस्वामीगणधरान्वयश्रुतकेवलि श्री भद्रबाहुयोगीन्द्राणां श्री मूलसंघ संजनित नन्दिसंघ प्रकाश बलात्कार गणाग्रणी पूर्वापरांशवेदि श्री माघनन्दिभट्टाकरणां तत्पट्टकुमुदवनविकाशनचन्द्रायमानसकलसिद्धान्तादिश्रुतसागरपारंगत श्रीजिनचन्द्रमुनीन्द्राणाम् ॥१॥

तत्पट्टोदयाद्रिदिवाकरश्रीएलाचार्यगृधपिच्छवक्रग्रीवपद्मनन्दि
कुन्दकुन्दाचार्यवर्य्याणाम् ॥२॥

दशाध्यायसमाक्षिप्तजैनागमतत्त्वार्थसूत्रसमूह-श्रीमदुमास्वातिदेवाना म् ॥३॥
सम्यकदर्शनज्ञानचारित्रतपश्चरणविचारचातुरीचमत्कारचमकृतचतुर
वरनिकरचतुरशीतिसहस्त्रप्रमितिबृहदाराधनासारकर्तृ श्रीलोहाचार्याणाम् ॥४॥
अष्टादशवर्णविरचितप्रबोधसारादिग्रन्थश्रीयशःकीर्तिमुनीन्द्राणाम् ॥५॥
कुन्देन्दुहारतुषारकाशसंकाशयशोभरभूषितश्रीयशोनन्दीस्वराणाम् ॥६॥

मंगलमय श्रीवीर, महावीर, अतिवीर, सन्मति, वर्द्धमान, तीर्थंकर परमदेव के मुखारविन्द से निकली हुई दिव्य वाणी को प्रकाशित करने में निपुण श्री गौतम स्वामी गणधर के शिष्य श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु योगीन्द्र के श्रीमूलसंघ से उत्पन्न नन्दिसंघ का प्रकाशस्वरूप बलात्कारगण में अग्रसर तथा पूर्व एवं अपर अंश को जाननेवाले श्रीमाघनन्दी भट्टारक के और उनके पट्टरूपी कुमुदवन को विकसित करनेवाले चन्द्रस्वरूप सम्पूर्ण सिद्धान्त आदि आगमरूपी समुद्र के पारंगत श्री जिनचन्द्र मुनीन्द्र के ॥१॥

उनके पट्टरूपी उदयाचलपर उदित सूर्यके समान श्री एलाचार्य, गृधपिच्छ, वक्रग्रीव, पद्मनन्दी और कुन्दकुन्दाचार्यवरोंके ॥२॥

जैनागम के सार को दश अध्यायो में ''तत्त्वार्थसूत्र'' के रूप में प्रस्तुत करनेवाले श्रीमान, उमास्वातिदेव के ॥३॥

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्यचारित्र, सम्यक् तपस्या और विचारचातुर्य के चमत्कार से चतुर लोगों के समूह को चमत्कृत करनेवाले चौरासी हजार श्लोक परिमित 'बृहदाराधनासार ' की रचना करनेवाले श्री लोहाचार्य के ॥४॥

अष्टादश वर्णों द्वारा प्रबोधसार आदि ग्रन्थो के रचयिता श्री यशःकीर्ति मुनिवर के ॥५॥

इन्दु, कुमुद की माला, तुषार (हिम) और काश नामक तृण के समान स्वच्छ यशःपुज से भूषित श्रीयशोनन्दीस्वर के ॥६॥

जैनेन्द्र महाव्याकरण श्लोकवार्तिकात्मंकारादि (?) महा ग्रन्थकर्तृणां श्री पूज्यपाददेवानाम् ॥७॥

सम्यग्दर्शनगुणगणमण्डितश्रीगुणनन्दिगणीन्द्राणाम् ॥८॥

परवादिपर्वतवज्रायमानश्रीवज्रनन्दियतीस्वराणाम् ॥९॥

सकलगुणगणाभरणभूषितश्रीकुमारनन्दिभट्टारकाणाम् ॥१०॥

निखिलविष्टपकमलवनमार्तण्डतपःश्रीसंजातप्रभादूरीकृतदिगन्धका सिद्धान्तपयोधिशशधरमिथ्यात्वतमोविनाशनभास्करपरवादिमतेम्भ कुम्भस्थलविरणसिंहानां श्री लोकचंद नर्भाचन्द्र नेमिचंन्द्र भानुनन्दिसिंहनन्दियोगीन्द्राणाम् ॥११॥

आचाराङ्गादिमहा शास्त्रप्रवीणता प्रतिलोधित भव्यजननिकरस्याद्वादस मुन्द्रमुत्थसदुपन्या सकल्लोलाधः पातितसौगत - सांख्य - शैव - वैशेषिक - भाट्टचार्वाकादि गजेन्द्राणां श्री मद्वसुनन्दिवीरनन्दि रत्ननन्दि माणिक्य नन्दि मेघ चन्द्र शान्तिकीर्तिमेरु कीर्ति महा कीर्ति विष्णु नन्दि श्री भूषणशील चन्द्र श्री नन्दि देश भूषणानन्त कीर्तिधर्मनन्दिविद्यानन्दिरा मचन्द्ररामकीर ् निर्भयचन्द्र नागचन्द्रनयनन्दि हरिचन्द्रम हीचन्द्रमा धवचन्द्रलक्ष्मीचन्द्र गुणचन्दवासवचन्द्रगणीन्द्राणाम् ॥१२॥

जैनेन्द्र महाव्याकरण और श्लोकवार्तिकालंकार (?) आदि महान् ग्रन्थों के रचयिता श्रीपूज्यापाददेव के ॥७॥

सम्यक्दर्शन की गुणराशि से भूषित श्रीगुणन्दो गणीन्द्र के ॥८॥

परवादीरूप पर्वतों के लिए वज्रके समान श्रीवज्रनन्दी यतीन्द्र के ॥९॥

सकलगुणसमूहरूपी आभरणों से अलंकृतश्रीकुमारनन्दी भट्टारक के ॥१०॥

सम्पूर्ण संसार - रूप कमलवन को विकसित करने में सूर्य के समान, तपस्या की छवि से उत्पन्न प्रभाद्वारा सभी दिशाओं के अन्धकार को दूर करनेवाले, सिद्धान्तसमुद्र की पुष्टि करनेमें चन्द्रमास्वरूप, मिथ्यात्वरूपी अन्धकार को दूर करने के लिये सूर्य तुल्य, परवादियों के सिद्धान्तरूपी हाथी के मस्तक को विदीर्ण करनेमें सिंह के समान श्री लोकचन्द्र, प्रभाचन्द्र, नैमिचन्द्र, भानुन्दी और सिंहनन्दी योगीन्द्रों के ॥११॥

आचारांग आदि महाशास्त्रों की प्रवीणता द्वारा भव्यजनों को प्रतिबोधित करनेवाले, स्याद्वादरूपी समुद्र की उत्ताल तरंगरूपी सदयुक्ति द्वारा सौगत सांख्य-शैव-वैशेषिक-भाट्ट (मीमांसक) और चार्वाक आदि गजेन्द्रों को नीचे गिरानेवाले श्री वसुनन्दी, वीरनन्दी, रत्नन्दी, माणिक्यनन्दी, मेघचन्द्र, शान्तिकीर्ति, मेरुकीर्ति, महाकीर्ति विष्णुनन्दी, श्रीभूषण, शीलचन्द्र, श्रीनन्दी, देशभूषण, अनन्तकीर्ति, धर्मनन्दी, विद्यानन्दी, रामचन्द्र, रामकीर्ति, निर्भयचन्द्र, नागचन्द्र, नयनन्दी, हरिचन्द्र, महीचन्द्र, माधवचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र, गुणचन्द्र, वासवचन्द्र और लोकचन्द्र गणेन्द्रों के ॥१२॥

सुरा सुरखेचतर नरनिकर चर्चितचरणाम्भोरुहाणां श्रुतकीर्ति भावचन्द्र महाचन्द्र मेघचन्द्रब्रह्मनन्दिशिवनन्दिविश्वचन्द्रस्वामिभट्टारकाणाम् ॥१३॥

दुर्धरतपश्चरणवज्राग्नदग्धदुष्टकर्म्मकाष्ठानां श्री हरिनन्दि भावनन्दि स्वरकीर्ति विद्याचन्द्ररामचन्द्र माघनन्दिज्ञान नन्दिकीर्ति सिंहकीर्ति हेमकीर्ति चारुकीर्ति नेमिनन्दि नाभिकीर्ति नरेन्द्रकीर्ति श्रीचन्द्रपद्मकीर्ति पूज्यभट्टारकाणाम् ॥१४॥

सकलता र्किकचूडामणी समस्त शाब्दिक सरोदरा जितरणिनिखिलागमनिपुण श्रीमकलङ्कचन्द्रदेवानाम् ॥१५॥

ललितलावण्यलोलालक्षितगात्रत्रैविद्याविल्कागंङ्गसविनोदितत्रिभुवनोदरस्थ विबुर्पकदम्बचन्द्र करनिक रसन्निभयशोभरसुधारसध वलितदिग्मण्डलानां श्रीललितकीर्ति केशवचन्द्रचारुकीर्त्यकीर्तिसूरिवर्याणाम् ॥१६॥

देवता, राक्षस, खेचर और मनुष्यों द्वारा पूजित चरणकमलवाले श्रुतिकीर्ति, भावचन्द्र, महाचन्द्र, मेघचन्द्र, ब्रह्मन्दी, शिवनन्दी और विश्वचन्द्र स्वामी भट्टारकों के ॥१३॥

अत्यन्त कठिन तपस्यारूपी वज्राग्नि द्वारा बुरे कर्मरूपी काष्ठ को जला चुकनेवाले हरिनन्दी, भावनन्दी, स्वरकीर्ति, विद्याचन्द्र, रामचन्द्र, माघनन्दी, ज्ञाननन्दी, गंगकीर्ति, सिंहकीर्ति, चारुकीर्ति, नेमिनन्दी, नाभिकीर्ति, नरेन्द्रकीर्ति, श्रीचन्द्र और पद्मकीर्ति पूज्य भट्टारकों के ॥१४॥

सभी तार्किकों के शिरोभूषण, समस्त वैयाकरणरूपी कमलों के लिए सूर्य और सम्पूर्ण आगम में निपुण श्री अकलङ्कचन्द्रदेव के ॥१५॥

मंजुल लावण्यपूर्ण शरीरवाले, तीनों विद्याओं के विलास से त्रिभुवन के विद्वानों को आनन्दित करनेवाले और चन्द्रकिरणों के समान स्वच्छ यश:पूज्यरूपी सुधारस से दिशाओं को समुज्ज्वल करनेवाले श्री ललितकीर्ति, केशवचन्द्र चारुकीर्ति आचार्यावरों के ॥१६॥

जाग्रज्जिनेन्द्रसिद्धान्त समशत्रुमित्र प्रेयोर साकुलितसिंहगजादिसेव्यानां श्री वसन्तकीर्तिश्रीवादिचन्द्रविशालकीर्तिशुभकीर्तियतिराजानाम् ॥१७॥

राजाधिराज गुणगणविराजमान श्री हम्मीरभूपालपूजितपादपद्म सैद्धान्तिक संयमसमुद्रचन्द्र श्रीधर्मचन्द्रभट्टारकाणाम् ॥१८॥

तत्पदाम्बुजभानुस्याद्वादवादिवादीश्वरश्री रत्नकीर्तिपुण्यमूर्तिनाम् ॥१९॥

महावाद वादीश्वरवादि पितामह - प्रमेय कमलमार्तण्डाद्य ने कग्रन्थविधायक-श्रीमहापुराणस्वयम्भूसप्त (?) भक्तिपरमात्मप्रकाशसमयसारा दिसूत्र व्याख्यानसर्ज्जनसंजातकोविद समाकीर्तिभट्टारकाणां श्रीमत्प्रभाचन्द्रभट्टारकाणाम् ॥२०॥

त्रैविद्यविद्वज्जनशिखण्डमण्डलीभवत्कायधर (?) कमलयुगलावन्ती देश प्रतिष्ठो पदेशकसप्तशत - कुटुम्ब - रत्नाकरज्ञातिसुश्रावकस्थापक श्रीदेवेन्द्रकीर्तिशुभकीर्ति भट्टारकाणाम् ॥२२॥

श्री जिनेन्द्र के सिद्धान्तो को जाग्रत करनेवाले, शत्रु, मित्र और उदासीन सबको प्रीतिरस से वशीभूत करनेवाले एवं सिंह, हाथी आदि से सेव्य श्रीवसन्तकीर्ति, श्रीवादिचन्द्र, विशालकीर्ति और शुभकीर्ति यतिवरो के॥१७॥

राजाओं के राजा और गुणों से अलकृत श्री हम्मीरराजा द्वारा पूजितचरण कमलवाले और सिद्धांन्तसम्बन्धी समुद्र को सम्वृद्ध करनेवाले चन्द्रमा के समान श्री धर्मचन्द्र भट्टारक के ॥१८॥

उनके पदाब्जों को प्रफुल्लित करनेवाले, सूर्यस्वरूप, स्याद्वाद - वादियों के प्रमुख पूण्यमूर्ति रत्नकीर्ति के ॥१९॥

महावाद - वादीश्वर, वादि-पितामह, प्रमेयकमलमार्तण्ड आदि अनेक ग्रन्थों के रचयिता, श्री महापुराण, स्वयम्भु, सप्त (?) भक्ति, परमात्मप्रकाश और समयसार आदि सिद्धान्त-ग्रन्थों की व्याख्या करनेवाले परम शास्त्रज्ञ सभाकीर्ति भट्टारक (?) और श्री प्रभाचन्द्र भट्टारक के ॥२०॥

अनेक अध्यात्म शास्त्ररूपी कमलसमूह को विकसित करनेवाले सूर्यस्वरूप यथाख्यातचारित्र के विधान द्वारा देवेन्द्र को प्रसन्न करनेवाले श्री पद्मनन्दिदेव भट्टारक के ॥२१॥

तीनों विद्याओं के ज्ञाताओं में शिरोभूषण - स्वरूप, मण्डलाकार परिवेष्टित संसारियों द्वारा सेवित युगल (चरण) कमलवाले (?), अवन्तीदेव की (मूर्ति) प्रतिष्ठामें उपदेश देनेवाले सातसौ परिवार-रूपी समुद्र के अन्तर्गत ज्ञातिसुश्रावको के उद्धारक श्रीदेवेन्द्रकीर्ति और शुभकीर्ति भट्टारकों के ॥२२॥

तत्पट्टोदयसूर्याचार्य वर्यनवविधब्रह्मचर्यपवित्रचर्या मन्दिर राजाधिराज महामण्डलेश्ववजांगगंगजयसिंहव्याधनरेन्द्रादिपूजितपादपद्माना, अष्टशावाप्रागवाटवंशावतंसाना, षड्भाषाकविचक्रवर्तिभुवनतलव्याप्तविदशदकीर्तिविश्व विद्याप्रासादसूत्रधारसद्ब्रह्मचारिशिष्यवर सूरिश्रीश्रुतसागरसेवितचरणसरोजानां, श्री

श्रीसम्मेदगिरिचम्पापुरी उज्जयन्तगिरि अक्षयवटआदीश्वरदीक्षासर्वसिद्धक्षेत्रकृतयात्राणां, श्रीसहस्त्रकूटजिनबिम्बोपदेशकहरिराजकुलोद्योतकराणां,श्रीरविनन्दिपरमाराध्यस्वामिभट्टारकाणाम् ॥२३॥

तत्पट्टोयादचलबालभास्करप्रवरपरवादिगजयूथके सरिमण्डपगिरिमन्त्रवादसमस्याप्तचन्द्रपुर्विकटवादिगोपदुर्गमेघाकर्षण भविकजनसस्यामृतवाणि वर्षण सुरेन्द्रनागेन्द्रा दिसेवितचरणा रविन्दाना, मालव मुलतानमगधमहाराष्ट्रोगौडगुर्ज्जरांगवंग तिलंगादि विविध देशो त्थमव्य जनप्रतिबोधनपटुवसुन्धराचार्यग्यासदी नसभामध्यप्राप्तसम्मान श्री पद्मावत्युपासकानां श्री मल्लिभूषण भट्टारकवर्य्याणाम् ॥२४॥

उनके पट्ट पर उदित सूर्य के समान, आचार्यप्रवर नौ प्रकारके ब्रह्मचर्य द्वारा चरित्ररूपी मन्दिर को पवित्र करनेवाले, राजाधिराज महामण्डलेश्वर वज्रांग, गंग और जयसिंह इन श्रेष्ठ राजाओ द्वारा पूजित चरणकमलवाले अष्टशाख प्राग्वाट् वंशमें उत्पन्न छः माषाओंमें कविसम्राट, पृथ्वीतलप विस्तृत स्वच्छ कीर्तिवाले, अखिल विद्याओं के प्रासाद के सूत्रधार पूर्ण ब्रह्मचारी शिष्य-श्रेष्ठ सूरी श्री श्रुतसागरजी वारा सेवित चरणकमलवाले, श्री जिन यात्रा, प्रतिष्ठा और मन्दिरो द्वार के उपदेशो द्वारा मुख्य-मुख्य देशों के मग्न जीवो को उद्‌बोधित करनेवाले, श्रीसम्मेदगिरि, चम्पापुरी, उज्जयंतगि आदीश्वरदीक्षास्थान, अक्षयवट, और समी सिद्धक्षेत्रों की यात्रा करनेवाले, सहस्त्रकूट जिन बिंबोपदेशक एवं हरिवंश को उद्‌भासित करनेवाले श्री रविनन्दिनामक परम आराध्य स्वामी भट्टारक के ॥२३॥

उनके पट्ट (गद्दी) रूपी उदयाचलपर उगनेवाले प्रातःकालिक सूर्य के समान, अत्यन्त श्रेष्ठ अन्यमतवादीरूपी हाथियों के समूह के लिए सिंहस्वरूप, मण्डपगिरि (मांडलगढ) के मन्त्रवाद समस्या में चन्द्रमा की पवित्रता प्राप्त करनेवाले, विकट परवादीरूप गोपों के (अजेय) दुर्ग को अपनी प्रखर बुद्धि से वश में करनेवाले, भव्यजनरूपी फसलपर अमृत समान वाणी की वर्षा करनेवाले देवेन्द्र और नागेन्द्र से सेवित चरणकमलवाले, मालव-मुलतान-मगध-महाराष्ट्र-सौराष्ट्र -गौड-अंग-बंग-आन्ध्र आदि विविध देशों के भव्यजनों को उपदेश देने में निपुण, भूमण्डल भरके आचार्य, गयासुद्दीन की सभा में सम्मान प्राप्त करनेवाले और श्री पद्मावतीदेवी के उपासक श्री मल्लिभूषण महाभट्टारक के ॥२४॥

तत्पट्टकुमुदवनविकासनशरत्सम्पूर्ण चन्द्रानां, जैनेन्द्रकौमारपाणिन्यमरशाक टायनमुग्धबोधादि महाव्याकरण परिज्ञानजलप्रवाहप्रक्षालितानेकशिष्यप्रशिष्यशेमुखी संस्थितशब्दाज्ञानजम्बालानामनेकरणतपश्चरणकरणसमुत्थकीर्तिकलापकलितरूप लावण्यसौभाग्य भाग्यमण्डितसकलशास्त्रपठनपाठनपण्डितविविधजीर्णनूतस्फुटित प्रसादविधायक श्री मगिजनेन्द्रचन्द्रबिम्बप्रतिष्ठादिमहाममहोत्सव कारकाणातिंगल (?) तौलवतिलिंगकन्नड (?) कर्णाटभोटादिदेशोत्पन्ननरेन्द्रराजाधिराज महाराजराजराजेश्वर महामण्डलेश्वर मैरवरायमल्बिरायदेवरायबंगरायप्रमुखाष्टादशनरक पदप्राप्तक्षीवीरसेनक्षी श्री विशालकीर्तिप्रमुखशिष्यवरसमाराधितपादपद्मानां मल्लक्ष्मीचन्द्रपरमभट्टारकगुरुणाम् ॥२५॥

उनके पट्टरूपी कुमुदवन को विकसित करने के लिए शरदऋतु के पूर्ण चंद्रमा के समान जैनेन्द्र, कौमार, पाणिनि, अमर, शाकटायन, मुग्धबोध आदि महाव्याकरण के परिज्ञानरूपी जल-प्रवाह से अनेक शिष्य-प्रशिष्यों की बुद्धि में स्थित शब्दसम्बन्धी अज्ञानरूपी पंक को धो देनेवाले, विविध तपस्याओं के द्वारा प्रसारित यशःसमूहवाले और रूपलावण्य से भूषित तथा सौभाग्य से मण्डित, सभी शास्त्रों के पठन-पाठन में पंडित, अनेक पुराने तथा नये टूटे-फूटे मन्दिरों के उद्धारक श्री जिनेन्द्र की प्रतिमा-प्रतिष्ठा आदि बडे-बडे उत्सवों के करनेवाले, तोलव - आन्ध - कर्णाट - लाट - भोट आदि देशों के नरेन्द्र- राजाधिराज-महाराज-राजराजेश्वर-महामण्डलेश्वर भैरवराय-मल्लिराय-देवराय बंगराय इत्यादि अठारह राजाओं से पूजित चरणकमलवाले, शास्त्ररूपी सागर के पारंगत, वादियों के ईश्वर, राजाओं के गुरु, भूमण्डल के आचार्य, भट्टारकपद को प्राप्त श्री वीरसेन, श्री विशालकीर्तिप्रभृति शिष्यों द्वारा आराधित चरणकमलवाले श्री लक्ष्मीचन्द्र परम भट्टारक के ॥२५॥

तद्वंशमण्डनकन्दर्पसर्पदलनविश्वलोकह्यरंग्जनमहाव्रतिपुरन्दराणानवसहस्त्रप्रमुखदेशाधिराजाधिराजमहाराज श्री अर्जुनजीयराजसभामध्यप्राप्तसम्मानानां, षोड्शवर्षपर्यन्तशाकपाकपक्वान्नशाल्योदनादिषर्पिः प्रभृतिसरसहारपरिवर्जितानां, दुश्चारादिसर्वगर्वरवर्गतचूरीकरणवज्रायमान प्रथमवचन खण्डनपण्डितानां, व्याकरणप्रमेयकमलमां र्तुण्डछन्दोलंकतिसारसाहित्यसंगीतसकलतर्कसिद्धान्तागमशास्त्र समुद्रपारंगतानां, सकलमूलोत्तरगुणमणिमाण्डितविबुधवरश्री वीरचन्द्रभट्टारकाणाम् ॥२६॥

तत्पट्टोदयाद्रिदिनमणिनिखिलविपश्चिच्चक्रचूडामणिसकलभव्यजन हृदयकुमुदवनविकासनरजनीपतिपरमजैनस्याद्वादनिष्णातशुद्धसम्यक्त्वजनजातगताभिमानि मिथ्यवादिमिथ्यावचनमहीधर श्रृङ्गशातनप्रतण्डिविद्युद्दण्डानां, संस्कृताद्यष्टमहाभाषा जलधरकरणछटासन्तर्पित भव्यलोकसारंगाणां, चतुरशितिवादविराजमान प्रमेयकमलमार्तण्डन्यायकुमुद चंद्रोदय राजवार्तिकालंकारस्वलोकवार्तिकालंकाराप्तपरीक्षापरीक्षामुखपत्र परीक्षाष्टादिशब्दागमगोम्मटसारत्रैलोक्यसारलब्धिसारक्षपण सारजम्बुद्वीपादिपंचप्रज्ञप्तिप्रभृतिपरमागमप्रवीणानामनेक देशनरनाथनरपतितुरंगपतिगजपतियवनाधीशसमासम्प्राप्तसम्मान श्रीनेनिनाथ तीर्थकरकल्याण पवित्रश्री उज्जयन्तशत्रुंजतुं गीगिरिचूलगिर्य्यादिसिद्ध क्षेत्रेयात्रा पवित्रीकृतचरणाना मंगवादिभंगशील-कलिंगवादिकर्पूरकालानलकाश्मीरवादिकली कृपाण-नेपालवादिशापानुग्रह समर्थ-गुर्जरवादिदत्तदण्ड-गौडवादिगण्डमेरुदत्तदण्ड-हम्मीर वादिब्रह्मराक्षस-चोलवादिहल्लकल्लोलकोलाहल-द्राविडजवादित्राटन शील-तिंलगवादिकलंककारि-
दुस्तरवादिमस्तकशूल-कोंकणवादिवरोत्वातमूल-व्याकरणवादिमर्दित-मरट्ठतार्किकवादिगोधूमधरट्ट-साहित्य वादिसमाजसिंहज्योतिष्कवादिभूर्णी (?) तलिहमन्त्रवादियन्त्रगोत्रतन्त्र वादिकलप्रकुचकुम्भनिवोल (?) रत्नवादियत्नाकारसमस्ता नवद्यविविधविध्याप्रासादसूत्रधारणां, सकलसिद्धान्ते वेदेनिर्ग्रन्थाचार्यवर्यशिष्य श्री सुमतिकीर्तिस्वपरदेशविख्यात शुभमूर्तिश्री रत्नभूषण पमुखसूरिपाठक

साधुसंसेवितचरणसरोजानां, कलिकालगौतमगणधराणां, श्री मूलसंघसरस्वतीगच्छ श्रृगांर हाराणां, गच्छाधिराजभट्टारकवरेण्य पर माराध्यपरमपूज्य भट्टारक श्री ज्ञानभूषणगुरुणाम् ॥२७॥

उनके वंश के भूषण कामदेवरूपी सर्प के गर्व को चूर करनेवाले, अखिल लोक के ह्मदय को आनन्दित करनेवाले, महाव्रतिश्रेष्ठ, नवसहस्त्र प्रधान देशों के अधिपतिओं के अधिपति महाराज श्री अर्जुन की राजसभा में सम्मान पानेवाले, सोलह वर्ष तक शाक-पाक, पक्वान्न, शालीका भात और घी आदि रसयुक्त आहार को छोड़नेवाले, दुश्चारादि (?) सम्पूर्ण गर्वरूपी पर्वत को चूर्ण करने में वज्र के सद्दश, प्रथम वचन का खंडन करने में पंडित व्याकरण - प्रमेयकमलमार्तण्ड - छंद - अंलकार - सार-साहित्य संगीत सम्पूर्ण-तर्क-सिद्धांन्त और आगमशास्त्ररूपी समुद्र के पारंगत सम्पूर्ण मूलोत्तरगुणरूपी मणियों से भूषित विद्वानों में श्रेष्ठ श्री वीरचन्द भट्टारक के ॥२६॥

उनके पट्ट (गद्दी) रूपी उदयाचलपर उदित सूर्य के समान, सम्पूर्ण विद्वन्मण्डली के चूडामणी सभी भव्यजनों के ह्दयरूपी कुमुद-वन को विकसित करने के लिए रजनीपति, परम जैन स्याद्वाद में निष्णात, शुद्ध सम्यक्त्व को प्राप्त जात और मृत (?) अभिमानी मिथ्यावादियों के मिथ्यावचन रूपी महीधरों (पर्वतो) के श्रृंग को तोड़ने में प्रचंड विद्युतदण्ड के सदृश, संस्कृत आदि आठ महाभाषारूपी जलधरहेतुक छटाद्वारा भव्यजनरूपी मयूरादि पक्षियों को तृप्त करनेवाले, चौरासी, वादीयों मे विराजमान प्रमेयकमलमार्तण्ड न्यायकुमुदचन्द्रोदय राजवार्तिकाल कर श्लोकवार्तिकालंकार - आप्त परीक्षा - परिक्षामुख-पत्रपरीक्षा-अष्ट सहस्त्री-प्रमेयरत्नमाला आदि अपने मत के प्रमाणरूपी चन्द्रमणी को कण्ठमें धारण करनेवाले, किरणवाली-वरदराज चिंतामणि प्रमृति परमतम, ऐन्द्र, चान्द्र, महेन्द्र, जैनेन्द्र काश, कृत्स्नस कापालक और महाभाष्यादि और महाभाष्याजि शब्दशास्त्र में गोम्मटसार, त्रैलोक्यसार, लब्धिसार, क्षणपसार और जम्बुद्विपादि पंचप्रज्ञप्ति-प्रभृति परम आगमशास्त्रो में प्रवीण, अनेक देशों के नरनाथ, नरपति, अश्वपति, गजपति और यवन अधिपतियों की समाओं मे सम्मान प्राप्त करनेवाले, श्रीनेमिनाथ तीर्थंकर के कल्याण से पवित्र किये हुए, श्री उज्जयन्त, शत्रुंजय तुंगीगिरी, चूलगिरि आदि सिद्धक्षेत्रों की यात्रा से अपने चरणों को पवित्र किये हुए, अंगदेश के वादियों को भग्न करनेवाले, कलिंग देश के वादीरूपी कपूर के लिए भयंकर अग्नि के समान, काश्मीर के वादीरूपी-कदली के लिए तलवार के समान, नेपाल के वादियों को शाप और अनुग्रह करने की शक्ति रखनेवाले, गुजरात के वादियों को दण्ड देनेवाले, गौड (बंगालका हिस्सा) के वादीरूपी गंडमेरुदण्ड पक्षी को दण्ड देनेवाले, हम्मीर (राजा) के वादियों के लिए बह्म राक्षसके सद्दश, चोलके वादियों में महान कोलाहल मचानेवाले, द्रविड वादियोंको त्राटन देनेवाले, तिलंगवादियों को लांछित करनेवाले, दुस्तर (कठिन) वादियों के लिए मस्तकशूल रोग के समान, कोंकण देश के वादियों के लिये उत्कट वातमूल रोग के समान, व्याकरण शास्त्र के वादियों को चकनाचूर करनेवाले, तर्कशास्त्र के वादियों को गेहू का आटा बनानेवाले, साहित्य के वादि-समाज के लिए सिंहसद्दश, ज्योतिष के वादियों को भूमिसात करनेवाले, मंत्रवादियों को यन्त्र (कोल्हू) में डालनेवाले तंत्रवादियो की छाती विदीर्ण करनेवाले, रत्नवादियोंका यत्न करनेवाले, सम्पूर्ण निर्दोष विविध विद्यारूपी प्रासाद

(भवन) के सूत्रधार, सभी सिद्धान्तों को जाननेवाले, जैनाचार्यप्रवर, शिष्यश्री सुमतिकीर्ति, अपने और दूसरे देशों में प्रसिद्ध शुभमूर्ति श्री रत्नभूषण प्रभृति सूरि, पाठक और साधुओ से सेवित चरण कमलवाले तथा कलिकाल के लिए गौतम गणधर-स्वरूप, श्रीमूलसंघ सरस्वतीगच्छके श्रृंङ्गारहार-सदृश गच्छाधिराज भट्टारकों में श्रेष्ठ, परम आराध्य और परम पूज्य भट्टारक श्री ज्ञानभूषण गुरवर के ॥२७॥

तत्पट्टकुमुदवनविकासन विशदसम्पूर्ण पूर्णिमासारशरच्चन्द्रायमानानां कविगमकवादिवाग्मिचतुर्विधविद्वज्जनसभासरोजिनी राजहंससन्निभानां, सारसमुद्रिकशास्त्रोक्तसकललक्षण लक्षितगात्राणां सकलमूलोत्तरगुणगणमणिमण्डितानां, चतुर्विधश्रीसंघहृदयाह्लादकरराणां, सौजन्यादिगुणरत्नरत्नाकराणां, संघाष्टकरभारधुरंधराणां, श्रीमद्रायराजगुरुवरसुन्धराचार्यमहावादिपितामहसकगविद्वज्जनचक्र वर्तिवकुडीकुडीयमाण (?) परगृहविक्रमादित्यमध्याह्नहकल्पवृक्षबलात्कारगणविरुदावली विराजमान डिल्ली गुर्जरादिदेशसिंहासनाधीश्वराणां-श्रीसरस्वती गच्छश्रीबलात्कारगणाग्रगण्यपाषाणघटितसरस्वतीवाजन श्री कुन्दकुन्दातार्यान्वयभट्टारकश्री विद्यानन्दिश्री मल्लिभूषण श्रीमल्लीचन्द्र श्रीवीरचन्द्रसाम्प्रतिकविद्यामानविजय राज्ये श्री श्री ज्ञानभूषणसरोजचंचरीकश्रोप्रभाचन्द्रगुरुणाम् ॥२८॥

तत्पट्ट कमलबालमास्कर परवादिगजकुम्भस्थलविदारणसिंह स्वदेशपरदेशप्रसिद्धानां, पंचमिथ्यात्वगिरिश्रृंगशातनप्रचण्डविद्युद्दण्डानां जंगमकल्पद्रुमकलिकालगौतमावताररुपबावण्यसौभाग्य भाग्य मण्डित जिवनतनकलाकौशल्य विस्मापिता खण्डलमहावादवादीश्वव राजगुरुवसुन्धराचार्यहुवडकुल श्रृगांरहार भट्टारक श्रीमद्वादिचन्द्र भट्टारकाणाम् ॥२९॥

उनके पट्ट रूपी कुमुदवन को विकसित करने लिए स्वच्छ शरद्कालीन पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान, कवि-गमक-वादी-वाग्मिक इन चारों प्रकार के विद्वानों की सभारूपी सरोजिनी के राजहंस के सदृश, सामुद्रिक शास्त्रमें कथित सभी शुभ लक्षणों से युक्त शरीरवाले, सम्पूर्ण मूलोत्तर गुण-मणियों से अंलकृत, चारों प्रकार के संघों के हृदयाल्हादक सौजन्य आदि गुणरत्नों के सागर, संघाष्टक के भारकी धुरी को धारण करनेवाले, श्रीमान राय (?) के राजगुरु, भूमंडल के आचार्य, महावादियों के पितामह, अखिल विद्वज्जनों के चक्रवर्ती (वकुडी कुडीयाण ?).... शत्रुगृहके लिए विक्रमादित्य, मध्याह्न लिए कल्पवृक्ष, बलात्कारगणकी विरुदावली में विराजमान, दिल्ली, गौर्जर (गुर्जर) आदि देशों के सिंहासनाधीस्वर, श्रीमूलसंघ-श्रीसरस्वतीगच्छ-श्रीबलात्कारणगण में अग्रगण्य पत्थर की बनी सरस्वती को बुलावानेवाले श्रीकुन्दकुन्दाचार्य के वंश में भट्टारक श्रीविद्यानंदी श्रीमल्लिभूषण, श्री लक्ष्मीचन्द्र और श्री वीरचन्द्र के संप्रति विद्यमान विजयराज्य में श्रीज्ञानभूषणजी सरोज के लिए चंचरीक भट्टारक श्रीप्रभाचन्द्र गुरु के ॥२८॥

उनके पट्टरूपी कमल के लिए बालसूर्य, परमतवादीरुपी गज के मस्तक को विदीर्ण करने में; सिंहके समान, स्वदेश और परदेशमें ख्यातिप्राप्त, पांच मिथ्यात्वस्वरूप पर्वत के शिखर को नष्ट-भ्रष्ट करने में प्रचंड विजली के समान, चलते फिरते कल्पवृक्ष-स्वरूप, कलिकाल में गौतमावतार रूप, लावण्य औव सौभाग्य से युक्त, अपने वचन की चातुरी

से इन्द्र को विस्मय में डालनेवाले, महावाद-वादीस्वर, राजगुरु, भूमण्डल के आचार्य, हूंबडकुल के श्रृंगारहार, भट्टारक श्रीवादिचन्द्र के ॥२९॥

तत्पट्टे क सम्पूर्ण चन्द्रस्वराद्वान्तविद्योत्कटपरवादिगजेन्द्रगर्वस्फोटनप्रबलेन्द्रमृगे न्द्राणां, कृत्स्याद्वयशब्दश्रुतछंदोलंकृतिकाव्यतर्कादिपठनपाठन समार्थ्य प्रोत्थकीर्तिवल्ल्याच्छादितबंगागतिलंगगुर्जरनवसहस्र दक्षिणवाग्वरादिदेशमण्डपानां, मावादीश्वर श्री मन्मूलसंघश्रृगांरहार श्रीमद्वादिचन्द्रपट्टोदयाद्रिबालदिवाकराणां, त्रिजगज्जनाह्लादन प्रकृष्टप्रज्ञाप्रागल्म्याळिनववादीन्द्रसकलमहत्तममहतीमहीमहता महस्क (?) महन्महीपतिमहित श्रीमहीचन्द्र भट्टारकाणाम् ॥३०॥

तत्पट्टोदयाद्रि बालिविभाकर विद्वज्जनसभामण्डन मिथ्यामतखण्डन पण्डितानाम् परवादिप्रचण्डपर्वतपाटन परीव्वरराणां, भव्यजनकुमुदवनविकाशनशशधर धर्म्मामृतवर्षणमेधानां, लघुशाखाहुबडकुलश्रृगांर हार डिल्लीगुज्जैरसिंहासनाधीशबलात्कारगणविरुदावलीविराजमानभट्टारकश्री मेरुचन्द्र गुरुणाम् ॥३१॥

सकलसिद्धान्त प्रतिबोझितभव्यजनहृदयकमलविकाशनै कबालभास्कराणां, दशविधधर्मोपदेशनवचनामृतवर्षणतर्पितानेक भव्यसमूहानां, श्रीमन्मेरुचन्द्रपट्टोद्धरण धीराणां, श्रीमच्छीमूलसंघ-सरस्वतीगच्छबलात्कारगणविरुद्धावलीविराजमान भट्टारकवरेण्यभट्टारक श्री जीन-चन्द्रगुरुणां, तपोराज्याम्युदयार्थ भव्यजनैः क्रियमाणे श्रीजिननाथाभिषेके सर्वे जनाः सावधानाः भवन्तु ॥३२॥

उनके पट्ट को (सुशोभित करने के लिए एकमात्र पूर्णचन्द्र, अपने सिद्धान्त की विद्या में उत्कट, परमतवादी-रूपी गजेन्द्र के गर्व को फोडनेवाले प्रबल मृगेन्द्र सदृश, अखिल अद्वय (अद्वैत) शब्द को सुने हुए, छन्द-अलंकार-काव्यातर्क आदि के पठन-पाठन की सामर्थ्य रखने के कारण फैली हुई कीर्तिलता से बंग-अंग-तैलंग-गुर्जर-नवसहस्र दक्षिण, वागवर आदि देशरूपी मंडप को आच्छादित करनेवाले (?) महा वादीश्वर श्री मूलसंघ के श्रृंगारसार, श्री वादिचन्द्र के पट्टरूपी उदयाचलपर बालसूर्य के समान, त्रिभुवन के जनों की आह्लादित करनेवाले, प्रखरबुद्धि और निपुणता के कारण एक नवीन वादिश्रेष्ठ, सम्पूर्ण पृथ्वीके बडे से बड़े भूभाग के महान महीपतियोंसे पूजित श्री महीचन्द्र भट्टारक के ॥३०॥

उनके पट्ट स्वरूप उदयगिरि पर (उदित) बालभास्कर, विद्वानो की सभा के भूषण, मिथ्यामत के खण्डन में पण्डित, परमत के वादीरूपो, प्रचण्ड पर्वत को तोड़ने में श्रेष्ठ वज्रके समान, भव्यजनरूपी कुमुदवन को विकसित करने के लिए चन्द्रमा, धर्मस्वरूप अमृत को बरसाने में मेघतुल्य लघु शाखा के हूंबड कुल के श्रृंगारहार, दिल्ली और गुजरात के सिंघासनाधीश, बलात्कारगण की विरुदावली में विराजमान भट्टारक श्री मेरुचन्द्र गुरु के ॥३१॥

सम्पूर्ण सिद्धान्तो द्वारा ज्ञानवान बनाये गये भव्यजनो के हृदयकमल को विकसित करने में एकमात्र बालसूर्य, दशविध धर्मों के उपदेश-वचनामृत की वृष्टि से अनेक भव्यसमूह को तृप्त करनेवाले श्री मेरुचन्द्र के पट्टका उद्धार करने में धीर, श्री मूलसंघ सरस्वती गच्छ बलात्कारगण की विरुदावली में विराजमान, भट्टारकों में श्रेष्ठ, भट्टारक श्रीजिनचन्द्र

गुरु के तपोराज्य के अभ्युदय के लिए भव्यजनों द्वारा किये जानेवाले श्रीजिननाथ के अभिषेक में सभी लोग सावधान होवें ॥३२॥

नन्दिसंघ की पट्टावली के आचार्यों की नामावली

(इण्डियन एन्टी क्वेरी के आधार पर)

१. भद्रबाहु द्वितीय (४), २. गुप्तिगुप्त (२६), ३. माघनन्दी, (३६), ४. जिनचन्द (४०), ५. कुन्दकुन्दाचार्य (४९), ६, उमास्वामी (१०१), ७. लोहाचार्य्य (१४२), ८, यशकीर्ति (१५३), ९. यशोनन्दी (२११), १०. देवनन्दी (२५८), ११. जयनन्दी, (३०८), १२. गुणनन्दी (३५८), १३. वज्रनन्दी (३६४), १४. कुमारनन्दी (३८६), १५. लोकचन्द्र (४२७), १६. प्रभाचन्द्र (४५३), १७. नेमिचन्द्र (४७८), १८. भानुनन्दी(४८७), १९. सिंहनन्दी (५०८), २०. श्री वसुनन्दी (५२५). २१. वीरनन्दी (५३१), २२. रत्ननन्दी (५६१), २३. माणिक्यनन्दी(५८५), २४. मेघचन्द्र (६०१), २५. शान्तिकीर्ति (६२७), २६. मेरुकीर्ति (४४२).

ये उपर्युक्त छब्बीस आचार्य दक्षिण देशस्थ भद्दिलपुर के पट्टाधीश हुए।

२७. महाकीर्ति (६८६), २८. विष्णुनन्दी (७०४), २९ श्रीभूषण (७२६), ३०. शीलचन्द्र (७३५), ३१. श्रीनन्दी (७४९), ३२. देशभूषण (७६५), ३३. अनन्तकीर्ति (७६५), ३४. धर्मनन्दी (७८५), ३५. विद्यानन्दी (८०८), ३६. रामचन्द्र (८४०), ३७. रामकीर्ति (८५७), ३८. अभयचन्द्र (८७८), ३९. नरचन्द्र (८९७), ४०. नागचन्द्र, (९१६), ४१. नयनन्दी (९३९), ४२. हरिनन्दी (९४८), ४३. महीचन्द्र (९७४), ४४. माघचन्द्र (९९०).

उल्लिखित महाकीर्ति से लेकर माघचन्द्र तक के अट्ठारह आचार्य उज्जयिनी के पट्टाधीश हुए।

४५. लक्ष्मीचन्द्र (१०२३), ४६. गुणनन्दीं, ४७. गुणचन्द्र (१०४८), ४८. लोकचन्द्र (१०६६)। ये उल्लिखित चार आचार्य्य चन्देरी (बुन्देलखण्ड) के पट्टाधीश हुए।

४९. श्रुतकीर्ति (१०९२), ५० भावचन्द्र (१०४९), ५१. महाचन्द्र (१११५), उल्लिखित तीन आचार्य्य मेलसे (भूपाल सी.पी.) के पट्टाधीश हुए।

५२. माघचन्द्र (११४०)।

ये आचार्य कुण्डलपुर (दमोह) के पट्टाधीश हुए।

५३. बह्मनन्दी (११४४), ५४. शिवनन्दी (११४८), ५५. विश्वचन्द्र (११५५), ५६. ह्यदिनन्दी (११५६), ५७. भावनन्दी (११६०), ५८. सूरकीर्ति (११६९), विद्याचन्द्र (११७०), ६०. सूरचन्द्र (११७६), ६१. माघनन्दी (११८४), ६२. ज्ञाननन्दी (११८८), ६३. गंगकीर्ति (११९९), ६४. सिंहकीर्ति (१२०६)।

उपर्युक्त बारह आचार्य वारां के पट्टाधीश हुए।

६५. हेमकीर्ति (१२०९), ६६. चारुनन्दी (१२१६), ६७. नेमिनन्दी (१२२३), ६८. नामिकीर्ति (१२३०), ६९. नरेन्द्रकीर्ति (१२३२), ७०. श्रीचन्द्र (१२४१), ७१. पद्म

(१२४८), ७२. वर्धमानकीर्ति (१२५३), ७३. अकलंकचन्द्र (१२५६), ७४. ललितकीर्ति (१२५७), ७५. केशवचन्द्र (१२९१), ७६ चारुकीर्ति (१२६२), ७७. अभयकीर्ति (१२६४), ७८. बसन्तकीर्ति (१२६४)।

इण्डियन एण्टिक्वेरी की जो पट्टावली मिली है उसमें उपर्युक्त चौदह आचार्यो का पट्ट ग्वालियर में लिखा है, किन्तु वसुन्दी श्रावकाचार में इनका चित्तौड में होना लिखा है, पर चित्तौड में भट्टारकों की अलग भी पट्टावली है। जिनमें ये नाम नहीं पाये जाते है। सम्भव है कि ये पट्ट ग्वालियर में हों। इनको ग्वालियर की पट्टावली से मिलाने पर निश्चय होगा।

७९. प्रख्यातकीर्ति(१२६६), ८०. शुभकीर्ति (१२६८), ८१. धर्मचन्द्र (१२७१), ८२. रत्नकीर्ति (१२९६), ८३. प्रभाचन्द्र (१३१०)।

ये उल्लिखित ५ आचार्य अजमेर में हुए है।

८४. पद्मनन्दी (१३८५), ८५. शुभचन्द्र (१४५०), ८६. जिनचन्द्र (१५०७), ये तीन आचार्य दिल्ली में पट्टाधीश हुए है।

इनके बाद पट्ट दो भागों में विभक्त हुआ। एक नागौर में गद्दी स्थापित हुई और दूसरी चित्तौड में। निम्नलिखित आचार्यो के नाम चित्तौड पट्ट के है। प्रभाचन्द्रजी से चित्तौड का पट्ट प्रारंभ होता है।

८७. प्रभाचन्द्र (१५७१), ८८. धर्मचन्द्र (१५८ १), ८९. ललितकीर्ति (१६०३), ९० चन्द्रकीर्ति (१६२२), ९१. देवेन्द्रकीर्ति (१६६२), ९२. नरेन्द्रकीर्ति (१६९१), ९३. सुरेन्द्रकीर्ति (१७२२), ९४. जगत्कीर्ति (१८१५), ९८. सुरेन्द्रकीर्ति (१८२२), ९९. सुखेन्द्रकीर्ति (१८४९), १००. नयनकीर्ति (१८७९), १०१. देवेन्द्रकीर्ति (१८८३), १०२. महेन्द्रकीर्ति (१९३८)।

नागौर के भट्टारकों की नामावली

१. रत्नकीर्ति (१५८१), २. भुवनकीर्ति (१५८६), ३. धर्मकीर्ति (१५९०), ४. विशालकीर्ति (१६०९), ५. लक्ष्मीचन्द्र, ६. सहस्त्रकीर्ति, ७. नेमिचन्द्र, ८. यशकीर्ति, ९. भुवनकीर्ति, १०. श्रीभूषण, ११. धर्मचन्द्र, १२. देवेन्द्रकीर्ति, १३. अमरेन्द्रकीर्ति, १४. रत्नकीर्ति, १५. ज्ञानभूषण, १६. चन्द्रकीर्ति, १७. पद्मनन्दी, १८. सकलभूषण, १९. सहस्त्रकीर्ति, २०. अनन्तकीर्ति, २१. हर्षकीर्ति, २२. विद्याभूषण, २३. हेमकीर्ति। यह आचार्य १९१० माघ शुक्ल द्वितीया सोमवार को पट्ट पर बैठे।

इनके बाद क्षेमेन्द्रकीर्ति हुए, इनके पट्ट पर मुनीन्द्रकीर्ति हुए और अब नागौर की गद्दी पर श्रीकनककीर्ति महाराज विराजमान हैं।

भट्टारक पद्मनन्दि

ये प्रभाचन्द्र के पट्टपर हुए है । इनने भी कई ग्रन्थ लिखे है और पंन्द्रहवी शताब्दी के पूर्वार्ध में हुए है। संवत १४९२ में सकलकीर्ति जो कि इनके शिष्य थे । गुरुत्वरूपमें इनका स्मरण करते है । देखो प्रशस्तिनं १३, १४, २१ (१६, ५७, ६० ६१, ६२ ७०)

भट्टारक पद्मनन्दि ईडर गद्दी के प्रथम भट्टारक सकलकीर्ति के गुरु (पट्टावली क्रम ७९ समय वि. सं. १३८५-१४५० ई. सन् १३२८-१३९३)

संस्कृत भाषा के उन्नायकों में भ. आचार्य पद्मनन्दि की गणना की जाती है । वे प्रभाचन्द्र के शिष्य थे । कहा जाता है कि दिल्ही में रत्नकीर्ति के पट्टपर वि. १३१० की पोष शुक्ला पूर्णिमा को भट्टारक प्रभाचन्द्र का अभिषेकत हुआ था । इनका जन्म ब्राह्मण जाति में हुआ था । खंभात धारा देवगिरी आदि स्थानो में विहार कर धर्म और संस्कृतिका प्रचार-प्रसार किया था । इन्होंने दिल्ही में नासिरुदिन मुहम्मदशाह को भी प्रसन्न किया था । प्रभाचन्द्र ७४ वर्ष तक पट्टधीश रहे ।

एक बार प्रतिष्ठामहोत्सव के समय व्यवस्थापक गृहस्थ उपस्थित नहीं रहे ,तो प्रभाचन्द्रने उसी उत्सवको पट्टाभिषेकका रूप देकर अपने पट्ट पर अभिषिक्त कर दिया था । इन्होंने वि. स. १४५० की वैशाख शुक्ला द्वादशी को एक आदिनाथस्वामी की मूर्ति प्रतिष्ठित करायी थी । ये मूलसंघ स्थित नन्दसंघ बलात्कारगण और सरस्वती गच्छ के आचार्य थे।

भट्टारक पद्मनन्दि के तीन प्रमुख शिष्य थे, जिन्होने भट्टारक परम्पराएँ स्थापित की थीं अन्य शिष्यों के साथ मदनदेव नयनन्दि और मदनकीर्ति इन प्रमुख शिष्योंके नामोल्लेख पाये जाते है ।

स्थितिकाल -

आचार्य प्द्मनन्दि भ्ट्टारक और मुनि दोनों विशेषणों द्वारा अभिहित है । इनका पट्टाभिषेक व. सं. १३८५ (इ. सन् १३२८) में हुआ था। ये पन्द्रह वर्ष , सात माह और १३ दिन गृहस्थी में रहे । पश्चात् १३ वर्ष तक दीक्षित हो ज्ञान और चारित्रकी साधना करते रहे । २९ वर्ष की अवस्थाके अनन्तर ये पट्टपर अधिष्ठित हुए और ५६ वर्षो तक पट्टाधीश बने रहे । इस प्रकार इनका जन्म समय ई. सन् १३०० के लगभग आता है । आदिनाथस्वामी की मूर्ति प्रतिष्ठा वि.सं. १४२० (ई सन् १३९३) में इनके द्वारा समन्न हुई है । वि. सं. १४६५ (ई सन् १४०८) और वि. सं. १४८३ (ईसन् १४२६) के विजौलया के शिलालेखो में इनकी प्रशंसा की गइ है और वहाँ मानस्तम्भों में इनकी प्रतिकृति अंकित मिलती है ।

टोडानगर के भूगर्भसे २६ दिगम्बर जैन प्रतिमाएँ उपलब्ध हुई है, जिन्हें वि. स. १४७० (ई सन् १४१३)में प्रभाचन्द्र के प्रशिष्य और भट्टाराक पद्मनन्दि के शिष्य, भट्टारक विशालकीर्ति के उपदेश से खण्डेलवाल जाति के गंगेलवाल गोत्रीय किसी श्रावक ने प्रतिष्ठत कराया था । इससे स्पष्ट है कि भट्टारक पद्मनन्दि ई. सन् १४१३ के पूर्ववर्ती है। अतएव संक्षेप में पट्टावलियों और प्रशस्तियोंके आधारपर आचार्य पद्मनन्दि का समय ई. सन् की १४वीं शती है ।

रचनाएँ

आचार्य पद्मनन्दि के नाम से कई स्तोत्र मिलते हैं . पर गुरु का नाम निर्दिष्ट न होने से यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि प्राप्त स्तोत्र इन्हीं पद्मनन्दि के है या किन्ही दूसरे आचार्य के । अतएव यहाँ सुनिर्णीत और संदिग्ध दोनों ही प्रकार की रचनाओं का निर्देश किया जाता है ।

१. जोरापल्ली पार्श्वनाथ स्तवन

२. भावना पद्धति

३. श्रावकाचारसोद्धार

४. अनन्तव्रत कथा

५. वर्द्धमानचरित

सन्दिग्ध कृतियाँ

१. वीतराग स्तोत्र

२. शान्तिजिन स्तोत्र

३. रावण पार्श्वनाथस्तोत्र

भट्टारक विद्यानन्दि

ई.स. १४४२ १४६१

आचार्य विद्यानन्दि बलात्कारगण की सूरत-शाखा के भट्टारक थे। इस शाखा का आरम्भ भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति से हुआ है। ये भट्टारक पद्मनन्दि के शिष्य थे। पद्मनन्दि के तीन शिष्यो ने तीन भट्टारक-परम्पराएँ आरम्भ की हैं। शुभचन्द्र ने दिल्ली-जयपुरशाखा, सकलकीर्ति ने ईडर-शाखा और देवेन्द्रकीर्ति ने सूरत-शाखा को समृद्ध किया है। बलात्कारगण उत्तर शाखा में वि.सं.१२६४ मे वसन्तकीर्ति, वि.सं.१२६६ में विशालकीर्ति, तत्पश्चात् शुभकीर्ति, वि.संवत् १२७१-१२९६ मे धर्मचन्द्र, वि.सं. १२९६-१३१० में रत्नकीर्ति वि.सं.१३१०-१३८४ में प्रभाचन्द्र और वि.सं.१३८५-१४५० में पद्मनन्दि भट्टारक हुए। इन पद्मनन्दि के शिष्य देवेन्द्रकीर्ति वि.सं.१४९३ में पट्ट पर आसीन हुए। देवेन्द्रकीर्ति के शिष्य विद्यानन्दि हुए। इन्होंने वि.सं.१४९९ की वैशाख शुक्ला द्वितीया को एक चौबीसी मूर्ति,वि.सं. १४१३ की वैशाख शुक्ला दशमी को एक मेरू तथा चौबीसी मूर्ति,वि.सं.१४१८ की माघ शुक्ला पंचमी को दो मूर्तियाँ, वि.सं.१४२१ की वैशाख शुक्ला द्वितीया को एक चौबीसी मूर्ति एवं वि.सं.१४३७ की वैशाख शुक्ला द्वादशी को एक अन्य मूर्ति की गयी है। मोक्ष प्राभृत के अन्त में पूर्व प्रशस्ति भी दी गयी है। इस प्रकार संक्षेप मे षट्प्राभृत की टीका कुन्दकुन्द के ग्रन्थ को स्पष्ट करती है।

तत्वत्रयप्रकाशिका

यह ज्ञानावर्णव के गद्यभाग की संस्कृत टीका है। यह टीका अभी तक अप्रकाशित है। शुभचन्द्राचार्य ने योगविषय को लेकर ज्ञानार्णव की रचना की है। श्रुतसागर ने केवल इसके गद्यांश पर ही संस्कृत टीका लिखी है।

जिनसहस्त्रनामटीका-

यह पं.आशाधर कृत सहस्त्रनामकी विसतृत टीका है। टीका के अन्त में लिखा है·

श्रुतसागरकृतिवरवचनामृतपानमत्र यैर्विहितम् ।
जन्मजरामरणहरं निरन्तरं तैः शिवं लब्धम्।
अस्ति स्वाति समस्तस.डध.तिलकं.श्रीमूलस.डो.धनद्यं
वृतं यत्र मुमुक्षुवर्गशिवदं संसेवितं साधुभिः।
तच्छिष्यश्रुतसागरेण रचिता टीका चिरं नन्दतु।।

महाभिषेकटीका

पं.आशाधर के नित्यमहोद्योत की यह टीका है। इसका प्रणयन उस समय हुआ था, जब श्रुतसागर देशवती या ब्रह्मचारी थे।

औदार्यचिन्तामणि-

प्राकृत माषा का शब्दानुशासन है। दो अध्यायो में पूर्ण हुआ हैं। प्रथम अध्याय में २४५ सूत्र और द्वितीय अध्यायमें २१३ सूत्र हैं ।

सद्भाषितावली

इस सुभाषित ग्रन्थ में धर्म, सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, इन्द्रियजय, स्त्रीसहवास,कामसेवन, निर्ग्रन्थसेवा, तप, त्याग,राग-द्वेष,क्रोध,लोभ,मोह आदि विभिन्न विषयो का विवेचन किया है। इस में कुल ३८१ पद्य हैं। सभी पद्य उपदेशप्रद हैं। यथा-

सर्वेपु जीवेषु दया कुरु त्वं, सत्यं वचो ब्रूहि घन परेषाम्।
चाबह्मसेवा त्यज सर्वकाल, परिग्रहं मुंच कुयोनिबीज॥

पार्श्वनाथपुराण

इसका दूसरा नाम पार्श्वनाथचरित भी है। इसमें २३ वे तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ के जीवन का वर्णन है। कथा का आरम्भ वायुभूति के जीवन से हुआ है। वायुभूमि अपनी साधना द्वारा पार्श्वनाथ बन निर्वाण प्राप्त करता है। समस्त कथा वस्तु २३ सर्गो में विभक्त है।

सिद्वान्तसारदीपक

यह रचना करणानुयोग सम्बन्धी है इसमें उर्द्धलोक,मध्यलोक एवं अधोलोक इन ताधों लोकों का एवं इन तीनों लोकों में निवास करनेवाले देव,मनुष्य,तिर्यक और नारकियों का विस्तृत वर्णन किया है। 'तिलोयणपण्णति' और 'त्रिलोकसार' के विषय को इस कृतिमें निबद्ध किया गया है। इसका रचना काल वि.सं.१४८१ और रचना स्थान बडालो नगर है। समस्त ग्रन्थ १६ अधिकारो में विभक्त है।

व्रतकथाकोश

इस ग्रन्थ में विभिन्न व्रत सम्बन्धी कथाएँ निबद्ध की गयी है। व्रत - पालन द्वारा जिन व्यक्तियो ने अपने जीवन में विभूतियाँ प्राप्त की है,उन व्यक्तियों के आख्यानों का वर्णन इस कथा कोश ग्रन्थ में किया गया है।

पुराणसारसंग्रह

प्रस्तुत ग्रन्थ में आदिनाथ,चन्द्रप्रभ,शान्तिनाथ,नेमिनाथ,पार्श्वनाथ और वर्द्धमान इन छह तीर्थकरों के चरितों का निबद्ध किया गया है। तीर्थकरों का जीवनवृत अत्यन्त संक्षेप में लिखा गया है।

कर्मविपाक

यह ग्रन्थ संस्कृत गद्य में लिखा गया है। इसमें आठ कर्म तथा उनके १४८ भेदो का वर्णन है। प्रकृति बन्ध,प्रदेशबन्ध,स्थितिबन्ध एवं अनुभागबन्धकी अपेक्षा से कर्मो के बन्ध का वर्णन सुन्दर एवं बोद्यगम्य है। इसमें ५४७ पद्य है।

विद्यानन्दि के गृहस्थ-जीवन सम्बन्धी कोई भी वृतान्त ग्रन्थ प्रशस्तियो में उपलब्ध नहीं है । केवल एक पट्टावली में 'अष्टाशाखाप्रागवाटवंशावतंस' तथा 'हरिराजकुलोद्योतकर' कहा गया है, जिससे ज्ञात होता है कि ये प्रागवाट (पौरवाड़) जातिके थे तथा इसके पिताका नाम हरिराज था। पौरवाड़ जाति में अथवा उसके किसी एक वर्ग में आठ शाखाओं की मान्यता प्रचलित रही होगी। इस जाति का प्रचार प्राचीनकाल

में गुजरात प्रदेश में रहा है। इस प्रदेश की प्राचीन राजधानी श्रीमाल थी। इस प्रागवाट् जाति में विद्यानन्दि के गुरूभट्टारक के देवेन्द्रकीर्ति का विशेष सम्मान रहा है। इन्होंने पौरपाटान्वय की अष्टशाखावाले एक श्रावक द्वारा वि.सं.१४९३ में एक जिनमूर्ति की स्थापना करायी थी।

''संवत् १४९३ शाके १३४८ वर्षे वैशाख वदि ४ गुरौ दिने मूलनक्षत्रे श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुन्दकुन्दाचार्यान्वये भ. श्रीप्रभाचन्द्रदेवाः तत्पट्टे वादिवादीन्द्र भ. पद्मनन्दिदेवाः तत्पट्टे श्रीदेवेन्द्रकीर्तिदेवाः पौरपाटान्वये अष्टशाखे आहारदानदानेश्वर सिंघई-लक्ष्मण तस्य भार्या अखयसिरी कुक्षि-समुत्पन्न अर्जुन.........।''

अतएव स्पष्ट है कि प्रागवाट, पौरपाट और पोरवाड़ एक ही जातिके वाचक हैं। डॉ. हीरालालजी जैन का अनुमान है कि भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति भी इसी जाति में उत्पन्न हुए होंगे और उन्हीं के प्रभाव से विद्यानन्दि भी दीक्षित हुए होंगे। वि.स.१४९९ के मूर्तिलेख मे उन्हे देवेन्द्रकीर्ति का शिष्य कहा गया है।

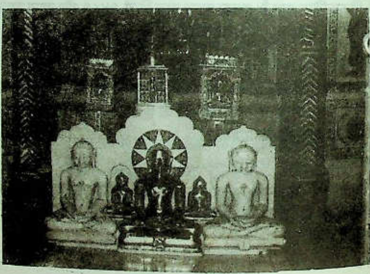

श्रुतसागरसूरि (सूरत)

श्रुतसागरसूरि केवल परम्परा परिपोषक ही नहीं है अपितु मौलिकता संस्थापक भी है। इनकी तत्वार्थसूत्र पर एक श्रुतसागरी नाम की वृत्ति उपलब्ध है। जिससे इनका मौलिकता का परिचय प्राप्त होता है। श्रूतसागर ने अपनी रचनाओं के अंत में अपने गुरु आदि का नाम अंकित किया है। ये मूलसंघ सरस्वतीगच्छ और बलात्कारगणके आचार्य है। इनके गुरु का नाम विद्यानंदि था। विद्यानंदि के गुरु का नाम देवेन्द्रकिर्ति और देवेन्द्रकीर्ति के गुरु का नाम पद्मनंदि था। ये पद्मनंदि सम्भवतः वह है। जिनको गिरनार पर्वत पर सरस्वतीदेवी ने दिगम्बर पंथ के सच्चे होने की सूचना दी थी। इन्ही की एक शिष्यशाखा में सकलकीर्ति विजयकीर्ति और शुभचन्द्र भट्टारक हुए है। ये बलात्कारगणकी सूरत शाखाके भट्टारक है। विद्यानदिके पश्चात मल्लिभूषण भट्टारक हुए जो श्रूतसागर के गुरु भाइ थे मल्लिभूषणके अनुरोधसे श्रूतसागरने यशोधवाचरित्र मुकुट सप्तमिकथा और पल्लिविधानकथा आदि की रचना की है।

श्रुतसागर के अनेक शिष्य हुए हैं उनमें एक शिष्य श्रीचंद्र थे. जिनके द्वारा रचित वैराग्यमणिमाला उपलब्ध है। आराधनाकथा कोश, नेमिपुराण आदि ग्रन्थो के रचयि ब्रह्मनेमिदत्त ने भी श्रुतसागर को गुरुभाव से स्मरण किया है। यह ब्रह्मनेमिदत्त मल्लिभूषण के शिष्य थे।

श्रूतसागर ने अपने को देशवती ब्रह्मचारी या वर्णी लिखा है। तथा नव्नवति महावादिविजेता तर्क-व्याकरण, छंद, पुलकार सिध्दांत साहित्यादि -शास्त्रनिपुण प्राकृतव्याकरणादि अनेक शास्त्रचच्चु, उभयभाषाकविचक्रवर्ती, तार्किकशिरोमणि परमागमप्रवीण आदि विशेषणों से अलंकृत किया है। तत्वार्थवृतिक अन्तिम संधिवाक्य से ज्ञात होता है कि इन्हों ने तत्वार्थश्लोकवार्तिके सर्वार्थ सिद्ध न्यायकुमुदचन्द्र प्रमेयकमलमार्तण्ड तत्वार्थवातिक और अष्टसहस्त्री आदि ग्रन्थोंका गम्भीरतापूर्वक अध्यायन किया है। इससे स्पष्ट है कि श्रुतसागर अपने समय के अच्छे विद्वान और ग्रन्थकार थे .

श्रुतसागर सूरि द्वारा रचित पल्लिविधान कथा में ईडर के राजा भानु अथवा रावभाणजी के राज्यकाल का निर्देश है। इस ग्रन्थ की प्रसस्ति में बताया है कि भानुभूपति की भुजा रूपी तलवार के जल प्रवाहमें शत्रुकुल का विस्तृत प्रभाव निमग्न हो गया था। और उनका मंत्री हूम्मड कूलभूषण भोजराज था। उसकी पत्नी का नाम विनय देवी था। जो अतीव पतिवता, साध्वी जिन चरणकमलो की उपासिका थी। उसके चार पुत्र उत्पन्न हुए थे. जिनमें प्रथम पुत्र कर्मसिंह जिसका शरीर भूरि रत्नगणों से विभूषित था। दूसरा पुत्र कूलभूषण था जो शत्रुकुल के लिए काल स्वरूप था। तीसरा पुत्र पुण्यशाली श्री घोष था, जो सधनपापारूपी गिरीन्द्र के लिए वज्र के समान था और चौथा गंगाजल के समान निर्मल मन वाला गंगा था। इन चारों पुत्र के पश्चात इनकी एक बहन भी थी। जो जिनवरके मुख से निकली हुई सरस्वती के समान थी। श्रुतसागरने स्वयं उसके साथ संघ सहित गजपंथ और तुंगी गिरि आदि की यात्रा की थी।

श्रुतसागर का व्यक्तित्व एक ज्ञानाराधक तपस्वी का व्यक्तित्व है, जिनका एक-एक क्षण श्रुतदेवता की उपासना में व्यतीत हुआ है। श्रुतसागर निस्सन्देह अत्यन्त प्रतिभाशाली विद्वान है। यह कलिकालसर्वज्ञ कहे जाते थे। तार्किक होनेके कारण असहिष्णु भी प्रतीत होते हैं। अन्य मतों का खंडन और विरोध करनेमें अत्यन्त सतर्क रहे हैं।

स्थितिकाल

श्रुतसागरने अपने किसीभी ग्रन्थमें रचनाकाल अंकित नही किया है। किन्तु अन्य आधारों से उनके समय का निर्णय किया जा सकता है।

१. पद्मनंदि के शिष्य देवेन्द्रकीर्ति का एक अभिलेख देवगढ में है, जिसपर संवत १४९३ अंकित है। यह देवेन्द्रकीर्ति श्रुतसागरके दादागुरु थे।

२, सूरत के एक मूर्ति अभिलेख में संवत १४९९ और एक में संवत १५१३ अंकित है। यह दोनों मूर्तिया देवेन्द्रकीर्ति के शिष्य विद्यानंदि के उपदेश से प्रतिष्ठित हुइ थी। विद्यानदिके उपदेशसे प्रतिष्ठित अन्य मूर्तियोपर वि. संवत १५१८ १५२१ और १५३७ अंकित है।

३. सूरतमें पद्मावतीकी एक मूर्तिपर वि. स. १५४४ अंकित है। उस समय विद्यानंदिके पट्ट पर मल्लिभूषण विराजमान थे। इन्हीं मल्लिभूषण के उपदेश से श्रुतसागर ने कुछ कथाए लिखी है। ये श्रुतसागरके गुरुभाई थे.

४. ब्रह्मनेमिदत ने और आराधनाकथाकोश की प्रशस्तिमें विद्यानंदि के पट्टवर मल्लिभूषण और उनके शिष्य सिंहनंदि का गुरु रूप में स्मरण करके श्रुतसागर का जयघोष किया है। इससे ध्वनित होता है कि वे उस समय जीवित थे। इन्हीं ब्रह्मनेमिदत्त ने वि. स.१५८५ में श्रीपालचरित्र की रचना की है। उससे श्रुतसागर सूरि द्वारा रचित श्रीपालचरित का निर्देश करते हुए इनको प्रर्वसूरि तथा उनके द्वारा श्रीपालचरित को पुराग्चित कहा है। इससे ज्ञात होता है कि उस समय श्रुतसागर का देहांवसान हो चुका था।

५. पल्लिविधान कथा की प्रशस्ति से भी श्रुतसागर का समय वि. सं.१५०२ -१५२२ तक आता है। विद्यानंदि और मल्लिभूषण के पट्टकालों पर विचार करने से भी श्रुतसागर का समय वि. सं. १५४४-१५५६ आता है। इस प्रकार भट्टारक श्रुतसागर सूरि का समय वि. की. १६ वी शताब्दी है।

रचनाएँ

श्रुतसागरसूरि की अब तक ३८ रचनाएँ प्राप्त हैं। इनमें आठ टीकाग्रन्थ हैं और चौबीस कथाग्रन्थ हैं शेष छह व्याकरण और काव्य ग्रन्थ हैं।

१. यशस्तिलकचन्द्रिका २. तत्वार्थवृत्ति ३. तत्त्वत्रयप्रकाशिका ४. जिनसहस्त्रनामटीका ५. महाभिषेकटीका ६. षटपाहुडटीका ७. सिद्धभक्तिटीका ८. सिद्धचक्राष्टकटीका ९. जेष्ठजिनवरकथा १० रविव्रतकथा ११. सप्तपरमस्थानकथा १२. मुकुटसप्तमीकथा १३. अक्षयनिधिकथा १४.षोडसकारणकथा १५. मेगमालव्रतकथा १६. चन्दनषष्ठीकथा १७. लब्धीविधानकथा १८. पुरन्दरविधानकथा १९ दशलक्षणीव्रतकथा २० पुष्पाज्लिव्रतकथा

२१. आकाशपंचमीव्रतकथा २२. मुक्तावलीव्रतकथा२३. निर्दुखसप्तमीकथा २४. सुगन्धदशमी कथा २५. श्रावणद्वादशी कथा २६. रत्नत्रयव्रतकथा २७. अशोकरोहिणिकथा २८. अनन्तव्रतकथा २९. तपोलक्षणपंक्तिकथा ३० मेरुपंक्तिकथा ३१ विमानपक्तिकथा ३२ प्रल्लिविधान कथा ३३ श्रीपालचरित ३४. यशोधराचरित ३५ औदार्यचिन्तामणि (प्राकृत व्याकरण) ३६. श्रुतस्कन्धपूजा ३७. पार्श्वनाथस्तवन ३८ शांतिनाथस्तवन

यशसितलकचन्द्रि का- श्रुतसागर ने यशसितलग्रंथपर चन्द्रिका नामक टीका लिखी है टीकामें बताया है ....

इति श्रीपद्मनन्दि-देवेन्द्रकीर्ति-विद्यानन्दि -मल्लिभूषणाम्नायेन
भट्टारक-श्रीमल्लिभूषणगुरुपरमामीष्टगुरुभ्रात्रा
गुर्जरदेशसिंहसनस्थभट्टारकश्रीलक्ष्मी-चन्द्राभिमतेन
मालवदेशभट्टारकश्रीसिंहनन्दिप्राथनया यतिश्रीसिद्धान्दिसागर
व्याख्याकृतिनिमित्त नवनवतिमहावादिस्याद्वादलब्धविजयेन
तर्क-व्याकरणछन्दोलंकारसिद्धान्त साहित्यादिशास्त्रनिपुणमतिना
व्याकरणाद्यनेकशास्त्रचञ्चुना सूरिश्रीश्रुतसागरेण विरचितायां
यशस्तिलकचन्द्रिकाभिधानायां यशोधरमहाराजचरितचम्पूमहाकाव्यटीकायां
यशोधरमहाराजराजलक्ष्मीविनोदवर्णन नाम तृतीया श्वासचन्द्रिकापरिसमाप्ता।

इस प्रशस्ति से स्पष्ट है कि श्रुतसागर ने अपने परिचय के साथ यशस्तिलक की टीका लिखने का निर्देश किया है। श्रुतसागर ने इस टीका में विषयों के स्पष्टीकरण के साथ कठिन शब्दों की व्याख्या भी प्रस्तुत की है। यशस्तिलक में जितने नये शब्दो का प्रयोग सोमदेव ने किया है उन सभीका इस टीका में किया गया है। यशस्तिलकको स्पष्ट करने के लिए यह टीका बहुत उपादेय है।

श्रुतिसागरी टीका - इस वृत्ति में तत्वार्थसूत्र पर रचित समस्त वृतियो का निचोड अंकित है। श्रुतसागर ने तत्वर्थासूत्रकार उमास्वामी के साथ पूज्यपाद प्रभाचन्द्र, विद्यानंद और अकंल का भी स्मरण किया है। ये चारो ही आचार्य तत्वार्थसूत्र के टीकाकार है वृत्ति का प्रारम्भ सवार्थ सिद्धि की आरम्भिक शब्दो की शैली को अपना कर किया है। सर्वार्थसिद्धि में प्रश्न कर्ता भव्य का नाम नहीं लिखा है पर श्रुतसागरने द्वैयाकनामा लिखा है। १३वी शताब्दी के बालचन्द्र मुनि द्वारा तत्वार्थसूत्र की जो कन्नड़ टीका लिखी गई है उस मे उस प्रश्नकर्ता का नाम सिद्धय्य पाया जाता है। सर्वार्थसिद्धि के प्रारम्भ में निबद्ध मंगल श्लोक मोक्षमार्ग स्य नेतारं आदि का व्याख्यान श्रुतसागर ने भी किया है। श्रुतसागरसूरि का पुरा व्याख्यान एक तरह से सर्वार्थसिद्धिनामक वृति का ही व्याख्यान है जो भास्कर नन्दि के समान बाते सर्वार्थसिद्धि में संक्षेपरुप में कही गयी है उन्हीं बातों का विस्तार और स्पष्टता के साथ इस वृत्ति में अंकित किया गया है। यथास्थान ग्रन्थातरो के प्रमाण देकर विशेष कथन भी किया गया है। ग्रन्थातरों के उद्धरण प्रचुर परिमाण प्राप्त है। पाणिनि और कातन्त्र व्याकरण के सूत्रों के उद्धरण भी प्राप्त है।

श्रुतसागर के व्याख्यान में कतिपय विरोध भी प्राप्त होते हैं। न्यायाचार्य पण्डित महेन्द्रकुमारजी ने श्रुतसागर के स्खलन का निर्देश किया है। सर्वार्थसिद्धि में द्रव्याश्रया निर्गुणाः गुणाः (५/४१) सूत्रकी व्याख्यामें निर्गुणइस विशेषण की सार्थकता बतलाते हुए

लिखा है -निर्गुण इति विशेषण द्वयणुकादिनिवृत्त्यर्थम् तान्यपि हि कारणभूतपरमाणुद्रव्याश्रयाणि गुणवन्ति तु तस्मात् निर्गुणाः इति विशेषणात्तानि निवर्तितानि भवन्ति ।

अर्थात द्वयणुकादि स्कन्द नैयायिकों की दृष्टि से परमाणुरूप कारणद्रव्यों में आश्रित होने से द्रव्याश्रित है और रूपादिगुणवाले होने से गुणवाले भी हैं । अत इनमें भी उक्तगुणका लक्षण अतिव्याप्त हो जायेगा। इन्हीं कारण इनकी निवृत्ति के हेतु निर्गुणाः यह विशेषण दिया गया है . इसकी व्याख्या करते हुए श्रुतसागर सूरि ने लिखा है ।

निर्गुणआ इति विशेषण द्वयणुकत्र्यणुकादिस्कन्धनिषेधार्थम् तेन स्कन्धा श्रया गुणा गुणआ नोच्यन्ते । कस्मात ? कारणभूतपरमाणुद्रव्याश्रयत्वात् तस्मात् कारणात् निर्गुणा । इति विशेषणातस्कनघ गुणा न भवन्ति पर्यायाश्रयत्वात् । अर्थात निर्गुण यह विशेषण द्वयणुक त्र्यणुक अदि स्कन्धरे निषेधके लिए है । इससे स्कन्ध में रहनेवाले गुण गुण नहीं कहे जा सकते क्योंकि वे कारणभूत परमाणु द्रव्य में रहते है अतएव स्कन्धके गुण गुण नही हो सकते क्योकि वे पर्याय में रहते है । यह हेतुवाद बड़ा विचित्र है और है सिद्धांत के प्रतिकूल। सिद्धांत में रुपादि चाहे घटादि स्कन्धों में रहेनेवाले हों या परमाणु में सभी गुण कहे जाते है । ये स्कन्धके गुणोंको गुणही नहीं कहना चाहते क्योकिं ये पर्यायाश्रित है । अतएव निर्गुण पद की सार्थकता का मेल नहीं बैठता है । इस असंगतिके कारण आगेके शंका -समाधान में भी असंगति प्रतीत होती है ।

श्रुतसागरी वृतिके २८१वे पृष्ठपर गुण स्थानो का वर्णन करते समयलिखा है कि मिथ्यादृष्टिगुणस्थान से सम्यग्यदृष्टिगुणस्थान में पहुंचाने वाले जीव प्रथमो पशमसम्यक्त्वमें ही दर्शनमोहनो की तीन और अन्तानुबन्धी चार इन सात सम्यक्त्व में दर्शनमोहनीयकी केवल एक प्रकृति मिथ्यात्व है ।

भट्टारक मल्लिभूषण

ई. स. १४६१ - १४८७

विद्यानंदी के पट्टशिष्यों में मल्लिभूषण की गणना की जाती है। इन्होन वि. सं. १५४४ की वैशाख शुक्ला तृतीया को खम्भात में एक निषीदिका बनवायी थी। इस निषीदिका पर जो अभिलेख प्राप्त हुआ है उससे आर्यिका रत्नश्री, कल्याणश्री और जिनमति का परिचय प्राप्त होता है। यह अभिलेख आर्यिका की मूर्ति पर उत्कीर्ण है।

''संवत १५४४ वर्षे वैशाख सुदी ३ सोमे श्रीमूलसंघे सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे श्री विद्यानंदीदेवाः तत्पट्टे भ. श्री मल्लीभूषण श्री स्तंभतीर्थे हूबंड़ ज्ञातेय श्रेष्ठी चांपा भार्या रूपिणी तत्पुत्री श्री अर्जिका रत्नसिरी क्षुल्लिका जिनमती श्रीविद्यानंदीदीक्षिता आर्जिका कल्याणसिरी तत्वली अग्रोतका ज्ञातो साहदेवा भार्या नारिंगदेपुत्री जिनमती नस्सही कारापिता प्रणमति श्रेयार्थम्''

मल्लिभूषण ने गोपाचल की यात्रा की थी और गयासुद्दीन के द्वारा सम्मान प्राप्त किया था। मल्लिभूषण पदमावती के उपासक थे। पट्टावली में इनके वादी होने का भी निर्देश मिलता है। मल्लिभूषण ने धर्मोपदेश शास्त्रार्थ आदि के द्वारा धर्मकी प्रभावना की थी। बताया है

'' तत्पट्टोदयाचलबालभास्कर- प्रवरपरवादिगजयूथकेसरि-
मंडपगिरिमंत्र-वादसमस्याप्तचन्द्रपूर्णविकटवादि
-गोपाचलदुर्गमेघाकर्षकभविकजन-सस्यामृत-वाणिवर्षणसुरेंद्रनागेंद्र
मृगेंदादिसेवितचरणारविंदाना ग्यासदीन सभामध्यप्राप्त
सन्मानपद्मावत्युपासकाना श्रीमल्लिभूषणभट्टारकवर्याणाम्। ''

स्पष्ट है कि मल्लिभूषण अपने समय के प्रसिद्ध आचार्य और धर्म प्रचारक थे। इनके पट्ट शिष्य लक्ष्मीचन्द्र हुए। इसी भट्टारक शाखा में एक अन्य विद्यानंदि भी हुए हैं। इन्होंने वि.सं. १८०५ में सूरत में एक आदिनाथ मूर्ति स्थापित की थी।

आचार्य वीरचन्द्र

क्रम ६ ई.१४८७ - १५१५

भट्टारकीय-बलात्कारगण सूरत-शाखा के भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति की परम्परा में लक्ष्मीचन्द्र के शिष्य आचार्य वीरचनद्र हुए है। वीरचन्द्र अत्यन्त प्रतिभा सम्पन्न विद्वान थे। व्याकरण एवं न्यायशास्त्र के प्रकाण्ड वेत्ता थे। छंद अलंकार एवं संगीत शास्त्रके मर्मज्ञान के साथ वादविद्या में भी वे निपुण थे। साधुजीवन का निर्वाह करते हुए वे गृहस्थको संयमित जीवन यापन करने की शिक्षा देते थे। भट्टारक पट्टावली में उनका परिचय निम्न प्रकार प्राप्त होता है।

सूरिश्रीमल्लिभूषण जयो जयो श्रीलक्ष्मीचंद्र
तास वंश विद्यानिलु लाड नाति श्रृंगार
श्रीवीरचन्द्र सूरि भणि चित्तनिरोध विचार

'' तद्वशंमंडनकंदर्पदलनविश्वलोकहृदयंरजन - महाव्रतिपुरंदराणा नवसहस्र-प्रमुखदेशाधिपतिराजाधिराज - श्री अर्जुनजीयराजसभामध्यप्राप्तसन्माना षोडशवर्षपर्यन्तशाकपाकपक्वान्नाशाल्योदनादिसर्पि:प्रभृतिसरसा हारपरिवर्जितानां

.........सकलमूलोत्तरगुणगणिमणिमंडितविबुधवरश्रीवीरचन्द्रभ ट्टारकाणाम्''।

उपर्युक्त प्रशस्ति से यह स्पष्ट है कि आचार्य वीरचन्द्र ने नवसारीके शासक अर्जुन जीवराज से सन्मान प्राप्त किया था तथा १६ वर्षों तक नीरस आहार का सेवन किया था। वीरचन्द्रकी विद्वत्ता के सम्बन्ध में अन्य विद्वानो नें भी प्रकाश डाला है । भट्टारक शुभचन्द्र ने अपनी कीर्तिकेयानुपेक्षा की संस्कृतटीका में इनकी प्रशंसा की है ।

भट्टरकपदाधीशा मूलसंघे विदांवरा ।

रमावीरेन्द्र-चिद्रूपा: गुरवो हि गणेशिन:॥

भट्टारक सुमतिकीर्ति ने भी इन्ही वादियों के लिए अजेय बताया है । प्राकृत पंचसंग्रह की टीका में इन्हां यशस्वी अप्रतिम विद्वान बतलाया है ।

दुर्वारदुर्वादिकपर्वतानां वज्रायमानो वरवीरचन्द्र: ।

तदन्वये सूरिवरप्रधानां ज्ञानादिभूषो गणिगच्छराज: ॥

लक्ष्मीचन्द्र के शिष्य होने के कारण वीरचन्द्र का समय वि. सं. १५५६ -१५८२के मध्य है । इनके द्वारा रचित कृतियों में जो समय प्राप्त होता है उसमें भी इनका कार्यकाल वि. की १७वी शताब्दी सिद्ध होता है ।

रचनाएँ

आचार्य वीरचन्द्र संस्कृत, प्राकृत ,हिन्दी और गुजराती के निष्णात विद्वान थे । इनके द्वारा लिखित आठ रचनाएँ प्राप्त है ।

१. वीरविलास फाग

२. जम्बूस्वामीवेलि

३. जिनान्तर

४. सीमन्धरस्वामी गीत

५. सम्बोधसत्ताणु

६. नेमिनाथरास

७. चित्त निरोध कथा

८. बाहुबलिवेलि

वीरविलास फाग - इस काव्य में २२वें तीर्थंकर नेमीनाथ के जीवन की एक घटना वर्णित है । इस फाग में १३७ पद्य है । रचनाके प्रारंभ में नेमिनाथ के सौदर्य एवं शक्ति का वर्णन है। तपश्चात राजुल की सुंदरता का चित्रण किया गया है । विवाह के अवसर पर नगर की शोभा दर्शनीय होती है। बारात बडी साज -सज्जाके साथ पहुँचती है , पर

तोरणद्वार के निकट पहोचनेके पूर्व ही पशुचीत्कार को सुनकर नेमिनाथ विरक्त हो जाते हैं। जब राजल को उनके वैराग्य की घटना ज्ञात होती है तो वह घोर विलाप करने लगती है। वह स्वयं आभूषणों का त्याग कर तपस्वनी बन जाती है। आचार्य ने नेमिनाथ के तपस्वी जीवनका अच्छा चित्रण किया है। नेमिनाथ की सुंदरता का चित्रण करते हुए लिखा है ..

वेलि कमलदल कोमल, सामल वरण शरीर
त्रिभुवनपति त्रिभुवन निलो, नीलो गुण गंभीर ॥
माननी मोहन जिनवर दिन दिन देह दिपंत।
प्रलंबं प्रताप प्रभाकर , भवहर श्री भगवत॥
राजूल की सुंदरता का चित्रण करते हुए लिखा है
कठिन सुपीन पयोधर, मनोहर अति उत्तंग।
चंपक वर्णी चंद्र ननी, माननी सोहि सुरंग
हरणी हरखी निज नयणोउ वयणीउ साह सुरंग ॥
दंत सुपंती दीपंती सोहंती सिखेणी बंघ।.
कनक केरी जसी पुतली पातली पदमनी नारी
सतीय शिरोमणि सुन्दरी भवतारो अवनि मझारि ॥

कवि का राजुल विलाप वर्णन भी बहुत ही मर्मस्पर्शी है। इस फाग के रचना काल का निर्देशन नही है। पर यह विक्रम संवत १६०० के पूर्व की रचना है।

जम्बूस्वामी वेलि

अन्तिम केवली जम्बूस्वामी का जीवन जैन कवियों को बहुत प्रिय रहा है। यही कारण है कि संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी एवं राजस्थानी आदि विभिन्न भाषाओं में रचनाएँ लिखी गयी हैं। इस वेली की भाषा गुजराती मिश्रित राजस्थानी है। कवि ने आरंभमें अपने पट्ट का परिचय प्रस्तुत किया है।

श्री मूलसंघे महिमा निलो, अने नरेन्द्र देवेन्द् किरति सूरि राय
श्री विद्यानन्दि वसुधां निलो नरपति सेवे पाय।
तेह वारे उदयो गति, लक्ष्मीचन्द्र जेण आण।
श्री मल्लिभूषण महिमा घणो, नमे ग्यासुदीन सुलातान॥
तेह गुरुचरणकमलनमी, अने वेल्लि रची छे रसाल. ॥
श्री वीरचन्द्र सूरीवर कहें गांता पुण्य अपार ॥

जिनआन्तरा

इस कृति में चतुर्विंशति तीर्थंकरो के मध्य में होने वाले अन्तरकाल का वर्णन किया गया है। कार्यसौष्ठव की दृष्टि से यह रचना सामान्य है। उदाहरण निम्न प्रकार है -

श्री लक्ष्मीचन्द्रगुरु गच्छपति, तिस, पाटें सार श्रृंगार।
श्री वीरचन्द्र मोरें कह्या जिन आंतरा उदार ॥

सम्बोधसत्ताणु भावना - यह एक उपदेशात्मक कृति है इसमें ५७ पद्य हे। सभी दोहे भावपूर्ण हैं। यहाँ उदाहरणार्थ कुछ दोहे प्रस्तुत है।

धर्म धर्म नर उच्चरे, न धरे धर्मनो मर्म
धर्म कारन प्राणि हणे, न गणे निष्ठुर कर्म॥३॥

धर्म धर्म सहु को कहो, गहे धर्म नू नाम।
रास राम पोपट पढ़े बूझे नते निज राम ॥६॥

दया बीज विणेज किया, ते सघली अप्रमाण
शीतल संजल जल भरया जेम जण्डाल न वाण ॥१९॥

नीचनी संगति परिहरो, घारो उत्तम आचार
दुर्ल्लभ भव मानव तणो, जीव तूं आलिम हार॥४०॥

नेमिकुमार रास

इस कृति में नेमिनाथ की वैवाहिक घटना का वर्णन है। डा. कस्तूरचन्द काशलीवाला की सूचन के अनुसार इसकी पाण्डुलिपि उदयपुर के अग्रवाल दिगम्बर जैन मन्दिर के शास्त्र भण्डार में सुरक्षित है। इस ग्रन्थ की रचना वि. सं. १६७ में समाप्त हुई। स्वंय आचार्य नें लिखा है....

संवत सोलताहोत्तरि, श्रावण सूदि गुरुवार
दशमी को दिन संपडो रास रच्चो मनोहार ॥

चित्त निरोधकथा, बाहुबलि और सीमन्धर स्वामी गीत छोटी रचनाएँ हैं। इनमें नामानुसार विषयो का अंकन है। चित्तविरोध कथा में चित्त को वश करने का उपदेश दिया गया हे। इस कृति में केवल १५ पद्य है।

वीरचन्द्र की उपलब्ध रचनाओं में सभी रचनाएँ गुजराती मिश्रित राजस्थानी मश्रिं। विषय से अधिक महत्व भाषा का है। १६वीं शताब्दी की हिन्दी भाषा का रूप अवगत करने के लिए येह सभी रचनाएँ उपादेय है।

वादिचन्द्र (१)

वादिचन्द्र मूलसंघ भट्टारक ज्ञानभूषण के प्रशिष्य थे। गुजरात में इनके बनाये श्रीपालाख्यान ग्रंथ में गुरू परम्परा मिलती है ।

(१) विज्ञानन्दि (२) मल्लिभूषण (३) लक्ष्मीचन्द्र (४) वीरचन्द्र (५) ज्ञानभूषण (६) प्रभाचन्द्र (७) वादिचन्द्र ।

मूलसंघे समासाद्य ज्ञानभूषणं बुद्योनमः
दुसांर वि भवास्मेपिं सुत्तरं मन्वते हदि ॥१॥
तत्पट्टामल भूषणं समभवद्देगम्बरी मते
चश्चद्वर्हकर समतिचतुरः श्रीमत्प्रभा चन्द्रमाः।
तत्पट्टजति वादि वृन्दतिलकः
श्री वादिचन्द्रो यति
स्तेनायं व्यरयि प्रबोधतरणि मेत्याब्ज सम्बोधनः॥
वसुवेदरसास्नाके वर्षे माघ सिनाष्ठ सीदिवसे
श्री मन्मधूकसमरे सिद्धोडयं बोद्य संरम्भ॥३॥

वादिचन्द्र के कई ग्रंथ पाये जाते है, जो निम्नलिखित हैं।

(१) पार्श्व पुराणः-

यह संस्कृत कथा ग्रंथ है। इसमें १५०० श्लोकों का प्रमाण है। इसकी रचना कीर्ति सुदि ५ वि. संवत १६४० वाल्मिकि नगर में हुई। इसकी मूल नकल इटावे नगर के सरस्वती भंडार में है।

तात्यह मण्डने सूरिर्वादिचन्द्रो व्यरीयत्
पुराणे मे तत्पार्श्वस्य वादिवृन्द शिरोमणि
शून्य वेदा दर सज्जांके वर्षे पक्षे समुअले।
कार्तिक भक्ति पंचव्ढां वाल्मिके नागरे मूवा ॥

(२) ज्ञान सूर्योदय (संस्कृत नाटक)

माघ सु वी ८ वि. स. १६४८ को मधूक नगर (महुवा-गुजरात) में यह नाटक समाप्त हुआ। इसमें कवि ने अपने आपको ज्ञानभूषण का शिष्य कहा है।

(३) पवनदूतः-

यह मेघदूत की तरह का खण्ड काव्य है। (निर्णय सागर प्रेस का १३९१वां गच्छा प्रकाशित पं उदययालालजी काशलीवाल द्वारा अनुवादित है सन् - १९१४)

कालीदास के जिस प्रकार विरही यक्ष ने मेद्य द्वारा अपनी पत्नी के पास सन्देश भेजा था, उसी प्रकार यहाँ उज्जयिनी के राजा विजय अपनी प्राण प्रिया तारा, जिसे आशिनि वेग नायक विद्याधर हर ले गया था, को पवन को दूत बनाकर विरह संदेश भेजता हो ।

(४) श्रीपाल आख्यान

यह एक गीतिकाव्य है। इस गीतिकाव्य की भाषा गुजराती मिश्रित हिन्दी है। संवत १६५१ में संघवी धनजी सवा कहने पर इसकी रचना की गई थी।

(५) यशोधर चरित

अंकलेश्वर (भरोच) के चिन्तामणि पार्श्वनाथ मन्दिर में वि. संवत १६५७ में यह ग्रंथ पूर्ण किया गया था।

प्रस्तावना :

इन्दौर में गोत्र संबधी विस्तृत चर्चा के बाद सर्व श्री भैयालालजी बंडी प्रतापगढ़ कांतिलालजी सी. जैन तथा हीरालालजी सी. जैन कलिंजरा की एक समिति गठित की गई थी जिन्होंने अत्यंत श्रम करके पांच से छह उपबल्ध गोत्र पत्रक और अति प्राचीन हूमड़ पुराण के आधार से एक समन्वय पत्रक तैयार करने का प्रयत्न किया है ।

उपरोक्त समिति की रिर्पोटनुसार इसमें अधिक संशोधन की आवश्यकता है और इस समिति में गत्र संबंधी जानकारी वाले अन्य विद्वानों को सम्मलित किये जाने का प्रस्ताव है । इसलिये इस प्रस्तावित गौत्र पत्रक को अंतिम नहीं माना चाहिए और वर्तमान में उपयोग किया जा रहा है उसे चालू रखा जाये ।

पावागढ़ अधिवेशन में इस पर विशेष चर्चा की जायेगी ।

खेडब्रह्मा एवं निकटस्थ क्षेत्र में आज भी श्री ब्रह्माजी का मंदिर एवं उसके समक्ष निर्मित गोत्र कुण्ड विद्यमान है । इस गौत्र कुण्डमें अंत भागमें निर्मित हूमड़ जाति के अठारह गौत्रों की अधिष्ठात्री देवियों के १८ देव कुलिकाएं बनी हुई है ।

संस्कृत के अति प्रचीन ग्रंथ '' ब्राह्मणोत्पति मार्तण्ड '' में इसी गोत्र कुण्ड के सन्दर्भ में जो श्लोक प्राप्त है वह इस कथन की पुष्टि करता है कि हूमड़ पूर्वजो की १८ कुल गोत्रों की अधिष्ठात्री अठारह कुल देवियों की मातृप्रतिमाएं इस गोत्र कुण्डमें विद्यमान रही हैं ।

'' रापकस्ति भट्टारम्या तन्मध्ये , कुल देवता
या सां पूजन माचेण चेप्सितं फल लभ्येत

इस ग्रंथ में खेडब्रह्मा के एवं इसमें निर्मित श्री ब्रह्मा मन्दिर आदि के विषय में निम्न श्लोक उपलब्ध है ।

गूर्जर विषये रम्ये ब्रह्म खेटक संज्ञकं ।
पुरमस्ति मद्रदिव्य दक्षिणो चार्बुदाचलात ॥
कृते ब्रह्मपुरनामां त्रेता यां ऋम्बकं ।
तदैव द्वापैर रव्याते कलौवे ब्रह्म खेटकं ॥
अस्तितत्र महीपुण्या, हिरण्यारण्यानदी शुभा ।
तत्रेव संगम पुण्यौ, नदी द्वितीय संभवः ॥
ग्राम मध्ये निवसति देवोन वै पद्म संभव ।
मार्या द्वयेन संयुक्ता तत्प्रासादस्य पूर्वतः ॥

अर्थात - रमणीक गूर्जर प्रदेश में खेडब्रह्मा नामक नगर है जो महादिव्य होकर यह अबुदाचल (आलुपर्वत) के दक्षिण में स्थित है सतयुग में इसे ब्रह्मपुर त्रेरा व द्वापर में त्र्यंबक तथा कलियुगमें बाह्मा खेटक नाम से ख्याति प्राप्त है । इस पुण्य भूमि पर हरिण्या नदी बहती है । जिसमें दो और नदियों का संगम हुआ है । नगर के मध्यमें देव पद्म संभव (ब्रह्मा) निवास करते हैं । जिनके दोनों ओर उनकी दो पतियों सहित उनका भव्य मंदिर बना हुआ है।

अथर्ववेद १०-२ में इस नगर का ब्रह्मपुरी नाम से उल्लेखित है ।

यथा

'' पुरंयो बह्माणोवेद यस्याः पुरुषउच्येते । .

अथर्ववेदमें रमणपुर के वतनि जिनसूक्तोह से अवतरित हुए है, उनका उद्गम स्थान ऋगवेद सहिंता है। इस प्रकार खेड़ बह्मा नगर का अस्तित्व ऋगवेद काल से ही चला आ रहा है।

वर्तमान में खेड़बह्मा में गोत्र कुण्ड विद्यमान है . समय-समय पर इस कुण्ड का जीर्णोद्धार होता रहा है फिर भी इसकी प्राचीनता सुरक्षित हैं। वर्तमान में खेड़बह्मा नगर पंचायत ने पास मे वाटरवर्कस बनाया गया है और इसी गोत्र कुण्ड में से पानी दिया जा रहा है। वर्तमान में कुल देवियो की मूर्तियाँ उपलब्ध नहीं हैं। कुछ वर्षो के पहले ये मूर्तियाँ चोरी हो गयी। परंतु वर्तमान मे भी अठारह कुल देवियो की कुलिकाएँ बनी हुई है। कछ सप्ताह पूर्व संझोधन विषेज्ञाझों के साथ इस कुण्ड के और इन कुहिकाओं के फोटो लिए गए हैं जो यहाँ आर्ट पेपर पर दिए जा रहे है। इतिहास शोघ समिति को अभी तक अलग-अलग शास्त्र भण्डारों से तीन प्रतियाँ प्राप्त हुई है, इन सब मे इस कुंण्ड का चित्र दिया हुआ है जो आज के कुण्ड से बिल्कुल मिलता - जुलता है। यह विशाल कुण्ड तीन मंजिल का बना हुआ है। इसमे निचे तक जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई है। दूसरी और तीसरी मंजिल मे ये अठारह कुल देवियो की कुहिकाएँ बनी हुई है।

भाग १

वर्ण व्यवस्था:-

वर्ण व्यवस्था अनादि है। मूल वर्ण मे परिवर्तन नहीं होता। क्रिया व्यवस्था व आजिवका परिवर्तनशील है।

आचार्य कल्प १०८ श्री श्रुतसागरजी

यह सुनिणीति है कि माता पिता के रजवीर्य का संस्कार सन्तान मे रहता है जाता नहीं। जैसे शेर का बच्चा श्रृगालो की टोली मे रहने पर भी हाथी पर हमला करता है और श्रृगाल शेरो के साथ रहते हुए भी भाग जाता है।

मनुष्य में दरिद्र से साहूकार होने पर भी संस्कार नहीं जाते। कारण,जैसे रज वीर्य के माध्यम से शरीर,मन, मस्तिवक की रचना हुई वैसे आचार विचारो मे जीवन बीतता है।

पिता के वंश की शुद्धि कुल शुद्धि
माता के वंश की शुद्धि की शुद्धि जाति शुद्धि
दोनो की शुद्धता 'सज्जाति'

संस्कार रूप जन्म से जो सज्जाति का वर्णन है व दूसरी ही सज्जाति है उसे पाकर भव्यजीव द्विजन्मा कहलाता है। अर्थात प्रथमः उतम वंश मे जन्म एक सज्जाति पुनः व्रतों के संस्कार से संस्कारिक द्वितीय जन्म जिस प्रकार विशुद्ध खान में उत्पन्न हुआ रत्न संस्कार के योग से उत्कर्ष को प्राप्त होता है।

आर्यिका ज्ञानमतीजी

गोत्र कुलं वशः सन्तामित्येकोडर्थः गोत्र कुल वंश और सन्तान ये सब समार्थक नाम हैं।

धवल पुस्तक/६ पृष्ठ ७७
पितु रन्वय शुद्धिर्या तत्कुलं परिभाष्यते।
मातृरन्वय शुद्धिस्तु जातिरित्य भिलप्यते।।८५।।

आदिपुराण

गोत्र कर्म के फल स्वरुप जो कुल एवं जाति उल्लिखित हुई है उसका सम्बंध माता पिता के रज और वीर्य से है।

यह सुनिश्चिय सिद्धांत है कि प्रत्येक वाच्यार्थ अपने वाचक शब्द मे सुनिहित रहकर ही कार्यकारी होता है। जाति शब्द ''जनि प्रादुभवि'' धातु से लिन् प्राच्य लगाने पर बनता है। प्रादुर्माव का अर्थ उत्पति, जन्म या पैदाइश से है।

वास्तव में जन्म और जाति मे आद्येय आधार सम्बन्ध है, जैसे ''हथेली और रेखा।

हथेली आधार -रेखा आधेय

इसी प्रकार जब से जन्म है तब से जाति और जब से जाति है तब जन्म चूंकि जीव अनादिकाल से है, अतः अनादि से जन्म सन्तति है तो यह भी मानना होगा जाति भी अनादि है।

जन्म और जाति का तादात्मय सम्बन्ध है।

तिर्यात्य जाति पंचेन्द्रिय जाति का उपमेद- परन्तु गाय,मैंस, हाथी,घोड़ा और बकरी, सर्प एवं पक्षियों मे तोता मैना, कबूतर आदि अनेक भेदो मे मी विभक्त। इनमे पंचेन्द्रिय समान होने पर भी मैथुन कर्म अपनी अपनी जातियों मे मान्य है।

सभी जातियों मनुष्य धर्म की अपेक्षा एक है परन्तु मैथुन संज्ञा की प्रवृत्ति को शान्त करने के लिये अपनी अपनी जाति में ही प्रवृत्ति करती है।

इससे विवाह सम्बन्ध एक जाति में ही होना चाहिये।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जाति वर्ण परम्परा अनादि है। यह मानव समाज को पनपने और जीवित रखने के लिए प्राण स्वरूप है। इसके आधार पर ही मानवता, सभ्यता, समृद्धि और आदर्श टिके रहे हैं, और आगे भी रह सकेंगे।

''जाति व्यवस्था की पोषण व स्थिति मानव समाज की नैतिक और आध्यात्मिक आधार प्रदान करते हैं। तथा उभय लोक मे हितकारी हैं। शिष्टता और सदाचार का मूल जाति धर्म है। इसके सुव्यवस्थित रहने पर ही धर्म स्थायी, राज्य, राष्ट्र, देश, समाज, समृद्ध रह सकता है अन्यथा नहीं। वर्ण और जाति व्यवस्था, हीन मनुष्य निरा पशु है।

- आर्जिका विजयामतिजी

जाति - वर्ण

भारतीय आर्य प्रजा अपनी वंश शुद्धि को अक्षुण्य रखने हेतु चिरकाल से पूर्ण सजग व सतर्क रहा है अपनी वंश शुद्धि की स्थिरता प्रदान अनेक बन्धनो का निर्माण किया। जिससे कोई दुराचारी छलकपट के द्वारा उसकी कुटिलता न पहुंचा सके।

गोत्रों की परम्परा भी उन बन्धनों में से एक है।

गोत्रो क मान्यता मे निम्न कारण सहायक माने जा सकते हैं-

(१). किसी व्यक्ति के वंश का विस्तार होने पर अमुक पहचान हेतु जिससे यह ज्ञात होता रहे कि यह अमुक व्यक्ति की सन्तान से परम्परा से सम्बन्धित है। इसके साथ ही रक्त की शुद्धता बनाये रखने हेतु भी यह आवश्यक है।

(२). एक निवास स्थल का परित्याग कर दूसरे स्थान पर निवास करने पर इस परित्यक्त स्थान की स्मृति को ताजा बनाए रखने हेतु।

(३). किसी प्रभावी महापुरूष की कीर्ति को अमर रखने हेतु।

(४). किसी महत्वपूर्ण धार्मिक, सामाजिक लौकिक या लोकोत्तर जन कल्याणकारी कार्य तथा उसको चिरस्थायी बनाये रखने हेतु।

(५). किसी व्यापार व्यवस्था के नाम पर श्रीमालपुराण से

कुल देवी प्रवक्ष्यामि गौत्रे पृथक-पृथक।
पित्र स्थानादि कर्मदि शाखा सर्व प्रवर्त्तते॥

(६). किसी विशेष जाति मे प्रविष्ट होने से पूर्व जाति वंश, वर्ण की स्मृति रखने हेतु।

गोत्र

इन्दौर सम्मेलन प्रस्ताव नं. १० के अनुसंधान में:-

प्राचीन हूमड़ पुराण के मंगलाचरण में

श्रीमद् हिरण्य गंगा तट सुमनुधरा उत्तरा दिग्विभागे
सोमा सागत्य जायात् चतुर मिष्ट गौत्रं शतंते
स्नातास्ते बह्मवाला जिनमति निरता सश्र द्रष्टादशश्च,
ते सर्वे सौख्य युक्ता धन स्वजन युता मंगल विस्तरन्तु।

जो अठारह गोत्रों में मे विभक्त है खेड़बह्मा एवं निकटस्थ क्षेत्र में वर्तमान में २००० वर्षों से प्राचीन गोत्रकुण्ड विद्यमान है। इस गौत्रकुण्ड में अन्तभाग में निमित्त हूमड़ जाति के अठारह जाति के अठारह गोत्रों की अधिष्ठात्री देवियों के १८ देव कुलिकाएँ बनी हुई है।

संस्कृत के अति प्राचीन ग्रंथ '' बाह्मणोत्पत्ति मार्त्तण्ड'' मे इसी गोत्रकुण्ड के सन्दर्भ में प्राप्त कथन के अनुसार हूमड़ पूर्वजों की १८ कुलगोत्रों की अधिष्ठात्री गोत्रकुण्ड में विद्यमान रही है। निम्न श्लोक उपलब्ध है !-

गूर्जर विषये रम्ये, बह्म खेटक संज्ञकं।
पुरमस्ति महद्दिव्य, दक्षिणे चार्बुदा चलात।।
कृते बह्मपुर नामां, त्रेता यां ऋम्बकं।
तदैव द्वापरै ख्यातं, कलौवे बह्म खेटकं ।।
अस्ति तत्र महीपुण्या, हिरण्यारव्या नदी शुभा ।
तत्रेव सगमं पुण्यौ, नदी द्वितीय संभवः ।।
ग्राम मध्ये निवसति, देवो वै पद्य संभवः ।
मार्या द्रेयन संयुक्तो, तत्प्रासादस्य पूर्वतः ।।१८।।
'' वापिकास्ति महारम्या तन्मध्ये, कुल देवताः,
या सां पूजन माचेण चेटिसतं फल लम्यते ।''

रमणीक गूर्जर प्रदेश में बह्म खेड नामक नगर है, जो महा दिव्य होकर यह अर्बुदचल के दक्षिण में सतयुग मे बह्मपुर कलियुग में खेड़बह्मा-बह्मखेटक नाम से प्रसिद्ध है। इस पूज्य भूमि पर हिरण्य और दो नदियों का संगम है। नगर के मध्य में पद्म संभव (बह्मा) निवास करते हैं । इन दो पंक्तियों में भव्य मंदिर है । इस पद्म कुण्ड (वापिका) मे हूमड़ों की कुल देवियाँ विद्यमान है। उपरोक्त कुण्ड (वापिका) वर्तमान में विद्यमान है। इस विशाल वापिका में अगाध जल है। वर्तमान में खेड़बह्मा की नगर पंचायत द्वारा इस वापिका में से वॉटरवर्कस द्वारा सारे नगर को जल दिया जाता है।

जातयोऽनादयः सर्वास्तक्रिया तथा विद्या श्रुतिः
शास्त्रन्संर वास्तु प्रमाणं का त्र न क्षतिः ।।
स्वजात्यैव विशुद्धयां वर्णाननिह रत्नवम् ।
तत्क्रिया विनियोगाय जैनागम विधिः परम ।।

सब जातियाँ और उनका आचार व्यवहार अनादि है ।

सब जातियों और उनका आचार व्यवहार अनादि है । इनमे वेद और मनुस्मृति आदि दूसरे शास्त्रों को प्रमाण मानने मे हमारी (जैनों की) कोई हानि नहीं है । रत्नों के समान वर्ण अपनी-अपनी जाति के आधार से ही शुद्ध है। उनका आचार व्यवहार उसी प्रकार चले इस में जैनगमविधि उत्तम साधन है।

सा जाति पर लोकाय यस्था सद्धर्मसम्भवः।
नहि सस्याय जायेन शुद्धा मूर्वा जवगिना।।

जिसमें समीचीन धर्म की प्राप्ति सम्भव है वह जाति परलोक का हेतु है, क्योंकि बीज रहित शुद्ध भूमि शस्य उत्पन्न करने में समर्थ नहीं होती ।

-यशतिस्तक चम्पू आश्वास ९ पृ. ४१३

गोत्र - अटक

हूमड़ जाति के परिप्रेक्ष्य में

विश्लेषण कर्ता :-(१) भैयालाल बन्डी. प्रतापगढ़

(२) कान्तिलाल .सी.जैन. कलिंजरा (३) हीरालाल .सी.जैन. कलिंजरा (बांसवाड़ा)

हूमड़ समाज के इतिहास में '' गोत्र '' सबसे महत्व का विषय है। क्योंकि यह दो हज़ार वर्षों की परम्परा, संस्कृति, पहचान आदि की नींव है।

हूमड़ भारत में ही नहीं विश्व में किसी भी स्थान पर निवास करता हो, वह इन्हीं गोत्रों के अन्तगर्त आने वाली अटकों के नाम से अपनी पहचान (अस्तित्व) बनाये रखता है।

हूमड़ कहीं भी बसता हो वह इन्हीं १८ गोत्रो में से एक गोत्र का होगा।

हमारे गोत्र उद्भव से लेकर वर्तमान तक अपने (इन्हीं १८ गोत्रों के) मूल नाम से चले आये है। अटकें समय-समय पर बदलती रही हैं किन्तु गोत्र १८ ही है। इसी लेख में हम परिवर्तित होती अटकों का विशेष विवेचन करेंगे ।

हूमड़ जाति की प्राचीनता, उद्भव, अस्तित्व का सबसे बड़ा व सबसे सबल प्रमाण है यह 'गोत्र'। इसीलिये हम इसका दो भागों में विस्तृत विवेचन करेंगे

१. गोत्र, जाति, वर्ण के आगम के अनुसार (आधार) पर वर्तमान मे आचार्यों, विद्वानों के इस विषय पर विचार ।
२. भिन्न स्थलों, शास्त्र भंडारो प्राचीन ग्रंथो आदि से उपलब्ध गोत्र पत्रक, इतिहास शोध समिति द्वारा गठित समिति द्वारा उन पर विवेचना, समन्वय चार्ट, सुझाव तथा इन्दौर अधिवेशन मे हुई चर्चा और प्रमाण आदि ।

गोत्र- अटक-हूमड़ जाति के परिप्रेक्ष्य में

हूमड़ समाज १८ गोत्रों में विभाजित है। चूँकि हूमडो का सम्बन्ध मूल रूप से क्षत्रियों से रहा है तथा क्षत्रिय कुल में गोत्रों की महिमा बहुत है । क्षत्रियों की अपनी कुल देवियों होती थीं उसी के अनुरूप हूमड़ो में भी गोत्रों की अपनी कुलदेवियाँ हैं।

गोत्रों के सम्बन्ध मे हूमड़ जाति के विवेचन से पूर्व वर्तमान समाज शास्त्रियो एवं अन्य श्रोतो से गोत्र के सम्बन्ध में क्या मत है यह जानना आवश्यक है।

''गोत्र का अर्थ एक ही रक्तवाले मनुष्य के समूह से होता है।'' काने शब्दकोष के आधार पर '' कुल या पुरुष या गुरु के नाम पर होती है''- बांद्रायण - सूत्र के अनुसारः-''गोत्र का अर्थ है-आठ ऋषियों की संतानें ''

प्रो. मजूमदार के अनुसारः- गोत्र का अर्थ है- कुछ वंशावलियों का समूह -इन वंशावलियों का जो आदि प्रवर्तक होता है वह प्रायः कल्पित होता है। यह कल्पित पूर्वज कोई मनुष्य हो सकता है, मनुष्य के समान कोई व्यक्ति या पशु या कोई वृक्ष तथा जड़ पदार्थ भी हो सकता है।''

इस प्रकार गोत्र में रक्त संबंध होता है। वर्तमान वैज्ञानिक अनुसंधानों से भी यह स्पष्ट है कि एक ही रक्त से वैवाहिक संबधों की संतान प्रायः मन, बुद्धि एवं शक्ति से निर्बल होती है। इसी आधार पर प्राचीन भारतीय परम्परा में सगोत्र विवाह निषेध है।

प्रसिद्ध समाजशास्त्री कापड़िया ने लिखा है कि''याज्ञवल्क्य के अनुसार सगोत्र विवाह करने वाला वैसा ही पापी है जैसा कि गुरु पत्नी के साथ विवाह करने वाला।''

स्पष्ट है प्राचीन परम्परा एवं सामाजिक दृष्टि से रक्त सम्बन्ध एवं सगोत्र विवाह निषेध योग्य है। हम ''मूलसंघ विभाजन'' में बता चुके है कि विभाजन के समय जैन समाज धीरे - धीरे अनेक जातियों-उपजातियों, संगठनों में विभाजित हो गया। उस समय 'लाड वंश' के क्षत्रियों ने अपना अलग संगठन बनाया।

इसके पूर्व सारे समाज पर बाह्मणों का प्रभुत्व था। वे क्षत्रियों की सभी सामाजिक रीति-रिवाजों मे पुरोहित की भूमिका निभाते थे। जैसा कि विक्रम के प्रारम्भ की राजनैतिक परिस्थितियों के विभाग मे बताया जा चुका है कि गुजरात में राजनैतिक और सामाजिक अस्थिरता हो गई थी और आजीविका का प्रश्न खड़ा हो गया था। बाहर के आक्रमणों के कारण 'लाड़' क्षत्रियों की जागीरें (जमींदारी) छीन ली गई थी और उन्हें सैनिको के उच्च पदो से भी निकाल दिया गया था। ऐसी परिस्थिति में उन्होंने क्षत्रिय धर्म को त्याग कर व्यवसाय (व्यापार) करने हेतु वणिक व्यवस्था स्वीकार की।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है समाज पर बाह्मण पुरोहित का प्रभुत्व था और अधिकांश क्षत्रिय जैन धर्म पालते हुए भी उनकी कुल देवियों की आराधना करते थे । ऐसी परिस्थिति में यूंकि हूमड़ समाज को भी अपनी पहचान कायम करनी थी और क्षत्रिय धर्म के साथ व्यापार आदि करने हेतु अहिंसक स्वरूपी बनना आवश्यक था तब अपने शास्त्रों को त्यागकर पुरोहितों के बनाए हुए उस समय के प्रचलित १८ गोत्रों को स्वीकार किया।

प्राचीन हूमड़ पुराणानुसार हूमड़ों के १८ गोत्र उपरान्त पुरोहितों के ९ गोत्रों का भी उल्लेख है। जिसका वर्तमान मे खेड़बह्मा मे गोत्रकुण्ड अस्तित्व में है। इसका वर्णन हम ऊपर कर आये हैं। हमें निर्विराद रूप से इस तथ्य को स्वीकार करना पड़ेगा कि हमारे कुल पुरोहित ''खेड़वा'' बाह्मण परम्परा से रहे हैं। आज भी वे अपनी पहचान बनाये, खेड़वा नाम से ही जाने जाते हैं। जिसका सीधा संबंध-''खेड़बह्मा'' से माना जा सकता है। हमारे २८ गोत्रों में प्रथम गोत्र सभी सूचियों में ''खेर'' खरजा या खोरजा है। जो ''खेड़बह्मा'' की पहचान अक्षुण्ण बनाये-''खेड़बह्मा'' से

अपभ्रंश होकर ''खेर, खरजा या खेरजा'' हो गया। अतः इन दो परम्पराओं के आधार पर यह निश्चित कहा जा सकता है कि हूमड़ों की पहचान का मूल स्थान ''खेड़ब्रह्मा'' ही है।

गोत्रों एवं हूमड़ों का उत्पत्ति के संबंध में वाग्वर प्रदेश में एक बात और भी प्रचलित है कि खेड़ब्रह्मा से निकलकर हूमड़ क्षत्रिय जैन समाज जब वाग्वर प्रदेश में दाखिल हुई। यहाँ की शान्ति देखी तो उन्होंने इस निर्भय क्षेत्र में विचरण करने का विचार करते हुये अपने अस्त्र-शस्त्र खारकर के अपनी खड़ग (तलवार) को त्यागने का विचार किया।

क्षत्रिय परम्परा के अनुरूप उन्होंने यज्ञ (होम) कर अग्निदेव के कुण्ड में '' खड़ग का दान'' कर दिया तथा खड़ग को होम कर दिया तभी से वह स्थान ''खड़गदा'' नाम से प्रसिद्ध हुआ एवं हूमड़ जाति तभी से क्षात्र धर्म से विमुख होकर ''वणिक धर्म'' याने व्यापार करने की ओर उन्मुख हुई। आज भी सागवाड़ा के दक्षिण मे ''खड़गदा'' अवस्थित है। खड़गदा के क्षेत्रपाल मंदिर जो कि मूलतः जैनो का ही स्थान था आज भी हमारे हूमड़ों की श्रद्धा का केन्द्र बना हुआ है। बालकों के बाल उतारने की मनौती यहीं पूर्ण की जाती है।

उपरोक्त किवंदती से भी यह तथ्य निकाला जा सकता है कि अहिंसक हूमड़ जैन जाति गुजरात से चल कर यहाँ आई। अपने आयुधों का होम कर होम्बल, हुम्बल या हूमड़ नाम को सार्थक किया है।

हूमड़ों के गोत्रों के संबंध में खोज करने का प्रयास आज से ७०-८० वर्ष पूर्व वैद्य जवाहरलालजी प्रतापगढ़ वालों ने भी किया था। उन्होंने हूमड़ इतिहास लिखने का प्रयास भी किया। यत्रतत्र सामग्री एकत्रित भी की पर दुर्भाग्य से उसे पूर्ण लिपिबद्ध कर प्रकाशित न कर सके। उन्होंने जो सामग्री जो कुछ लिपिबद्ध किया वह भी मनन योग्य है। उन्होने ''गोत्र'' के सम्बन्ध मे खोजपूर्ण तथ्य उस समय प्रकट किये थे उसे विवेचना के लिये यहाँ पर बताना आवश्यक है। उनके विचारों से हम सम्मत हों या न हो यह तर्क की बात है-पर उन्होंने जो भी कुछ तथ्य लिखे वह आज भी विचारणीय है।

श्रीयुत वैद्य जवाहरलालजी प्रतापगढ़वालों के गोत्र संबंधी विचार :

''सर्व जातियों में सबसे बड़ी महत्वत्ता गोत्र की है। उसका खास कराण यह दिखाई देता है कि कहीं एक ही वंश में याने गोत्र में विवाह संबंध न हो जाय, इसको बचाने के कारण ही गोत्र को यह महत्वता दी गई है। वंश की तो अनेक शाखायें होकर कालान्तर में अटक बन जाती है और किसी समय मूलाचारी हो जाता है परन्तु अनेक अटक कायम होने पर भी गोत्र नहीं बदलता। एक ही उस वंश की सर्वशाखाओं में व्यापक भाव से रहता है। अतः पहचान और एक वंश में विवाह संबंध न हो जाय इसको बचाने को ही गोत्र का प्रचार मुख्य माना जाता है।

जहाँ तक गोत्रों का पता न चले वहाँ तक इन्हीं से काम लेना चाहिये। ऐसा न माना व जाये तो विवाह संबंध मे गोटाला हो जाना संभव है। अतः लाचार होकर इन्हीं को मान लेने के लिये प्रेरणा करते है।

उन्होंने यह भी लिखा है कि इन तर्कों के बावजूद भी गौतमशुध्दी जी दृष्टि से भी इसे मान लेने की प्रेरणा देते हैं।

वैद्यजी के जो प्रश्न हैं उसे ऐतिहासिक दृष्टि पर कसा जाना आवश्यक है। जहाँ तक हूमड़ो द्वारा स्थापित मंदिरों में मूर्तिलेख, शिलालेख शास्त्र भंडार है । उनमे १४वीं १५ वीं शताब्दी के कई लेख मौजूद है। उन लेखो मे हूमड़ों के गोत्र का विशेष रूप से उल्लेख है।
यहाँ पर उन उल्लेखों को देना समीचीन होगा एवं इन्हीं उल्लेखों के आधार पर यह निश्चित रूप से कह सकते हैं कि हूमड़ो की गोत्र परम्परा मध्यकाल्क में अक्षुण्ण थी एवं लोग गोत्रों का उल्लेख तरीके से करते थे।

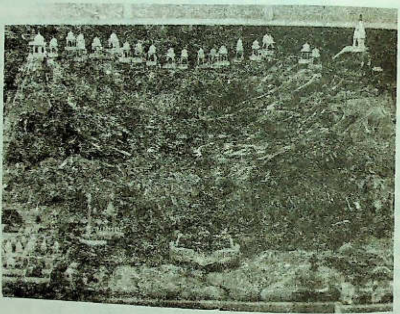

ऐतिहासिक दृष्टि से हूमड़ों के गोत्रों का उल्लेख

क्र.स. गोत्र जिनका उल्लेख हुआ है

१. उत्रेश्वरः भट्टारक सम्प्रदाय पुस्त. पेज नं. १३६-१३७ लेखांक ३३२ पार्श्वनाथ मूर्तिः- प्रशस्तिः- संवत १४९२ त्रोर्षे वैशाख वदि १० गुण श्री मूलसंघे... हुबड्न्याति उत्रेश्वर गोत्रे ढा. लींबा भार्या फह.

(२) संखेश्वरा गोत्रः- उपर्युक्त पुस्तक लेखांक ३६८ पृष्ठ १४५ पंचपरमेष्ठी मूर्तिः-संवत १६०७

(३) कमलेश्वरः उपरोक्त पुस्तक
लेखांक ३९२ पृष्ठ १५१ मूर्ति वागड़ देश शीतलवाड़ा नगरे संवत १७३४

(४) रवरजाः उपरोक्त पुस्तक
लेखांक ३८७ पृष्ठ १५० पार्श्वनाथ मूर्ति संवत १६८३ हूमड़ ज्ञातीय लघुशाला रवरजा गोत्रे

(५) मंत्रीश्वर गोत्रः- उपरोक्त पुस्तक
लेखांक ४२२ पृष्ठ १६४ संवत १७७४ देवगढ़ नगरे मंदिर लेख

(६) मातर गोत्रः उपरोक्त पुस्तक
लेखांक ४९९ पृष्ठ १८८ चन्द्रप्रभ मूर्ति संवत १६७९ वर्षे

(७) विश्वेश्वर गोत्रः- उपरोक्त पुस्तक लेखांक ७५२ पृष्ठ २८८ केसरियाजी मंदिर

(८) बुध गोत्रः कलिंजरा मंदिर मूर्तिलेख संवत १६२१ वर्षे

(९) काकड़ेश्वर गोत्रः डडूका मंदिर शिलालेख प्रशस्ति संवत १६४३

हूबल वाणिकस्य आसीसा में इस प्रकार गोत्र के नाम और गोत्रों की देवियाँ बतलाई गई हैं तथा गौरजी के पास से जो नाम मिले हैं वह मिलान करके जो विशेष बात मालूम हुई वह ब्रेकेट में दी गई है।

हूमड़ जाति मे माने जाने वाले गोत्रों की तालिका हुबल वाणकस्य आसीसा पर से

संख्या नाम गोत्र - गोत्रों की देवियों के नाम

(१)	गंगेश्वर	:	अमरेश्वरी देवी(गंगेश्वरी देवी)
(२)	पुष्पेश्वर	:	पुष्पेश्वरी देवी
(३)	फलेश्वर	:	खेमानाभा देवी (फलेश्वरी)
(४)	विश्वेश्वर	:	(विलेश्वर) विल्वेश्वरी देवी (विखेश्वरी)
(५)	अत्रस्त(आत्रेश्वर)	:	ब्रह्मादेवी (आमादेवी)
(६)	खयरजा(खेरजा)	:	विल्वेश्वरी देवी (खीलेश्वरी)
(७)	पंखेश्वर	:	जोगेश्वरी देवी
(८)	बुद्धेश्वर	:	सरस्वती देवी

(९) (i) रजियाणु गोत्रकमेद मरहवा देवी (महाराज देवी)
(ii) विजियाणु - मरहावा देवी (महाराज देवी)
(iii) पारे सियाणु - मरहावा देवी (महाराज देवी)
(iv) भोईयाणु - मरहावा देवी (महाराज देवी)

(१०) दुग्धेश्वर : श्याया देवी
(११) उत्तेश्वर : मूलेश्वरी देवी (मोलेश्वरी)
(१२) मंत्रेश्वर : वेत्पश्वरी देवी (दत्तेश्वरी , तोतला, सदाचनी)
(१३) मात्रेश्वर : गोत्र की देवी (चार)

(i) ब्राह्मण वर्ण में ब्राह्मदेवी
(ii) क्षत्रिय वर्ण में: राखीदेवी
(iii) वैश्य वर्ण में: जोगेश्वरी
(iv) शूद्रवर्ण में : रासिदेवी

(१४) कमलेश्वर : गोत्र की देवी (दो)

(i) दिवाजन्मने वाले की:-पंकादेवी (कंका)
(ii) रात्रिजन्मेने वालो की: शान्तादेवी

(१५) कामेश्वर : कामा देवी
(१६) कोसेश्वर (काकड़ेश्वर) : कछपादेवी (कंकादेवी)
(१६) भीमेश्वर : हीरादेवी
(१७) भटकेश्वर (भड़केश्वर) : मौनिकादेवी

हूमड़ पुराण चित्रावली में २४ चित्र विभिन्न गोत्र एवं उससे सम्बंधित देवियों के दिए हैं जिसका विवरण निम्नानुसार है -

(१) कामेश्वर गोत्र देवी (१)
(२) कोसेश्वर गोत्र देवी (१)
(३) फलेश्वर गोत्र देवी (१)
(४) विश्वेश्वर गोत्र देवी (१)
(५) मंत्रेश्वर गोत्र देवी (३)
(६) मात्रेश्वर गोत्र देवी (४)
(७) पंखेश्वर गोत्र देवी (१)
(८) बुद्रेश्वर गोत्र देवी (१)
(९) रजियाणु-वीजीआणु-पारसीआणु देवी (१)
(१०) दुग्धेश्वर गोत्र देवी (१)
(११) उत्रेश्वर गोत्र देवी (१)
(१२) आत्रस्थ गोत्र देवी (१)
(१३) खेरजा गोत्र देवी (१)
(१४) गंगेस्वर गोत्र देवी (१)
(१५) पुश्वेश्वरगोत्र देवी (१)
(१६) कमलेश्वर गोत्र देवी (२)
(१७) भीमेश्वर गोत्र देवी (१)
(१८) भटकेश्वर गोत्र देवी (१)

इस प्रकार १८ गोत्रों में कतिपय गोत्रों की एक से अधिक देवियाँ हैं। इस चित्रावली मे मांत्रेश्वर एवं मंत्रेश्वर गोत्र को अलग-अलग बताया गया है। जबकि राजयाणु - वीजीआणु-पारसीआणु को एक ही गोत्र मानकर एक ही देवी स्थापित की गई है।

दूसरा सूत्र जो हमारे पास है- उसमें मवँरलाल नवलचंद सेठ डूंगरपुर द्वारा प्रकाशित श्री काशीलाल भोजक ने तैयार किया है, जिसे यहाँ पर दिया जा रहा है।

इस गोत्र सूची में मात्रेश्वर एवं मंत्रेश्वर को एक ही गोत्र निरूपित किया है। कामेश्वर एवं कास्वेश्वर गोत्र को भी एक ही निरूपित किया है । विश्वेश्वर एवं वाजीयाणों, वागेश्वर को एक ही गोत्र निरूपित किया है जबकि-रजियाणो को स्वतंत्र गोत्र माना है।

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के खेरजु
गोत्र की अधिष्ठात्री देवी बिलेश्वरी देवी

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के उत्रेश्वर
गोत्र की अधिष्ठात्री देवी मूलेश्वरी देवी

हूमड़ पुराण से

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के मात्रेश्वर
गोत्र की अधिष्ठात्री देवी चार हैं - ब्रह्मादेवी- राखी देवी - जोगेश्वरी देवी - रासिदेवी

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के मंत्रेश्वर
गोत्र की अधिष्ठात्री देवी तोतला देवी

हूमड़ पुराण से

वेत्पश्वरी देवी (दत्तेश्वरी, सदाचनी)

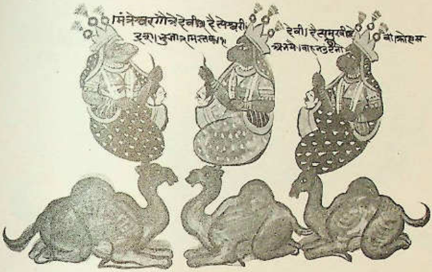

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के बुद्धेश्वर
गोत्र की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती

हूमड़ पुराण से

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के रजियाणु गोत्र की अधिष्ठात्री देवी महारावा देवी (महाराज देवी)

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के भटकेश्वर गोत्र की अधिष्ठात्री देवी मौनिका देवी

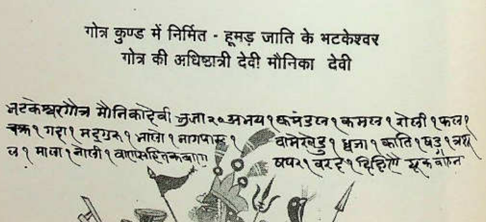

हूमड़ पुराण से

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के भीमेश्वर गोत्र की अधिष्ठात्री देवी हीरा देवी

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के कमलेश्वर गोत्र की अधिष्ठात्री देवी दो हैं : पंका देवी , शान्ता देवी

हूमड़ पुराण से

भाग

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के दुग्धेश्वर
गोत्र की अधिष्ठात्री देवी श्यामा देवी

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के कामेश्वर
गोत्र की अधिष्ठात्री देवी कामा देवी

हूमड़ पुराण से

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के कोसेश्वर (काकड़ेश्वर) गोत्र की अधिष्ठात्री देवी कछंपा देवी (कंका देवी)

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के गंगेश्वर
गोत्र की अधिष्ठात्री देवी अमरेश्वरी देवी (गंगेश्वरी देवी) तथा पुष्पेश्वर गोत्र देवी
पुष्पेश्वरी देवी

हूमड़ पुराण से

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के फलेश्वर गोत्र की अधिष्ठात्री देवी खेमानामा देवी (फलेश्वरी) विश्वेश्वर गोत्र की विल्वेश्वरी देवी तथा आत्रस्थ (अगस्त) गोत्र की ब्रह्मा देवी)

गोत्र कुण्ड में निर्मित - हूमड़ जाति के पंकेश्वर गोत्र की अधिष्ठात्री देवी जोगेश्वरी देवी

हूमड़ पुराण से

भद्रेश्वर एवं मंत्रेश्वर को एक ही गोत्र निरूपित किया है। कल्याणेश्वर कमड़ेश्वर को एक ही गौत्र निरूपित किया है। बुद्धेश्वर व सिद्धेश्वर एक ही गोत्र निरूपित किया है।

श्रीयुत मिश्रीलाल माणेकलाल शाह प्रतापगढ़ निवासी वर्तमान बम्बई स्थित के घर से संग्रह किया हुआ मोड़ि लिपि के संग्रह में निम्नानुसार १८ गोत्र को अंकित किया हुआ है:-

(१) गंगेश्वर गोत्र	(१०) दुधेश्वर गोत्र
(२) पस्पेश्वर गोत्र	(११) मंत्रेश्वर गोत्र
(३) फलेश्वर गोत्र	(१२) उत्रेश्वर गोत्र
(४) विश्वेश्वर गोत्र	(१३) मात्रेश्वर गोत्र
(५) आत्रस्त गोत्र	(१४) कमलेश्वर गोत्र
(६) रवयरज गोत्र	(१५) कामेश्वर गोत्र
(७) पंखेश्वर गोत्र	(१६) कोसेश्वर गोत्र
(८) बुधेश्वर गोत्र	(१७) भीमेश्वर गोत्र
(९) रजियाणो गोत्र	(१८) भटकेश्वर गोत्र

जिवराज-कुवेरचंद दोशी फलटन में जैन मित्र वीर संवत २५०० फागणवदी १ को - में प्रकाशित १८ गोत्रों का वर्णन निम्नानुसार है:-

दिगम्बर हुमड़ समाज के १८ गोत्र व १८ कुल निम्न प्रकार हैं

गोत्र	कुल
(१) खेरजु	(१) गहला
(२) कमलेश्वर	(२) परमार-पवार
(३) काकडेश्वर	(३) सोलके-सालोके
(४) उत्रेश्वर	(४) चुहान
(५) मंत्रेश्वर	(५) राठोड़
(६) भीमेश्वर	(६) देवड़ा
(७) मन्देश्वर	(७) माटी
(८) गंगेश्वर	(८) सोनगरा
(९) विश्वेश्वर	(९) इन्नाला
(१०) संखेश्वर	(१०) जादव-यादव
(११) अम्बेश्वर	(११) नेहरा
(१२) जात्रेश्वर	(१२) सिसोदिया
(१३) सामेश्वर	(१३) कछवाहा
(१४) रजियानी	(१४) आह्वाडा
(१५) ललितेश्वर	(१५) गद्दोडिया
(१६) कालेवेश्वर	(१६) पदीयार
(१७) बुद्धेश्वर	(१७) चुवाल
(१८) संघेश्वर	(१८) जोघा

जैन कोम्युनिटी-ए सोस्यल सर्वे ग्रन्थ के पेज न. ९२ पर १८ गोत्र निम्नानुसार बताए है:-

(१) खेरजा	(१०) गंगेश्वर
(२) कमलेश्वर	(११) अम्बेश्वर
(३) काकडेश्वर	(१२) मामनेश्वर
(४) उत्रेश्वर	(१३) सोमेश्वर
(५) मात्रेश्वर	(१४) रजियाना
(६) मीमेश्वर	(१५) लिलतेश्वर
(७) भद्रेश्वर	(१६) रंगेश्वर
(८) विश्वेश्वर	(१७) काश्मपेश्वर
(९) संखेश्वर	(१८) बुद्देश्वर

उपरोक्त सभी गोत्र पत्रकों के आधार पर पत्रों का अध्ययन कर गोत्र-पत्रावली परिशिष्ठ तैयार कीष्टा है- जो यहाँ पर दी जा रही है। चूँकि गोत्रों के सम्बंध इतनी अलग-अलग मान्यताए है कि सर्व सम्मत निर्णय करना बड़ा कठिन होता है पर आनेवाले समय को देखते हुए यह परिशिष्ट दिया जा रहा है। यदि इसमें भी भेद मालूम पड़े तो परम्परा के अनुसार गोत्र का जो चलन है एवं आपसी शादी व्यवहार अभी तक होता रहा है उसे ही मान्यता दिया जाना श्रेयस कर है।

इस - परिशिष्ट में जो अटक दी है वह भी विभिन्न गोत्र एवं अटकों के परिवार हैं। उसके आधार पर दी हैं। इसमें विभिन्नता भी हो सकती है। चूंकि अटकों का अविर्भाव बाद में हुआ एवं समय के अनुसार अटकें बदलती रहती हैं पर गोत्र बदलता नहीं है।

यहाँ अटकों के बारे में विस्तृत रूप से कैसे परिवर्तन हुआ बताया जा रहा है :

इस परिशिष्ट में गोत्र के साथ संबंधित अटक भी प्रदर्शित की गई है। जहाँ तक '' अटक'', ''अड़क'' का प्रश्न है। वास्तव में '' अटक'' के परिवारों का गौत्र अलग-अलग भी हो सकता है क्योंकि '' अटको '' का संबंध व्यक्ति या परिवार के धंधे से, गाँव से, आपसी संबंधों से होता है। अटक एवं गोत्रो में कहीं भी आपसी संबंध नही हैं। क्योकि अटकें प्रायः बदलती रहती हैं। जगहों पर ''अटकों'' की स्थापना कैसे होती है उदाहरण दिये जा रहे हैं-

१. गडिया गलियाकोट अथवा गढ़ी से
२. खोडणियाः खोडण से
३. पारडलियाः पाडल्या से
४. तलवाड़िया तलवाड़ा से
५. कुणियाः कणिजरा से
६. गोवाड़ियाः गेवाड़ी से
७. मेताः मेतवाला से
८. कोडड़ियाः कोरडा से
९. जवासाः जवास से
१०. थाणियांः अर्थूणा से
११. पावलियाः पाल मे रहने से
१२. आंजणियाः आजणां से
१३. नौगलियाः नौगामा से
१४. जावदाः जावद से
१५. घांटालियाः घांटाल से
१६. पारसोलियाः पारसोल से
१७. डोडू, डेडूः डडूका से
१८. डडूकियाः डडूका से
१९. दिवाड़ियाः दिवड़ा से
२०. पीठवाः पिठव से
२१. सागाविड़ियाः सागवाड़ा से
२२. चौकलियाः जौरवला से.
२३. धीरावतः धरियावद से
२४. मंगाणीयाः मंगाणा से
२५. साबरियाः साबला से
२६. भरड़ाः भिलोड़ा से

सूचक अटकें

१. गाँधी	:	गाँधी की दूकान से
२. कोठारी	:	अनाज के कोठार रखने से
३. रोकड़िया	:	कैश का लेन देन - करने से
४. सेठ	:	गाँव के मुखिया से
५. वोरा	:	किसानों के साथ लेन - देन करने से
६. शाह	:	साहूकारी व्यापार से
७. घीया	:	घृत के व्यापार से
८. तलाटी	:	पटवारी को गुजराती मे तलाटी कहते है
९. कोड़िया	:	कोड़ियो का व्यापार करने से

तीर्थ क्षेत्र का महत्त्व

प्रस्तवाना

'सत्यं, शिवं, सुन्दरं' की भावना पर आधारित भारतीय संस्कृति धर्म प्रधान रही है। भारतीयों के धर्मभाव ने उन्हें प्रकृति का उपासक बनाया है, उन्होंने प्रकृति के रम्य एकान्त स्थानों को ढूंढ ढूंढकर अपनी साधना और तपस्या की लीला-भूमि बनाया है। यही कारण है कि प्रत्येक धर्म और सम्प्रदाय में तीर्थों का प्रचलन है। तीर्थ स्थान पवित्रता, शान्ति और कल्याण के धाम माने जाते हैं।

जैनधर्म में भी तीर्थ क्षेत्र का विशेष महत्त्वा रहा है। इस दिशा में जैन सदैव अग्रणी रहे है। जैन योगी प्रकृति का होकर रहता है। 'कैलाश' जैनों का पहला तीर्थ है। जो अपने प्राकृतिक सौन्दर्य और महानता के लिए जगविख्यात हैं। इसी प्रकार सम्मेद शिखर, राजगृही, मागी तुंगी, गिरनार जैसे पर्वतों पर जैन तीर्थों की स्थापना अनुपम उदाहरण है।

तीर्थ शब्द तृ धातु से निष्पन्न हुआ है। व्याकरण की दृष्टि से इस शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार है-

'तीर्थन्ते अनेन अस्मिन् वा।' तृ प्लवन तरणयोः'

(भ्वा.प. से.) 'पातृ तुदि' (उ. २/६) इति थक् अर्थात् तृ धातु के साथ थक् प्रत्यय लगाकर तीर्थ शब्द की निष्पति होती हैं। इसका अर्थ है जिसके द्वारा अथवा जिसके आधार से 'तरा' जाये। कोषानुसार तीर्थ अनेक अर्थो मे प्रयुक्त होता है- जलावतरण, आगम. ऋषि, जुष्ट, जल, गुरु, क्षेत्र, उपाय, स्त्रीरज, अवतार पात्र, उपाध्याय और मंत्री।

जैन शास्त्रों में तीर्थ शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया गया है-

'संसाराब्धेरपारस्य तरणे तीर्थ मिष्यते।
चेष्टितं जिन नाथानां तस्यो कि स्तीर्थ संकथा॥

जिन सेनकृत आदिपुराण

अर्थात् जो इस अपार संसार - समुद्र से पार करे उसे तीर्थ कहते हैं और जिनेन्द्र भगवान का चरित्र कथन करने को तीर्थ ख्यान कहते है। अतः कहा जा सकता है कि तीर्थ शब्द का आशय व्यापक है। रूढ़ अर्थ में 'तीर्थ' शब्द से अभिप्राय वे स्थान जहाँ तीर्थकरों के जन्म, अभिनिष्क्रमण, केवल ज्ञान आदि मे से कोई कल्याणक हुआ हो अथवा किसी निर्ग्रन्थ वीतरागी तपस्वी मुनि को केवल ज्ञान या निर्वाण प्राप्त हुआ हो, वह स्थान उन वीतराग महर्षियों के संसर्ग से पवित्र हो जाता है।

दिगम्बर समाज में तीन प्रकार के तीर्थ क्षेत्रों की मान्यता का प्रचलन रहा है-

(१) निर्वाण क्षेत्र (२) कल्याणक क्षेत्र और (३) अतिशय क्षेत्र

निर्वाण क्षेत्र-

ये वह क्षेत्र कहलाते हैं, जहाँ तीर्थकरों या किन्ही तपस्वी मुनिराज का निर्वाण हुआ हो, अतः जिस स्थान पर निर्वाण होता है उस स्थान पर सौधर्म इन्द्र चिह्न लगा दिया जाता है और भक्त गण उन तीर्थकंर भगवान के चरणचिह्न स्थापित कर देते हैं। तीर्थकरो के निर्वाण क्षेत्र पाँच हैं।

(१) कैलाश (२) चम्पा (३) पावा (४) उर्जयन्त (गिरनार) (५) सम्मेद शिखर

कल्याणक क्षेत्र

ये वे क्षेत्र है जहाँ किसी तीर्थंकर का गर्भ जन्म, अभिनिष्क्रमण (दीक्षा) और केवल ज्ञान कल्याणक हुआ हैं। जैसे मिथिलापुरी, मद्रिकापुरी, हस्तिनापुरी, गिरनार आदि।

अतिशय क्षेत्र

जहाँ किसी मंदिर में या मूर्ति मे कोई चमत्कार दिखाई दे तो वह अतिशय क्षेत्र कहलाता है। जैसे श्री महावीरजी, देवगढ़, हुम्मच आदि।

ऐसे ही कुछ महत्वपूर्ण तीर्थों के सम्बन्ध में आगे जानकारी प्राप्त करेंगे-

गिरनार सिद्धक्षेत्र

णेमी सामि पज्जण्णो संबुकुमार तहेव अणि रूद्धो।
बहत्तर कोड़ीओ उज्जनते सत्तसया सिद्धा।।४।।

निर्वाण काण्ड

लाडवंश पज्जुण्णो सम्मुकुमार तहेव अणिरूद्धो ।
बहत्तर कोडीओ उज्जयन्तो सत्तिसया सिद्ध ।।

भूवलय निर्वाण गाथा ।

यह क्षेत्र जूनागढ से ५ कि.मी. पर है यहाँ से भव्य जैनों के २२ वें तीर्थंकर नेमीनाथ के दीक्षा, केवल, और निर्वाण तीन कल्याणक हुए हैं। यहाँ तसेरी में भव्य जिन मन्दिर और धर्मशाला है पासमें श्वेताम्बर मंदिर और धर्मशाला भी हैं। यहाँ से कुछ दूरी पर पहाड पर चढ़ने की सीढ़िया है ४४०० सीढ़ियाँ चढ़कर पहली दो टोंके यहाँ ४ दि.जैन मन्दिर निकट ही राजुल गुफा है, जहाँ से राजकुमारी राजुल ने तपस्या की थी। फिर १०९ सीढ़ी पर गोमुख वहाँ २४ तीर्थकरों के चरण है। गोमुख के आगे रवंगार किला वहाँ अनेक श्वेताबर मंदिर हैं। पहली टोक से १०० सीढी चढकर अनिरूद्ध कुमार कीटोक के निकट अंबादेवी मंदिर(हिंदुओं) का फिर ७०० सीढी शंभुकुमार की टोंक फिर २५०० सीढ़ी पर पाव पाचवीं टोक भगवान नेमीनाथ की है । चौथी टोंक प्रद्युम्नकुमार भी जहाँ सीढ़ी नहीं है। इस प्रकार भगवान नेमीनाथ भी टोंक तक ९९९९ सीढ़िया हैं।

यहाँ पर विक्रम की प्रथम शताब्दी में श्री धरसेनाचार्य गिरनार(ऊर्जयिन्त) की चन्द्र गुफा में तपस्पया करते थे।

देश ततः सुराण्टे गिरिनगर पुरान्ति को जयिन्त गिरौ।
चन्द्र गुहा निवासी महातपाः परम मुनि मुख्या ।।१०३।।
श्री मन्नेसि जिनेश्वर सिद्ध शिलायां विधानतो विद्या
संसाधनं विदधतोस्य योश्च पुरतः स्थिते विदये।।११६।।

श्रुतावतार

यहाँ की चन्द्र गुफा में आचार्य धरसेन ने विक्रम की प्रथम सदी में अपने शिष्य भूतबलि और पुष्पदंत मुनियों को 'षट खंडागम' की शिक्षा दी जिसको उन्होंने अंकलेश्वर के पास 'सजोद' अतिशय क्षेत्र में उपरोक्त ग्रन्थ को लिपिबद्ध करने का प्रारम्भ किया।

इस सिद्धक्षेत्र से भगवान नेमीनाथ, कृष्ण पुत्र प्रद्युम्न और संबुकुमार, गणधर और असंख्यो मुनियों ने निवार्ण प्राप्त किया।

राम सुआ वैण्णि जणा लाडण रिंदाण पंच को ओ।
पावा गिरिसहरे णिव्वाण।।५।।

निवार्ण कांड से

सिद्धक्षेत्र गिरनार

जैन ग्रंथों में गिरनार तीर्थ का विशद वर्णन मिलता है। प्राचीन जैन साहित्य में गिरनार का उल्लेख 'ऊर्जयन्त' और 'रैवत' नामों से हुआ है। 'भूवलय' नामक अदभुत ग्रंथ में, जिसे ज्ञान का भण्डार माना जाता है उल्लखित है-ces

लाड़वंश पज्जुण्णो सम्भुकुमारो तेहव अणिरुद्धो ।
बाहत्तर कोडीओ उज्जयन्तो सत्तिसया सिद्धा ॥'

- भूवलय निर्वाण गाथा

उज्जयन्त अर्थात् उर्जयन्त पर्वत से प्रद्युम्न, सम्भुकुमार और अनिरुद्ध यादव कुमारों को बहत्तर करोड़ और सात सौ मुनियों के साथ मुक्ति प्राप्त हुई। उन्हें लाड़वंश का सम्भवतः इसलिए लिखा है कि यादवों का शासन उस समय लाड़ देश पर था।

इसका कारण यह है कि यहाँ भ. नेमिनाथ के ३ कल्याणक हुए थे- दीक्षा, केवलज्ञान और निर्वाण। अतः जहाँ किसी तीर्थंकर के तीन कल्याणक हुए हो, वह क्षेत्र अत्यन्त पवित्र तीर्थभूमि बन जाता है। इस क्षेत्र पर भगवान नेमिनाथ के अतिरिक्त करोड़ो मुनियो को निर्वाण प्राप्त हुआ है । इस प्रकार के उल्लेख जैन वाङगमय में प्रचुरता से प्राप्त होते हैं।

सौराष्ट्र की दक्षिण पर्वत श्रेणी में गिरनार अपनी निराली शान में इठलाता हुआ खड़ा है ।

'छूती है स्वर्ग विमानों को फूटे गिरि की ।
पाषाण शिलाओं से भू-नींव जमी उसकी ।'

गिरनार आज भी वैसा ही सुन्दर, सौम्य और सुकृत्यो वन प्रेरक स्रोत्र है जैसा कि आदिकाल में था। यहाँ जैन श्रावक हजारो की संख्या में वन्दना करने आते है। यहाँ शिल्प एवं वास्तुकला का आश्चर्यजनक- सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। जूनागढ़ के निकट दूर क्षितिज में पाँचों गगनचुम्बी पर्वत श्रृंग दृष्टिगत होते हैं। ऐसा लगता है कि लोकरक्षा के लिए पाँच प्रहरी खड़े हो। लोक पाँचों इन्द्रियो के विषय मे आसक्त होकर दुःख और पीड़ा पाते है। ये शिखर- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का संदेश देते हैं। इन शिखरो को जैन टोंक कहते है और बहुत पवित्र मानते हैं। इन पर उनके मंदिर चरण बने है। जिसकी वे पूजा और वन्दना करते है।

मन्दिरो के अतिरिक्त गिरनार पर तीन कुण्ड भी प्रसिद्ध है जो 'गौमुख', 'हनुमान धारा' और 'कमंडल कुण्ड' कहलाते हैं। 'भैरव जप' नामक पाषाण एक दर्शनीय वस्तु है। पहले उस पर कूद कर पाखण्डी लोग स्वर्ग पाने के लोग से अपने प्राण दिया करते थे। 'रेवती कुण्ड' के ऊपर ही 'रक्ताचल' पर्वत है, जिसकी तलहटी मे अशोक के धर्म लेख हैं। जूनागढ से गिरनार जाते समय मार्ग मे पलासिनी नदी का सुन्दर पुल आता है, उससे थोड़ी दूर चलने पर दिगम्बरी धर्मशाला है, जिसमे तीन जैन मन्दिर एवं वेदियाँ हैं। अब एक विशाल मानस्तम्भ भी बन गया है।

गिरनार पर्वत के ऊपर जो पाँच टोके है उनमे पहली टोंक के पास से सहस्त्राभ्रवन को मार्ग जाता है। जहाँ भगवान् नेमिमाथ ने दीक्षा ली थी। यहाँ भगवान् नेमिनाथ के चरण चिह्न बने हुए है। पाँचों टोको और सहस्त्राभ्रवन के पक्की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। जिनकी संख्या ९९९९ है।

प्रथम टोंक -

लगभग दो मील की चढ़ाई चढ़ने पर दिगम्बर मन्दिर और धर्मशाला से पहले गुफा मिलती है जिसे 'राजुलगुफा' कहते हैं। इस गुफा से आगे बढ़ने पर दिगम्बर जैन धर्मशाला है तथा इसके कुछ आगे एक अहाते में ३ मंदिर और १ छतरी है। एक मन्दिरिया में सलेटी वर्ण की ४ फुट ऊँची खड़गासन मूर्ति है। यह मूर्ति बाहूबलि स्वामी की हैं। इसके पार्श्व में कुन्दकुन्दाचार्य के १ फुट २ इंच लम्बे चरण श्वेत पाषाण के बने हुए हैं। सामने दीवार मे पंच परमेष्ठी की ५ मूर्तियाँ बनी हुई हैं। इस छतरी के पार्श्व में एक मन्दिर है वेदी पर कृष्ण पाषाण की संवत १७४५ मे प्रतिष्ठित १ फुट ७ इंच ऊँची पद्मासन प्रतिमा विराजमान हैं। इस अहाते के प्रागंन में बड़ा मन्दिर बना हुआ हैं। इस मन्दिर में वेदी पर मध्य में कृष्ण वर्ण पद्मासन १ फीट ४ ई.अवगाहन की संवत् १९२४ में प्रतिष्ठित नेमिनाथ भगवान की प्रतिमा विराजमान हैं। बांयी ओर १ फुट ५ इंच ओर १फुट ८इंच ऊँची दो पार्श्वनाथ प्रतिमाएँ तथा इसी आकार की दो शांतिनाथ प्रतिमाएँ हैं। दिगम्बर मन्दिर से आगे बढ़ने पर गौमुखी गंगा है। एक गोमुख से जल धारा निकलती रहती है जिसके जल से कई कुण्ड बने है। गोमुख के पृष्ठ भाग मे दीवार पर एक वेदी पर तीर्थंकरो के चौबीसी चरण चिह्न बने हुए हैं। यही प्रथम टोंक कहलातीन है। यहाँ से आगे चलकर खंगार के दुर्ग का द्वार मिलता है। द्वार के बांयी ओर नेमिनाथ का विशाल और दर्शनीय मन्दिर है। यह मूलतः दिगम्बर आम्नाय का था ।

द्वितीय टोंक-

१०० सी ढ़ियाँ च ढ़ने पर द्विती य टो क मिलती है । बां यी ओ र एक चबू तरे के नीचे अनिरुद्धकुमार के चरण है । इसके निकट ही अम्बा दे वी का ऊँ ची चाँ की पर विशाल मूलतः दिगम्बर मन्दिर था ।

तृतीय टोंक-

आगे बढ़ने पर रास्ते के बांयी ओर शम्बुकुमार के चरण बने हुए हैं। यही से शम्बुकुमार को निर्वाण प्राप्त हुआ था। दूसरी से तीसरी टोक तक ७०० सीढ़ियाँ हैं।

चौथी टोंक- तीसरी टोंक से सीढ़ियाँ नीचे की ओर जाती हैं। लगभग १५०० सीढ़ियाँ उतरने और चढ़ने के बाद चौथी टोंक का पर्वत मिलता है। इस पर्वत पर चढ़ने के लिए सीढ़ियों की व्यवस्था नहीं है चढ़ाई कठिन है। पर्वत की चोटी पर एक शिला में चरण बने हुए है। ये चरण प्रघुम्नकुमार स्मारक है। यही वह स्थान है, जहाँ से श्रीकृष्ण रुक्मिणी के पुत्र प्रघुम्नकुमार ने कर्मो का नाश करके मोक्ष प्राप्त किया था। चरणों के निकट ही एक शिला में एक फुट ऊँची मूर्ति बनी हुई है।

पाँचवी टोंक-

वहाँ से उतरकर फिर सीढ़ियाँ कुछ दूर पर ऊपर को पाँचवी टोंक के लिए जाती है। यहाँ मुख्य छतरी के नीचे भगवान नेमिनाथ के चरण बने हुए हैं। चरणो के पीछे भगवान नेमिनाथ की भव्य दिगम्बर प्रतिमा विराजमान है। यहाँ से उसी मार्ग से वापस लौटते है, जिस मार्ग से आये थे। लौटते हुए मार्ग मे बांयी ओर एक शिला में १-१ फुट ऊँची दो मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। बांयी ओर की मूर्ति पद्मासन है। यह तीर्थंकर मूर्ति है। दांयी ओर गोमेद यक्ष और अम्बिका की मूर्ति है तथा उनके शीर्ष भाग पर नेमिनाथ की मूर्ति बनी है।

तलहटी के मन्दिर

दिगम्बर जैन धर्मशाला मे एक जिनालय बना हुआ है। मन्दिर के सामने एक समुन्नत धवल मान स्तम्भ बना हुआ है। मन्दिर की मुख्य वेदी के ऊपर भगवान नेमिनाथ की कृष्ण वर्ण भव्य प्रतिमा पदमासन मूद्रा में श्वेत पाषाण कमल पर विराजमान है। मूर्ति की अवगाहना पीठासन सहित ४ फुट की है। भगवान मुनि सुव्रतनाथ की कृष्ण वर्ण वाली पद्मासन प्रतिमा कहलाती है। यह संवत् १५४८ में जीवराज पापड़ीवाल द्वारा प्रतिष्ठित हुई थी।जैन ऋषियो की ज्ञानाराधना, संयम साधना की पवित्र स्थली गिरनार सभी के लिए विशेष तीर्थस्थली बन गया है। भारतीयता और मानवता का सुन्दर संमिश्रण गिरिराज पर होता दिखाई देता है ।जहाँ से विश्वबन्धुत्व की पावन धारानिस्रत हो रही है- यह चिरकाल तक लोककल्याण का प्रेरणा स्रोत रहेगा।

अन्देश्वर पार्श्वनाथ

'श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र '' अन्देश्वर पार्श्वनाथ '' राजस्थान प्रदेश के बांसवाड़ा जिले की कुशलगढ़ तहसील में एक छोटी सी पहाड़ी पर अवस्थित है। भगवान पार्श्वनाथ की चमत्कारिक मूर्ति यहाँ विराजमान है। यह मूर्ति भूगर्भ से प्राप्त हुई थी, इसकी कथा इस प्रकार है कि एक भील किसान एक बार अपने खेत में हल चला रहा था कि उसका हल एक पत्थर से टकराया, उसने जब वह पाषाण भूमि से निकाला तब देखा कि वह साधारण पाषाण नहीं वरन् पाषाण के भगवान् हैं, वह हर्ष एवं भक्ति से ओतप्रोत हो नृत्य करने लगा। उसके परिवार वालों व जातिवालों ने एक खेजड़ के वृक्ष तले यह मूर्ति तेल-सिंदूर से पोत कर रख दी और पूजा करने लगे। एक दिन कलिंजरा के श्री भीमचन्द महाजन को इस मूर्ति के सम्बन्ध में स्वप्न आया और वे इस स्थान पर पहुँचे, भगवान् पार्श्वनाथ की मूर्ति पाकर, सभी जैन दिगम्बर समाज के लोगों ने मिलकर वहीं एक छोटा सा मन्दिर बनवा दिया।

मूर्ति बहुत चमत्कारिक थी, इसके अतिशयों के सम्बन्ध में लोगों में कई किवदन्तियाँ प्रचलित हैं। इसकी प्रसिद्धि सारे बागड़, मध्यप्रदेश और गुजरात प्रान्त में फैल गई।

यह क्षेत्र पहाड़ के ऊपर जंगल में है। जहाँ कोई बस्ती नहीं है, मात्र दो दिगम्बर जैन मन्दिर व धर्मशाला हैं। दोनों ही मन्दिर पार्श्वनाथ भगवान के हैं। एक मन्दिर कुशलगढ़ की श्री दिगम्बर जैन पंचायत ने सन् १९६५ में बनवाया था।

भगवान् पार्श्वनाथ की श्यामवर्णी चमत्कारिक मूर्ति इसी मन्दिर में विराजमान है। दूसरा मन्दिर कुशलगढ़वासी श्री हीराचन्द्र महाजन ने बनवाया था जिसकी प्रतिष्ठा वि.सं.१९९२ मे हुई थी। पहला मन्दिर ही बड़ा मन्दिर कहलाता है।

बड़े मन्दिर में गर्भगृह और सभामण्डप है। सहन के बाद मूलनायक- भगवान पार्श्वनाथ
की १ फुट ८ इंच ऊँची कृष्ण पाषाण की पद्मासन प्रतिमा है। प्रतिमा के ऊपर सप्त फणावली
है। भगवान् के सिर के ऊपर तीन छत्र हैं। उनके ऊपर दुन्दुभिवादक हैं, उनके ऊपर भी
पाँच पद्मासन तीर्थंकर प्रतिमाएँ हैं। इनके दोनों पार्श्वों मे आकाशचारी देव और गज है।
फण के पार्श्वों में मालाधारी गन्धर्व है। उनसे नीचे दोनों ओर खड्गासन मूर्तियाँ हैं। इस
मूर्ति के ऊपर कोई लेख नहीं है। यह मूर्ति जहाँ से निकली थी, वहीं पर मन्दिर बनवाया
गया यह मूर्ति १२-१३ वीं शताब्दी की है। इस मूर्ति के अतिरिक्त वेदी पर पाषाण की ८
और धातु की ९ मूर्तियाँ और भी विराजमान है।

इस मन्दिर के दूसरी तरफ सड़क के किनारे दूसरा मन्दिर है। इसमे पार्श्वनाथ की
२ फुट ७ इंच अवगाहनावली कृष्ण पाषाण की पद्मासन मूर्ति प्रतिष्ठित है। यह ९ फणवाली
है इसकी प्रतिष्ठा संवत् १९९२ मे हुई थी- इसकी वेदी पर ८ पाषाण और १० धातु की
मूर्तियाँ हैं। यह दोनों ही मन्दिर शिखर बन्द हैं। क्षेत्र का वार्षिकोत्सव कार्तिक पूर्णिमा को
होता है। प्रथम ध्वजारोहण घोड़ा भीमचन्द एवं उनेक वंशजों द्वारा ही किया जाता है। यह
परम्परा आज तक चली आ रही है।

आँतरी: अति प्राचीन जिनालय

राजस्थान के दक्षिणभाग में डूंगरपुर जिला (वागड़) प्रख्यात है, इसमें छोटा - सा गाँव है ''आँतरी''। यहाँ पर्वतमालाओं की श्रुखलाओ के मध्य, मोरन सरिता के तट पर रमणीक व सुरम्य पाकृतिक वातावरण से शोभित अति प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर बावन जिनालय स्थित है।

हूमड़ जैनियों का यह अति प्राचीन जिनालय माना जाता है। इसमें चतर्थुकालीन अति दुर्लभ श्री कलिकुंड पार्श्वनाथ भगवान, बावन जिनालय का यंत्र-मंत्र से सुसज्जित ऋषिमंडलयंत्र विद्यमान है।

१६वीं शताब्दी में घर्मशत्रु मुगलों द्वारा हुए आक्रमण के दौरान इस विशाल मंदिर को भी नष्ट करने का प्रयास किया गया। मूर्तियों को तोड़ा फोड़ा गया तथा कई अन्यत्र फेंक दी गई व मंदिर को भी क्षत-विक्षत किया गया। सन् १५२५ ९-९-१० गुरूवार के दिन इस मंदिर की द्वितीय प्रतिष्ठा श्री महाराणा द्वारा करवाई गई जिसका शिलालेख उपलब्ध है।

आँतरी के इस पुरातन जिनालय में २९ शिखर, ११ गुंबद, १२ गुमटियाँ विद्यमान हैं। ४१ शिखर नष्ट हो गए है और अन्य में दरारें पड़ कर नष्ट होने की आशंका है। वर्तमान में मंदिर के शीर्ष पर ध्वजा, कलश कुछ भी नहीं हैं। इस जिनालय में अभी १००८ श्री पार्श्वनाथ भगवान, सुमतिनाथ, सुपार्शनाथ, शान्तिनाथ, मल्लीनाथ, पार्शनाथ, अनंतनाथ, धर्मनाथ, चंद्राप्रभु, आदिनाथ, श्री पद्मप्रभुजी के अतिरिक्त, श्री ऋषिमंडल यंत्र ११.५ फीट के व्यास में यंत्र तंत्र से सज्जित श्री नंदीश्वर द्वीप समूह पूर प्रतिमाओं के साथ १३X१३ चैत्यालय लिए हुए ९.५ फीट के व्यास में, बिदेह क्षेत्र के २० तीर्थकंर, श्री मंधर, जुगमंदिर आदि श्री अहँतों की २४ कुलदेवियाँ चक्रेश्वरी आदि, वी. १७० युगपुरूष तीर्थकंर, कामदेव चक्रवर्ती, नारायण बलदेव आदि का समूह एक ही पाषाण पर बने हुए अपनी विशाल अतिशयता लिए हुए विराजमान है। यह जैन दर्शन की अत्यन्त दुर्लभ पुरातन स्मृति है।

मंदिर में जो शिलालेख मिलते है, उनसे अनुमानित होता है कि यह मंदिर करीब १२०० साल पुराना तो होगा ही। ऋषिमंडल पर सं. ८०९ अंकित है। दरवाजे सं.७२८ में श्री देवेन्द्रकीर्ति द्वारा दूसरी बार बनवाये गये। थबों पर सं. ८१४ है तथा कुछ मूर्तियों पर १२९६, १५२२, १५२५ मूलसंघे प्रणति अंकित है। शेष चतुर्थकालीन मूर्तियों पर व यंत्रो पर कोई शक् संवत नहीं है केवल मूलसंघ ही अंकित है वह भी कहीं कहीं स्पष्टतः नहीं हैं।

महाराणा मानसिंह ने पुत्र पाप्ती के उपलक्ष्य में गृहशान्ति करवाने के लिए मंदिर की मूर्तियों, तोरण, ध्वजा, कलश भेंट करते हुए श्री भट्टारकजी सोमकीर्ति, शिष्य आनंदकीर्ति, अमरनंद गणीनी द्वारा सं. १५२५ वैसाख वदी १० को द्वितीय बार मंदिर में प्राण प्रतिष्ठा करवाई। आचार्य कंथुसागरजी, आचार्य महावीरकीर्ति, आचार्य सुमतिसागर, आचर्य धर्मसागरजी, आचार्य अजीतसागरजी, संमती सागरजी, बुद्धिसागरजी, वर्धमान सागरजी, ज्ञानभूषणजी व अभिनंदन सागरजी आदि कई दिव्य विभूतियों ने मंदिर में पदार्पण किया है व इसे प्राचीन स्मृति का अद्वितीय रत्न बताया है।

मंदिर की अतिशयता -

यह मंदिर अतिशयता के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ बावनजिनालय के दो मंदिर प्रथक बने हुए थे, परन्तु मुगलों द्वारा आक्रमण में एक मंदिर तो पूरा तोड़ दिया गया, पर दूसरे की तोड़ - फोड़ करते समय, ऐसा कहा जाता है कि जब श्री पद्मावतीजी के सिर पर से पार्शनाथ को तोड़ा गया, तब चमत्कार हुआ श्री पद्मावतीजी के पेट से हजारों की संख्या में छोटे छोटे साँप निकल पड़े।

(पत्थर में गोल गोल छेद के निशान आज भी विद्यमान हैं) जिससे डर कर आततायी भाग गए, मंदिर की कुछ मूर्तियाँ, हाथी, यक्ष यक्षणियाँ ही खंडित हुए किन्तु मंदिर बच गया।

आज भी मंदिर की अतिशयता की चर्चा है। भगवान पार्शनाथ, ऋषिमंडल व हंसमुखी प्रतिमा श्रेयंसनाथ भगवान के कई चमत्कार है। इतना सब होते हुए भी वर्तमान में मंदिर काफी जीर्णक्षीण अवस्था में हैं। करीब एक हजार वर्ष से इसकी टूटफूट मरम्मत का कार्य नहीं हुआ है। अब यहाँ के दिगम्बर जैन समाज ने इसके जीर्णोद्धार का बीड़ा उठाया है, परन्तु वह एक छोटा सा गाँव होने व उसमें समाज के सीमित घर होने के कारण, आर्थिक कठिनाइयाँ अवश्य है जिसके लिए दिगम्बर जैन बंधुओं से अपील की गई है और कई दानकर्ताओं ने आर्थिक सहयोग देने की घोषणा भी की है।

प्रकृति के सुरम्य, मनोहारी अंचल में स्थित यह पावन जिनालय, असीम शांति का केन्द्र है और एक पुनीत तीर्थस्थल है, जहाँ आकर भक्त को असीम आध्यात्मिक शाति की प्रतीति होती है। यहाँ आने के लिए अहमदाबाद, सूरत, बडौदा, इडर- जोधपुर, उज्जैन, इंदौर, दाहोद, गोदरा, बांसवाड़ा से सीधी बस सेवा है। यह गाँव सागवाड़ा से २२ कि.मी. तथा डूंगरपुर से भी २५ कि.मी. की दूरी पर केन्द्र में रोड पर ही स्थित है।

फल्टन: दक्षिण जैन धर्म की काशी

भगवान महावीर के समोशरण में हूमड़ समाज के अस्तित्व मे सबूत मिलते है। उस समय श्रावकों में हूमड़ समाज के लोग थे। हूमड़ मुख्यतः गुजरात में ईडर,तलोद, हिम्मतनगर व राजस्थान में, बांसवाड़ा, उदयपुर, डूंगरपुर, प्रतापगढ़, आदि स्थानो में बड़ी संख्या में थे। इसका लिखित प्रमाण ईडर ग्रंथ संग्राहलय में 'हूमड़ पुराण' नामक ग्रंथ में है। परमपूज्य श्री आचार्य १०५ शांतिसागर महाराजजी ने संपूर्ण भारत में पैदल विहार किया तब ईडर में उनका पदार्पण हुआ। वहाँ उन्होंने 'हूमड़ पुराण' का अध्ययन किया और यह तथ्य भक्तों को बताया।

हूमड़ समाज मुख्यतः गुजराती समाज है , लेकिन वहाँ से उस समाज को १७ वीं शताब्दी के लगभग स्थानांतरित होना पड़ा। इसका कारण ईडर के शासक का अत्याचारी एवं विलासप्रिय होना था। उसी समय महाराष्ट्र में मुगल सल्तनत के खिलाफ छत्रपति श्री शिवाजी महाराज ने जंग जारी की। वे औरंगजेब तथा अन्य मुगल राजाओं के विरूद्ध लड़ाई लड़ रहे थे। इस दौरान छत्रपति शिवाजी गुजरात में आये। उनकी मुलाकात हूमड़ समाज के प्रमुखों से हुई। उनकी समस्या सुनकर महाराज ने उन्हें महाराष्ट्र में आकर व्यापार का निमन्त्रण दिया व उनकी सुरक्षा व सहायता का आश्वासन दिया। शिवाजी महाराज के आश्वासन से प्रभावित होकर और महाराष्ट्र में अधिक व्यापारिक सुविधाएँ देखकर हूमड़ समाज ने दक्षिण ने जाने का निर्णय किया।

हूमड़ समाज के लोग सूरत, करमाला, फलटन, अकलुज तथा अन्य छोटे-बड़े क्षेत्रों में व्यापार के लिए स्थापित हुए। आज इस बात को ३०० से ३५० बरस हो गए है। हूमड़ समाज महाराष्ट्र में बड़ी अच्छी तरह से अपने गुण, कौशल, व सोहार्द से व्यापार कर रहा है। अपने धर्म व कर्तव्य का पालन करते हुए वे वहाँ की मिट्टी में रच बस गए हैं।

पालीताणा शत्रुंजय तीर्थक्षेत्र

श्री शंत्रुजय शिखर अनूप, पांडव तीन बड़े शुभ भूप।
आठ कोडि मुनि मुक्ति प्रधान, तिनके चरण नमूं धरं ध्यान।।

भावनगर से २९ कि.मी. शंत्रुजय गिरी निर्वाण से है। यहाँ से युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन गये थे। असंख्यों राजादि मोक्ष गये। नगरसे ११२ कि.मी. पर्वत पर ४ कि.मी. चढाई है। यहाँ की दूसरी टोंक पर श्वेताम्बरों मन्दिर के केन्द्र में प्राचीन दि. मन्दिर मूल नायक शातिनाथ है।

यहाँ पहाड पर श्वेताम्बर समाज के ३५०० से भी अधिक मन्दिर है और श्वेताम्बर समाज में अन्य सभी तीर्थों से विशेष है।

इतिहास के प्रसिद्ध स्थलः

खेडब्रह्मा:

अति प्राचीन हिन्दु और जैनों (हूमड़ जाति) का उद्‌भव स्थान जहाँ विक्रम संवत के प्रारम्भ के जिनालयों के भग्न अवशेष तथा आक्रमणों से बची अनेक प्राचीन प्रतिमा जिसमें से १५० से अधिक प्रतिमा ईडर, सारंगा, आदि स्थानो पर स्थानांतर की गई। जीर्णोद्वार हुए २ दिगम्बर और १ श्वेताम्बर मंदिर। हूमड़ो का गोत्र कुण्ड आदि था। अनेक पहली सदी के हिन्दु और जैनों के मन्दिरो के खण्डहर है। यह स्थल ईडर (साबराकाठा) से ३५ कि.मी. है।

ईडर

२००० वर्षो से भी प्राचीन दि. समाज का ऐतिहासिक सांस्कृतिक केन्द्र जहाँ नगर तथा पहाड़ पर अनेक जिन मन्दिर हैं । वहाँ के संभवनाथ जिनालय के अन्तर्गत भगवान पार्श्वनाथ मंदिर में इसमें संवत् ११३४ के वर्ष की अनेक प्रतिमाएँ है। इस जिनालय में ही दिल्ली के लाल मन्दिर के भट्टारक गादी स्थापित की दि. संवत १४६२ में हीं और शास्त्र भंडार स्थापित किया जो आज भी उसमें अनेक अति प्राचीन हस्तलिखित शास्त्र है। कुछ ताडपत्र के शास्त्र भी हैं। कुछ कानडी भाषा के भी है। यही पर राष्ट पिता गांधीजी के गुरू शतावधानी श्रीमद् राजचन्द्र ने संवत १९५५ में भगवान पार्श्वनाथ जिनालय के शास्त्र भंडार में कुछ समय शास्त्राभ्यास भी किया था। और कुछ ग्रन्थ प्राप्त किये थे।

घोघा:

भावनगर से १४ कि.मी. पर खंमात की खाड़ी पर स्थित अति प्राचीन स्थान है । खण्डरों से प्रतीत होता है कि किसी समय यह खूब समृद्ध नगर था। वहाँ पर दो दि. जैन मन्दिर जिसमें अति प्राचीन चर्तुथ काल की प्रतिमा है । लगभग १ मीटर की ३ पाई वाला धातु (पीतल) का अति प्राचीन सहस्त्रकूट चैत्यालय है।

महुआ (विघ्नहर पार्श्वनाथ)

सूरत जिले के बारडोली स्टेशन से १५ किलो मी. है । गर्भगृह में अतिशय संपन्न भगवान पार्श्वनाथ की अति प्राचीन मूर्ति है, जिसे जैन और अजैन भी मनौती मनाते हैं।

सजोद (अकंलेश्वर)

यह अंकलेश्वर से ८ कि.मी. है इसमें अत्यन्त प्राचीन शीतलनाथ भगवान की पाषाण मूर्ति है जिसके पीछे दीपक जलाने से आगे भी प्रकाश दिखाई देता है।यह वह स्थान कहा जाता है जहाँ जो भूतबलि और पुष्पदंत मुनिराजो ने गिरनार के धरसेन आचार्य से आगम प्राप्त करके यहाँ से 'जयधवल महाधवल आदि-ग्रन्थों को सर्व प्रथम लिपिबद्ध करना प्रारम्भ किया था।

पवित्र तीर्थ पावागढ़

पावागढ़ पुराण पवित्र पुरातत्व सिद्धक्षेत्र है । पावागढ़ का प्राचीन नाम पावागिरि था। बाद में पर्वत पर दुर्ग बन जाने के कारण इसका नाम 'पावागढ़' हो गया। यह क्षेत्र पहाड़ पर है जिसकी ऊँचाई ३१०० फुट है और चढ़ाई साढ़े ३ मील है। यह सिद्धक्षेत्र गुजरात राज्य के पंचमहल जिले में है और सुप्रसिद्ध शहर बड़ौदा से पूर्व दिशा में ४२ कि.मी. दूरी पर है।

यह सिद्धक्षेत्र बहुत रमणीय एवं तपसाधक है। कहा जाता है कि यहां पर रामचन्द्र के पुत्रों अनंगलवण (लव) व मदनांकुश (कुश) ने घोर तप करके निर्वाण प्राप्त किया था। इनके अतिरिक्त लाटदेश के पाँच कोटि नरेशों ने भी यहाँ पर तपस्या करके मुक्ति प्राप्त की थी। भट्टारक उदयकीर्ति ने 'तीर्थ वन्दना' में अपभ्रंश भाषा में पावागिरि के सम्बन्ध में निर्वाणकाण्ड का ही अनुकरण करते हुए लिखा है

'पावइ लवणंकुश राम सुआ। पंचेव कोडि जहिं सिद्ध हुआ।

भट्टारक गुणकीर्ति ने मराठी में, भट्टारक मेघराज ने गुजराती भाषा में तथा इनके अतिरिक्त श्रुतसागरस,ज्ञानसागर, चिमणापंडित आदि अनेक लेखकों ने इसे सिद्धक्षेत्र मानते हुए, इसके सम्बन्ध में लिखा है ।

ऐतिहासिक महत्व

इतिहास के तथ्य बताते है कि ई. ४०० वर्ष पहले आज से करीब २५०० वर्ष पूर्व गुर्जरदेश में वीरसेन नामका जैनी राजा था। पिता का नाम सुरेन्द्रसिंह और माता का नाम चन्द्रावती था। इस वीरसेन राजा ने दिगम्बर जैन मंदिरों का जीर्णोद्धार किया और मंदिरों के रक्षार्थ किला बनवाया। ई. ३२२ वर्ष पहले आज से २२५० वर्ष पूर्व भारत नरेश मौर्य राजा चन्द्रगुप्त था। उसने ई. २९८ में अपने पुत्र को गद्दी सौंप कर श्री १०८ दिगम्बर जैनाचार्य श्री भद्रबाहु के पास निर्ग्रंथ दीक्षा ली और मुनि संघ में शामिल हो वे पावागढ़ भी पहुँचे ऐसा उल्लेख मिलता है। ग्रीस देश का महान भूगोल वेत्ता 'श्री टोले' ने भी अपने शोध ग्रंथ में पावागढ़ में दिगम्बर जैन मन्दिरों और उनकी प्राचीनता का उल्लेख किया है ।

यहाँ बहुत काल तक जैनों का राज्य रहा था। इस काल में ५२ जिनालयों का निर्माण हुआ था, पर्वत के ऊपर भी जैन मन्दिर व भवन बनाए गए थे। जैन राजाओं के पश्चात् यहाँ पर तोमरवंश का शासन हो गया। संवत १४८४ में अहमदाबाद के मुहम्मद बेगड़ा ने फतई रावल राजा जयसिंह को पराजित करके इस नगर पर अधिकार कर लिया। उसने पर्वत और नगर के मन्दिरों का क्रूरतापूर्वक विनाश किया, जिसके भग्नावशेष अब तक मिलते हैं ।

पर्वत की तलहटी में 'चांपानेर' शहर बसा था। इस नगर के चारों ओर भी कोट बना हुआ था। इस कोट में पूर्व और पश्चिम की ओर दो बड़े दरवाजे हैं, जिन्हें पार करने पर बाज़ार आता है। प्राचीनकाल में इस नगर की लंबाई. १२ कोस थी, यहाँ पर ८४ चोऊटा थे और यहाँ ५२ बाज़ार थे। आज भी यहाँ नौ लकरवी कोठार, भकई कोठार और फतई रावल के महलों के अवशेष पाये जाते हैं।

इस पर्वत की विशेषता यह है कि यहाँ भिन्न भिन्न धर्म के राजाओं का शासन होने के कारण जहाँ कई जिनालय है तो सर्वोच्च शिखर पर हिन्दुओं का महाकाली का विशाल मन्दिर निर्मित है।

साथ ही इसी पर्वत पर कई मसजिदों के अवशेष भी दृष्टिगत होते हैं। पश्चिम की ओर अब भी उस काल की एक विशाल मस्जिद खड़ी हुई है।

क्षेत्र दर्शन

जैन मन्दिरों की दृष्टि से पावागढ़ का स्थान महत्वपूर्ण है। नगाड़खाने का दरवाजा पार करने के पश्चात पहाड़ के शिखर पर बाज़ार बसा है वहीं पर निर्मल जल से परिपूर्ण सासिया नामक विशाल तालाब है। तालाब से कुछ दूरी पर दायीं ओर तीन जैन मन्दिर और एक मन्दिरिया मिलते हैं। इन मन्दिरों का शिल्प इस प्रकार है-

१. सुपार्श्वनाथ का मन्दिर- प्रतिमा

इसमें मूलनायक प्रतिमा भगवान सुपार्श्वनाथ की है, ज़ो १३ फणावलियुक्त ३ फुट ऊँची श्वेतवर्ण की पद्मासन स्थित में विराजमान हैं। चरण-चौकी पर स्वस्तिक लांछन है इसकी प्रतिष्ठा माघ शुक्ला १३, संवत १९३७ में भट्टारक कनककीर्ति द्वारा करवाई गई थी। बांयी ओर भगवान ऋषभदेव की तथा दाँयी ओर भगवान अजीतनाथ की पद्मासन प्रतिमायें है।

मूलनायक के आगे पद्मासन तीर्थंकर प्रतिमा प्रतिष्ठित है, बांयी ओर गुलाबी वर्ण की १ फुट ९ इंच अवगाहन वाली भगवान संभवनाथ की पाषाणमूर्ति विराजित है। इनके अतिरिक्त ३ पाषाणमूर्तियाँ सं.१९३७ और १ पाषाणं मूर्ति सं.१६६५ की भी है। गर्भगृह में दांयी ओर एक पाषाण में दो चरण चिन्ह बने हुए है। चरणों के दोनो ओर दो खड़गासन मूर्तियाँ बनी हुई हैं। दोनों सिरों पर इन्द्र खेड़ है और सिरे के दोनो ओर पुष्पमाल धारी गन्धर्व हैं।

२ महावीर मन्दिर

सुपार्श्वनाथ के मन्दिर के सामने ही एक मन्दिरिया बनी हुई है। इसमें महावीर स्वामी की श्वेत पाषाण की १ फुट ६ इं. ऊँची प्रतिमा विराजमान है। पीठासन के सामने दो चरण चिन्ह बने हुए हैं।

३. शांतिनाथ मन्दिर

मन्दिरिया के सामने एक ऊँचे चबूतरे पर यह मन्दिर बना है, इसमें केवल गर्भगृह है। एक ऊँचे चबूतरे पर १ फुट ६ इं.ऊँची वी.नि.सं. २४७७ में प्रतिष्ठित भगवान शातिनाथ की श्वेत पाषाण की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। बांयी ओर सलेटी वर्ण की खड़गासन प्रतिमाएँ हैं। इनके अतिरिक्ति १० प्रतिमाएँ और हैं।

४ चन्द्रप्रभ मन्दिर

इस मन्दिर में गर्भगृह और सभामण्डप बने हुए हैं। वेदी पर मूलनायक भगवान चन्द्रप्रभ की सं.१९६७ में प्रतिष्ठित श्वेत वर्ण पद्मासन की प्रतिमा विराजमान है तथा बांयी ओर कृष्णवर्ण नेमिनाथ की व दांयी ओर कृष्णवर्ण नेमिनाथ की व दाँयी ओर कृष्णवर्ण मुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा है।

इस मन्दिर के सामने तेलिया तालाब है। इसके किनारे पर एक ऊँची चौकी पर प्राचीन मन्दिर भग्नावस्था में खड़ा है। मन्दिर के शिल्प के देखने से ज्ञात होता है कि यह ११-१२ वीं शताब्दी का होगा। मन्दिर में कोई मूर्ति नहीं है। वहाँ पड़े अवशेषों में अलंकृत स्तम्भ, तोरण आदि पुरातन सामग्री बिखरी पड़ी है।

५. मल्लिनाथ मन्दिर

इस मन्दिर में गर्भगृह सभामण्डप और अर्ध मण्डप बने हुए हैं। गर्भगृह में वेदी पर मूलनायक मल्लिनाथ की २ फुट १० इंच ऊँची श्वेतवर्ण की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। बांयी ओर पद्मप्रभ भगवान की श्वतेवर्ण की और बांयी ऋषभदेव की कृष्णवर्ण की पद्मासन प्रतिमाएँ हैं।

इस मंदिर के निकट दो मन्दिर और हैं। यहाँ मंदिर की आधार चौकियों को देखने से लगता है कि पहले यहाँ मध्य में कोई विशाल मंदिर रहा होगा।

६. पार्श्वनाथ मन्दिर

यह प्रतिमा चिन्तामणी पार्श्वनाथ कहलाती है । यह सप्तफणावली मण्डित है।यह कृष्ण पाषाण की ३ फुट इं.ऊँची पद्मासन मुद्रा में है। बांयी ओर शांतिनाथ भगवान की श्वेत पाषाण की खड़गासन प्रतिमा है जो एक शिलाफलक में उत्कीर्ण है। इसके ऊपर कोनों पर दो मालधारी देव है तथा अधोभाग में हाथ जोड़े हुए दो भक्त बैठे है। दायीं ओर आदिनाथ भगवान की श्वेतवर्ण शिलाफलक में उत्कीर्ण प्रतिमा है ।

७. पार्श्वनाथ मंदिर

इस मंदिर में गर्भगृह, सभामण्डप, और तीन अन्य अर्धमण्डप बने हुए है। वेदी पर नौफणयुक्त भगवान पार्श्वनाथ की श्वेत पाषाण की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। बांयी ओर श्वेत पाषाण की पद्मप्रभु भगवान की पद्मासन प्रतिमा है तो दायीं ओर पार्श्वनाथ की पद्मासन प्रतिमा मंदिर की रथिका और जंघा पर देवी मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं।

ये सभी मंदिर ११-१२ वीं शताब्दी के हैं, किन्तु इनमें जो मूर्तियाँ विराजमान हैं वे सं १५४८ के बाद की हैं। मूलप्रतिमाएँ कहाँ काल कवलित हुई कुछ नहीं कहा जा सकता।

तलहटी में दो मन्दिर बने हुए है. एक तो महावीर मन्दिर जो धर्मशाला के मध्य में है और दूसरा पार्श्वनाथ मंदिर जो धर्मशाला के बाहर बना हुआ है।

महावीर मन्दिर

वेदी पर भगवान महावीर की श्वेत पद्मासन प्रतिमा प्रतिष्ठित है। इसके बांयी ओर एक शिलाफलक में सम्भवनाथ भगवान की खड़गासन प्रतिमा विराजमान है। प्रतिमा के ऊपर छत्र है उसके ऊपर दुन्दुभि वादन करते हुए देव हैं। पार्श्वनाथ वेदी के निकट पीतल का ४ फुट १० इंच ऊँचा पंचमेरु जिनालय है। यह चतुर्मुखी है। इसके खण्डों में कई मूर्तियाँ बनी हुई हैं। इस पर अंकित लेख के अनुसार सं.१५३७ वैशाख सुदी ३, सोमवार को दिलुलिग्राम में राजाधिराज भानुविजय के राज्य में मूल संघ नन्दिसंघ सरस्वतीगच्छ बलात्कारगण कुन्दकुन्दाचार्यान्वय के भट्टारक पदमनंदिदेव, तत्पट्टस्थ भट्टारक सकलकीर्ति देव तत्पट्टस्थ भट्टारक भुवनकीर्तिदेव ज्ञानभूषण गुरु के उपदेश से इसकी प्रतिष्ठा तत्पट्टस्थ भट्टारक द्वारा की गई। भट्टारक ज्ञानकीर्ति ने मानपुर में भट्टारक पीठ की स्थापना की । इस मंदिर के सामने ५० फुट ऊँचा भव्य मानस्तम्भ बना हुआ है ।

पार्श्वनाथ मंदिर के गर्भगृह में मूलनायक भगवान की प्रतिमा विराजमान है। यह कृष्ण पाषाण की पद्मासन है व सप्तफणी है। इसकी प्रतिष्ठा वीर नि. सं. २४७७ मे हुई थी ।

पावागढ़ में केवल धार्मिक वरन् सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण स्थल है। पर्वत का दृश्य अत्यन्त मनोहारी व आह्लादकारक है - यहाँ की प्राकृतिक सुषमा अपूर्व है और निरन्तर झरते जलप्रपात यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य को द्विगुणित करते हैं, यही कारण है कि इस पर्वत पर आकर मनुष्य अनचाहे ही ईश्वरोन्मुख हो जाता है। ऐसे तीर्थस्थल बिरले ही हैं।

तारंगा

तारंगा क्षेत्र उत्तर गुजरात के मेहसाणा जिले में अरावली पर्वत माला की एक मनोरम टेकरी पर अवस्थित है। तारंगा एक प्रसिद्ध सिद्धक्षेत्र है। यहाँ से कई कोटि मुनियों ने निर्वाण प्राप्त किया था। इसका प्राचीन नाम 'तारापुर' है इसके अतिरिक्त तारानगर, तारापुर, तारागढ़ आदि नाम भी मिलते हैं । १५वीं शताब्दी के विद्वान भट्टारक गुणकीर्ति की मराठी रचना 'तीर्थवंदना' में 'तारंगा' नाम सर्वप्रथम प्रयुक्त हुआ था।

तारंगा पर्वत की तलहटी मे एक कोट बना हुआ है जिसके भीतर दिगम्बर धर्मशाला, मन्दिर और क्षेत्र का कार्यालय है। यहाँ से आगे जाने पर कई गुफायें है उसके बाद एख टोंक मिलती है। इसमे एक शिलाफलक मे बनी भगवान् नेमीनाथ की खडगासन प्रतिमा श्वेतवर्ण की है। फलक की अवगाहना ५ फुट है । प्रतिमा ऊपर छत्रत्रयी है। मूर्तिलेख में ' श्री नेमीनाथ बिम्ब प्रतिष्ठा विक्रम सं. ११९२ वैशाख सुदि - ९ रविवार को श्री सिद्धचक्रवर्ती जयसिंह देव के शासनकाल में हुई थी। इसी मूर्ति के बाये पार्श्व में एक शिलाफलक में बने हुए दो स्तम्भों के मध्य में १ फुट ६ ई. उन्नत नेमिनाथ भगवान् की खड्गासन मूर्ति है। इ, मूर्ति के आगे भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति द्वारा सं. १९०२ में प्रतिष्ठित चरण बने हुए हैं। पहाड़े के उपर चढ़ने पर एक ओर टोंक है जिसमे बाहुबलिस्वामी की १० .ई. ऊँची खड्गासन प्रतिमा विराजमान है । वेदी के सामने ९ ई. लम्बे श्वेत-चरण बने है। इनकी प्रतिष्ठा भट्टारक आदि भूषण के विजय भट्टारक रामकीर्ति ने करायी। यहाँ से आगे जाने पर एक टोंक मिलती है। इसमें ४ फुट ९ ईंच ऊँची मल्लिनाथ की श्वेतकर्ण खड़गसान प्रतिमा विराजमान है। पुरुष के दाढ़ी है, कानों में कुण्डल, भुजाओं में भुजबन्द और हाथों में दस्तबन्द है । इस मूर्ति के आगे सं.१९०२ में प्रतिष्ठित चार चरण विराजमान है। जिनमें २ श्वेत, १ कत्थई और १ सलेटी वर्ण हैं ।

इस प्रकार कोटिशिला और सिद्धशिला नामक दोनो पर्वतो पर लगभग ९०० वर्ष प्राचीन प्रतिमाएँ विद्यमान है। यहाँ जो गुफाएँ बनी हुई है, वे प्राकृतिक हैं। तलहटी में दिगम्बर जैन मंदिरों की संख्या १३ है तथा १ मानस्तम्भ हैं। इन मंदिरों में दो मन्दिर विशेष हैं (१) सम्भवनाथ मन्दिर (२) आदिनाथ मंदिर तलहटी के मन्दिरो की सूचि इस प्रकार है-

(१) सम्भवनाथ मंदिर (२) चैत्य मंदिर (३) छोटी देहरी (४) नन्दीश्वर जिनालय (५) मानस्तम्भ (६) महावीर मंदिर (७) अजितनाथ मंदिर (८) ऋषभदेव मंदिर (९) अजितनाथ टोंक (१०) ऋषभदेव का बड़ा मंदिर (११) बाहुबलि चैत्यालय (१२) पद्मप्रभु मंदिर (१३) चन्द्रप्रभु मंदिर (१४) वासुपूज्य मंदिर

इन मंदिरों और धर्मशाला के पृष्ठभाग में पहाड़ पर गुफाएँ हैं। एक गुप्त में सिंहदम्पति निवास करता है। यहाँ से पूर्व की ओर पहाड़ के ऊपर मोक्षवारी नामक स्थान है। यहाँ दिगम्बर समाज की टोंक बनी हुई है। यह सिद्धभूमि है। सिद्धशिला पर्वत के रास्तों की मरम्मत दिगम्बर समाज करता रहता है।

कार्तिक शुक्ला १५ को भगवान सम्भवनाथ का पवित्र जन्म दिवस आता है। वर्ष में एक दूसरा मेला चैत्र सुदी १३ से १५ तक होता है। १५ को जलयात्रा का विशाल जलूस निकलता है और पाण्डुक शिला पर अभिषेक होता है ।

महुवा

महुवा का अतिप्राचीन नाम 'मधूनगर' अथवा मधुकर नगर था। यहाँ प्राचीनकाल में जैनों की विशाल जन संख्या थी। वर्तमान में यह क्षेत्र जैनों में 'विघ्नहर श्री पार्श्वनाथ महुवा' के नाम से प्रसिद्ध है। यह सूरत जिले में वारडोली स्टेशन से १५ कि.मी. दूर पूर्वा नदी के तट पर स्थित है। प्राचीनकाल में यह क्षेत्र विद्याधारकों के लिए ज्ञान प्राप्ति का केन्द्र स्थान रहा है। यही पर मूलसंघ सरस्वतीगच्छ के भट्टारक प्रभाचन्द्र के शिष्य भट्टारक वादिचन्द्र ने 'ज्ञान सूर्योदय' नाटक की रचना की थी। श्री ब्रह्मसागर जी ने 'सर्वतीर्थ वन्दना' नामक अपनी रचना में उल्लेख किया है कि क्षेत्र में मुनि-जनों का विहार होता था और मुनिजन यहाँ ग्रंथों का अभ्यास करते थे।

यह अतिशय क्षेत्र है। यहाँ भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा के चमत्कारों के सम्बन्ध में बड़ी ख्यांसे हैं। यहाँ दर्शन करने व मनौती मनाने के लिए जैनों के अतिरिक्त जैनेतर भी बड़ी संख्या में आते हैं । भगवान पार्श्वनाथ की यह मूर्ति सुलतानाबाद (पश्चिम रवाज देश) के तुप्लाव गांव भूमि के अन्दर दबी हुई था। यह से कैसे निकली इस सम्बन्घ में किवदन्तियाँ है। परन्तु मूर्ति प्राप्त होने के पश्चात् इस चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर में भट्टारक श्री विद्यानदिजी द्वारा इसकी प्रतिष्ठा कराई गई।

वर्तमान में मंदिर का पुननिर्माण कार्य हो रहा हैं । मूलनायक प्रतिमा विघ्नहर पार्श्वनाथ अपने मूलस्थान भूगर्भ (मोटारे) में ही विराजमान हैं। एक वेदी पर श्यामवर्ण की चार फुट ऊँची एवं सप्तफणवाली श्री विघ्नहर पार्श्वनाथ की भव्य प्रतिमा है । बायीं और भगवान चंद्रप्रभु की अवघननावाली श्वेत पाषाण की पदमासन प्रतिमा तथा दायी और श्वेत वर्ण शांतिनाथकी अप्रतिम कई प्राचिन मूर्तिया भी यहाँ उपलब्ध है । यहां लकड़ीके एसे कई खंड है । जिन पर लेख अंकित है । शिलाओं भित्तियों आदि पर उत्कर्णी लेखों के समान ही दारु लेखों का भी अपना ऐतिहासिक महत्व है ।

अतिशय क्षेत्र होनेके कारण इस स्थानका महत्व है । मूर्तिके चमत्कारों की ख्याति सुनकर सभी संप्रदायों व जातियों के लोग मनोकामना पूर्ण करने हेतु आते हैं । अनेक भक्तजन यहाँ बेंगन जैसे फल और सब्जी तक चढाते हैं । कामना पूर्ण होने पर मंगल कलश और गाजे बाजे के साथ चढावा चढाने आते है । इसी लिये पार्श्वनाथ को यह निष्कपद अबोध भक्तजन '' संकल्प सिद्ध के देवता ' भी कहते हैं । सप्ताहमें शनिवार व रविवार को विशेष भीड़ रहती है।
यहाँ धर्मशालामें बिजली की व्यवस्था है । मंदिरमें कुँआँ है ।

पूर्णा नदि के तट पर अवस्थित यह तीर्थ स्थान अनुपम है ।

क्षेत्रीय पृष्ठभूमि

सघन वनाच्छादित पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण मेवाड़ एवं ईडर राज्य के बीच स्थित इस क्षेत्र को प्राचीन समय में भाखर प्रदेश के नाम से जाना जाता था। जवास (प्राचीन नाम-जगरगढ़) से पीपली, ऋषभदेव, देवल, बिछीवाड़ा, पाटिया, पहाड़ा, पानरवा जुड़ा आदि इस क्षेत्र में थे। इस क्षेत्र में देवल तथा बिछीवाड़ा क्षेत्र को बारा क्षेत्र तथा शेष क्षेत्र को भोमट कहा जाता था। बाद में इसमें जवास, धुलेव, देवल, बिछीवाडा, थाणा, पहाड़ा, बावलवाड़ा क्षेत्र को खड़क कहा जाने लगा। खड़क नामाकरण क्यों हुआ, यह खोज का विषय है। अनुमान है कि इनमें से कोई कारण इस नामकरण का रहा होगा-:

१. भीलों व्दारा किये जाने वाले उपद्रवों एवं लूटपाट के कारण मेवाड़ तथा ईडर स्टेट द्वारा इसे आधीन करने के प्रयासों में विफलता स्वरुप सदैव यह क्षेत्र का उनकी आँखो में खटकता रहना।
२ तलवारों के बल पर सदैव स्वतन्त्र वर्चस्व वाला (कड़क) क्षेत्र रहना।
३ मेवाड़ तथा ईडर राज्यों के एक दूसरे पर आक्रमण करने हेतु एक मात्र मार्ग (खिवड़की) के रुप में होना।
४ क्षेत्र में राजपूत शासनकाल में लोगों की सुरक्षा हेतु चोकियों पर तैनात चौकीदारों व्दारा नंगी तलवारें (खड़ग) रखना।

भौगोलिक पृष्ठभूमि

भौगोलिक दृष्टि से यह क्षेत्र अरावली पर्वत श्रृंखला के सुदूर पश्चिमी पर्वतो के मध्य स्थित है। २० वर्ष पूर्व तक यहां सघन वन क्षेत्र था जिसमे सागवान, महुवा, पलाश, खैर आदि के वृक्ष थे। जन संख्या वृद्धि के फलस्वरूप आवास एवं कृषि कार्यों के निमित वनों का अन्धाधुन्ध विनाश हुआ। वर्तमानमें बावलवाड़ा, सांगवाड़ा, (पाल) तथा जवास क्षेत्रमें कुछ वन बचे है छोटी बरसाती नदियों और पहाड़ी नालो के अधिकता के कारण इसे ९ नदी और ९९ नालों के क्षेत्रके नाम से जाना जाता है। प्रमुख नदी सोम है जो सम्पूर्ण क्षेत्र के नालो एवं नदीयो के पानी के साथ वेणेश्वर के पास माही नदी में जा मिलती है।

पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण समतल भूमि का लगभग अभाव है। परिणाम स्वरुप गाँवो का आकार छोटा है तथा सघन बस्ती वाले गाँवों की संख्या भी कम है। खेरवाड़ा व ऋषभदेव दो ही कस्बे है। आदिवासी बस्तियों में मकान पहाडीयो के शिखरों या ढलान पर है। पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण सड़कों का अभाव है। प्रमुख सड़क मार्ग हैं :-

१. उदयपुर, रतनपुर, अहमदाबाद मार्ग
२. उदयपुर, खेरवाड़ा, डुंगरपुर मार्ग
३. खेरवाड़ा राणी मार्ग वाया छाणी, नया गाँव
४. खेरवाड़ा- सोम- फलासीया मार्ग वाया भाणदा -बावलवाड़ा
५. खेरवाड़ा से जवास, भूदर, ऋषभदेव मार्ग (कच्चा है)

हूमड़ों का स्थानान्तरण

हूमड़ अधिक संख्या में गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र एवं मध्य पदेश मे है। शेष भारत में इनकी संख्या अत्यल्प है । इन सभी के पूर्वज खेडबह्मा तथा उसके आसपास के निवासी थे तथा मूलतः क्षत्रिय थे । वहां से इनका निष्क्रमण विभिन्न समय में हुआ तथा वे विभिन्न स्थानों पर जा बसे। वे और उनकी पीढियां किसी एक स्थान पर स्थाई रूप से नहीं रही। यह बताना कठिन है कि किस परिवार ने कितने और कब स्थान बदले और वर्तमान पीढ़ी के पूर्वज कब वर्तमान स्थान पर बसे।

हूमड़ों के खेडबह्मा निष्क्रमण के संबध में एक किंवदन्ति प्रचलित है । खेडबह्मा में १७००० परिवार हूमड़ थे। इनमे अकेले खेरजा गोत्र के १७०० परिवार थे। बाह्मणों (खेडूओं) के १००० परिवार थे । एक भील राजा के समय राजपुत्र तथा नगर के श्रेष्ठि पुत्र में घनिष्ठ मित्रता थी । राजपुत्र के पास घोड़ा तथा श्रेष्ठि पुत्र के पास घोड़ी थी । एक दिन दोनों घुमने निकले । राजपुत्र ने दौड का प्रस्ताव किया । श्रेष्ठि पुत्र इसके लिए तैयार नहीं था परतुं राजपुत्र के आग्रह को टाल नही सका। नही चाहते हुए भी राजपुत्र का प्रस्ताव स्वीकार किया । दौड़ शुरू हुई । श्रेष्ठि पुत्र की घोड़ी तेज तर्राट तथा बलिष्ठ थी अतः वह आगे निकल गयी । अकेला पड़ जाने के कारण राजपुत्र का घोड़ा अड़ गया तथा राजपुत्र को नीचे गिरा दिया । इस घटना के कारण राजपुत्र ने राजा से श्रेष्ठि पुत्र की घोड़ी खरीद लेने को कहा । राजा ने श्रेष्ठि को बुला कर बात की । श्रेष्ठिने कहा ।'' आपका पुत्र और मेरा पुत्र दोनों घनिष्ठ मित्र है । वे ही आपस में तय कर लेगे। श्रेष्ठि पुत्र को बुलाया गया । उसने कहा 'राजन्! आज तो मेरी घोड़ी मांगी जा रही है कल को अगर राजपुत्र मेरी पत्नी मागेगा तो क्या । मैं उसे दे दूंगा ? नही , कदापि नही '' यह बात राजा को तीर की समान चुभ गई । उसने सभी जैनियों को बंदी बनाने का आदेश दिया तथा उन्हें जेल में डाल दिया । तब एक एक बाह्मणने दो दो जैनियो की जमानत देकर उन्हें जेल से छुड़वाया । इस घटनासे उत्पीड़ित जैन एवं बाह्मण समाज के बुद्धिजीवियों ने सलाह मशवीरा कर खेडबह्मा छोड़ देने का निश्चय किया ।

खेडबह्मा छोड़ने का एक अन्य कारण राजाओं के आपसी युद्ध तथा म्लेच्छ शासको के आक्रमण भी रहे हैं । खेडबह्मा और उनके आसपास के क्षेत्र (राय देश) तीन तरफ ईडर, सत्तर तालुका तथा खड़क क्षेत्र के पहाडो से घिरा हुआ होने से चितौड़ पर आक्रमण करने की दृष्टि से तैयारी करने हेतु सुरक्षित था। अत:इस क्षेत्र पर आक्रमण कर इसे अधिनस्थ करने का प्रयास किया गया। इन आक्रमणों से मन्दिर एवं भवन खण्डित कर दिये गये तथा लोग जिनमें जैन भी सम्मिलित थे, खेडबह्मा छोड़ कर अन्यत्र जा बसे।

(प्रस्तुत लेख के बिन्दु उदगम एवं नामकरण की सामग्री अखिल भारतीय हूमड़ इतिहास शोध समिति, अहमदाबाद के सौजन्य से साभार प्राप्त)

खड़क क्षेत्र का इतिहास

लेखक : श्री नाथूलाल शाह
अध्यक्ष खड़क क्षेत्रीय दि. जैन महासभा तथा श्री मणीभद्र जैन M. A. (अर्थ शास्त्र) बी. एड.
मंत्री खड़क दि. जैन महासभा

प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्वयं के परिवार और समाज जिससे वह समृद्ध है, के बारे में विस्तृत जानकारी आवश्यक है। अपने पूर्वजों, जाति की उत्पत्ति तथा फैलाव और उसकी प्राचीन धरोहर का ज्ञान नही होने से व्यक्ति स्वंय को समझने में असमर्थ है। पारवारिक एवं सामजिक पृष्ठभूमि में ही व्यक्ति गौरव का अनुभव करता है और सामाजिक प्रगति,- हेतु सामूहिक या व्यक्तिगत प्रयास में संलग्न होता है।

जैन धर्मका इतिहास तो उपलब्ध है, परन्तु उसके अनुयायियों की विभिन्न उपजातियों में से कई उपजातियों के स्वरूप विकास एवं जातियों की जानकारी आज भी उपलब्ध नहीं है क्योंकि इसके लिए या तो किसीने प्रयास किया ही नहीं या यदि किसी में विचार उत्पन्न भी हुआ तो लम्बे कालके गुजर जाने से ऐतिहासिक प्रमाण जुटा पाने में कठिनाई अनुभव की। निश्चित ही यह कार्य अनुसंधान प्रकृति का होने से साधारण व्यक्ति के लिए संभव भी नहीं है। जो व्यक्ति इतिहास पुरातत्व, विज्ञान वे प्राचीन भाषा -ज्ञात्ता एवं जैन तत्वों का मर्मज्ञ हो वही इस कार्य को विश्वसनीय ढंग से कर सकता है या फिर इतिहास वेत्ता प्राचीन भाषा -विज्ञ और जैन तत्वों के ज्ञाता सम्मिलित प्रयास कर इसे सम्पादित कर सकते है। इस कार्य में लम्बी अवधि तक प्रयत्न, विस्तृत भ्रमण एवं अर्थ व्यय समाहित है। प्रसन्नता की बात है कि कतिपय व्यक्तियों द्वारा हूमड समाज का इतिहास तैयार कर सामाजिक प्रगति हेतु बींडा उठाया गया है। इसके लिये उन्हें साधुवाद देना वांछनीय है।

ऐतिहासिक प्रमाणो के आधार पर अब निश्चित हो चुका है कि हूमड समाज की उत्पति वि. सं. १०१ में हुई और मुनि हेमचन्द्र ने खेडबह्मा (गुजरात) में इसकी स्थापना की। इस समाज के पूर्वज क्षत्रिय थे एवं हुबड़ से हूमड शब्द प्रचलित हुआ है। खेडबह्मा से हूमड विभिन्न समयों में विविध कारणो से एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचे तथा इन स्थानों से भी कई परिवार अन्य स्थानो पर जाकर बस गये। प्रारम्भ में हूमड गुजरात तत्पश्चात. गुजरात एवं राजस्थान तक सीमित थे। आज वे इन दो राज्यों के अलावा मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, एवं अन्य राज्योमें भी आवासित है।

खड़क के हूमड भी खेडबह्मा से स्थानान्तरित हुए हैं। वे विविध समयों में इस क्षेत्र में पहुँचे इस संबध में एतिहासिक प्रमाणोको एकत्रित कर विस्तृत शोध की आवश्यकता है। इस पुस्तिका में किंवदन्तियो बुजुर्गों से प्राप्त जानकारी एवं सामाजिक सर्वे से उपलब्ध तथ्यों रूपी मणियों को एकत्रित कर माला के रूप में गुम्फित करने का प्रयास किया गया है।

११. झूथरी -

जवास से आया एक परिवार यहाँ का है। यहां एक परिवार ऋषभदेव में बस गया है तथा एक परिवार ईडर के पास व्यवासायरत है। इसी परिवार के मुखिया शकलचंद लम्बी अवधि तक खड़क दशा हूमड समाज के सेठ रहे थे। इस गांव में दि. जैन मन्दिर नहीं है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि खडक में हूमड़ों का आगमन लम्बे समय पूर्व हुआ था। तथा इनका प्रवेश परशवाडा ,पोला, विजयनगर ,चितरिया तथा ईडर भीलुडा सावलाजी मार्ग से हुआ। वर्तमान में परिवार के पूर्वजो ने क्षेत्र में कई स्थान बदला आज की पीढी के लोग भी अन्यत्र स्थानान्तरित हो रहे है। आज क्षेत्र में जिन गाँव में दशाहूमड समाज है ,उनमें से तीन गांवो को छोड़कर शेष में कोई अन्य जैन समाज नहीं है यह तीन स्थान भाणदा खेरवाडा एवं ऋषभदेव प्रथम में नरसिहपुरा समाज एवं दशा हूमड समाज दोनों है। अन्तिम दोनों में दशाहूमड नरसिहपुरा बीसाहूमड एव कुछ श्वेताम्बर परिवार है ।

कुशलगढ़

१- शहर का नामः- कुशलगढ़ तालुका- कुशलगढ जिला-बांसवाडा पोस्ट ऑफिस - कुशलगढ प्राप्त- राजस्थान पिन ३२७८०१

२-(क) किसके अधिकार में है - दिं. जैन बीस पंथी दशाहूमड़ पंच कुशलगढ

(ख) कर्ताओं के नाम पता/विवरण - सेठ नथमलजी आत्मज श्री मूलचन्दजी- अध्यक्ष

३- जिनालय का नामः-

(१) श्री आदिनाथ दि. जैन बीस पंथी मंदिर कुशलगढ

(२) श्री पर्श्वनाथ दि. जैन बीस पंथी जूना मंदिर कुशलगढ

(३) श्री आचार्य सुधर्म सागरजी दि. जैन नसीया कुशलगढ

(४) श्री अतिशय क्षेत्र अन्देश्वर पार्श्वनाथ जी अन्देषर कुश.

(५) श्री अतिशय क्षेत्र वागोल पार्श्वनाथजी वागोल कुशलगढ

(४) मन्दिर का नाम

मूलनायक प्रतिमा

मन्दिर का नाम	मूलनायक प्रतिमा
१- श्री आदिनाथ दि. जैन बीस पंथी मंदिर कुशलगढ	श्री आदिनाथजी
२- श्री पार्श्वनाथ दि. जैन बीस पंथी जुना मंदिर कुशलगढ	श्री पार्श्वनाथजी
३- श्री आचार्य सुधर्म सागरजी नसीया कुशलगढ	श्री आचार्य सुधर्मसागरजी के [illegible] चिन्ह
४- श्री आतिशय क्षेत्र अन्देश्वर पार्श्वनाथ अन्देश्वर	श्री भुगर्भ से प्राप्त प्राचीन पार्श्वनाथजी (२) श्री पार्श्वनाथजी
५- श्री अतिशय क्षेत्र वागोल पार्श्वनाथ वागोल वागोल कुशलगढ	श्री पार्श्वनाथ

मंदिर	मूलनायक प्रतिमा	समय वि. स.	लेख	प्रतिष्ठचार्य	प्रतिष्ठा करानेवाले श्रेष्ठका नाम	पंच कल्याक प्रतिष्ठा वि.
१	श्री आदिनाथ	१९४०	सलग्न है	राजेन्द्रभुषण भट्टारक	दशाहुमड पंच कुशलगढ	वि. स. १९४०
२	श्री पार्श्वनाथ	१६२३	सलग्न है	म. सुमतकीर्ति	नागदाज्ञाति	१६२३
३	श्री आचार्य सुधर्म सागरजी के चरन					

४ (१) श्री भुगर्भ से प्राप्त प्रतिमापर अति. युक्त पार्श्वनाथ कोईलेखनही — दशाहूमड़ पंच कुशलगढ

श्री पार्श्वनाथ १९६५ . दशाहूमड़ पंच कुशलगढ — हरेन्द्रभुषण भट्टारक (ग्वालियर) — मंदिर प्रतिष्ठा वि स. १९९२ १९६५

५ श्री पार्श्वनाथ १६१७ — सलग्न है सुमतकीर्ति भट्टारक — दशाहूमड़ पंच कुशलगढ

विविध जिनालयों की मूलनायक प्रतिमाओं पर अंकित लेख का विवरण निम्नानुसार है

१- श्री दि. जैन आदिनाथ बीस पंथी मंदिर कुशलगढ

प्रशस्ति लेख:- '' स्वस्ती श्री विक्रमार्क संवत १९४० माघ सुदी ५ शुक्रवार से मूल संघे बलात्कार गणे सरस्वती गच्छे कुन्द कुन्दाचार्यन्वये दि. भ. श्री सकलकीर्तिजी तत्पटे श्री १०८ श्री राजेन्द्रभूषणजी धर्मोपदेशात हूमड़ ज्ञातिय लघु शाखाया नगरे कुशलगढ मध्ये समस्त श्री पंच प्रतिष्ठा करोमित श्री वृषभनाथ चेत्यालये प्रतिष्ठतम श्री रस्तु (ऊचाई २५.७५ इचँ चौडाई २३.७५ इन्च)

प्रशस्ति लेख:- चौबिष्ठा:- लेख '' संवत १५२३ वर्ष वेशाख सुदी १० बुधे श्री मूल संघ सरस्वती गच्छ बलात्कारगण भ. श्री कुन्द कुन्दाचार्यन्वय भं. श्री रत्नकीर्ति देवा तत्पट्टे भ. प्रभाचन्द्र देवा तत्पट्टे भ. श्री पद्मनन्दी देवा तत्पट्टे भ. श्री सकापकीर्ति तत्पाद भ. श्री विमलेन्द्र कीर्ति गुरूपदेशात हूमड़ ज्ञातिये श्रेष्ठी वक्ता भार्वार्य बाई......

२- श्री दि.जैन पार्श्वनाथ बीस पंथी जुना मंदिर कुशलगढ

प्रशस्ति लेख:- ''श्री संवत १६२३ वर्षे पोष वदी ५ सोये श्री मूल संघ सरस्वती गच्छे बलात्कार गबे कुन्द कुन्दाचार्य भ. श्री सकलकीर्ति तत्पट्टे भु. श्री भुवनकीर्ति तत्पट्टे भु.श्री ज्ञानभूषण तत्पट्टे भु.श्री विजयकीर्ति तत्पट्टे भु.श्री शुभचन्द्र तत्पट्टे भु.श्री सुमतकीर्ति गुरूपदेशात् कोट महादुर्गे नागद्रा ज्ञातीयकाश्यछ गोत्रे स.-ह्रना.भ. कर्मतियो सुत. सा. श्री पार्श्वनाथ नित्यम् प्रनमति-

३- श्री अतिशय क्षेत्र अन्देश्वर पार्श्वनाथ मंदिर अन्देश्वर (कुशलगढ)

प्रशति लेख: '' श्री प्राचीन भुगर्भ से प्राप्त अतिशय युक्त पार्श्वनाथ की प्रतिमा पर कोई लेख नहीं है यह प्रतिमा परमार कालीन संभवता १० वीं या वी शताब्दि की होनी चाहिये

(२) श्री पार्श्वनाथ मंदिर अन्देश्वर (कुशलगढ)

प्रशस्ति लेख'' विक्रम संवत १९६५ वैशाख सुदी ३ श्री मूल संघे बलात्कारगणे सरस्वती गच्छे कुन्द कुन्दा चार्यन्वये भु.श्री १०८ हमेष्ठा हरेन्द्रभूषणजी उपदेशात गादी गावालियर ग्राम कुशलगढ पंच दशाहूमड़ प्रतिष्ठितम

४- श्री अतिशय क्षेत्र वागोल पार्श्वनाथ मंदिर वागोल (कुशलगढ)

प्रशस्ति लेख:- ''संवत १६१७ वर्षेमाघ वदी २ खी श्री मूल बंधे श्री सुमतकीर्ति गुरूपदेशात हु.स.मला स. नारद स. मामए से श्री पार्श्वनाथ

चाँद खेड़ी

यह श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र है। राजस्थान प्रदेश के झालवाड़ जिले के रवानपुर कस्बे से तीन फलांग दूर रूपली नदी के तट पर निर्मित है। इसका निर्माण सन् १७४६ में मुगल सम्राट औरंगजेब के शासन काल में, खींचीवाड़ा मण्डल के चौहानवंशी महाराजा किशोरसिंह कोटा के दीवान शाह किशनदास बघेरवाल सांगेद ने कराय था

अनुश्रुति- इस स्थान के सम्बन्ध में एक अनुश्रुति प्रसिद्ध है कि शाह किशनदास, मवेशी मेले में आयेहुए थे, रात्रि में उन्हे स्वप्न आया कि बारहपाटी जो खानपुर और शेरगढ़ के बीच में है के भूगर्भ में कई अतिशय प्रतिमाएँ दबी पड़ी है। निर्दिष्ट स्थान पर खुदाई कराने पर वहाँ भगवान्, आदिनाथ, भगवान महावीर तथा कई दिगम्बर जैन प्रतिमाएँ प्राप्त हुई। सम्भवतः प्राचीनकाल में अवश्य ही वहाँ विशाल जैन मन्दिर रहा होगा। दूसरे दिन फिर शाहजी को स्वप्न हुआ कि 'भगवान को तुम अकेले उठाओ और सरकण्डे की गाडी में ले जाओ पर पीछे की ओर मुड़ कर मत देखना'। प्रातःकाल सामयिक, पूजा-पाठ के उपरान्त जब शाहजी ने मूर्ति-प्रतिमा उठाई तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि बीसियों मनुष्यों द्वारा उठाये जाने पर भी जो प्रतिमा नहीं उठ सकी थी, वह उनसे और चले परन्तुं जब वे नदी पार कर रहे थे तो उत्सुकतावश उन्होने पीछे देखा कि प्रतिमा है या नहीं? लेकिन पीछे मुड़ते ही वह प्रतिमा वही अचल हो गई और लाख प्रयत्नों के बावजूद भी वह वहाँ से नहीं हिली तब नदी के प्रवाह को मोड़कर वहीं पर मन्दिर निर्माण कराना प्रारम्भ किया।

क्षेत्र दर्शन- इस मन्दिर का अहाता विशाल है। इसमें चारो ओर धर्मशालाएँ बनी हुई हैं। द्वार के बाँयीं ओर क्षेत्र की कार्यालय है। अहाते के प्रागंण के मध्य में जिनालय बना हुआ हैं। मन्दिर के चारो कोनो पर ऊपर छतरियाँ बनी हुई है। मन्दिर के समुन्नत शिखर कलश मण्डित हैं। मन्दिर के द्वार मण्डप में एक स्तम्भ है जिसके चारो दिशाओं में तीर्थकर -मूर्तियाँ बनी हुई हैं।

मध्य में तीन ओर १ फुट ६ इंच ऊँचा और इतना ही चौड़ा शिलालेख है। इसमें मूलसंघ बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ कुन्दकुन्दाचार्यान्वय के भट्टारक नरेन्द्रकीर्ति तत् शिष्य भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति, तत् शिष्य भट्टारक जगत्कीर्ति द्वारा संवत् १७४६ मे माघ शुक्ला ६ सोमवार की चांदखेड़ी में बिम्ब प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख किया गया है।

मन्दिर के अन्तः भाग में पाँच वेदियों में और एक गंधकुटी बनी हुई है। इन वेदियो में कुल १३ तीर्थकर और १ साधु मूर्ति हैं। गर्भगृह में ३ वेदियाँ है। इसके निकट एक सोपान मार्ग बना हुआ है। जो तलप्रकोष्ठ को जाता है। इसमे २ फीट ६ इंच समुन्नत एक शिलाफलक में चतुर्भुजी देवी उत्कीर्ण है। इसके दोनों दाहिने हाथों में क्रमशः माला और अंकुश है तथा हाथो में त्रिशुल व दण्ड हैं।

सामने की दीवाल पर २ फीट ४ इंच ऊँचे फलक में चर्तुभुजी अम्बिका बनी हुई हैं। बाँयीं ओर गर्भगृह मे ८ फीट ४ इंच ऊँचे और ७ फीट ३ इंच चौड़े शिलाफलक में २ फीट ९ इंच ऊँची खड़गासन तीर्थकर प्रतिमा उत्कीर्ण है। यह मूर्ति भगवान महावीर की मानी जाती हैं। इसके अतिरिक्त इस फलक में ५५ तीर्थकर प्रतिमाएँ दोनो ध्यानसनो में बनी हुई हैं।

इस मंदिर के मुख्य गर्भगृह में वेदी पर मूलनायक भगवान ऋषभदेव की हलके लाल पाषाण की पद्मासन प्रतिमा विराजमान हैं। यह प्रतिमा ६ फीट ३ इंच ऊँची और ५ फीट ५ इंच चौड़ी है । भगवान ऋषभदेव की इस प्रतिमा के मुख पर शांति, विराग और करूणा की निर्मल भाव प्रवणता झलकती है । इसका निर्माणकाल संवत् ५१२ मानते हैं। इस प्रतिमा के साथ ही बारहपाटी के भूगर्भ से उपयुक्त भगवान् महावीर की प्रतिमा भी प्रकट हुई थी जिसकी प्रतिष्ठाकाल संवत् ११४६ अंकित हैं। इस बेदी पर एक पाषाण फलमें ३ तीर्थंकर मूतियाँ एक दूसरे के ऊपर बनी हुई हैं। ऊपर शिखर बना हुआ हैं। एक अन्य शिलाफलक में जो ६ फीट ५ इंच ऊँचा ओर ४ फीट चौड़ा है, मध्य में भगवान पार्श्वनाथ पद्मासन मुद्रा में आसीन है। इसके शीर्ष भाग में दो खड़गासन मूर्तियाँ हैं । ऊपर शिखर बना हुआ है।

बलप्रकोष्ठ के सभामण्ड़प में एक स्तम्भ में चारो दिशाओं में ५२-५२ मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। यह बावन जिनालय स्तम्भ कहलाते हैं।

ऐसा बावन-जिनालय-स्तम्भ अन्यत्र कहीं उपलब्ध नहीं होता जिस में २०८ मूर्तियाँ हों। तल प्रकोष्ठ का भाग उतना ही बड़ा है, जितना मंदिर का ऊपरी भाग। इसकी भितियाँ ८ फीट चौड़ी हैं। मन्दिर के प्रवेश-द्वार के सामने एक बरामदे में शेरगढ़ के जैन मन्दिर से लायी हुई ३ तीर्थंकर मूर्तियाँ रखी हुई हैं। मंदिर के अहाते से संल्गन क्षेत्र के बगीचे में दो छतरियाँ बनी हुई है। इनमें से एक छतरी का निर्माण सिरोज पट्ट के भट्टारक भुवनेन्द्रकीर्ति ने सम्वत् १८६० में तथा दूसरी का निर्माण भट्टारक राजेन्द्रकीर्ति ने सम्वत् १८८३ में कराया था। क्षेत्र पर विशाल धर्मशाला बनी हुई हैं। इसमें ७० कमरे हैं। यहाँ कुआँ, हेन्डपम्प, बिजली, और गदे-तकियों की सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्र पर प्रतिवर्ष चैत्र कृष्णा ५ से ९ तक मेला होता है । क्षेत्र पर उल्लेख योग्य मेले संवत् १९७४ और २०१० मे हुए थे, दोनो ही बार- पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ हुई थी ।

झालरा पाटन

झालवाड़रोड रेल्वे स्टेशन से २८ कि.मी. दूर झालरापाटन एक प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र है। यहाँ श्री शान्तीनाथ दिगम्बर जै अतिशयक्षेत्र अवीस्तिथ है । इस विशाल मन्दिरमें मूलनायक भगवान श्री शान्तीनाथ की १२ फूट ऊँची अत्यन सौम्य खडगाशन प्रतिमा है । अनेक भक्तजन इनके समक्ष अपनी व्यथा का निवेदन करते है । और कहा जाता है कि उनकी भक्तिपूर्ण प्रार्थना से मनोकामना पूर्ण हो जाती है ।

मन्दिर के बाहर बने हुए तीन और बरामंदो में १५ वेदियाँ है । प्राचीनकालमें यहाँ भगवान शान्तिनाथ का एक प्रसिद्ध मन्दिर था जिसका निर्माण सन् १०४६ में शाह पाया हूमड़ ने कराया था । और उसकी प्रतिष्ठा भावदेव सूरिने की थी । प्राचीनकाल में इस मन्दिर की बड़ी ख्याति थी ।

वर्तमान मन्दिर का निर्माण इसी मन्दिर के स्थान पर हुआ है ऐसा अनुमान है क्योंकि भगवान् शान्तिनाथ की मूर्ति प्राचीन मन्दिर की ही मूर्ति है और ऐसा माना जाता है कि इसकी प्रतिष्ठा ११०३ में हुई थी।

मन्दिर के द्वार पर दो विशाल श्वेत-वर्ण हाथी बने हुए हैं। इतने विशाल पाषाणगज अन्यत्र कहीं देखने मे नहीं आते हैं। यहाँ हस्तलिखित ग्रंथों का एक विशाल शास्त्रभण्डार है। इसमें अनेक अप्रकाशित व अनुपलब्ध शास्त्र विद्यमान है । यहाँ एक प्राचीन जल घड़ी है, उसी के अनुसार यहाँ घण्टे बजाये जाते है। प्राचीनकाल की रीति के अनुसार यहाँ चारो प्रहर में नौबत बजती है।

नसियाँजी

झालावाड़ और झालरापाटन के मध्य सड़क के किनारे नसियाँजी है। इसमें बायीं ओर की वेदी में हल के लालवर्ण की पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा विराजमान है। इसका आकार २ फीट ४ इंच है, इसके पर सप्त फणावलि सुशोभित है, परिकर में छत्र, गज, मालाधारी देव और चमरेन्द्र हैं। मूर्ति के दोनों पार्श्वों मे पद्मासन तथा छत्र के ऊपर ८ खड्गासन प्रतिमाएँ बनी हुइ है। पद्मासन प्रतिमाओं के नीचे धरणेन्द्र और पद्मावती है। मूर्तिका प्रतिष्ठाकाल संवत् १२२६ ज्येष्ट सुदी १० बुघवार है। दायीं वेदी तीन दर की है इसमें भगवान् पार्श्वनाथ की १ फूट ९ इंच अवगाहन की श्वेत वर्ण की पद्मासन प्रतिमा है जो संवत् १५४५ मे प्रतिष्ठित है । उनमें से एक आचार्य श्री भावदेव के शिष्य श्रीमन्तदेव की, दूसरी पर आचार्य देवेन्द्रकी व तीसरी पर कुमुदचन्द्रचार्य की आम्नाय के भट्टारक कुमारदेव की निर्वाण तिथियाँ का उल्लेख है। सात-सालकी पहाड़ी के स्तम्भ का १००९ है का शिलालेख नेमिदेवाचार्य बालदेवाचार्य की उल्लेख करता है। इसी स्तम्भ पर १२४२ ई. के शिलालेख मे मूलसंघ और देवसंघ का उल्लेख मिलता है।

भगवान शांतिनाथ के मन्दिर की कुछ प्राचीन प्रतिमाओं के मूर्ति-लेख इस प्रकार हैं-

१.- संवत् १९४० वर्षे माघ वदि १२ गुरौ भट्टारक श्री सकलकीर्ति हूमड़ दोशी मेघा श्रेष्ठी।
२.- संवत् १४९२ वर्षे वैशाख वदी १ सोमे श्री मूलसंघे भट्टारक श्री पद्मनन्दिदेवास्तत्पट्टे भट्टारक श्री सकलकीर्ति हूमड़ ज्ञातीय।
३.- संवत् १५०४ वर्षे फागुन सुदी ११ श्री मूलसंघे भट्टारक श्री सकलकीर्ति देवास्तत्पट्टे भट्टारक श्री भुवनकीर्ति देवा हूमड़ ज्ञातीय श्रेष्ठि खेता लाखू तयोः पुत्राः।
४.- संवत् १५२५ पौष वदी १३ बुधे श्री मूलसंघे भट्टारक श्री सकल कीर्ति भट्टारक श्री भुवनकीर्ति श्री ज्ञानभूषन गुरूपदेशात् हूमड़ श्रेष्ठि पद्मा भार्या भाऊ सुत आसा भा. कडू सुत कान्हा भार्या कुंदेरी भातृ धना भार्या बइहनूँ एते चतुर्विंशतिकां नित्यं प्रणमति
५.- पार्श्वनाथ प्रतिमा- संवत् १६२० वैशाख सुदी १ बुधे श्री मूलसंघे बलात्कार गणे सरस्वती गच्छ सुन्दकुन्दाचार्यन्वये भट्टारक श्री पद्मनन्दि देवास्त्रत्पट्टे सकलकीर्ति देवास्तपट्टे श्री ज्ञानभूषण देवास्तत्पट्टे श्री विजयकीर्ति देवास्तत्पट्टे सुमतिकीर्ति गुरूपद्सात् (इसके पश्चात् प्रतिष्ठाकारक के परिवार के नाम दिये गए है) नित्यं प्रणमंति।

उपर्युक्त सभी भट्टारक बलात्कारगण ईडर शाखाके थे। कहा जाता है कि प्राचीनकाल में यहाँ १०८ मंदिर थे जिनकी घण्टियाँ इस नगर में गुंजायमान रहती थीं संभवतः इसी कारण इसका नाम 'झालरापाटन' पड़ गया 'घण्टियो की झालरों ' का नगर चन्द्रभागा नदी के किनारे बसा यह ऐतिहासिक नगर जैन धर्म, शैवधर्म और वैष्णवधर्म का सुप्रसिद्ध केन्द्र था व सभी धर्मों की तीर्थ स्थली रहा है। श्री शांतिनाथ भगवान् का मन्दिर प्राचीमेतम मन्दिरों में से एक था।

सरस्वती भवन

वर्तमान में नगर मे कई सार्वजनिक संस्थाएँ है जैसे- शांतिनाथ जैन प्राथमिक विद्यालय, श्री शांतिनाथ जैन औषधालय, श्रृंगार बाई जैन प्रसूति गृह आदि इनमें सार्वाधिक उल्लेखनीय है श्री ऐलक पन्नालाल दिगम्बर जैन सरस्वती भवन। इसकी स्थापना सम्वत् १९७२ में हुई। यहाँ बम्बई शाखा के शास्त्र लाये गए है। इसकी बम्बई और ब्यावर मे भी शाखाएँ स्थापित की गई हैं। तीनों स्थानों पर हस्तलिखित और मुद्रित शास्त्रों की कुल संख्या १५,००० है।

श्री केशरिया जी दि. जैन अतिशय क्षेत्र ऋषभदेव

श्री केशरियाजी दिगम्बर जैन तीर्थ ऋषभदेव धुलेव नगर मे स्थित प्रथम तीर्थन्कर भगवान ऋषभदेव को कई नामो से जाना जाता है :-

१. भगवान ऋषभदेव की मूर्ति श्याम पाषाण की होने से यहाँ का भील समाज इसे काला जी के नाम से पुकारता है ।
२. भगवान पर प्रतिदिन ढेर सारी केसर चढ़ने के कारण इसे केशरिया नाथ भी कहा जाता है।
३. ऋषभदेव की मूर्ति धुलिया नाम के भील को पगल्याजी स्थान पर स्वप्न में प्राप्त निर्देशानुसार मिली अतः धुलिया के नाम पर ही इस गाँव के नाम धुलेव हुआ और लोग इन्हे श्रद्धा से धुलेवा धणी भी कहते हैं ।

यह स्थान उदयपुर, अहमदाबाद, बम्बई राष्ट्रीय राजमार्ग न. ८ पर उदयपुर से करीब ६५ कि.मी. दूर स्थित हैं सभी आधुनिक सुविधाओं से युक्त यात्रियों को ठहरने के लिए धर्मशालाएं एवं होटल हैं । घुलेव के पश्चिम में तीन तरफ कोयल (कुवारिका) नदी बहती है ।

केशरियाजी मंदिर

प्राप्त प्रामाणिक जानकारी के अनुसार यह मंदिर विक्रम की दूसरी शताब्दी में कच्ची ईटो. से बना था । आठवी शताब्दी में इसे पारेवा पत्थर का बनाया गया और विक्रम संवत १४३१ में पुस्ता पत्थर से निर्मित कर जिर्णोद्धार कराया गया। यह जिर्णोद्धार काष्ठासंघी भट्टारक श्री धर्मकीर्ति के उपदेश से शाह हरदास :र उसके पुत्र पुजा तथा कोता द्वारा करवाय गया । नौ चोकी तथा सभा मंडप का निर्माण विक्रम संवत १५७२ में काष्ठासंघी बाच जाति के काश्यप गौत्री कड़िया कीहिया, उसकी धर्मपत्नी भरमी एवं एवं पुत्र हित द्वारा करवाया गया । जिन मंदिर के चारों ओर बावन जिनालय हैं वे विक्रम सं. १६११ से बनने प्रारंभ होकर विक्रम संवत १८८३ तक बने । इन जिनालयों में पश्चिम में सहस्त्र- कूट चैतालय के पास शानितनाथ एवं बासुपुज्य की प्रतिमा एवं दक्षिण में आदिनाथ प्रतिमा पर अंकित लेख और दक्षिण में द्वारा के समीप दीवार पर के शिलालेख से सिद्ध होता है कि दिगम्बर जैन भट्टारको ने इस विशाल मंदिर का निर्माण करवाया है और वे ही इसके वास्तविक संरक्षक रहें थे। उतर जिनालय के मध्य में जो मंदिर है वहां मूलसंघी भट्टारको की गादी बनी हुई है। ऐसा ज्ञात होता है कि मंदिर का उत्तरी भाग मूलसंघी तथा दक्षिणी भाग काष्टासंघी भट्टारको के अधिकार में था। सभामंडप के दक्षिण भाग में जो आसन है वहां मूलसंघी भट्टारकों की गादी बनी हुई है। ऐसा ज्ञात होता है कि मंदिर का उत्तरी भाग मूलसंघी तथा दक्षिणी भाग काष्टासंघी भट्टारको के अधिकार में था। सभा मंडप के दक्षिण भाग में जो आसन है वह माथुर संघी दिगम्बर जैन भट्टारको के शास्त्र पढ़ने की गद्दी के रुप में था जिसे विक्रम सं. १९६९ में तत्कालीन मंदिर हाकिम श्री तखत सिहं ने मरम्मत के बहाने एक ही रात में परिवर्तन कर 'श्रीमदभागवत' लिखवा दिया । मंदिर और समस्त जिनालयो के बाहर दक्षिण की ओर पार्श्वनाथ मंदिर है जिसकी प्रतिष्ठा विकम.सं. १८०१ में हुई। मंदिर के चारों ओर जो परकोटा बना हुआ है वह दिगम्बर जैन मूलसंघी कमलेश्वर गौत्रीय गांधी श्री विजयचन्द निवासी सागवाड़ा ने विक्रम संवत १८६३ में बनवाया।

प्रारम्भ में धुलेव गाँव खड़क प्रान्त के जवास पट्टे में था। जवास राव ने इस गाँव को ऋषभदेव मंदिर को भेट कर दिया तब से व्यवस्था दिगम्बर काष्ठासंघी भट्टारको द्वारा होने लगी। तदुपरान्त बहुत समय बाद यह अवसर औदित्य बाह्मणों को मिला विकम. सं. १९३४ से मंदिर की देखभाल मेवाड़ महाराणा द्वारा होने लगी। इस समय तीर्थ का संरक्षण राजस्थान सरकार के देवस्थान विभाग द्वारा एक ट्रस्टी के रूप में हो रहा है । यह ट्रस्ट जैन समाज के प्रति पूर्ण रूप से उत्तरदायी है । निर्धारित समयनुसार सेवा पूजा का कार्य होता है । दिन में दो बार सेवा होती है । मंदिर की वर्तमान व्यवस्था को देखते हुए दिगम्बर समाज ने पब्लिक ट्रस्ट एक्ट के अन्तर्गत उच्च न्यायालय जोधपुर में चार जुलाई १९६६ से रिट दायर कर रखी है।

ऋषभदेव की मूर्ति चतुर्थकाल की है। प्रतिमा के प्राचीन होने के सम्बन्ध में सब एक मत है परन्तु इस क्षेत्र पर इसके प्रकट होने के सम्बन्ध में मत भेद है। कहा जाता है कि लंका से श्रीराम प्रतिमा को अयोध्या लाये वहां से उज्जैन और तत्पश्चात् बड़ोदा (डूंगरपुरं) लायी गयी। अनन्तर दैव योग से धुलेव के नजदीक पगल्याजी की जमीन में बिराजमान रही और फिर प्रकट हुई। प्राप्त प्रमाणो से इस मान्यता में सत्यता लगती है कि धुलिया भील ने अपनी गाय के दूध झरने का दृश्य देखा और उसके स्वप्नानुसार यह मूर्ति भुगर्भ से प्रगट हुई। एक गुजराती लावणी के अनुसार यह मूर्ति खुणादारी से लाने के संकेत भी मिलते है । खुणादरी मे म्लेच्छाक्राताओं ने मूर्ति के नौ टूकडे कर दिये थे। स्वप्नानुसार पुजारी द्वारा इन टुकडो को सवामण लापसी में नौ दिन तक रखने से ये टुकडे जुड गये और मूर्ति पूर्ववत हो गयी। वहाँ मूर्ति को सुरक्षित न समझकर इसे ऋषभदेव लाया गया हो सकता है बड़ोदा और खुणादरी से भी ऋषभदेव की प्रतिमा लायी गयी हो परन्तु वह मूल नायक न होकर मंदिर के बावन जिनालयो में स्थित ऋषभदेव की कोई अन्य प्रतिमा हो सकती है। बावन जिनालयो की मूर्तियाँ विक्रम .स.१६११ से १८८३ तथा पाशर्वनाथ मंदिर की मूर्ति १८०१ की है।

निज मंदिर पर विक्रम .स. १५७२,१६८६,१७९३,१८६३ में दिगम्बर जैन भट्टारकों के संरक्षण में दिगम्बर जैनो द्वारा ध्वजारोहण करवाने के प्रमाण उपलब्ध है। विक्रम स. १६८६ में बाज जाति के काष्ठासंघी कोड़िया भीमा के पुत्र जसंवत दारा ध्वजारोहण और १७९३ में संघवी मनोहरदास द्वारा कलश एवं ध्वजारोहण किये जाने के लेख मौजूद है । परन्तु विक्रम स. १९८४ में श्वेताम्बर संप्रदाय के सेठ पुनमचन्द करमचन्द कोटा निवासी पाटण (गुजरात) द्वारा रुपया ५०००/ नगद भेट कर श्वेताम्बर कर्मचारियों की मिली भगत भगत से ध्वजादण्ड चढाने का प्रयास किया गया । दिगम्बर जैन समाज के तीव्र विरोध पर तत्कालीन हाकिम लक्ष्मणसिंह ने मन्दिर के द्वार बंध करवाकर सिपाहियों द्वारा लाठी प्रहार करवाया गया । जिससे निरपराध दिगम्बर समाजके पांच व्यक्ति मारे गये एवं ४४ घायल हुए । अनिष्ट समयमें चढाया गया ध्वाजादंड थोडे ही समय बाद गिर गया । ध्वजादंड के विषयमें दोनो संप्रदायों में मुकदमें बाजी हुई । कमीशन बैठाया गया । जिसके निर्णय के मुख्य. बिन्दु निम्न है :-

१ प्रारम्भ से ही श्री ऋषभदेव जी का मंदिर दिगम्बरी जैन मंदिर है । प्राचीन काल से ही यह हिन्दू जिसमें भील शामिल है । तथा दूसरे जैनो द्वारा पूजा जाता है ।

२. कोई भी दल जिर्णोद्धार , प्रतिष्ठा या ध्वाजारोहण करना चाहे तो देव स्थान महकमें से आज्ञा प्राप्त करनी होगी ।

मंदिर की प्रतिमा चमत्कारी है। इसलिए सभी लोग श्रद्धा से इसका पूजन करते है। कई लोगों के [illegible] से कठिन कार्य हेतु ली गई मनोतियो के पूर्ण होने के उदाहरण उपलब्ध है। वि. स. १८६३ में सदाशिवराव डूंगरपुर, गलियाकोट एवं अन्य गाँवो को लूटता हुआ ऋषभदेव पहुंचा और अभिमानपूर्वक मंदिर में घूसा और नीचे की वेदि पर रुपया फेंकते हुए बोला'' हे जैनोंके देव ! यदि तू सच्चा है तो मेरा फैंका हुवा रुपया स्वीकार कर ले। '' कहते है कि वह फेका हुआ रुपया वापस आया और उसके सिर पर इस प्रकार लगा की सिर से खून टपकने लगा। फिर भी वह इस चमत्कार को समझ नही सका। और उसने अपनी सेना को मंदिर लूटने की आज्ञा दे दी। तब मंदिर में से भवरो की फौज उस पर और उसकी सेना पर टूट पड़ी। वह बड़ा द्:खी हुआ और बहुत- सा उसका माल छोड़ कर भाग खड़ा हुआ।

पगलिया जी :

यह ऋषभदेव मंदिर के दक्षिण पूर्व में तीन फलांग दूरी पर है। यहाँ ऋषभदेव की चरण पादूकाएँ है। पादूकाएँ उसी स्थान पर है जहाँ धूलिया भील के स्वप्नानुसार प्रतिमा जमीन से निकली थी। पहले यहां चबुतरा था। अब नयी छतरी बनाकर नये पगलिया जी विराजमान किये है। इस के उत्तरमें महुए के वृक्ष के नीचे विश्राम स्थल है जहाँ प्रतिमा के प्रगट होने कि बात कही जाती है। पगलिया जी के दक्षिण में सभा मंडप है। चैत्र कृष्णा अष्टमी एवं अन्य अवसरो पर निकाली गयी भगवान की सवारी यहां आती है और भगवान की पूजा होती है।

चन्द्रगिरी :

क्षेत्र के समीपवर्ती सूरज कुण्ड के पास पहाडी टिले पर भट्टारक चन्द्रकिर्ति का स्मारक है। छतरी पर १७३७ का शिलालेख है।

भट्टारक यशकिर्ति भवन :

यशकीर्ति भवन में स्फटीक और नीलम की प्रतिमाओ से युक्त चैत्यालय और शास्त्र भंडार है। गुरुकुल १५ वर्ष पूर्व एक जैन गुरुकुल भी बनाय गया है जिसमें दो मंजिला विशाल जैन मंदिर है।

श्री नागफणी पार्श्वनाथ दि. जैन अतिशय क्षेत्र , मोदर

मार्ग एवं स्थिती :

यह स्थान बिछीवाडा (राष्ट्रीय राजमार्ग नं. ८ पर) से १० कि.मी. दूर एवं ऋषभदेव से ४० कि.मी. दूर बसा हुआ है । पक्की सड़क बनी हुई है। नियमित बस सेवा है परन्तु अन्तिम चार कि. मी. की उतराई तेज मुडाव होने से बसें पहाड़ी तक ही जाती है । मिनी बसे, जीप, और कार मंदिर तक जाती है । मोदर गाँवसे पहले ही मैश्वो नदी के किनारे बाई और एक फर्लांग जाने पर पहाड़ के ढ़लान पर मंदिर दिखाई देने लगता है । मंदिर के नीचे से ही जहा सीढ़ियां प्रारम्भ होती है वहाँ जलकुण्ड है । पहाड के कई स्त्रोतों से जल निरन्तर प्रवाहित होता रहता है और एक गौ मुखी से कुण्ड में गिरता रहता है । इसी कुण्ड का पानी पीने एवं अभिषेक के काम आता है । प्राचीन काल में क्षेत्र के निकट बस्ती थी लेकिन वर्तमान में यहां से एक कि. मी. दूर मोदर गाँव है जहाँ आदिवासी एवं कलाल परिवार रहेते है । कुण्डो का पानी कभी खत्म नही होता । जैसे - जैसे यात्री बढते है जल स्त्रोतमें जलका प्रवाह बढ़ता जाता है।

क्षेत्र दर्शन :

पहाड के ढ़लान पर मंदिर बना हुआ है । मंदिर में गर्भगृह और उसके आगे खेला मंडप है। मूलनायक प्रतिमा पार्श्वनाथ की है , किन्तु यह पार्श्वनाथकी स्वतंत्र प्रतिमा नहीं है । पार्श्वनाथ के सेवक धरणेन्द्र के शीश पर पार्श्वनाथ कि लघु प्रतिमा विराजमान है । यह काफी घिस गयी है जिससे प्रतीत होता है कि प्रतिमा काफी प्राचीन है । मूर्ति के सिर पर सप्त फण है इसमें तीन फण खंडित है। यही प्रतिमा नागफणी पार्श्वनाथ के नामसे प्रसिद्ध है । धरणेन्द्र ललितासन में विराजे हुए है। उनके दाँये हाथ में पुष्प है तथा बांयां हाथ जंघा पर रखा है । उनके दाँयें हाथ में भुजबन्द है तथा गले में रत्न हार है । धोती की चून्नटो का अंकन बडा भव्य है । बाँये हाथ के नीचे उत्तरीय लटका हुआ है प्रतिमा का वर्ण श्याम है । अवगाहना दो फुट दो इंच है । इस प्रतिमा के सम्बन्ध में जन साधरण में भिन्न- भिन्न मान्यता है । कोइ इसे '' पदमावती'' कहते है तो कोई इसे पद्मावती पार्श्वनाथ कहते है । जिनकी जिस रूप में श्रद्धा हैं, वे उसे उसी रूप में पूजते है । प्रतिमा के चरण चोकी पर कोई लेख नही है ।

मूलनायक के दाँयी ओर एक फूट चारइंच ऊँचीं मल्लिनाथ की और बाँई ओर एक फूट तीन इंच ऊँची पार्श्वनाथ की कृष्ण वर्ण की पदमासन स्थित पाषाण मूर्तियां है । मल्लिनाथ प्रतिमा के पादपीठ पर इस प्रकार लेख अंकित है '' श्री मूल संघ १६३७ वर्ष वेशाख वदी ८ बुधे भट्टारक श्री गुणमूर्ति गुरुपदेशात् '' । वेदी पर धातु के पार्श्वनाथ और एक चौबीसी है । गर्भगृह के द्वार पर पार्श्वनाथ की मूर्ति है । मूर्तिलेख के अनुसार इसकी प्रतिष्ठा वि. सं. २००८ ज्येष्ठ कृष्णा पंचमी लिखा है।

खेलामंडप के तीन और छडदार किवाड लगे हुए है । मंदिर के दोनो पार्श्व में धर्मशाला बनी हुई है । यात्रियो के लिए बिस्तर, बर्तन की सुविधा है । विद्युत एवं टेलीफोन सुविधा भी है । यहाँ का दृश्य बिल्कुल तपोवन जैसा लगता है । मंदिर एवं धर्मशाला मिलकर अंग्रेजी के अक्षर ' ई ' आकार में है । इनके पीछे एवं बाजू में ऊँचें पर्वत है और हरे भरे वृक्षो की कतारे है । जैन एवं जैनेतर जनता बड़ी संख्या में पूजा अर्चना करती है । कई लोगो की मनोकामनाएँ पूर्ण होती है । कहते है कि

पर्वतमाला में सिंह दम्पत्ति रहते है । किन्तु आज तक कभी भी सिंह ने किसी पशु का शिकार नहीं किया । यहाँ के आदिवासियों का दृढ विश्वास है कि नागफणी बाबा की छत्र छाया में कभी भी उनकी कोई हानी नहीं हो सकती राजस्थान सरकारने मंदिर के चारों ओर दस बीघा जमीन मंदिर को भेंट कर दी है।

इतिहास :

एक किंवदन्ती के अनुसार पहले यह प्रतिमा पर्वतके शिखरपर झुरमुटमें पडी हुई थी। किसी कारणवश उधर से गुजरने वाली एक महिला की दृष्टी अकस्मात् प्रतिमा पर पड़ी वह भगवान के दर्शन कर अति प्रसन्न हुई । उसने एक मनोती ली और उसकी मनोकामना पूर्ण होनेसे प्रतिज्ञानुसार वहाँ प्रतिदिन आकर भगवान की पूजा अर्चना करने लगी । उसने अन्य लोगो से भी चर्चा की । फलस्वरुप भक्त जनो की संख्या बढ़ने लगी । एक दिन महिला ने प्रभुसे प्रार्थना की '' बाबा ! मैं बुढी औरत ठहरी ,मुझमें इतना ऊँचा चढकर आनेकी शक्ति नहि है। आप नीचे आ जाओ वरना मै कल से नहीं आऊँगी ।'' भक्त के निश्छल हृदय की पुकार थी । फलतः रात्रीमें स्वप्न में भगवान ने बुढिया को उपाय बताया '' तु सरकंडे की गाडी बनाकर और कच्चे सूतकी गुडी बनाना । तु मुझे गाडी पर रखकर ले आना , लेकिन पीछे मुड कर मत देखना ।'' प्रातः स्वप्न की बात स्मरण कर उसके मन में प्रसन्नता हुई । निर्देशानुसार गाड़ी एवं गुंड़ी बना ली। उसने अपने घर भगवानकी अगवानी के लिये तैयारी की । अपनी झोपड़ी को गोबर से लीपा एवं सजाया- सँवारा तथा गाडी लेकर भगवानके पास पहुँची। हाथ जोड साष्टागं नमस्कार किया और आदेश के स्वर मे बोली, ''अब चलो भगवान ।'' यह कह कर उसने प्रतिमा को उठाया और गाड़ी मे रखा गाडी पर्वतों से उतर कर एक झरने के निकट आयी । अब तक वृद्धा हर्ष और भक्ति से बेसुध चली आ रही थी। पर्वत की ढलान पर झरने के पास आने पर उसके मन में संदेह जगा कि गाड़ी इतनी हल्की कैसे रही है ? भगवान तो बहुत भारी है । किन्तु गाडी तो भारी नहीं लगती । कहीं भगवान रास्ते में तो नहीं गिर गये। उसने मुड़ कर देखा । उसे प्रसन्नता हुई कि भगवान तो गाड़ी पर है । फिर उसी उमंग में उसने गाड़ी खींची परन्तु वह टस से मस नहीं हुई । बुढ़ियां भक्ति के जिस सम्बल के सहारें भगवान को यहाँ तक लाने में सफल हुई थी , सन्देह होते ही भक्ति का सम्बल उसके हाथ से छूट गया। आदिवासी गाजे-बाजे के साथ भगवान की अगवानी के लिए वहाँ आये। सभी ने मिलकर भगवान को ले जाने के अनेक उपाय किये , किन्तु सभी व्यर्थ सिद्ध हुए । वृद्धा अपनी भूल पर बहुत रोयी किन्तु उसने यह अनुभव कर संतोष धारण किया कि भक्ति के प्रवाह में यदि थोड़ा सा भी सन्देह का अंश पैदा हो जाता है तो वह भक्ति फलदायक नहीं होती । भगवान नागफणी पार्श्वनाथ तभी से उसी स्थान पर विराजमान है। किंवदंती में सत्यता लगती है। एक पर्वत पर समतल जमीन है। जहाँ आज भी ईंटों के ढ़ेर मिलते हैं संभव है उस स्थान पर पूर्व में बस्ती रही हो। बस्ती एवं मंदिर के ध्वस्त होने के लम्बे अंतराल के बाद यह प्रतिमा झुरमुट में पायी गयी हो।

वार्षिक मेला :

यहाँ प्रत्येद, पूर्णिमा को भक्तजनों का मेला भरता है आषाढी पूर्णिमा को विशेष मेला होता है। इस दिन कई हजार जैन और जैनेतर लोग यहाँ एकत्रित होते है।

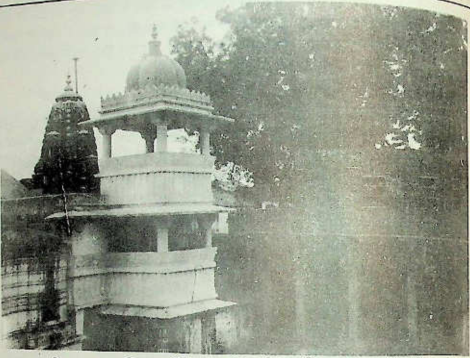

श्री १००८ शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, भीलूड़ा (राजसथान)

श्री १००८ आदिनाथ दिगम्बर जैन बावन डेरी मंदिर कलिंजरा (राजस्थान)

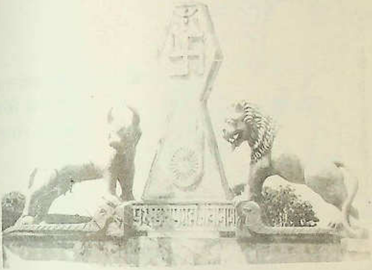

श्री दिगम्बर जैन भवन मुख्य प्रवेश द्वार कलिंजरा (राजस्थान)

दिगम्बर जैन मंदिर बड़ोदिया (राजस्थान)

श्री १००८ श्री पार्श्वनाथ भगवान , अति प्राचीन भव्य दिगम्बर जैन मंदिर कलिंजरा (राजस्थान)

दिगम्बर जैन मंदिर बड़ोदिया (राजस्थान)

श्री दिगम्बर जैन दशा हूमड़ मंदिर
कोलियारी (राजस्थान)

श्री १००८ श्री शांतिनाथ भगवान (मूल नायक)
भीलूड़ा (राजस्थान)

चितौड़ : जैन मंदिर ओर कीर्ति स्तम्भ

श्री दिगम्बर जैन बीस पंथी मंदिर, कुशलगढ़ (राजस्थान)

अन्देश्वर मंदिरों का सम्पूर्ण चित्र

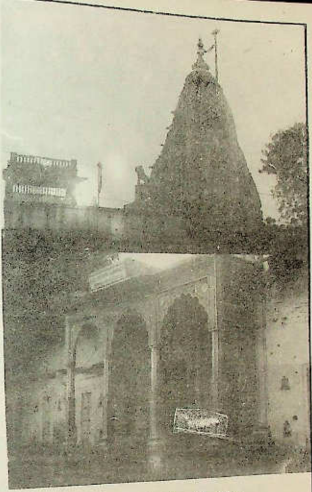

श्री दिगम्बर जैन बीस पंथी मंदिर
कुशलगढ़ (राजस्थान)

नागफणी पार्श्वनाथ : मौदर गाँव के निकट पहाड़ पर बने मंदिर में धरणेन्द्र मूर्ति।

श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर, बडोदिया

राजस्थान प्रदेश में स्थित श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर सुदर तथा चित्रात्मकता से चित्रित बड़ा ही दर्शनीय मंदिर है। इस मंदिर में स्थित मूलनायक भगवान श्री १००८ श्री आदिनाथजी की प्रतिमा काले पाषाण की सुंदर प्रतिमा है। यह प्रतिमा पद्मासन में स्थित शांत, मन को मुग्ध करनेवाली है। इस प्रतिमा को इन्दौर के आचार्य श्री अभिनन्दन कुमारजी शास्त्री ने प्रतिष्ठित किया था।

इसी मंदिर में भगवान श्री भरत, श्री बाहुबली व आदिनाथ की त्रिमूर्ति की भी प्रतिष्ठा की गयी है। ये प्रतिमाएँ एक साथ संलग्न अत्यंत सुंदर दिखायी देती हैं। इनकी प्रतिष्ठा सं. २०४२ वैशाख में की गयी थी।

इस गाँव में हूमड़ खेड़ब्रह्मा से ५०० वर्ष पूर्व आये थे ऐसा अनुमान है। वर्तमान में १२ परिवारों के कुल लगभग ५३१ सभ्य यहाँ बसे हुए हैं। गाँव में श्री आदिनाथ दि. जैन विद्यालय भी स्थित है।

समस्त दि. जैन समाज
बडोदिया, त. बागीदोरा
पिन-३२७६०४ जि. बांसवाडा (राज.)

श्री १००८ श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर, गढ़ी

बाँसवाड़ा जिले के गढ़ी गाँव में वर्तमान में ५२ परिवारों के ३५० सभ्य निवास कर रहे हैं। यहाँ पर हूमड़ो का आगमन ३०० वर्ष पूर्व ईडर, सागवाड़ा और ओबरी से हुआ था। इन्होंने यहाँ पर श्री १००८ श्री आदिनाथ भगवान नया मंदिर जी और जूना मंदिरजी की स्थापना की है। दोनों मंदिरों में भगवान आदिनाथ की काले पाषाण की प्रतिमाएँ बिराजमान है। नये मंदिर की प्रतिमा करीब १२५ वर्ष पुरानी मानी जाती है।

गढ़ी गाँव में समाज की एक पाठशाला भी कार्यरत है, जो श्री आदिनाथ दि. जैन पाठशाला के नाम से प्रचलित है। समाज का एक युवा मंडल (पारस युवा मंडल) भी है, जो कई प्रकार के सांस्कृतिक,

सामाजिक कार्यक्रमों का सफलता पूर्वक आयोजन करता है।

समस्त दि. जैन समाज
गाँव-गढ़ी
जि. बाँसवाड़ा (राज.)
पिन- ३२७०२२

श्री १००८ शान्तिनाथ दिगम्बर हूमड़ समाज का मन्दिर, खमेरा

भगवान शान्तिनाथ का मन्दिर १५० वर्ष प्राचीन है। वेदी पर मूलनायक के दोनों तरफ क्रमशः भगवान शीतलनाथ की १७२३ एवं भगवान आदिनाथ की १६४८ की प्रतिष्ठित सफेद पाषाण की प्रतिमायें है। मन्दिर की व्यवस्था हूमड़ ट्रस्ट के द्वारा होती है। जैन पाठशाला एवं त्यागी भवन अलग से निर्मित है।

खमेरा दक्षिण राजस्थान के बांसवाड़ा जिला के स्टेट हाइवे रोड़ नम्बर ४ पर स्थित है।

श्री भगवान शान्तिनाथ दिगम्बर जैन हूमड़
समाज मन्दिर, खमेरा-३२७ ०२७ जि. बांसवाड़ा (राज.)

श्री १००८ श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर, नरवाली

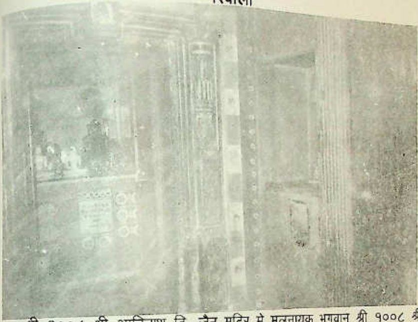

श्री १००८ श्री आदिनाथ दि. जैन मदिर मे मूलनायक भगवान श्री १००८ श्री आदिनाथजी की मूर्ति बिराजमान है। यह मूर्ति संवत् १९ वीं सदी की है,ऐसा अनुमान है। मूर्ति काले रंग के पाषाण की है, जो चमक के कारण अति मोहक लगती है। यहाँ पर हूमड़ घाटोल तथा पारसोली से आकार बसे है। अनुमान है कि इनका आगमन करीबन २०० वर्ष पूर्व का रहा है। वर्तमान में ६० परिवार है।

अन्य संस्थाएँ व मंडल
(१). श्री वीर नवयुवक मंडल
(२) . श्री कुन्थुसागर दि. जैन पाठशाला
(३). मयूर जैन युवा मंडल

समस्त दि. जैन समाज
नरवाली
जि. बांसवाड़ा (राज.)
पीन.-३२७०२७

श्री १००८ श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर, जेठाणा

डूंगरपुर के सागवाडा के नज़दीक जेठाणा नामक गाँव में श्री पार्श्वनाथ दि.जैन मंदिर स्थित है। मंदिर में मूलनायक प्रभु श्री १००८ श्री पार्श्वनाथजी की मूर्ति बिराजमान है। इसकी प्रतिष्ठा जेठ सुदी १० शुक्रवार सं. १८१६ में हुई थी। यह मंदिर सुंदर व भव्य है।

गाँव में कुल आठ परिवारों के पचास सभ्य बसे हुए हैं।

समस्त दि. जैन समाज

जेठाणा त. सागवाडा जि. डूंगरपुर (राज.) पिन नं.३१४०३३

श्री १००८ श्री चंद्रप्रभु दि.जैन मंदिर, नातेपुते

महाराष्ट्र प्रान्त के माळशिरस तहसील के नातेपुते गाँव में श्री १००८ चंद्रप्रभु दि.जैन मंदिर स्थित है। मंदिर में मूलनायक प्रभु श्री १००८ चंद्रप्रभुजी बिराजमान है। पद्मासन में स्थित सफेद संगमरमर के पाषाण की यह प्रतिमा सुंदर एवं शांतमुद्रा में बडी भावमयी दृष्टि गोचर होती है। मूलनायक की प्रतिमा के दोनों ओर तथा वेदी में अन्य प्रतिमाएँ बिराजमान है। मूलनायक प्रतिमा का समय प्राचीन है। यह प्रतिमा लगभग १८७ वर्ष पूर्व की है। प्रतिमा का चिह्न चंद्र का है।

गाँव का यह मंदिर ट्रस्ट के अधिकार में है। मंदिर भी प्राचीन समय का रहा है। गाँव में समाज की पाठशाला भी है।

समस्त दि.जैन समाज
नातेपुते
त. माळशिरस . जि. सोलापुर(महा.) पिन. ४१३१०९

श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर, झाबुआ

झाबुआ का यह मंदिर दि.जैन मंदिर प्राचीन समय का है। मंदिर के प्रवेशद्वार की छत पर सुंदर झरोखा है जिसमें मंदिर और अधिक सुंदर दिखायी देता है। मंदिर में मूलनायक भगवान शांतिनाथ की सफेद संगमरमर की प्रतिमा शोभायमान है। मूलनायक प्रतिमा के दोनों ओर तथा वेदी में अन्य प्रतिमाएँ बिराजमान है । प्रतिमा का लेख इस प्रकार है:-

''संवत १८६९ फालगन सुदी छठ सोमवार कुन्दकुन्दाचार्य आमनाय देवचन्दजी तस्य प्रतिष्ठे।''-मंदिर के समामण्डप में भगवान श्री आदिनाथ भगवान बाहुबली तथा भगवान भरतस्वामी की त्रिमूर्तियाँ स्थित है। इन मूर्तियों की वेदी प्रतिष्ठा दि. १०-१२-९१ को प्रतिष्ठाचार्य श्री प्रदीपकुमार एच.शाह, कसुंबा(हाल बम्बई स्थित) के कर कमलों से करवाई गयी थी। वहाँ पर ही नसियाजी में श्री चन्द्रप्रभु स्वामी की प्रतिमा बिराजमान है। इस प्रतिमा की प्रतिष्ठा संवत १५९० कार्तिक वद में हुई थी। गाँव में समाज की एक पाठशाला है तथा समाज का एक युवक मंडल तथा महिला मंडल भी कार्यरत है। यहाँ पर हूमड़ आसापास के गाँव जैसे प्रतापगढ़, कुशलगढ़. बागीदौरा, डडूका, रानापुर आदि से आकर बसे हैं। वर्तमान में यहाँ पर २४ परिवारों की कुल जनसंख्या २२६ की है।

पता:
समस्त दि.जैन समाज.
झाबुआ तहसील. झाबुआ.पि.४५७६६१.

श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, आंजना

बांसवाड़ा के आजना गाँव में श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर स्थित है। मंदिर में भगवान शांतिनाथ की प्रतिमा बिराजमान है। सफेद संगमरमर के पाषाण की यह प्रतिमा पद्मासन में स्थित है। प्रतिमा का समय सं.१९५९ का रहा है। उन पर निम्नलिखित लेख दृष्टिगोचर होता है:-

''भट्टारक श्री रतनचन्द्रजी तदर्थ शिष्य श्री हर्षवर्धनजी तदर्थ श्री भट्टारकजी अमरचंदजी प्रतिष्ठापितं सं १९७५''

प्रतिमा प्राचीन रही है। नित्य पूजा-धूप-चंदन लगाने की वणक से प्रतिमा की चमक में थोड़ा परिवर्तन साफ दिखाई देता है। मूलनायक प्रतिमा के दोनों ओर अन्य प्रतिमाएँ बिराजमान है । मूलनायक प्रतिमा का चिह्न हिरण है।

यहाँ पर हूमड़ समाज के ६९ परिवारों के कुल ४५७ सदस्य निवास कर रहे हैं। गाँव में समाज की एक जैन पाठशाला भी कार्यरत है। समाज का एक मंदिर पंच के अधिकार मे है।

समस्त जैन समाज
गाँव आंजना. तहसील. गढ़ी. जि. बांसवाड़ा (राज.)
पिन. नं.३२७०३२

राजस्थान प्रदेश का हूमड़ समाज

भारत वर्ष एक विशाल भूखण्ड है। इसके प्रत्येक प्रदेश का अपना एक अलग इतिहास है। प्रत्येक की अपनी एक विशेष पहचान है।

राजस्थान की गौरवमयी धरा सांस्कृतिक राजनैतिक एवं धार्मिक दृष्टि से परिपक्व रही है। विगत में जहाँ एक ओर लोकनृत्यों की झंकार, लोक संगीत की स्वर लहरियों, ढपली की थाप, सारंगी व तुरई के स्वर गुंजायमान होते रहे हैं, वहीं रणबांकुरों द्वारा अपनी धरा के रक्षार्थ तलवारों की खनक, घोड़ों की टापें भी ध्वनित होती हैं। पुरूषों व स्त्रियों की शौर्य गाथाएँ तो राजस्थान का प्रतीक बन गई हैं। वहीं दूसरी ओर यहाँ के धार्मिक-दृष्टिकोण ने, साधु - सन्तों के भजनों, महात्माओं व जैन साधुओं की अमृतवाणी ने यहाँ की वसुन्धरा में फैले रक्त को धो डाला है। यद्यपि यहाँ की धरती को आततायीयों ने बार - बार रौंदा है। यहाँ की धर्म-सम्पदा को क्षत-विक्षत किया है, मूर्तियों का भंजन किया है फिर भी दक्षिण राजस्थान की अरावली पहाड़ियों ने अपनी कंदराओं में, घने जंगलों में, तलहटियों में इनको संरक्षण देकर सुरक्षित रखा है। यही कारण है कि उत्तरी व पश्चिमी राजस्थान के बनिस्पत दक्षिण व पूर्वी राजस्थान, धार्मिक दृष्टि से अधिक सम्पन्न है। जैन धर्म भी इन्हीं प्रदेशों में खूब पनपा है। कई दुर्लभ व कलापूर्ण मन्दिर यहाँ की तलहटियों में, कन्दराओं में व पहाड़ियों पर बने हुए हैं।

राजस्थान का भौगोलिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण स्थान है। राजस्थान ३,४२,४४० वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला हुआ है। यह चारों ओर से अलग-अलग राज्यों से जुड़ा हुआ है और पश्चिम उत्तर में तो यह हमारे देश की सरहद बना हुआ है। इसके पश्चिम -उत्तर में पड़ोसी देश पाकिस्तान है। उत्तर-पूर्व में पंजाब-हरियाणा, पूर्व में उत्तर प्रदेश तथा दक्षिण पूर्व में मध्यप्रदेश और दक्षिण में गुजरात है।

यहाँ पर सभी धर्म के लोग बसे हुए हैं। इनमें से जैनियों का स्थान तीसरा है। राजस्थान की भूमि ने कई संतों, महात्माओं, मुनियों को जन्म दिया है । अतः यहाँ पर सभी धर्मों का अपना एक महत्व है। जैन धर्म का प्रचार व प्रसार यहाँ पर भारी मात्रा में हुआ है । अतः जैन धर्म का भी यहाँ पूरा वर्चस्व रहा है। यहाँ पर भगवान् पार्श्वनाथ की तपोभूमि है जो वर्तमान में 'भीलवाड़ा' नाम से प्रख्यात है। जैन धर्म की प्राचीनता के सम्बन्ध में यहाँ कई शिलालेख, ताम्रपत्र, प्रशस्तियाँ, ग्रंथ आदि प्राप्त हुए है। इन्हीं ग्रंथों में राजस्थान प्रदेशों के कई प्राचीन नामों का उल्लेख मिलता है। वे नाम इस प्रकार है-ढुंढाण, मत्स्य, कुरू, खेराड़, वागड़, मेवाड़, मारवाड़, आदि। मेवाड़ प्रदेश में स्थित चितौड़ पहाड़ पर जैनाचार्यों का केन्द्र है और इसी स्थान से जैनियों की अनेक जातियों का उद्‌भव हुआ है।

राजस्थान में मुख्य जैन जातियाँ इस प्रकार है - खण्डेलवाल, बघेरवाल, हूमड़, नरसिंहपुरा, नागदा, पल्लीवाल, ओसवाल, जैसवाल, श्रीमाल,पटवार, पद्मावती पुरवार, लमेचू आदि। राजस्थान में दि. जैन तीर्थों की कमी नहीं है। यहाँ के मुख्य जैन तीर्थ इस प्रकार है-

जिला अजमेर	(१) श्री आदिनाथ दि.जै. अ. क्षे. सरवाड़ (२) दि. जैन. अ. क्षे. सावर
जिला अलवर	(३) चन्द्रप्रभु दि.जै. तिज़ारा (४) ऋषभदेव केशरियाजी (५) अणन्दा पार्श्वनाथ
जिला जयपुर	(६) पद्मपुरा (७) पार्श्वनाथ चूल गिरी आगरारोड (८) आदिनाथ दि. जैन अ. क्षे. मोजमाबद (९) अ. क्षे. बैनाड़
झालवाड़ा	(१०) चाँद खेड़ी (११) झालरापाटन
बून्दी	(१२) मुनि सुव्रत अ. क्षे. केशोरायपाटन
सवाईमाधोपुर	(१३) महावीर जी (१४) आलनपुर
सिरोही	(१५) देलवाड़ा पो. आबू पर्वत
डूंगरपुर	(१६) नागफणी पार्श्वनाथ
बांसवाड़ा	(१७) नशियाजी अरथुना
भीलवाड़ा	चम्बेश्वर पार्श्वनाथ, पार्श्वनाथ बिजौलिया
चितौड़गढ़	जैन कीर्तिस्तम्भ

राजस्थान में कोई सिद्धक्षेत्र नहीं है और न ही कल्याणक क्षेत्र है। जो भी है वे अतिशय क्षेत्र है। इस प्रदेश के चित्रकूट (चितौड़) नगर में आचार्य एलसे वीरसेन ने आठवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में सिद्वान्त ग्रंथों का अध्ययन किया था। इस प्रदेश में जैनों की संख्या दो तिहाई है। यहाँ के निवासी अपनी व्यावसायिक और औद्योगिक विचक्षणता के लिए संसार में प्रसिद्ध हैं। भारत के सभी प्रान्तों में इनके व्यापार और उद्योग प्रतिष्ठानों का जाल फैला हुआ है।

राजस्थान में हूमड़ जाति का प्रवेश-

श्री हूमड़ समाज का प्रभुत्व पहले गुजरात स्थित खेड़ब्रह्मा एवं ईडर के आसपास था। सातवीं शताब्दी के लगभग हूमड़ जैन समाज एवं ईडर के नरेश के मध्य धार्मिक अथवा अन्य किसी कारण, मतभेद हो गया था,। इस कारण जैन हूमड़ समाज ने वहाँ रहना उचित नहीं समझा। अट्ठारह हज़ार हूमड़ नौ हज़ार खेडुवा ब्राह्मणों के साथ गुजरात से पलायन पर बागड़ क्षेत्र की और आये। आज जहाँ पर सागवाड़ा बसा हुआ है, वहाँ पर पहले सागवान का घना जंगल था। सध्या समय हो जाने पर, सभी ने यहाँ डेरा डाल दिया व रात्रि विश्राम वहीं किया। उस समय डूंगरपुर राज्य की राजधानी गलियाकोट में थी। इतने बड़े समूह की यहाँ ठहरने की सूचना राजा को गुप्तचरों द्वारा प्राप्त हुई और वे वेष बदलकर जाँच करने गए। रात्रि का समय था सभी प्रगाढ़ निंद्रा से सोये हुए थे। राजा ने देखा कि एक महिला के वस्त्र अस्त व्यस्त हो रहे है। राजा ने अपना दुकूल (शॉल) जिस पर 'राजा डूंगरपुर' लिखा था, उस महिला के ऊपर डाल दिया और चुपचाप चले गए।

प्रातः जब सभी लोग उठे तो उन्होंने उस महिला पर डाले गए दुपट्टे को देखा। सभी विस्मित हो गए और इस घटना से उन्हे लगा कि यहाँ का राजा बड़ा धर्मात्मा एवं स्त्रीजाति का सम्मान करने वाला होना चाहिए। अतः सभी लोगों ने इसी स्थान पर बसने का निर्णय किया तथा बसने की स्वीकृति लेने गलियाकोट गए। बडे बुजुर्ग लोगों ने अपनी आप बीती सुनाकर राजा से यहाँ बसने की स्वीकृति माँगी। राजा सह्दयी थे, उन्होंने सहर्ष स्वीकृति प्रदान करते हुए राज्य की ओर से हरसंभव सहयोग देने का आश्वासन दिया।

जिस समय हूमड़ समाज यहाँ बसा उस समय उनमें साढ़े तीन सौ कड़ा-कंठी वाले समृद्ध सज्जन थे। हूमड़ समाज ने यहाँ रहने के लिए मकान बनाए एवं सात विशाल भव्य मंदिर (बावन देहरी जिनालय युक्त) बनवाया जिनको देखने से त्रात होता है कि उस समय हूमड़ समाज लहुत समृद्धा रहा होगा । जिससे ऐसे भव्य मंदिरो का निर्माण करा सके । कालांतर में आजिविका हेतु यहाँ से कई बाई प्रतापगढ़ बांसवाड़ा, इन्दौर, दाहोद आदि गाँवोंमें जाकर बस गए ।

आज भी सागवाड़ा की जाजम अट्ठारह हजार सूमड़ समाज की जाजम कही जाती है । यहाँ का संगठन '' श्री अट्ठारह हज़ार दशा हूमड़ जैन समाज श्री साढ़े बारह मंदिर बंदी एवं चोखला सम्बन्धी जैन समाजके नाम से जाना जाता है । यह वर्तमान में भी कार्यरत हैं । इस संगठन में डूंगरपुर जिला बांसवाड़ा उदयपुर जिले का कुछ भाग एवं मध्य प्रदेश तथा गुजरात का कुछ भाग भी आता है । वर्तमानमें इसके अन्तर्गत लगभग अस्सी गाँव हैं । सागवाड़ा इस संगठन का पाट गाँव है । इसको दो मंदिर बंदी का दर्जा मिला हुआ है । साढ़े बारह मंदिर बंदी निम्नलिखित है ।

परिशिष्ट ''अ''

श्री १०४ अट्ठारह हजार दशाहुम्मडजी दिगम्बर जैन समाज के साडा बारह मन्दिर बन्दीजी

१. सागवाड़ा दो मन्दिर बन्दीजी
२. परतापुर एक मन्दिर बन्दीजी
३. साबला एक मन्दिर बन्दीजी
४.झाबुआ एक मन्दिर बन्दीजी
५. नौगामा एक मन्दिर बन्दीजी
६. भिलूडा एक मन्दिर बन्दीजी
७. तलवाड़ा एक मन्दिर बन्दीजी
८. घाटोल एक मन्दिर बन्दीजी
९. डडूका एक मन्दिर बन्दीजी
१०. गलियाकोट एक मन्दिर बन्दीजी
११. बह्मा की खेड आधा मन्दिर बन्दीजी
१२. पारखोला एक मन्दिर बन्दीजी

उपरोक्तानुसार में बांसवाड़ा जिला के सम्पूर्ण गांव।
जिला उदयपुर एवं डूंगरपुर आंशीक रूप से।
जिला चित्तौडगढ़ (म.प्र.) के झाबुआ, राणापुर एवं थांदला नगर।
जिला पंचमहाल (गुजरात) के दाहोद एवं संतरामपुर ।

मन्दिर बन्दीजी:- सागवाड़ा अधिनिस्त चौखला सम्बन्धी गांव।

१. दाहोद २ ठाकरडा ३ वारदा ४ ओबरी ५.घाटका गांव ६. मांडव ७.आन्तरी ८ कूआं ९ डेच।

१ मन्दिर बन्दीजी:- परतापुर अधिनस्त चोखरा सम्बन्धी गांव। १. गढ़ी २. मोर

१ मन्दिरजी साबला अधिनिस्त चोखला सम्बन्धी गाँव १. मूंगेड़ २. रिछा ३. सरोदा ४ पालोदा ५ खोडन ६ गामड़ी ७ मेतवाला ९ पादेडी बडी १० सरेडी बडी ११ कोटडा बडा

१. मन्दिर बन्दीजी:- झाबुआ अधिनस्त चोखरा सम्बन्धी गांव। १. राणापुर २. थान्दला ३. कुशलगढ़ ४. सन्तरापुर

१. मन्दिर बन्दीजी:- नौगामा के अधिनिस्त चौखरा सम्बन्धी गांव। १. कलिंजरा २. बागीदौरा ३. बडोदिया ४. बोडीयाना

१. मन्दिर बन्दीजी:- भीलूडा के अधिनिस्त चोखरा सम्बन्धी गाँव। १. जेठाणा २. दीवडा बडा

१ मन्दिर बन्दीजी:- तलवाड़ा के अधिनिस्त चोखरा सम्बन्धी गाँव। १. चन्दूजी का गडा २. वजबाना ३. कूवाला

१. मन्दिर बन्दीजी:- घाटोल के अधिनिस्त चोखरा सम्बन्धी गाँव। १. खेमरा २. नरवाली ३. मोटा गांव

१. मन्दिर बन्दीजी:- डडूका के चोखरा सम्बन्धी गाँव।

१. अरथूना २. आजना ३. आनन्दपुरी ४. बोरी

१ मंदिर बन्दीजी - गलियाकोट के चोखला सम्बन्धी गाँव।

१. चितरी

प्रतापगढ़, इन्दौर, दाहोद, बम्बई आदि शहरों से आज भी कई सज्जन अपनी संतान के 'बाल-बड़ा' का संस्कार खड़गदा क्षेत्रपाल श्री, गतरोधर, डेचा एवं जेथा महादेव के स्थान पर आकर कराते हैं।

सागवाड़ा में आज भी श्री हूमड़ जैन समाज का प्रभुत्व कायम है। सागवाड़ा के बहुत पास ही दो अलग-अलग ऊँची पहीड़ोयो पर दो विशाल नसियांजी बनी हुई हैं। जो बहुत प्राचीन होकर भी दर्शनीय है। परम पूज्यनीय आचार्च १०८ शांतिसागरजी (छाणीवाला) को क्षुल्लक एवं मुनि दीक्षा सागवाड़ा में सागवाड़ा में ही हुआ। यहाँ आचार्य शांतिसागर दिगम्बर जैन श्राविकाश्रम एवं श्री सेठ रायचन्द त्रिभुवनदास दिं. जैन बोर्डींग सागवाड़ा आज भी कार्यरत है।

विक्रम सम्वत् ७५० में हूमड़ जाति की वर्तमान राजधानी सागवाड़ा ही है।

हूमडोंकी वर्तमान राजधानी सागवाडा विक्रम सं. ७५० से

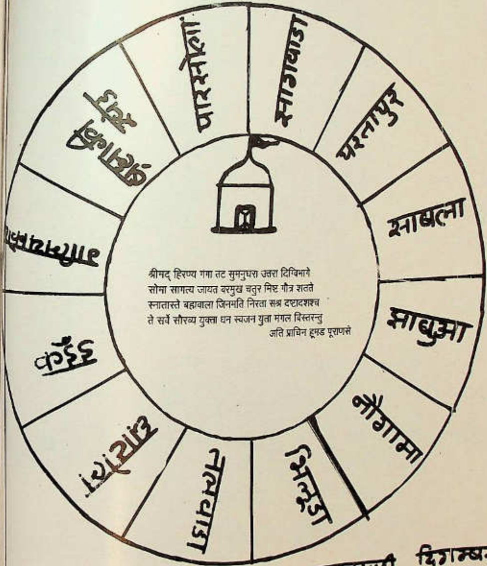

श्री ३०५ अठारह हजार दशाहूमडजी दिगम्बर जैन समाज के साडा बारह मन्दिर वन्दीजी

श्री १०५ अठारह हजार दशाहुमडजी
दिगम्बर जैन समाजके साडा बारह
मन्दिर बन्दीजी

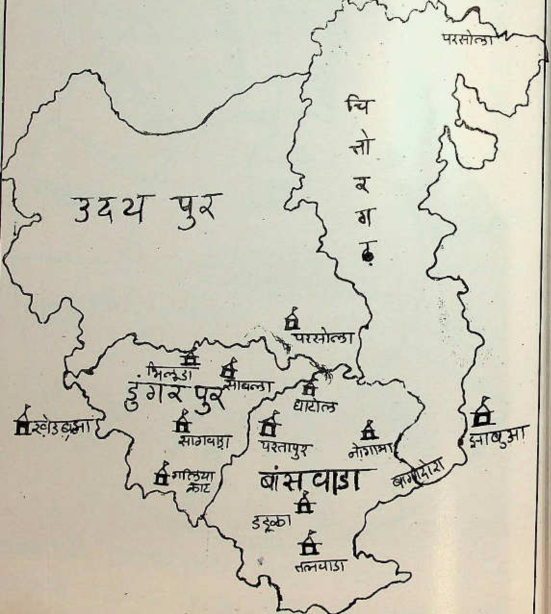

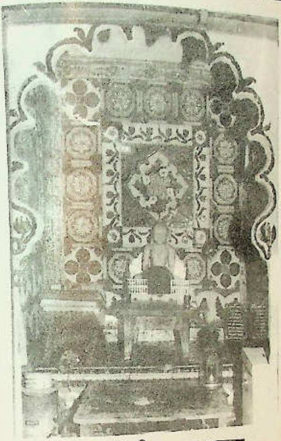

नसियाजी श्री चन्द्रप्रभु भगवान
सागवाड़ा (राजस्थान)

भगवान पार्श्वनाथ सहित देवी पद्मावती सागवाड़ा (राजस्थान)

श्री मूलनायक १००८ श्री आदिनाथजी सागवाड़ा (राजस्थान)

श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर जेठाणा, सागवाड़ा (राजस्थान)

देवी पद्मावती की प्रतिमा
सागवाड़ा (राजस्थान) (राजस्थान)

श्री १००८ सहस्त्र फूट चैत्यालाय सागवाड़ा

सागवाड़ा में हूमड़ों का प्रथम जिनालय वि. संवत् ७३२

जूना मंदिर जी बाहर का दृश्य सागवाड़ा (राजस्थान)

सागवाड़ा नगर के मध्यमें स्थित गणपति मंदिर के पास
हूमड़ों के आगमन का प्राचीन लेख

श्री दिगम्बर जैन बड़ी नसीयाजी सागवाड़ा (राजस्थान)

श्री ऋषि मंडल यंत्र आंतरी डूंगरपुर (राजस्थान)

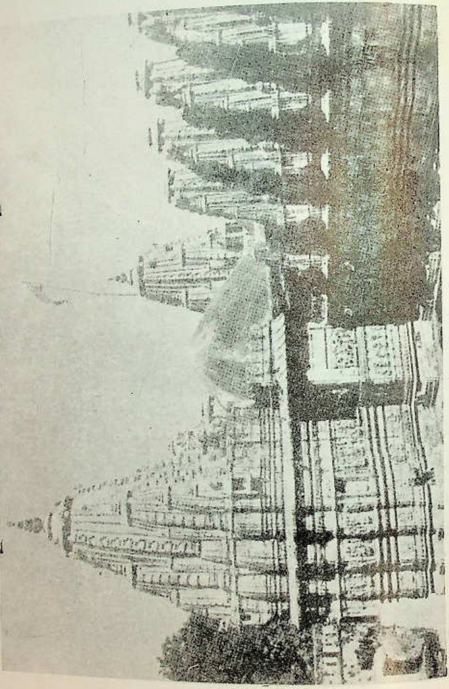

श्री ऋषभदेव (केशरियाजी) : मुख्य
मंदिर के शिखरों का मनोरम दृश्य

देवलिया प्रतापगढ़ रियासत व हूमड़ समाज

श्री भैयालाल बंड़ी

मालवा के विश्व प्रसिद्ध पठार का वह अत्यंत उर्वर भू- भाग जो चम्बल, शिवना, चर्मण्वती जाखम, रेतम, गम्भीरी एवं माही नदियों से घिरा हुआ है। वह कांठल कहलाता है। जिसका अर्थ है - कंठ प्रदेश , किनारे की धरती।

पग - पग पर नीर - तीर पनघट , तालाब, विशाल, बावड़ियाँ मेंहदी केवडा गुलाब और नागचंपा की वनराजी सहज में मन को मोह लेती है। यहाँ अधिकतर जातियाँ गुजरात से आई है। अतः यहां की भाषा गुजराती प्रधान मालवी बोली जाती है।

मौर्य , गुप्त काल से लेकर औरंगजेब तक कांठल एक भिन्न सूबा रहा है। मेवाड़ के शासक भाईयों में छोटे राजकुमार क्षेमकर्ण गृहयुद्ध को टालने हेतु मालवा की ओर निकल गये व सन् १४३७ के लगभग एक नये राज्य की नींव डाली। राजकुमार क्षेमकर्ण के पुत्र सूर्यमल्ल के प्रपौत्र बीका (महारावत विक्रम सिंह) ने सन १५३१ में इस प्रदेश के भीलराजा भामरदेव को मारकर उसकी रानी देवली के नाम से देवलिया नामक विशाल नगर बसाया जो कालांतर में मालवा के सूबे का एक प्रमुख अंग बना तथा मालवीय सभ्यता व संस्कृति, साहित्य व ललित कलाओं का केन्द्र हो गया।

देवलिया के तत्तकालीन महारावत प्रतापसिंह को वहां की जलवायु रास नही आने से उन्होंने सन् १६९८में घोघेरिया खेड़ा, जिसे डोडेरिया का खेडा भी कहा जाता था, नामक गाँव की समतल भूमि पर अपने नाम से प्रतापगढ़ नगर बसाया।

१६वीं शताब्दी से हूमड़ों की वर्षावत शाखा के मूल पुरुष श्री वर्षावत शाह थे। वे महारावत हरिसिंह के मंत्री थे। उनके मंत्रित्व काल में कांठल भूमि खुशहाल थी। महारावत हरिसिंह की आज्ञा से वर्षाशाह ने सागवाड़ा (डूंगरपुर राज्य) से एक हजार हूमड़ परिवार लाकर कांठल में बसाये। धार्मिक भावना से ओतप्रोत वर्षाशाह ने देवगढ़ में दिगंबर जैन संप्रदाय का मल्लिनाथ स्वामी का मंदिर बनवाना आरंभ किया। वर्षाशाह के पुत्र वर्द्धमानशाह व पौत्र दयाल शाह ने मंदिर का निर्माण कार्य पूर्ण कराते हुए फरवरी सन् १७१८ को मंदिर की प्रतिष्ठा करवाई।बाद में यह देवालय ''बड़ा मंदिर'' कहलाया। इसी मंदिर के साथ देवलिया के छोटे जैन मंदिर की प्रशस्ति जिसमें देवलिया निवासी हूमड़ जाति के अमात्य शाह रहिआ और उनके पुत्र जीवराज का अपने परिवार सहित मूलनायक पार्श्वनाथ के बिंब स्थापना का उल्लेख है।

बड़े मंदिर के गर्भगृह में मल्लिनाथ भगवान की श्वेत संगमरमर की मूर्ति के पीछे दिवाल पर संगमरमर पत्थर पर आभायुक्त सुंदर श्रेष्ठ कलाकृति पूर्ण मूतियाँ उत्कीर्ण हैं। मंदिर के मध्य वेदी पर कई संगमरमर की मूतियाँ हैं। गर्भगृह के बाहर तीन प्रकोष्ट हैं। एक प्रकोष्ट में सहस्त्रफणी अद्वितीय प्रार्तमा अन्यत्र देखने में नहीं आती। सभामंडप के दांई ओर एक विशाल सहस्त्रकूट चैत्यालय एक ही पत्थर का बना हुआ है, जिसमें भगवान महावीर की १००१ मूतियाँ हैं। इस प्रकार का चैत्यालय देवलिया के अतिरिक्त आसपास में श्री केशारियाजी (ऋषभदेव) में ही प्राप्त है,अन्यत्र नहीं।

उक्त बड़े मंदिर के अतिरिक्त एक छोटा जैन श्वेतांबर मंदिर है।ये दोनों ही हूमड़ समाज के मंदिर प्राचीन होकर उचित देखभाल के लिये तरस रहे हैं। यहाँ वर्ष में दो बार हूमड़ समाज की ओर से रथयात्रा व मेला पड़ता है, एक बार दिगंबर व एक बार श्वेतांबर समाज एकत्रित होता है।

देवलिया के छोटे मंदिर के बाहर एक शिलालेख लगा हुआ है ''वि. स. १७७४ माघ सुदी ४ ई.सन् १७१८ तारीख २ फरवरी,'' इस शिलालेख में पर्यूषण पर्व पर तथा अष्टमी, चतुर्दशी व आदित्यवार को शराब की भट्टियाँ निकालने व शराब पीने - पिलाने का निषेध किया गया है।

देवलिया-प्रतापगढ़ राज्य के मंत्री (हूमड़) राज्य के आरंभ से बाद तक सभी मंत्री दिगंबर संप्रदाय हूमड़ जाति के व्यक्ति ही रहे हैं। चूँकि यह हूमड़ समाज मूलरूप से ''बागड़'' के पूर्व निवासी थे अत:बागड़िये कहलाये। उनका पूर्व निवासस्थान बागड़ राज्य सागवाड़ा [बांसवाड़ा और डूंगरपुर] था, ये लोग संपन्न एवं बुद्धिजीवी थे।महारावत विक्रमसिंह के शासनकाल में इस ओर इनकी संख्या की वृद्धि होने लगी। क्रमशः इस जाति ने देवलिया व प्रतापगढ़ में अपना व्यवसाय बढ़ाते हुए विकास किया। इनमें से कुछ अपनी प्रतिभा व सदाचार के बल पर राज्य के विश्वस्त व उच्च पदों पर सुशोभित हुए।

१७वीं शताब्दी में अनेक राज्य बिगडे व समाप्त हुए परंतु देवलिया प्रतापगढ़ के राज्य का अक्षुण्ण रहना स्थानीय हूमड़ मंत्रियों व राज्य- कर्मचारियों की योग्यता एवं बुद्धिमत्ता का परिणाम है।

हूमड़ जाति के प्रसिद्ध परिवार

पाड़लिया परिवार:- इस परिवार के पूर्वज श्री जीवराज सागवाड़ा (डूंगरपुर) के निवासी थे। ये समस्त परिवारों मे प्रमुख थे व हूमड़ समाज के अन्य परिवारों के साथ देवलिया आकर बसे एवं राज्य की ओर से नगर सेठ की पदवी से सम्मानित किये गये।

पाड़लिया चंद्रभाण महारावत गोपालसिंह के शासनकाल में १७२१ से १७५६ तक मंत्री रहे। चंद्रभाण ने कई बाग व बावड़ियां बनवाई।महारावत गोपालसिंह व सालमसिंह ने पाड़लिया चंद्रभाण एवं उनके पुत्र सुंदर की सेवाओं से प्रसन्न होकर उन्हे डोराणा व वरखेड़ी के गांव जागीर में दिये तथा दरबार में सबसे आगे बैठने की अनुज्ञा प्रदान की। पाड़लीया लसण व उनके पुत्र कपूरचंद महारावत पृथ्वीसिंह व गोपालसिंह के मंत्री बने। महारावत सामंतसिंह ने मंत्री कपूरचंद का नाम राज्य की मुद्रा पर खुदवाते हुए उनका सम्मान किया व कई जागीरें दीं।

सन् १७७८ में श्री कपूरचंद ने अपने सजातीय बंधओं के साथ तत्कालीन मेवाड़ राज्य के प्रसिद्ध तीर्थ धुलेवा (ऋषभदेव केशारियाजी) की ससंघ यात्रा की । संघ के साथ राज्य की ओर से सशस्त्र सवार,पैदल,नक्कार,निशान,पियादा,पालकी,आदि लवाजमा था । यात्रियों की संख्या ४००० तक पहुंच गई। यात्रा के मध्य श्री कपूरचंद ससंघ डूंगरपुर पहुंचे जहां तत्कालीन महारावत शिवसिंह ने उनका काफी सम्मान किया। यात्रा की समाप्ति पर श्री कपूरचंद ने स्थानीय,बागड़ तथा निकटवर्ती हूमड़ समाज को भोजन के लिये आमंत्रित किया तथा प्रतिगृह एक - एक रुपैया व नारियल भेंट दिया। कपूरचंद के पश्चात् उनके पुत्र शिवलाल को महारावत सांमतसिंह ने अपना मंत्री नियुक्त किया व राजमुद्रा पर उनका नाम खुदवाया। सन् १८२३ में नवलचंद, पुन:उनके जैष्ठ पुत्र जोधराज तत्पश्चात जोधराज के पुत्र हंसराज ने क्रमश:मंत्री - पद सम्हाला। बाद में जोधराज के पुत्र पाड़लिया कानजी कई वर्ष तक सहकारी मंत्री (नायब दीवान) रहे। हंसराज के दो पुत्र बड़े पन्नालाल व छोटे मन्नालाल थे।दोनों को राज्य के भिन्न - भिन्न महत्वपूर्ण पद दिये गये थे। मन्नालाल महाराजकुंवर मानसिंह व रामसिंह के कामदार थे।

पाड़लिया लसण के पुत्र हरकचंद के पांचवें वंशधर रतनलाल महारावत उदयसिंह के मंत्री बने। रतनलाल के पुत्र माणकलाल लंबे समय तक रियासत के नायबदीवान पद पर पदासीन रहे। इसी पाड़लीया पारिवार के बाबूजी अमृतलालजी भी हिसाब दफ्तर के हाकिम रहे। पाड़लिया का चैत्यालय बनवाया गया।

आज भी पाड़लीया पारिवार के सदस्य चहुंमुखी विकास करते हुए भारत के मुख्य नगरों में अपनी प्रतिभा के धनी हैं।

खासगीवाला परिवार

राज्य परिवार के गृहविभाग (अंत:पुर) के प्रबंध एवं निजीकार्यकर्ता खासगीवाला कहलाये यानि खास (मुख्य) कार्य करनेवाले।

सन् १८१३ में महारावत सामंतसिंह ने शाह जड़ावचंदजी को खासगी का महकमा सौंपा,अन्य महत्वपूर्ण कार्य भी इनके जिम्मे थे, बाद मे ये मंत्री बनाये गये। इनकी बुद्धिमानी से राज्य की आय मे वृद्धि हुई। निहालचंद के कनिष्ठ भ्राता कपूरचंद को महारावत उदयसिंह ने अंत:पुर की सेवाएं सौंपी। कपूरचंद के पुत्र अमृतलाल भी अंत:पुर की ड्योढी के प्रबंधक थे। कपूरचंद के पुत्र जोधराज जो अंग्रेजी में सर्व प्रथम B.A. पास हुए थे, उन्हे महारावत रघुनाथसिंह ने अपना प्राइवेट सेक्रेट्री नियुक्त किया। जोधराज के लघुभ्राता मुंशी फतहलाल मानासिंह के साथी थे व कुंवर रामसिंह के शिक्षक भी रहे, पुन:एग्रीकलचर सुप्रिन्टेडे ,खजाना अफसर,सैसंज आफिसर आदि विभिन्न विभागों के अधिकारी रहे। इनके वंशज आज भी खासगीलाल नाम से विख्यात हैं।

भांचावत पारिवार :

इस वंश के शाह भूरा ने प्रतापगढ़ राज्य की सीमा संबंधी अनेक समस्याएं सुलझाई। सन् १९०२ में महारावत रघुनाथसिंहजी ने मन्नालाल भांचायत को अपना मंत्री बनाया। मन्नालाल के पुत्र चादंमल म्युनिसिपल सेक्रेट्री रहे। ये मगरा हाकिम के नाम से विख्यात थे।

अन्य व्यावसायिक प्रतिष्ठित हुमड़ पारिवार :

स्थानीय हूमड़ समाज के वंशज राज्य सरकार में तो सम्मानित रहे ही परंतु इन्होने अपनी वैश्य जाति के अनुसार व्यवसाय में भी अग्रसर रहते हुए अपना, समाज व देश का चहुंमुखी विकास किया है।

जुवाँ सेठ :

प्रतापगढ़ के वरिष्ठ एवं माणेकलालजी हो गये हैं। ये जुवाँ सेठ के नाम से समूचे बागड़ तथा निकटवर्ती हूमड़ समाज में ख्याति प्राप्त व्यक्ति थे, नगर मे भी इनका उच्च सम्मान था। इन्होंने अपने एक विशेष अवसर पर एक विशाल प्रीतिभोज आयोजित किया था, जिसमें प्रतापगढ़ के समस्त जनमानस के साथ छप्पन, बागड़,डूंगरपुर, सागवाड़ा तथा निकट स्थित प्रांत के हूमड़ समाज के समस्त पारिवारों को साग्रह आमंत्रित किया था। कहा जाता है कि स्थानीय बाजारों व गलियों मे भोजन की व्यवस्था की गई थी एवं फावड़ों से घेबर निकालकर परोसा गया था। यह एक विशाल सामाजिक प्रीतिभोज का अनोखा आयोजन था। समाज में सेठ साहब का पूरा दबदबा व सम्मान था। सेठ साहब की ओर से प्रतापगढ़ में एक ''जुवाँ स्कूल'' चलता था जो तत्कालीन समय का एक आदर्श मिडल स्कूल था।

संघपति सेठ पूनमचंद घासीलाल जवेरी:-

प्रतापगढ़ की माँवसुंधरा हूमड़ समाज के महान व्यक्ति की जननी रही है। स्थानीय कोटाड़िया परिवार के सेठ पूनमचंद घासीलाल जवेरी, बंबई का नाम समाज में चिर परिचित हो चुका है। प्रतापगढ़ से ये बंबई पहुंचे, जहाँ श्रेष्ठ झवेरी बन गये, लाखों करोड़ों की संपत्ति के घनी होते हुए इन्होंने समाज सेवा, साधु भक्ति एवं धार्मिक कार्यों में अपनी चंचल लक्ष्मी का सदुपयोग किया। आचार्य श्री शांतिसागरजी (दक्षिण वाले) के ये परम् भक्त थे । सादा जीवन, उच्च विचार, त्यागी, तपस्वी, मुनिसेवा, मंदिर निर्माण आदि के लिये ये प्रसिद्ध थे। संवत् १९८० में प्रतापगढ़ के निकट अतिशय क्षेत्र श्री शांतिनाथजी (बमोतर) मे एक विराट पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करवाई। बंबई मे कालबादेवी रोड पर एक विशाल, भव्य, गगनचुंबी दिगंबर जैन मंदिर का निर्माण करवाकर बमोतर में प्रतिष्ठित मूर्ति भगवान पार्श्वनाथ स्वामी की इस मंदिर में मूलनायक के स्थान पर विराजमान की। घासीलालजी के जेष्ठ पुत्र श्री गेंदमलजी रात-दिन इस आदर्श मंदिर (बंबई) के निर्माण में लगे रहते थे, मानो मंदिर निर्माण ही उनका जीवन था।

घासीलालजी के जेष्ठ पुत्र श्री गेंदमलजी मे अपने अंतिम दिनों मे मुनि दीक्षा लेकर समाधी गृहण करली जिससे मुनि अवस्था में इनका नाम भी मुनि श्री ''समाधि सागरजी '' रखा गया । गेंदमलजी के कनिष्ट भाता श्री मोतीलालजी ने अपनी युवावस्था में ही समस्त संपन्नता को ठुकराते हुए मुनि दीक्षा गृहणकर ''मुनि श्री सुबुद्धिसागरजी'' बन गये । सेठ घासीलालजी अपने पूरे परिवार एवं अनेक दिगंबर भाईयो बहनों के साथ चरित्र चक्रवर्ती आचार्य १०८ श्री शांतिसागरजी महाराज (दक्षिण) को विक्रम संवत १७८४ मे ससंघ सम्मेदशिखरजी ले गये तथा वहां बीस पंथी कोठी में कांच का मंदिर चैत्यालय का निर्माण करवाकर आदिनाथ भगवान की मनोज्ञ प्रतिमा स्थापित की । इस अवसर पर अखिल भ-तवर्षीय दि. जैन महासभा व चतुर्विध संघ द्वारा सेठ साहब व उनके तीनों पुत्रों गेंदमलजी, मोतीलालजी व डाड़मचंदजी को ''संघ भक्त शिरोमणी व संघपति'' की उपाधि से अलंकृत किया गया।

तलाटी :

प्रतापगढ़ के एक यशस्वी एवं राज्य द्वारा सम्मानित नगर सेठ के रूप में विख्यात थे । सेठ श्री कस्तूरचंदजी गंभीर एवं धार्मिक प्रवृति के व्यक्ति थे । यदाकदा रियासत के महारावल साहब इनसे रकम उधार भी लिया करते थे।

इनकी ओर से प्रतापगढ़ के भाईजी के मंदिर की व्यवस्था इन्हीं के परिवार के जिम्मे है। सेठ कस्तूरचंदजी के पुत्र द्वय श्री शोभागमलजी व चांदमलजी द्वारा उनके माता - पिता की स्मृति में दो तलाटी वार्ड बनवाये गये तथा हूमड़ समाज के स्मशान '' टेकाघोड़ा का बंगला'' पर भी एक विश्रामगृह का निर्माण करवाया गया । सेठ परिवार के घर पर किसी भी विशेष अवसर पर स्थानीय हूमड़ समाज को आमंत्रित किया ही जाता था।

बंडी परिवार :

प्रतापगढ़ निवासी हूमड़ जाति खेरजा गोत्रीय बंडी परिवार की सामाजिक व धार्मिक सेवाएं सराहनीय रही है। संवत् १७१२ में श्री सेठ बंडी कस्तूरचंदजी हीरालालजी ने श्री गिरनार तीर्थक्षेत्र की वंदना आदि की अव्यवस्था देखकर वे खिन्न हुए तथा तुरंत तत्कालीन जूनागढ़ नवाब से गिरनार तलहटी पर जमीन क्रयकर वहाँ अपनी ओर से धर्मशाला व मंदिर का निर्माण करवाया । जूनागढ़ शहर में भी

एक धर्मशाला बनवाई तथा गिरनार पर्वत के प्रथम टोंक पर भी मंदिर का निर्माण करवाकर एक व्यवस्थापक समिति बनाई जिसका नाम उनके पूर्वज के नाम से '' बंडीलालजी दिगंबर जैन कारखाना'' रखा गया । इस संस्था का मुख्यालय प्रतापगढ़ के भाईजी के मंदिर में है। अभी श्री मिल्टनलालजी बंडी इस प्रबंधकारिणी के अध्यक्ष है। बंडी परिवार के डा.जवाहरलालजी, बंडी झमकलालजी, डा.बंडी अर्जुनलालजी आदि की समाज के लिये समकालीन सेवाएं प्रशंसनीय रही है।

मंदसौर (मध्यप्रदेश) में भी '' बंडीजी का बाग'' एक प्रसिद्ध दिगंबर जैन मंदिर है, जिसका निर्माण भी इसी बंडी परिवार ने करवाया। पूनमचंदजी तथा शताब्दी समारोह अवसर पर प्रतापगढ़ के ही निवासी मुनी भक्त श्री केसरीमलजी दोशी द्वारा ही मंदिर के सामने एक विशाल संगमरमर के मानस्तंभ की स्थापना की गई।

घीया परिवार:-

स्थानीय घीया परिवार उन प्रतिष्ठित परिवारों में से है जिन्होंने अपने व्यावसायिक विकास के साथ श्रेष्ठ सामाजिक एवं धार्मिक कार्य भी संपन्न किये। घीयाजी के दरवाजे के निकट ''घीयाजी का मंदिर'' एवं विस्तृत बगीचा इस परिवार की आज भी सुमन सौरभ प्रसारित किये हुए है। श्री भगवानदासजी हुकमचंदजी ने संवत् १९३१ में इस मंदिर की प्रतिष्ठा करवाई। मंदिर के निकट उपाश्रय का निर्माण श्री लक्ष्मीचंदजी, शंकरलालजी चंदनलालजी आत्मज श्री भगवानदासजी ने करवाया। आज इस घीयाजी के बाग मे विभिन्न आयोजन होते रहते है। समस्त घीया परिवार के सदस्य अपनी संपन्नता के साथ देश - विदेश में अपने पैतृक नाम को सार्थक कर रहे हैं।

सालगिया परिवार:-

श्री स्व. केशरीमलजी नानालालजी सालगिया की सामाजिक सेवाएं सराहनीय रही हैं। इनके भाई श्री शोभागमलजी ने अपने तीन पुत्रों सहित दीक्षा गृहणकर मुनि श्री सोमशेखर सागरजी बन गये।तीनों पुत्ररत्न भी रत्नशेखर सागरजी, नयशेखरसागरजी व पुण्यशेखरसागरजी के नाम से संत बनकर आत्मोन्नति में प्रवृत्त हो गये।

बक्षी परिवार:-

प्रतापगढ़ के ही मूलनिवासी बक्षी रामलाल फूलचंद यहां से मंदसौर एवं मंदसौर से बंबई चले गये। इस परिवार के प्रमुख समाज सेवी स्व. चांदमलजी बक्षी ''दादाहोकम'' को कौन नहीं जानता? वे हूमड़ समाज की प्रत्येक इकाई के लिये एक श्रेष्ठ सहयोगी थे । बीमार व्यक्तियों के लिये तो समर्पित भाव से तत्परता के साथ व्यवस्था जुटाने में अग्रसर रहते थे। मंदसौर की विशाल बक्षी धर्मशाला व बक्षी औषधालय द्वारा आज समाज की श्रेष्ठ सेवाएं हो रही हैं। देवगढ़ मोटा मंदिर में एक ही विशाल पत्थर का बना हुआ सहस्त्रकूट चैत्यालय ऐतिहासिक व धार्मिक दृष्टि से इस बक्षी परिवार की ही धरोहर है जो मंदिर की शोभा बढ़ाये हुए है।

अखिल भारतीय हूमड़ जैन इतिहास के लेखांकन अवसर पर हम प्रतापगढ़ निवासी श्री जवाहरलालजी साहब वैद्य पाड़लीया को विस्मृत नहीं कर सकते जिनके अथक प्रयास व सूझ बूझ से वर्षों पूर्व अखिल भारतीय हूमड़ समाज के एकीकरण का श्रीगणेश हो चुका था। उनके पास इस संबंध की अनेक पत्रावलियां भी थीं जो उनके परिवारजनों द्वारा हमें उपलब्ध हो चुकी हैं। जिसमे इस इतिहास शोध समिति को अपने कार्य में सहयोग प्राप्त हुआ है। संवत १९८० में श्री शांतिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा अवसर पर जब कि प्रतापगढ़ में भारतवर्ष के कई प्रांतों के हूमड़ प्रतिनिधि उपस्थित हुए थे, श्रीमान सेठ माणकलालजी जुवाँ का हवेली पर अखिल भारतीय हूमड़ समाज के एकीकरण हेतु एक बैठक आयोजित की गई। एक नियमावली व विधान भी तैयार किया गया जिसकी मूलप्रति श्री जवाहरलालजी साहब के सामाजिक ऐतिहासिक पत्रों के साथ ही प्राप्त हो चुकी है। उस संगठन का नाम '' अखिल

भारतवर्षीय हूमड़ कान्फ्रेस रखा गया था। उस समय होनेवाली इस महत्वपूर्ण कार्यवाही के लिये उन बुजुर्ग कार्य कर्ताओं के हम आभारी हैं।

इंदौर के मूल प्रतापगढ़ हूमड़ प्रवासियों ने इस इन्द्रपुरी नगरी में अपना श्रेष्ठ वैभव प्रसारित कर लिया है व वे अब वहीं के स्थाई नागरिक हो चुके हैं। यद्यपि इंदौर के स्थाई निवासी होने के कारण प्रतापगढ़ से उनका लगाव कम होना स्वाभाविक है तथापि वे अपने आपको आज भी प्रतापगढ़ के निवासी अवश्य मानते हैं।

एक विशेषता है कि प्रतापगढ़ प्रवासी समाज की इकाइयाँ या परिवार जहाँ - जहाँ भी बस गये है वे अपने घर में आपस की बातचीत में प्रतापगढ़ की मधुर मातृभाषा में ही बातें कर अपनी जननी जन्मभूमि को गौरवान्वित किये हुए है।

हूमड़ इतिहास की श्रंखला में प्रतापगढ़ एक महत्वपूर्ण स्थान रह चुका है जो हूमड़ समाज के लिये चिर स्मरणीय बना रहेगा। प्रतापगढ़ ने हूमड़ समाज को जोड़ने व आगे बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण योग दिया है।

-लुहारगली
प्रतापगढ़ (राज.)

आखिवल भारतवषीर्य हूमड़ कान्फ्रेस की प्रति निम्न प्रकार हैं-

प्रतापगढ़ मे जैनाचार्यों एवं साधुसतों के चातुर्मास व आवागमन

प्रतापगढ़ (राजस्थान) एक धर्मपुरी है। यहाँ पर हूमड़ समाज के विशाल गगनचुंबी शिखर युक्त जैन मंदिर बने हुए हैं इन मंदिरों की छटा व शोभा निराली है। समाज की धर्मशालाएं, कुएँ व बगीचे भी है। समय समय पर कई आचार्यों व मुनी श्री के चातुर्मास व परिभ्रमण यहाँ होते रहे हैं। पर्वों के दिनों में अनेक विधान पूजन आदि बड़े समारोह पूर्वक होते रहते हैं।

एक विशेषता यह भी है कि यहाँ समस्त जैन समुदायों में ऐक्यता का वातावरण पाया जाता है।

प्रतापगढ़ में हुए '' मुनिसंघों के चातुर्मास का विवरण:-

विक्रम संवत १९७५ में मुनि श्री चंद्रसागरजी

विक्रम संवत १९८५ में मुनि श्री मुनींद्रसागरजी

इन्हे यहां से संघ साहित गिरनारजी ले गये।

विक्रम संवत १९८८-८९ में मुनि श्री मल्लिसागरजी (दो वर्ष चातुर्मास)

विक्रम संवत १९९० में चरित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागरजी (दक्षिण)

विक्रम संवत १९९२ में (१) आचार्य शांतिसागरजी (दक्षिणवाले)

(२) आचार्य शांतिसागरजी (छाणी वाले)

विक्रम संवत १९९७ में आचार्य श्री जंबुसागरजी

विक्रम संवत २००० में मुनि श्री ज्ञानसागरजी

विक्रम संवत २००५ में मुनि श्री विमलसागरजी

विक्रम संवत २००७ में मुनि श्री कीर्तिसागरजी

विक्रम संवत २०२० मे आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी

विक्रम संवत २०२४ मे आचार्य श्री शिवसागरजी

विक्रम संवत २०२८ में मुनि श्री ज्ञानसागरजी

विक्रम संवत २०३० में मुनि श्री नमीसागरजी

विक्रम संवत २०३१ में मुनि श्री सिद्धसागरजी

विक्रम संवत २०३३ में मुनि श्री श्रेयांससागरजी

विक्रम संवत २०३५ मे मुनि श्री कीर्तिसागरजी

विक्रम संवत २०३६ में मुनी श्री रयणसागरजी

विक्रम संवत २०३७ में आचार्य श्री धर्मसागरजी

विक्रम संवत २०४३ में आचार्य श्री सन्मति सागरजी

विक्रम संवत २०४६ में आचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी

विक्रम संवत २०५० में आचार्य श्री कुंथुसागरजी

उक्त विवरण प्रतापगढ़ में हुए संतों के ससंघ चातुर्मास काल का है इसके अतिरिक्त समय समय पर यहाँ साधु सतों का परिभ्रमण तथा लबें समय तक निवास होता रहा है।

वर्तमान में प्रतापगढ़ के हूमड़ समाज से दीक्षीत

१- श्री पूरणमल शांतिमलजी शाह- श्री स्वयंप्रभु सागरजी महाराज

२- श्रीमति कांताबाई सनतकुमारजी तलाटी- श्रीमति शांतिमति माताजी

प्रतापगढ़ के एक ही परिवार से दो संत -

सेठ पूनमचंद घासीलाल जवेरी के पुत्र

१- श्री गेंदमलजी - स्व. समाधि सागरजी महाराज (मुनीश्री)

२- श्री मोतीलालजी- स्व. मुनी श्री सुबुद्धिसागरजी महाराज।

हूमड़ इतिहास में प्रतापगढ़ की महत्वपूर्ण भूमिका

-श्री भैयालाल बंडी

हूमड़ समाज की विकसित प्रवाहित गंगालहरी की एक विशाल धारा प्रतापगढ़ (राजस्थान) है। जिस प्रकार ईडर, सागवाड़ा, बागड़ आदि हूमड़ समाज की माँ वसुंधरा रही है उसी प्रकार प्रतापगढ़ भी इस श्रंखलां की एक प्रमुख कड़ी है। स्थानीय हूमड़ समाज बुद्धि, व्यवसाय व राज्यसत्ता का धनी रहा है।

हूमड़ समाज के क्रिया कलापों से प्रतापगढ़ ने समूचे भारत में ख्याति अर्जित की है। प्रतापगढ़ के चप्पे चप्पे पर हूमड़ समाज की अक्षुण्ण छाप अंकित है। समाज की विशाल हवेलियाँ, शिखरबंद विस्तृत अद्वितीय विशाल मंदिर समाज के संस्कार व वैभव की झांकी है। राज्य के उच्चतम पदों पर आसीन एवं व्यवसाय में चहुंमुखी विकास के लिये स्थानीय हूमड़ समाज प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है।

जैसे - जैसे समाज का विस्तार हुआ, स्थानीय समाज की इकाइयों ने सोचा कि अब यह क्षेत्र हमारे लिये छोटा रह जाएगा। अतः कालांतर में समाज के अनेक परिवार यहाँ से बंबई, इंदौर, उज्जैन, रतलाम, नीमच, भोपाल, देवास, मंदसौर, अजमेर, जयपुर, सुरत, पूना, हैदराबाद, भुसावल, बेलगाँव, अहमदाबाद, चालीसगाँव, मालेगाँव, दिल्ली, आदि भारत के कोने - कोने में जा बसे। कुछ परिवार विदेशों में भी जम गये। जहाँ भी ये लोग पहुंचे, अपना निरंतर विकास किया व ख्याति अर्जित की।

एक समयर था जब प्रतापगढ़ मे तीन हजार से अधिक हूमड़ संख्या थी। आज यहाँ से पहुंचे बंबई एवं इंदौर में इन प्रतापगढ़ प्रवासी हूमड़ निवासियों की संख्या दोनों नगरो में तीन तीन हजार है जिन्होंने स्वयं के श्रम साधना द्वारा निरंतर विकास किया है। इनमे से कई इंजिनियर्स, डॉक्टर्स, चार्टर्ड एकाउटैंटस, विशिष्ट वैज्ञानिक, विशिष्ट कंपनियों में उच्च पदों पर पदासीन एवं श्रेष्ट व्यवसायी हो गये है। इनमे से बंबई निवासियो का तो आज भी अपनी जननी जन्मस्थली प्रतापगढ़ से पूरा लगाव है। उन्होने बंबई में अपनी कई संस्थाओं की स्थापना प्रतापगढ़ के नाम से ही नामांकित की है जैसे ''प्रतापगढ़ (राजस्थान) प्रगतिसंघ, बंबई '', ''प्रतापगढ़ जैन युवा मंच , बंबई '' आदि। इसके अतिरिक्त ये आज भी अपनी इस मातृस्थली प्रतापगढ़ की गतिविधियों के विकास हेतु सहयोगी व सहभागी बने हुए है। विशिष्ट अवसरों पर सपरिवार प्रतापगढ़ आते ही रहते है। यानि कि '' हम प्रतापगढ़ के है, '' इस प्रकार प्रतापगढ़ के प्रति स्नेह पूर्ण धरणा इनमें हृददयांकित है।

श्री १००८ सुमतिनाथ भगवान मूलनायक घीया मंदिर प्रतापगढ़ (राजस्थान)

श्री १००८ सीमंधर स्वामी मूलनायक
सीमंधर जिनालय, प्रतापगढ़ (राजस्थान)

श्री १००८ सहस्त्रफणी पार्श्वनाथ
मोटा मंदिर देवगढ़ (राजस्थान)

प्रवेश द्वार घीया मंदिर प्रतापगढ़ (राजस्थान)

श्री १००८ श्री आदिनाथजी नया मंदिर प्रतापगढ़ (राजस्थान)

गुमानजी मंदिर चंद्रप्रभु नेमिनाथ आदिनाथ (मूलनायक) प्रतापगढ़ (राजस्थान)

प्रवेश द्वार गुमान जी मंदिर प्रतापगढ़ (राजस्थान)

झालरा पाटन : मंदिर का बाहरी दृश्य

चांदखेड़ी : भगवान महावीर की मूर्ति

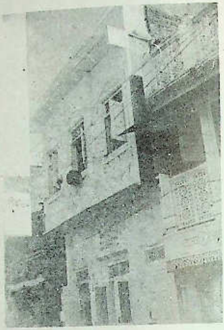

श्री सीमंधर जिनालय लुहार गढ़ी प्रतापगढ़ (राजस्थान)

भगवान आदिनाथ खमेरा (राजस्थान)

मंदिर - विवरण खड़क क्षेत्र (४)

स्थान :-उदयपुर

राज्य राजस्थान

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिद्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम
श्री दिगम्बर जैन मंदिर बावलवाडा	आदिनाथ	प्रतिष्ठा वर्ष १९२६ वि. सं. पुनः प्रतिष्ठा-१९५९ वि.सं. सकल दि. जैन समाज बावलवाडा	स्थानीय मंदिर	बावलवाडा तेह.- खेरवाडा	पिछावाड़ा सलूम्बर डूंगरपूर से	कडिया खूमजी एण्ड नगजी भाई दि. जैन विद्यालय बावलवाडा
श्री भगवान आदिनाथ दि. जैन अतिशय क्षेत्र खुणादरी	आदिनाथ (अष्टधातु प्रतिमा)	शिलालेख- १५६९ विक्रमी १४०१ विक्रमी १४८० विक्रमी	अतिशय क्षेत्र खुणादरी (बावलवाडा) तेह. खेरवाडा	जैन समाज की वर्तमान में कोई बस्ती नहीं है।		

खड़क क्षेत्र (४)

श्री दिगम्बर जैन मन्दिर नयागाँव	आदिनाथ	निर्माण वर्ष १९५० वि. सं. प्रतिष्ठा वर्ष १९५० वि. सं. पुनः प्रतिष्ठा २०४७ वि. सं. ध्वजादंड चढ़ाने की प्रतिष्ठा सकल दि. जैन दशा हूमड़ पंच नयागाँव	स्थान्कीय मंदिर	नयागाँव तेह- खेरवाड़ा	महीडा एवं थाणा	(१) शाह थावरचंद खेमचंद चेरिटेबल ट्रस्ट नयागाँव शाखा- हैदराबाद (२) सेठ कस्तूरचंद अमथालाल दि. जैन विद्यालय नयागाँव

स्थान :- उदयपुर

खड़क क्षेत्र (२)

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिद्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम
श्री १००८ श्री भगवान महावीर अतिशय क्षेत् श्री वर्धमान् नगर चित्रोड़ा छाणी	महावीर स्वामी	शिलालेख- प्रतिष्ठा-वि.सं. १५०९ पुनः प्रतिष्ठा- वि.सं. २००१ प्रतिष्ठाचार्य- भट्टारक यशकीर्तिजी ऋषभदेव	अतिशय क्षेत्र वर्धमान नगर चित्रोड़ा वाया-छाणी तेह- खेरवाड़ा जि.- उदयपुर	कोई बस्ती नहीं है।		
श्री दिगम्बर जैन मंदिर छाणी	संभवनाथ			छाणी तेह.- खेरवाडा जिला.- उदयपुर	कणावई	आ. शांतिसागरजी ग्रन्थमाला छाणी सेठ लल्लूभाई लक्ष्मीचंद चोकसी दि. जैन विद्यालेय छाणी

खड़क क्षेत्र (१)

श्री दिगम्बर जैन मंदिर भूधर	वासुप्पूज्य	विक्रम सं- १९५० लगभग पुनः प्रतिष्ठा- वि.सं. २०४९ प्रतिष्ठाचार्य- पं.मोतीलाल मार्तन्ड़ प्रतिष्ठाकारकः- श्री चन्द्रेश कुमार लक्ष्मीलालजी जैन भूधर एवं सकल दि. जैन दशा हूमड़ समाज, भूधर	स्थानीय जिनालय	भूधर तेह- खेरवाड़ा	वावडीदरा	सेठ खेमचंद लालजी दिगम्बर जैन विद्यालय भूधर

स्थान :- उदयपुर जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिद्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम
श्री १००८ श्री शान्तीनाथ दि. जैन मन्दिर	श्री शांतिनाथ	-	-	ओगना ता. झाडोल Pin ३१३७०२		
श्री आदिनाथ दि. जैन मन्दिर	श्री आदिनाथ	-	-	समीजा ता. कोटडा		
श्री १००८ श्री सम्भवनाथ दि. जैन मन्दिर	श्री सम्भवनाथजी	-	-	बड़ा बाज़ार, उदयपुर		
श्री जैन श्वेताम्बर बीसा हूमड़ शीतलनाथजी महाराज का मन्दिर	श्री १००८ श्री शीतलनाथजी-		-	जड़ीयो की ओल, उदयपुर		
श्री १००८ श्री पार्श्वनाथ दि. जैन बीसा हूमड़ सेठो का मन्दिर	श्री १००८ श्री पार्श्वनाथजी भगवान		-	उदयपुर (राज.) ३१३००१		(१) शांतिनाथ-छगनलालजी (२) नेमिनाथ-दलीचन्दजी (३) महावीरजी-समस्त पंच वि. सं. १९४४

स्थान :- उदयपुर

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिद्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम
श्री आदिनाथ दि. बीसा हूमड़ सोनियो का मन्दिर (सम्मेत शिखरजी का मन्दिर)	श्री १००८ श्री आदिनाथजा भगवान	-	-	बदनोर की हवेली के पास, उदयपुर (राज.) पीन. ३१३००१		
दि. जैन पद्मप्रभु जैन मन्दिर	श्री पद्मप्रभुजी	श्री हीरालाल बोहरा (हूमड़-खेरजा)	-	चणावदा ता. गीर्वा जि. उदयपुर (राज.)-३१३८०१		
श्री १००८ श्री चन्द्रप्रभु दि. जैन मन्दिर (बीसा हूमड़ समाज)	श्री चन्द्रप्रभु	-		ग्राम-आयड़ उदयपुर (राज.) pin. ३१३००१		

स्थान :- उदयपुर

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मू.ानायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिद्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम
श्री चन्द्रप्रभुजी दि. जैन बीसा पंथ आमनाय जूना मन्दिर	श्री चन्द्रप्रभुजी	सम्वत् १८२४ वर्षे मा मासोत मासे शुल्क पक्ष पंचम् तीर्थे चोम वासरे घटिका पंचम् ते मुहर्ते श्री चन्द्रप्रभुजी विराजमान हुआ छे:॥ श्री मूल संघे सरस्वती गच्छे बलात्कार गणे श्री कुन्दकुन्दाचार्यन्वये भट्टारक जी श्री रत्न चन्द्रजी तत्पटे भट्टारक श्री हर्ष चन्द्र तत्पटे भट्टारक श्री शुमचनद्र तत्पटे भट्टारक श्री अमर चन्दजी तत्पटे भट्टारक श्री रतनचंदजी तत्पटे भट्टारक श्री श्री पदम्मचन्द्रजी तत् उपदेशात् मैंढा देवजी सुत मेढा मान जी सुत मेढा कुबेरजी तस्य भार्या कपुदई ब्रह्म जाती कुबेरजी ये श्री चन्द्र प्रभुजी नो प्रसाद प्रतिष्ठात राणाजी श्री पू. अरासिंघजी ने वारे प्रतिष्ठा हुई छे: श्री जुना देहरा कल्याण मस्तु श्री श्रुय मवन्तु मंगलम गौतम प्रभु मंगलम श्रजिन सेणा गाय जेणो धर्मेस्तु मंगलम ।॥, द्रव्य ७०० शरासीया से।		जूना मिन्दर ट्रस्ट मोती चोहट्टा, उदयपुर (राज.)		

स्थान :- उदयपुर

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिद्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम
श्री दिगम्बर जैन मंदिर भाणदा	धर्मनाथ	प्रतिष्ठा:- वि. सं. १९८९ प्रतिष्ठाचार्य - भट्टारक यशकीर्ति सकल दि. जैन समाज भाणदा पुनः प्रतिष्ठा ई.स. १९८७ ध्वजादंड एवं माणक स्तंभारोपण प्रतिष्ठा कारक पं. फतहसागर सकल दि. जैन समाज भाणदा	स्थानीय मंदिर	भाणदा तेह.- खेरवाड़ा	भीलुडा बिछीवाड़ा आदि	पंचोली देवचंद मोतीचंद दिगम्बर जैन विद्यालय
श्री नेमिनाथ सत्पथ दशा हुमड़ दिगम्बर जैन मंदिर	नेमिनाथ	प्रतिष्ठा वर्ष- वि. सं. २०४६ प्रतिष्ठाचार्य - ब्रह्मचारी सूरजमलजी निवाई प्रतिष्ठाकारक- सकल दिगम्बर जैन दशाहूमड़ समाज	स्थानीय मंदिर	खेरवाड़ा तेह.- खेरवाड़ा	पिछले ३०-३५ वर्षो से छाणी बावलवाड़ा नयागाँव भाणदा	श्री नेमिनाथ दि. जैन (दशाहूमड़) पाठशाला संस्थापक- श्री बाबूभाई साकलचंदजी सर्राफ खेरवाड़ा

स्थान :- उदयपुर

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिद्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम
श्री दिगम्बर जैन मंदिर, देवल	आदिनाथ	पुनः प्रतिष्ठा- सं. २०१२	स्थानीय जिनालय	देवल तेह.- डूंगरपुर	घोडी	
श्री दिगम्बर जैन मंदिर . बिछीवाड़ा	शांतिनाथ	प्रतिष्ठा - वि. सं. १९६५ पुनः प्रतिष्ठा- वि.सं. २००७	स्थानीय जिनालय	बिछीवाड़ा जि. डूंगरपुर	टोडा (गुज) साँबला महीडा डूंगरपुर	श्री खूमजी भाई गेबिलाल शाह दि. जैन विद्यालय बिछीवाड़ा मिक

स्थान :- डुगंरपुर

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिद्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री देवाधिदेव नागफणी पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर प्रबन्ध- दशा हूमड़ समाज बिछीवाड़ा - खड़कक्षेत्र .	नागफणी पार्श्वनाथ	प्रतिष्ठा लेखः- श्री मूल संघ १६३७ वर्षे वैसाख वदी ८ बुधवारे भट्टारक श्री गुणकीर्ति उपदेशात् पुनः प्रतिष्ठा- वि. सं. २००८	अतिशय क्षेत्र	मोदर तेह.- डूंगरपुर	यहाँ जैनो की कोई बस्ती नहीं है।	ट्रस्ट बनाने की कार्यवाही अंतिम चरण मे हैं।

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री १००८ श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर (तेरापंथी) डडूका	श्री १००८ श्री पार्श्वनाथ	प्रतिष्ठाचार्य- श्री पन्नालालजी नाणावटी प्रतिष्ठित करानेवाले श्रेष्ठी- श्री लक्ष्मीलाल S/o श्री मंगलजी डडूका वेदी प्रतिष्ठा ११ मई १९८४ १८ नवम्बर १९९३	-	डडूका तह.- गढ़ी जि. बाँसवाड़ा (राज) पीन. नं. ३२७०२२		श्री दिगम्बर जैन पाठशाला, डडूका
श्री दि.जैन अतिशय क्षेत्र अन्देश्वर पार्श्वनाथ प्रबन्धक - श्री समस्त पंच दशा हूमड़ बिसपन्थी कुशलगढ़ पी.बासवाडा २ पार्श्वनाथ नयामन्दिरजी ३ मानक स्तंभ ४ पारसगीरी चोबीसी	अतिशय युक्त १००८ पार्श्वनाथ पार्श्वनाथ ४१-३ संगमरमर से बना चोबीस भगवान की प्रतामांडा व त्रिमुर्खी	श्री पाचीन भूगर्भ से प्रारम अतिशय युक्त पार्श्वनाथ की प्रतिमा पर कोई लेख नहीं है। यह प्रतिमा परमार कालीन सभवः१०मा ११ वीं. शताब्दी की होनी चाहिए प्रशस्ति लेख विक्रम सं.१९६५ वैशाख सुदी श्री मुल संगे बलात्कार गणे कुन्दकुन्दाचार्य मुषण ? उपदेशात गादी ग्वालियर ग्राम कुशलगढ़ पंच दशा हूमड़ प्रतिष्ठान	बांसवाड़ा जी. के दक्षिणी भाग का मुख्य अतीसय तीर्थ क्षेत्र।	अन्देश्वर पं.अन्देश्वर ते. कुशलगढ़ जी. बांसवाड़ा		यात्रियों की सुविधा के लिये विशाल धर्मशाला है जिसमें समस्त आधुनिक सुविधा उपल्बध हैं।

स्थान :- मन्दसौर

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जिनालय बण्डीजी का बाग (कांच का मंदिर) मन्दसौर (म.प्र.)	श्री १००८ पार्श्वनाथ भगवान	संवत १९४८ शाके १८९३ ज्येष्ठ शुक्ल सोमवारे श्री मूलसंघे सरस्वती गच्छे बलात्कार गणे कुंदकुंदाचार्य भट्टाचार्य श्री हेमचन्द्रजी तत्पट्टे भट्टारक पद्मनन्दी तत्पट्टे राजेन्द्र भूषणजी तत्पट्टे कनक कीर्तिजी गुरू प्रतिष्ठा करापित नगर मन्दसौर मालव प्रदेश राजमहाराज श्री माधोरावजी सिंदे साहब आलीजाह बहादुर मध्यं दशा हूमड़ जाति नवलचन्द तिलोकचन्द पुनमचन्द पुत्र लक्ष्मीचन्द प्रतिष्ठा करापितं।	अतिशय क्षेत्र	मन्दसौर (म.प्र.) pin-४५८००२	१५० वर्ष पूर्व बागड़ प्रान्त से	श्री पार्श्वनाथ दि. पाठशाला बण्डीजी का बाग, मन्दसौर

स्थान :- मन्दसौर

राज्य राजस्थान

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्दक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री पार्श्वनाथ दि. जिनालय (बंडीजी का बाग)		स्थापना दि.ज्येष्ठ शुक्ला चौथ वि.सं.१९४८ प्रतापगढ़ के निवासी श्री श्रेष्ठी श्रावक पूनमचंदजी बण्डी दशा हूमड़ ने लाखों रूपये व्यय कर मंदिर का निर्माण व प्रतिष्ठा करवाई मानस्तंभरियण कर्ता श्री नरेशकुमारजी केशरीमलदोशी जो प्रतापगढ़ के ही मूल निवासी है। इन्होंने चार लाख रूपये व्यय कर ३१ फीट ऊँचा मान स्तंभ स्थापित करवाया।		मन्दसौर (म.प्र.) pin४५८००२		

स्थान :- उदयपुर

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्दक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन बिस पंथ आमनय कोल्यारी	श्री १००८ श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा	(१) मूलनायक की प्रतिमा काला पाषाण सी वसंग मर की है। सन ८५ में — जयपुर मगवाई गई हैं। (२) श्री फतहसागरजी जैन शास्त्री उदयपुर की द्वारा प्रतिष्ठा कराई गई हैं। (३)श्री समस्त दि.जैन दशाहूमड़ समाज को पंचा की द्वारा प्रतिष्ठता कराई गई हैं। (४) संवत २०४९ का जैठ वद प सं ता११-५-८५ को पंच कल्याण प्रतिष्ठा कराई गई।		कोल्यारी तहसिल झाडोल उदयपुर(राज.) पिनकोड नं.३१३००१		श्री सम्भनाथ दिगम्बर जैन पाठशाला है। कोल्यारी
श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, बिछावेड़ा श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, बिछावेड़ा	श्री १००८ श्री भगवान पार्श्वनाथजी श्री आदिनाथ भगवान			बिछावेड़ा तह.झाड़ोल जि.उदयपुर pin-३१३००१ (राज.)		

स्थान :- उदयपुर

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्यक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री दिगम्बर जैन दशा हूमड़ मंदिर कोलियारी	भगवान आदिनाथ	प्रतिष्ठाचार्य पं.फतहसागरजी शास्त्री धानमण्डी		कोलियारी जि.उदयपुर(राज.) pin-३१३००१		

स्थान :- प्रतापगढ़

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्दक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री सीमन्धर दि. जिनालय (शुद्ध आम्नाय) लुहार गली, प्रतापगढ़	श्री सीमन्धर स्वामी	प्रतिष्ठाचार्य पं. बाबूलालजी शास्त्री समय चैत्र शुक्ला त्रयोदशी दि.१७-४-९३ प्रतिष्ठाकारक दिगम्बर जैन मुमुक्षु मंडल, प्रतापगढ़		प्रतापगढ़ जि.चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन - ३१२६०५		
श्री शांतिनाथजी चितौड़गढ़	मूल प्रतिमा भगवान अजितनाथ ख्याति प्राप्त प्रतिमा श्री शांतिनाथ भगवान	शांतिनाथ भगवन की मूर्ति पर लेख सं.१९०२ ना वर्षे साके १७६७ प्रबल श्री में मासोत्तम मासे शुभ कारिमासे कृष्ण पक्षे तिथौ ९ दिन शनिश्चरै श्रीमत् काष्ठसंघ नदी तट गच्छे तिक्का गणे श्रीमत भट्टारक श्री रामसेनजी आम्नादतद अनुक्रमेण भट्टारक भुवनकीर्ति, भट्टारक प्रतापसेन अनुक्रमेण भ. विजयसेन जी. त.सा. देवेन्द्रकीर्तिजी ने भ. नेमसेनी मास भ. श्रीमत हेमचंद्र श्री शांतिनाथ बिंब मृगलच्छन गांव बमोतर मध्ये श्री शांतिनाथ मंदिर ख्यात नरसिंहापुरा बड़ी शाखा न्याय राजश्री दिवाण दलपतसिंहजी राज्य श्री शांतिनाथ बिंब प्रतिष्ठापित।		ग्राम बमोतर पोस्ट-प्रतापगढ़ जि. चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन -३१२६०५		

स्थान :- प्रतापगढ़

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्दक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
स्मारक दादावाडी तालाब के पास, प्रतापगढ़		स्थापना समय दि.२५-११-८० को श्री बाबूलालजी झवेरलालजी भांचावत व श्री चांदमलजी पूनमचंदजी दलाल ने दादावाडी में सिद्धचक्र पूजन विधान करवाया तथा दादावाडी की भूमि व समस्त निर्मांणित वास्तुकला स्थानीय गुमानजी के मंदिरजी को भेंट कर उन्हें कब्जा सोंपा। व्यवस्थपिका श्री गुमानजी के मंदिर के पंच।		दादावाडी पता तालाब के पास, प्रतापगढ़(राज.) पिन ३१२६०५		निर्माण कार्य दादावाडी पंचों के सिपुर्द होने के पश्चात पंचों ने नूतन शिखर देरासन, श्री सिद्धाचजी तीर्थपट्ट एक गुरू मंदिर आदि बनवाये। वर्तमान व्यवस्थापक श्री इन्दामलजी दलाल निचला बाज़ार प्रतापगढ़
श्री दिगम्बर जैन मोटा मंदिर (तरेह पंथ आम्नाय) देवगढ़, प्रतापगढ़ (राज.)	श्री मल्लीनाथ भगवान	मूर्तियों पर अंकित (१) सहस्त्र फणी पार्श्वनाथ ५१४ फीट ऊँची मूर्ति पर अंकित संवत १५५८ बलात्कार गच्छे (शेष पढने में नहीं आता) मूल प्रतिमा का समय सं.१०७५ सभी के लेख अस्पष्ट है अतः पढने में नहीं आता। ऐसा लगता है कि ये प्रतिमाएँ सागवाड़ा या अन्यत्र प्रतिष्ठित होकर यहाँ बिराजमान की गई हैं। वर्षाशाह के पुत्र वद्धमान व पौत्र दयाल शाह ने २ फरवी सन १७१८ में मंदिर की प्रतिष्ठा करवाई।		पोस्ट देवगढ़ प्रतापगढ़ जि. चित्तौड़गढ़ (राज.) pin-३१२६०५		

स्थान :- प्रतापगढ़

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से-	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री विघ्नहरण पार्श्वनाथ (श्वेतांबर आम्नाय) ''छोटा मंदिरजी''	श्री पार्श्वनाथ भगवान	स्थापना १८वीं शताब्दि में देवगढ़, प्रतापगढ़ के हूमड़ समाज के सालगिया, मांचावत, चांपावत व जवासा वालों के सहयोग से ही मंदिर का निर्माण हुआ।		पोस्ट देवगढ़ द्वारा प्रतापगढ़ जि.चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन -३१२६०५		
गढ़िया चैत्यालय गढ़ियावालों की पोल, खासगीवालों की गली, प्रतापगढ़		अवधि यहा चैत्यालय २०० वर्ष पुराना है।		पोस्ट प्रतापगढ़ जि. चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन ३१२६०५२		
श्री शांतिनाथ चैत्यालय	श्री शांतिनाथ भगवान	प्रतिष्ठाचार्य श्री पं.वर्द्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री प्रतिष्ठाकारक मींडा परिवार स्थापना-३५ वर्ष पूर्व, सन १९५९ प्रबन्ध कर्ता मींडा पन्नालाल अमृतलाल तेली गली, प्रतापगढ़				
श्री दिगम्बर जैन जुना मंदिर		मंदिर निर्माण समय ३५० वर्ष पूर्व नोट : विशेष (१) इस नीनोर गाँव में पहले हूमड़ समाज के अधिक घर थे। मंदिर अच्छा बना हुआ है । (२) यहाँ एक श्वेताम्बर मंदिर भी है।		ग्राम नीनोर तह. अरनोद (प्रतापगढ़) जि.चित्तौड़गढ़ (राज)		

स्थान :- प्रतापगढ़

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्यक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम
श्री दिगम्बर जैन मंदिर, कोटडी		यह मंदिर भी ३५० वर्ष पुराना है नोटः इस गाँव में भी हूमड़ समाज के पहले ४०-५० घर थे। सब बाहर चले गये। अब दो ही घर रह गये हैं।		ग्राम कोटडी तह. अरनोद (प्रतापगढ़) जि. चित्तौड़गढ़(राज.)		
श्री सीमंधर जिनालय श्री भट्टारक यशकीर्ति दि.जैन बोर्डिंग, प्रतापगढ़	श्री सीमंधर स्वामी	प्रतिष्ठाचार्य भट्टारक यशकीर्ति प्रतिष्ठाकारक शाह शोभागमल मेघराज जरीवाला के पुत्र नेमचंदभाई तत्पुत्र श्री बालूभाई बम्बई निवासी गोत्र कलशधर समय- श्री वीर सं.२४८० वि. स.२०११ वै शुक्ला ३ बुधवासरे १ दि.५-५-४		प्रतापगढ़ जि.चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन - ३१२६०५		

स्थान :- प्रतापगढ़

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्यक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री पद्मप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर (तेर पंथ आम्नाय) सदर बाजार, कोतवाली के सामने प्रतापगढ़	श्री पद्मप्रभु भगवान	प्रतिष्ठाकारक : पाड़लिया मोहनलालजी सपरिवार समय दिनांक-८-५-१९८९ प्रतिमा विवरण धातु पाषाण रंग-सफेद, साइज २.५''		प्रतापगढ़ जि.चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन -३१२६०५		
श्री साड़ेबारह का मंदिर कोड़िया गली, प्रतापगढ़	श्री चंद्रप्रभु भगवान	प्रतिष्ठा वैशाख शुक्ला तृतीया संवत १६५२ ३.५'' पद्मासन सफेद पाषाण		प्रतापगढ़ जि.चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन-३१२६०५		
श्री घीयाजी का मंदिर ,घाईजी का दरवाजा, प्रतापगढ़	श्री सुमतिनाथ भगवान	प्रतिष्ठाकारक श्री भगवानदासजी हुकमचंदजी घीया, समय : माह शुक्ला दसमी, संवत १९३१		प्रतापगढ़ जि.चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन-३१२६०५		

स्थान :- प्रतापगढ़

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्धक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से.	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री गुमानजी का मंदिर (श्वेताम्बर आम्नाय) निचला बाजार, प्रातापगढ	श्री चंद्रप्रभु भगवान	प्रतिष्ठाचार्य उपाध्याय कान्ति स्मरजी प्रतिष्ठा समय फाल्गुन शु.३ सं १८३८ प्रतिष्ठाकारक श्री गुमानजी चंपावत लेख - विवरण संवत १८३८ शाके १७०३ प्रवृतमाने फाल्गुन शुक्ला ३ शुक्रवारे हूमड़ जातीय लघु स्वजनै मातरेसर गोत्र चंपावत साहा कसलजी गृहेभार्या बेमाबाई कुक्षे पुत्र जात साह गुमानजी गृहे भार्या कनकबाई एत श्री सिद्धचक्रमंत्र करषितं श्रीमदह तपागच्छे श्री भट्टारकजी शांतिसागरसूरि राज्ये उपाध्याय कांतिस्मंद्र एवं (शाहु पांछीय) ज्योति सुंदरेण प्रतिष्ठितं		प्रतापगढ़ जि. चित्तौड़गढ़ (राज.)पिन-३१२६०५		
श्री आदिनाथ दि. जैन ''नया मन्दिर'' सदर निचला बाजार प्रतापगढ़.	श्री आदिनाथ भगवान	प्रतिष्ठाचार्य श्री भट्टारक चंद्रकीर्तिजी के शिष्य भट्टारक श्री यशकीर्तिजी समय वि.सं.१८५२ प्रतिष्ठा कारक-समस्त दि.जैन बीसा हूमड़		प्रतापगढ़ जि. चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन-३१२६०५		

स्थान :- प्रतापगढ़

जिनालयों / स्मारकों के नाम	जिनालय के मूलनायक	मूलनायक-लेख विवरण प्रतिष्ठाचार्य करानेवाले श्रेष्ठीवर्य नाम सगोत्र एवं संवत	सिध्दक्षेत्र/ अतिशय क्षेत्रादि	गांव नगरका नाम पिन तहसील	हूमड आगमन कब ? कहां से	धार्मिक / सामाजिक/ शैक्षणिक/ महिला संस्थाओं के नाम -
श्री जूना मंदिरजी (बीस पंथ आम्नाय) मानक चौक, प्रतापगढ़	१. चंद्रप्रभु २. महावीर भगवान	समय वैशाख शुक्ला तृतीया सं. १५४८ विवरण : भगवान महावीर स्वामी प्रतिमा के नीचे संवत १५४८ का वर्षे वैशाख सुदी ३ मंगलवार श्री मूलसंघे भट्टारक श्री जैनेन्द्र कीर्तिजी भगवान चंद्रप्रभु पर खुदा हुआ सं. १६३२ है।		प्रतापगढ़ जि.चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन ३१२६०५		
श्री दिगम्बर जैन भाईजी का मंदिर (तेरह पंथ आम्नाय) गांछा गली, प्रतापगढ़	श्री चंद्रप्रभु भगवान	विवरण : श्याम वर्ण पाषाण ३.५'' फीट पद्मासन प्रतिष्ठाचार्य भट्टारक जैनेन्द्रकीर्तिजी समय वैशाख सुदी ३ संवत १५४८ विवरण : संवत १५४८ का वर्षे वैशाख शुक्ला तृतीया मंगलवार श्री मूलसंघे भट्टारक श्री जैनेन्द्रकीर्तिजी।		प्रतापगढ़ जि. चित्तौड़गढ़ (राज.) पिन-३१२६०५६		

हूमड़ों के मुख्यनगर
उदयपुर (राजस्थान)

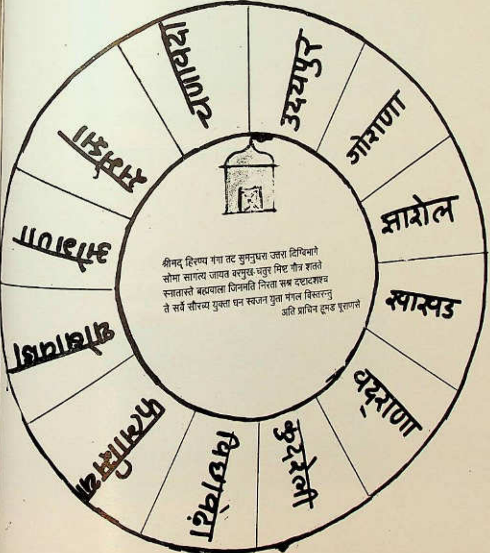

श्री १००८ ऋषभदेव दि. जैन मंदिर उदयपुर (राजस्थान)

श्री जूना मंदिर जी दशा हूमड़ समाज उदयपुर (राजस्थान)

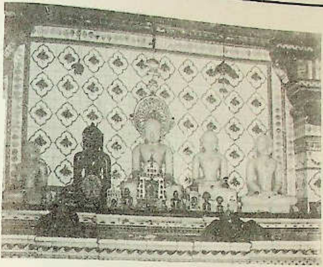

श्री १००८ चन्द्रप्रभू दि. जैन मंदिर उदयपुर (राजस्थान)

कोलियारी उदयपुर (राजस्थान)

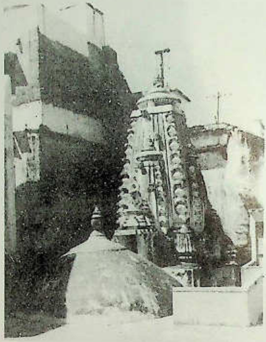

श्री जूना मंदिर दशा हूमड़ समाज उदयपुर (राजस्थान)

श्री १००८ ऋषभदेव
दि.जैन मंदिर उदयपुर
(राजस्थान)

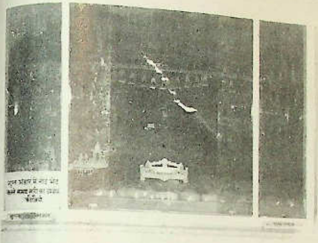

श्री १००८ श्री आदिनाथ
दि. जैन तीर्थ
सम्मेदशिखर प्रतिमूर्ति
आदिनाथ दि. जैन मन्दिर
उदयपुक (राजस्थान)

श्री १००८ दिगम्बर जैन
मंदिरमें धातु प्रतिमा पर
लिखा सुआ लेख, उदयपुर
(राजस्थान)

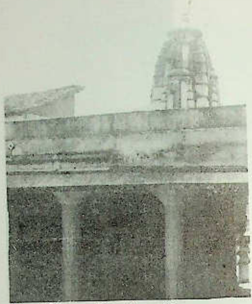

श्री १००८ श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर उदयपुर (राजस्थान)

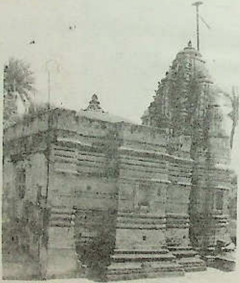

श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर उदयपुर (राजस्थान)

श्री १००८ पार्श्वनाथ दि. जैन बीसा हूमड़ सेढों का मन्दिर, उदयपुर

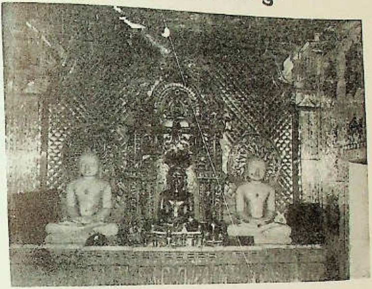

सेढों के मन्दिर मे वेदी पर पद्मप्रभु, आदिनाथ एवं
अजीतनाथ भगवान के बिम्ब (बाएँ से दायें)

पार्श्वनाथ दि. जैन बीसा हुमड़ सेढो का मन्दिर उदयपुर (राज.)-३१३००१.

श्री १००८ श्री संभवनाथ दि.जैन मन्दिर

मूलनायक श्री संभवनाथजी

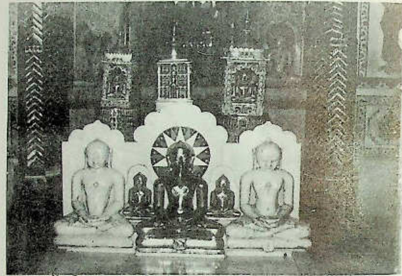

वेदी पर मध्य में श्री १००८ श्री संभवनाथजी, पृष्ठ भाग में मध्य में नन्दीश्वर द्वीप एवं दोनों ओर संभवशरण स्थापना

संभवनाथ दि. जैन मन्दिर (बीसा हूमड़ समाज)

बड़ा बाडबाजार, उदयपुर (राज.) ३१३००१.

श्री १००८ श्री शीतलनाथ जैन श्वेताम्बर बीसा हूमड़ मन्दिर मूलनायक

श्री जैन श्वेताम्बर बीसा हुमड़ शीतलनाथजी महाराज का मन्दिर

जैन श्वेताम्बर बीसा हूमड़ शीतलनाथजी महाराज का मन्दिर
जड़ियों की ओल, उदयपुर (राज.)-३१३००१.

श्री १००८ दिगम्बर जैन मन्दिर,
विचोवड़ा, उदयपुर

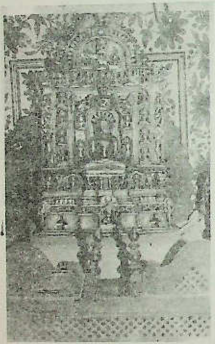

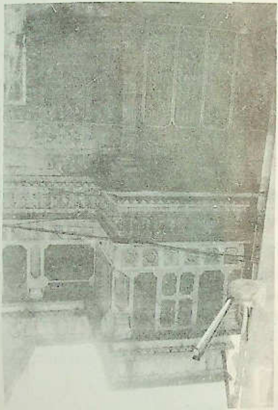

श्री विचोवडा मन्दिर में धातु प्रतिमा पर लिखा हुआ लेख

संवत १६२ वर्षे वैशाख सुदी ५ श्री मुलसंधे सरस्वती गच्छे बलात्कार गणे श्री कुन्दकुन्दाचार्य नी देवासी भट्टारक श्री ज्ञानभूषण देवास्त श्री भट्टारक श्री विजयकिर्ती देवासी भट्टारक श्री शुप्तचन्द्र देवास भट्टारक पेन श्री सकलकिर्ती देवासी भट्टारक श्री भवनकिर्ती श्री सुमतीकिर्ती भट्टारक श्री गुणकिर्तीय उपदेशात् भीलोडावास्तवा उतरेश्वर गोत्र शेष्ठ वेणा भार्या रत्नादे मृत्र सं नेमीदास भार्या गमनादे ऐते श्री संभवनाथ नित्यं प्रणामंती श्री तिष्ठतु मुनजे।

श्री १००८ श्री शान्तिनाथ दि. जैन मन्दिर आंगणा

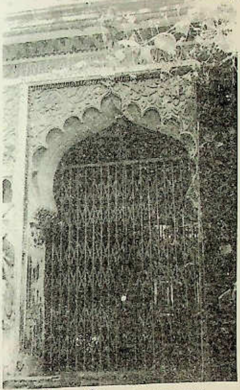

श्री शान्तिनाथ भगवान

राजस्थान स्थित उदयपुर जिले के मेवाड़ प्रान्त के झाडोल तालुका के ओगणा नामके गाँव में यह जिनालय स्थित है। इसमें श्री शान्तिनाथ भगवान की प्रतिमा विराजमान है। जिसका चिह्न हिरण है। यह प्रतिमा प्राचीन समय की मानी जाती है। यह प्रतिमा सफेद संगमरमर के पत्थर की बनी हुई है। यह मन्दिर समाज के पंच के अधिकार में है।, जो श्री समस्त दि. जैन मंदिर आंगणा के नाम से जाना जाता है।

श्री समस्त दि. जैन मंदिर
आंगणा ता. झाडोल,
प्रान्त - मेवाड
जिला - उदयपुर (राज.)
पिन नं. ३१३७०२

श्री १००८ ऋषभदेव दिगम्बर जैन मन्दिर,

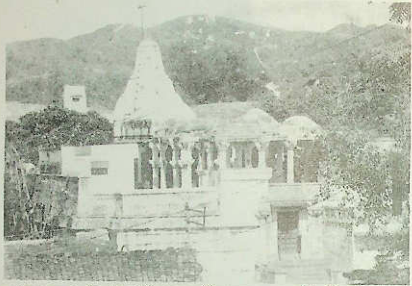

यह एक हजार वर्ष प्राचीन अतिशययुक्त जिनालय राजस्थान के दक्षिण में अरावली की सुरम्य घाटियों स्थित उदयपुर जिले के रवाखड गाम में है। यह शिखर बन्द भव्य जिनालय पाषाण के सुन्दर खम्भों तथा कला के लिये प्रसिद्ध है।

श्री वीर निर्वाण संवत् २४९७ विक्रम संवत् २०२८ का जेष्ट कृष्णा ५ शनिवार दिनांक १५ मई को राजस्थान राज्य के मुख्यमंत्री श्री मोहनलालजी सुखाड़िया के शासन काल में झालावाड़ प्रान्त के रवाखड़ गाम में श्री मूल संघ सरस्वती गच्छ बलात्कार गण में श्री कुन्दकुन्दाम्नायी श्री दिगम्बर जैन दशा हूमड़ बीस पंथी पंच महाजन द्वारा श्री ऋषभदेव जिनालय का जीर्णोद्धार एवं पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव श्रीमान प्रतिष्ठाचार्य संहितासूरी भट्टारक यशकिर्तिजी महाराज एवं उनके सुयोग्य शिष्य जैनरत्न पंच रामचन्द्रजी द्वारा सुसम्पन्न कराया गया। श्रद्धालु परमधार्मिक जैन श्रवकों द्वारा इस पुनीत कार्य में पूर्ण सहयोग दिया गया।

रवाखड
तहसील :
जिला : उदयपुर
(राजस्थान.)

१००८ श्री आदिनाथ दि. जैन सोनियोंका मंदिर, उदयपुर

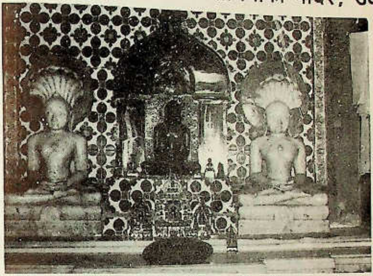

तीर्थराज सम्मेद शिखर प्रतिमूर्ति,

सोनियों का मन्दिर, उदयपुर

आदिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, बदनोर की हवेली के पास, उदयपुर-३१३००१

श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर, बागीदौरा

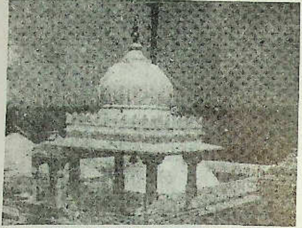

आरस के तथा अन्य पाषाणो से निर्मित यह भव्य जिनालय का मुख्य आकर्षण उसके पत्थरों में चित्रित सुंदर नक्काशी तथा मंदिर की छत तथा अन्य स्थानों पर स्थित नक्काशी दार झरोखे को माना जायेगा । इससे पूरा मंदिर अति भव्य लगता है।

मंदिर में स्थित मूलनायक श्री शांतिनाथ भगवान की प्रतिमा भी बड़ी मनोहारी है। संगमरमर के पाषाण की यह प्रतिमा सुंदर है। मूल नायक श्री शांतिनाथ भगवान की प्रतिमा की दाईं तथा बाईं ओर भी प्रतिमाएँ बिराजमान है। मूल नायक प्रतिमा के नीचे मध्य में भगवान की प्रतिमा भी बड़ी सुंदर है।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ संवत् १९४२ से अब तक पाँच बार हुई है । इसी मंदिर में पाषाण का नव निर्मित मानस्तम्भ भी बड़ा ही सुंदर है।

यहाँ हूमड़ो का आगमन करीबन ८०० वर्ष पूर्व हुआ था जो सागवाड़ा से आये थे ऐसा माना जाता है। गाँव में दि. जैन समाज की कई संस्थाएँ स्थित है । जैसे-

(१). श्री दिगम्बर जैन महा समिति

(२). दिगम्बर जैन कु.यु. नवयुवक मंडल

(३). दिगम्बर जैन पाठशाला

(४). कुन्द कुन्द संस्कृति न्यास समिति

(५). श्री पुष्पदन्त दि. जैन औषधालय

(६). श्री दि. जैन प्रा. विद्यालय

वर्तमान में यहाँ पर १८८ परिवारो के कुल. ११७७ सभ्य निवास करते हैं।

समस्त दि. जैन मंडल
बागीदौरा (राज.)
पिन - ३२७६०१

श्री दिगम्बर जैन महावीर स्वामी मंदिर

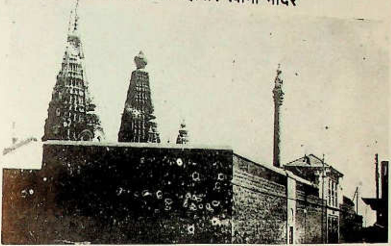

दहिगाँव के दिगम्बर जैन मंदिर में स्थित मूल नायक भगवान श्री महावीर स्वामी की ७ फुट ऊँची काले पाषाण की प्रतिमा अति सुंदर है। इस प्रतिमा की प्रतिष्ठा का समय संवत् १९१० माघ वद ६ रहा है। इस प्रतिमा के प्रतिष्ठाचार्य पं.गुणचन्द्र है। और श्री दोशी खुशाल भीमजी (फलटण) ने इसकी प्रतिष्ठा करवाई थी।

अन्य प्रतिमा। मंदिर । भवन

(१). श्री महति सागर पादुका स्मारक
(२). श्री आदिनाथ स्वामी (कुचेरा में)
(३). श्री महति सागर सिद्धांत भवन
(४). श्री नेमिनाथ स्वामी प्रतिमा
(५). श्री आदिनाथ मूर्ति (कुचारात)
(६). श्री पार्श्वनाथ मूर्ति
(७). श्री सहस्त्रकूट मंदिर (कुचेरा में)
(८). श्री १००८ भ. बाहुबली मूर्ति
(९). रत्नमंच मंदिर
(१०). पं.गुणचन्द्र पुष्पवाटिका

मुनि निवास निर्माण
श्री दि. जैन महावीर स्वामी अतिशय क्षेत्र
दहिगाँव,ता. माला फोरस, जि.सोलापुर
(ट्रस्टी मंडल) दि. जैन हुमड़ समाज (महाराष्ट्र)

श्री १००८ चन्द्रप्रभु दि. जैन मंदिर, अरथूना

अरथूना का दि. जैन मंदिर लगभग १५० वर्ष पुराना है। वैसे इसका प्राचीन इतिहास करीबन ९०० वर्ष प्राचीन है। मंदिर के शिलालेख पर निम्नलिखित विवरण है:-

''विक्रम संवत् ११५६ में परमार वंशी राजा के समय में भूषण नामक महाजन ने इस ''विमलेन्द्र'' का दि. जैन मंदिर का निर्माण कराया''।

वर्तमान में इस दि. जैन मंदिर में मूलनायक श्री १००८ चन्द्रप्रभु भगवान की पद्मासन प्रतिमा बिराजमान है, जिसका प्रतिष्ठा समय वि.सं.माघ शुक्ला पंचमी १९५१ का रहा है। प्रतिमा पर चन्द्रमा का चिह्न अंकित है। मूलनायक प्रतिमा के उत्तर में शांतिनाथ भगवान की पद्मासन में स्थित विशाल प्रतिमाएँ हैं। कई प्रतिमाएँ अतिप्राचीन है । जिस पर चिह्न, संवत् व प्रशस्ति भी स्पष्ट नहीं है। अरभूना के इस मंदिर मे मानस्तंभ भी है।

यह मंदिर प्राचीन समय का रहा है । मंदिर पक्के काले जौलोमिया पत्थर का बना हुआ है। यह मंदिर ९०० वर्ष पूर्व अरभूना से लगभग एक कि.मि. की दूरी पर अमरापुरी नगरी में बना हुआ था।

वर्तमान में यहाँ दि. जैन दशाहूमड़ समाज के ८१ मकान है । गाँव मे जैनियों की आबादी लगभग ६०० की है ।

अरभूना से लगभग १.कि.मि. की दूरी पर नसीयाजी अतिशय क्षेत्र है। यह क्षेत्र लगभग ९०० वर्ष प्राचीन है जो सड़क के किनारे टेकरी पर ४९ (उनवास) खम्भो पर चतुर्मुख प्रतिमाएँ अरंहत की उत्कीर्ण से स्थित हैं। इनके शिलालेख में वि.सं.११३८ का समय लिखा हुआ है।

अरभूना गाँव में समाज की दि.जैन पाठशाला तथा श्री वीतराग विज्ञान कन्या पाठशाला है। यहाँ पर हूमड़ों का आगमन २०० वर्ष पूर्व हुआ था।

समस्त दि. जैन समाज
अरथूना, जि. बांसवाड़ा (राज.)
पिन. ३२७०३२

श्री आदिनाथजी

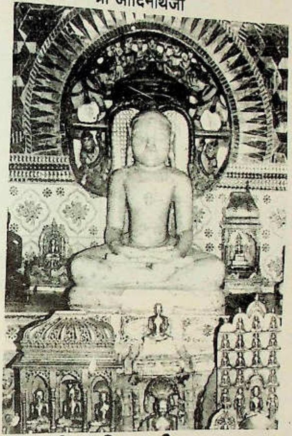

श्री आदिनाथजी भगवान

कोटडा तालुके के समीजा नामक गाँव में श्री आदिनाथजी का जिनालय स्थित है। उसमें श्री आदिनाथ भगवान की पाषाण की प्रतिमा बड़ी मनलुभावनी है। यह प्रतिमा ७० वर्ष पुरानी है। इसमें बैल का चिन्ह है। इसका विवरण भी लगभग ७० वर्ष के आसपास किया गया था। ऐसा माना जाता है। वर्तमान समय में यह जिनालय दिगम्बर जैन समाज आंगणा के अधिकार मे है।

समस्त दि. जैन समाज, आंगणा,
गाँव-समीजा. तालुका-कोटडा

श्री १००८ श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर, नौगामा

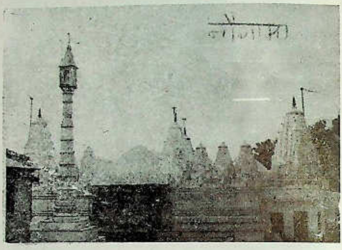

बांसवाड़ा जिले के बागीदौरा तहसील के अंतगर्त नौगामा गाँव स्थित है। गाँव मे श्री १००८ श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर स्थित है। पूरे संगमरमर के सफेद पाषाण से युक्त मंदिर की डेरियाँ तथा मंदिर का मानस्तंभ पूरे मंदिर को भव्यतातिभव्य बनाते हैं। मंदिर में मूलनायक श्री १००८ श्री आदिनाथ भगवान बिराजमान है। मूलनायक प्रतिमा के साथ श्री अजितनाथ व श्री संभवनाथ जी की प्रतिमाएँ भी बिराजमान हैं। मूलनायक प्रतिमा की पंच कल्याण प्रतिष्ठा वि. सं. १९०९ मागसर सुदी ५ को हुई थी। प्रतिष्ठाचार्य थे वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री (संवत् २०१५) । दूसरी प्रतिष्ठा सं. २०३९ में पं. अभिनंदनकुमारजी शास्त्री के द्वारा करवाई गयी थी। सं. २०४९ में कलशारोहण प्रतिष्ठाचार्य पं. पन्नालालजी नाणावटी ने करवाया था।

गाँव मे एक दि. जैन पाठशाला तथा आदिनाथ दि. जैन नवयुवक मंडल हैं। कुल परिवारो की संख्या १५६ है और उनके सदस्यों की संख्या ९७१ है। यह लोग खेड़बह्मा से लगभग ११०० वर्ष पूर्व यहाँ आकर बसे थे ।

नौगामा
त. बागीदौर ।
जि. बांसवाड़ा (राज.)
पिन नं-३२७६०१

श्री १००८ श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर (तेरापंथी) डडूका

यहाँ दि. जैन मंदिर ऐतिहासिक प्राचीन मंदिर है। राजस्थान राज्य के दक्षिण में बाँसवाड़ा जिले से ४२ कि.मि. की दूरी पर मध्यभाग में स्थित है। जैन मंदिर का निर्माण शिलालेख के अनुसार संवत १६४३, फाल्गुन सुदी-२ में हुआ था। इसमें मूलनायक २३ वें तीर्थंकर १००८ श्री पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा विराजमान है। प्रतिमा ध्यानकर्षित काले पाषाण की हैं। प्रतिमा का चिह्न सर्पका है। मंदिर की वेदी में १८ मूर्तियाँ पाषाण की पद्मासन में स्थित है। २४ मूर्तियाँ धातु की है। पाषाण की अधिकतर मूर्तियाँ १५वीं एवं १६वीं शती की है। मंदिर के प्रांगण में दायी ओर विशाल मानस्तंभ स्थित है।

प्राचीनकाल में डूडूका में जैनों की अच्छी बस्ती थी। किन्तु कालान्तर में प्राकृतिक प्रकोपों के कारण परिवारों की संख्या में कमी आई। वर्तमान में जैन समाज के कुल ५० मकान है, जिसकी कुल जनसंख्या ३८५ के करीब है। गाँव में दिगम्बर जैन पाठशाला १९४२ से कार्यरत है। मंदिर में अतिप्राचीन हस्तलिखित एवं छपे हुए बहुमूल्य शास्त्र भी हैं। यह शास्त्र भंडार अति समृद्ध एवं व्यवस्थित है।

मूलनायक प्रतिमा की दो बार प्रतिष्ठा की गयी है, मई १९८४ नवम्बर १९९३ में यह मंदिर पंच के अधिकार में है।

समस्त दि.जैन पंच
गाँव डडूका, त. गढ़ी
जि. बाँसवाड (राजस्थान)
पिन. ३२७०२२

श्री १००८ श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर
खुणादरी (बाबलवाड़ा)

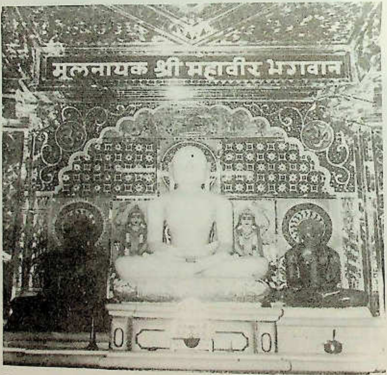

श्री महावीर दिगमबर जैन अतिशयक्षेत्र , चित्रोडा (छाणी)
मूलनायक श्री महावीर भगवान

श्री १००८ श्री चन्द्रप्रभुजी दि.जैन मंदिर, गलियाकोट

गलियाकोट में दिगम्बर जैन समाज के तीन मंदिर स्थित है। श्री १००८ श्री चन्द्रप्रभुजी दि.जैन मंदिर में मूलनायक प्रभु श्री १००८ श्री चन्द्रप्रभुजी की प्रतिमा बिराजमान है। दूसरे जिनालय श्री १००८ श्री आदिनाथ दि.जैन मंदिर में मूलनायक प्रभु श्री आदिनाथजी की मूर्ति शोभायमान है। एक ओर जिनालय है श्री १००८ श्री संभवनाथजी का । इसमें श्री संभवनाथजी प्रभु बिराजमान हैं।

चंद्रप्रभु की प्रतिमा का समय सं.१७४१ का रहा है। श्री संभवनाथजी की प्रतिमा का समय सं.१६९३ का रहा है। सभी प्रतिमाएँ प्राचीन रही है।

गाँव में ८० परिवारों के कुल ७०० सदस्य बसे हुए है । यहाँ हूमड़ आठवीं सदी में ईडर प्रान्त से आकर बसे थे।

गलियाकोट
जि.डूंगरपुर (राज.) पिन -३१४०२६.

श्री १००८ पार्श्वनाथ भगवान दि.जैन मंदिर
कालवा देवी रोड, बम्बई

मूलनायक श्री १००८ पार्श्वनाथ तीर्थंकर देव,
श्री बंड़ी जी का बाग मन्दसौर (म. प्र.)

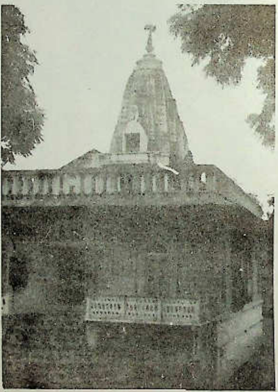

श्री पार्श्वनाथ दि. जिनालय
बंड़ी जी का बाग मन्दसौर

श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर का फोटो डेडूका

प. पू श्री देवसागर महाराज फल्टन

मूलनायक अन्दश्वर पार्श्वनाथ

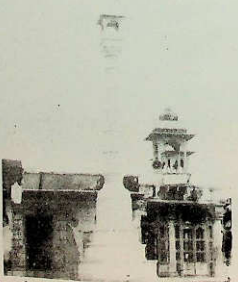

श्री दि. जैन नसीयाजी, अरथूना, बासवाड़ा

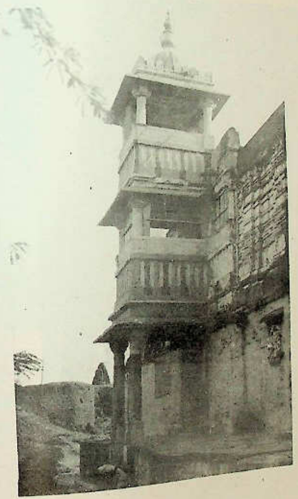

श्री दिगम्बर जैन मंदिर गलियाकोट

श्री दिगम्बर जैन मंदिर गलियाकोट

झालरापाटन नसियामें
तीर्थंकर पार्श्वनाथ की
प्राचीन मूर्ति

दि. जैन मंदिरजी
नस्थंभ छतरीमें अरथूना

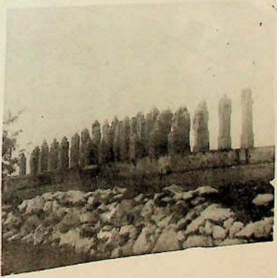

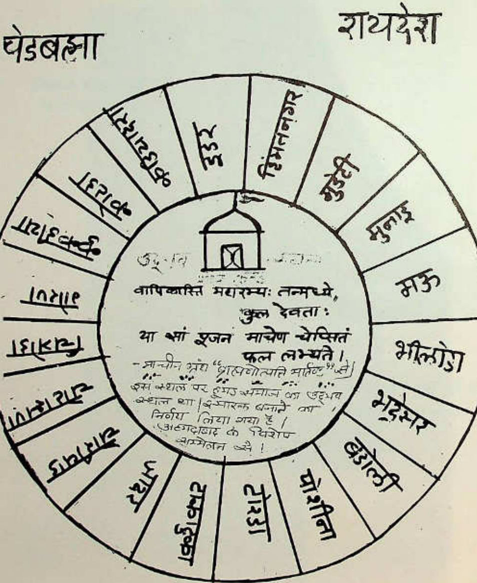
घेडब्रह्मा
रायदेश
ईडर
हिंमतनगर
मुडेटी
मऊ
भीलोडा
बडोली
पोशीना
टोरडा
कुल देवता :
फल लभ्यते।

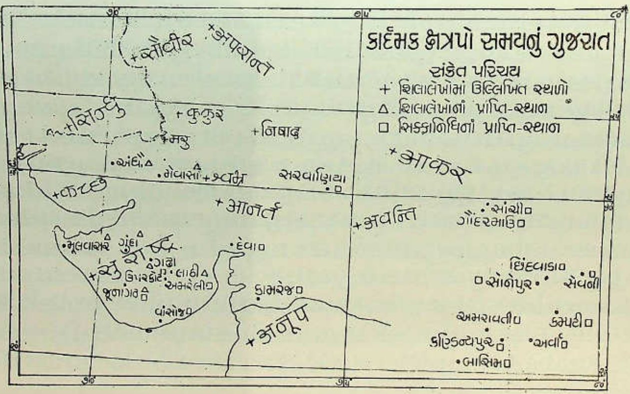
કાર્દમક ક્ષત્રપો સમયનું ગુજરાત
સંકેત પરિચય
+ શિલાલેખોમાં ઉલ્લિખિત સ્થળો
△ શિલાલેખોનાં પ્રાપ્તિ-સ્થાન
□ સિક્કાનિધિનાં પ્રાપ્તિ-સ્થાન
+सौवीर
+अपरान्त
+सिन्धु
+कुकुर
+मरु
+निषाद
+आकर
•અંધૌ △
•મેવાસા
+श्वभ्र
સરવાણિયા
+कच्छ
+आनर्त
+अवन्ति
•સાંચી □
ગૌંદરમાઉ □
•મૂળવાસર
ગુંદા
+सुराष्ट्र
•ગઢા
ઉપરકોટ
•લાઠી △
અમરેલી □
જૂનાગઢ
•દેવા □
કામરેજ □
વાંસોજ □
+अनूप
છિંદવાડા □
□ સોનેપુર •
સેવની
અમરાવતી □
કંમ્પટી □
કૌણ્ડિન્યપુર
•અર્વી □
•બાસિમ □

।।श्रीगुरुभ्योनमः। अथहुंबलवाणकस्यपुराणलिख्यते।श्रीमद्हारिएयगंगात्तटासुम
नुहारउत्तरदिग्विन्नागे।सोमात्रागस्यजायावरमुखचतुरोगोत्रचाष्टात्रंततेस्तो
तोत्रोब्रह्मवासा।जिनभक्तनिरतासम्यक्अष्टादशोच।तेसर्वेगौरवयुक्ताधनसजन
युतामंगलोत्साहकर्तुः।१।इतिश्रीहुंबलज्ञातिमसराविंशति।२७गोत्रासर्वे१९८४
सर्वेस्यपत्रवीरकआहि।तमूख्यगोत्र७सप्तमाल्याछर्ड्।श्रीसोमायिनाजायां।ब्रह्म
बलियैतासां।अग्निकुंडथीउपना।श्रीखेडस्थानकशस्थापना।बडगोत्राबीप्रते
ना।गोत्रनव।तेहनीविगतलीखतं।श्रीरस्तु।१सांडिलगोत्रेविप्रा।२पाडलगोत्रे।वि
प्रा।३कौशिकगोत्रेविप्र।४मौत्रिकियगोत्रेविप्रा।५कच्छपगोत्रेविप्रा।६वचस
गोत्रेविप्रा।७भरद्वाजगोत्रेविप्रा।८अंगिरागोत्रेविप्रा।९पारासगोत्रेविप्र।एवंवि
प्रगोत्रनीवार्तागृंथेघणीछोपणइहांलखिनथी।हवेसर्वगोत्रनिवार्तालखियेछे
पूर्वेइंब्रह्मा।विष्णुनिना।भिकमल।कमलमध्येब्रह्मा।एतलेत्रीबअष्टिनोपालकविष्णुकि
धा।अनेअष्टिनोसंहाररुद्रकिधो।एतलेश्लोक।एकमूर्तिस्त्रियादेवा।ब्रह्मा।विष्णुर्महे
श्वरः।लिङ्गभेदेनसंस्थाप्य।तत्रविश्वेश्वरवनक्कचित्।इहपरेदेवतासर्वेमलीगोत्र१०९

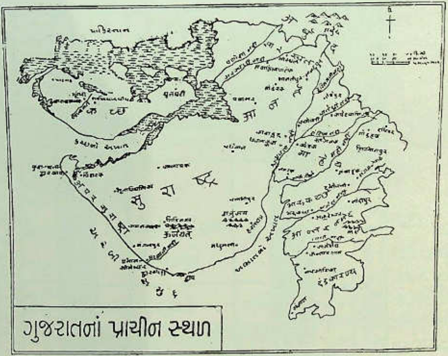

प्राचीन नक्शा

हूमड़ पुराण से गोत्र कुण्ड का मान चित्र

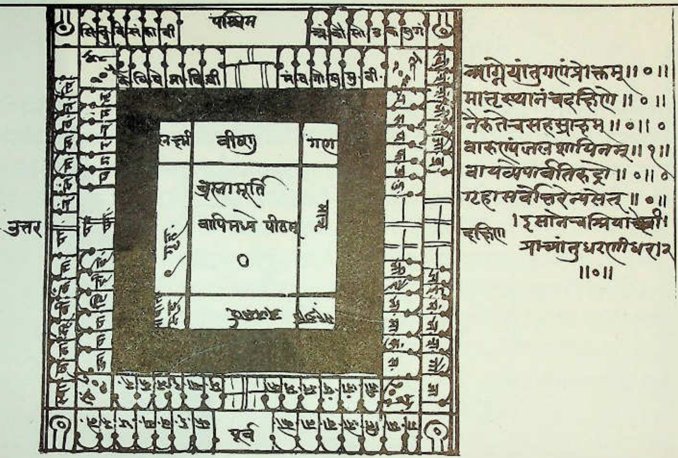

'' वापिकास्ति महारम्या तन्मध्ये, कुल देवता :
या सां पूजन माचेण चेप्सितं फल लभ्यते ।''